UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186595

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H535 M66 Pa Accession No. H3467

Author मिनेट, पुम्

Title प्रकाश और वर्ण 1962

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रकाश और वर्ण

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—६५

प्रकाश और वर्ण

(का स्वरूप, खुली हवा में)

लेखक

प्रोफेसर एम. मिनैर्ट

अनुवादक

भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव

एम. एस-सी.

हिन्दी समिति

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण

१९६२

[Translated into Hindi from "The nature of *Light and Colour* in the open air" Dover Publications, as revised and corrected by the author himself (1962)]

मुद्रक

श्री नरेन्द्र भार्गव,

भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी

प्रकाशकीय

आकाश से गिरनेवाली बर्फ कभी-कभी काले रंग की क्यों दिखाई देती है? सूर्य की किरणे एकाध बार हरे रंग की क्यों प्रतीत होती हैं, उगते हुए तथा डूबते हुए सूर्य का बिम्ब सामान्य से अधिक बड़ा क्यों दृष्टिगोचर होता है, वर्षा की बूंदों पर पड़नेवाले प्रकाश की माया से किस तरह इन्द्रधनुष का निर्माण होता है, 'फाता मोर्गाना' मरीचिका किस तरह उत्पन्न होती है जिससे ऐसा जान पड़ता है मानो कोई जादू की नगरी अधर में लटक रही हो?

असाधारण प्रकाशकीय घटनाओं का अवलोकन करने पर इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न आपके मन मे उठ सकते हैं। यूट्रेख्त विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मिनैर्ट ने इस पुस्तक मे ऐसे ही सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर दिये हैं। प्रश्नों का समाधान सरल तथा सुबोध शैली मे प्रस्तुत किया गया है जिसे कोई भी प्रबुद्ध पाठक आसानी से समझ सकता है। प्रकृति में हम नित्य ही ऐसी चीजें देखते रहते हैं जो ऐन्द्रजालिक के चमत्कार की तरह अत्यन्त मनोरंजक प्रतीत होती हैं। प्रयोगशाला में बैठे रहने से इनका आनन्द नहीं उठाया जा सकता वरन् घरों के बाहर खुले आकाश में सूक्ष्म निरीक्षण-मनन से ही इनका रहस्य समझा जा सकता है।

यह रोचक ग्रन्थ न केवल भौतिकीज्ञों, ज्योतिर्विदों, भूगोल-शास्त्रियों तथा कला-पारखियों के काम का है बल्कि प्रत्येक विचारशील पाठक के लिए भी इसमें यथेष्ट रुचिकर सामग्री समाविष्ट है। प्रकाश और वर्ण के प्रतिदिन के पर्यवेक्षण का समाधान तो इसमे आपको मिलेगा ही, साथ ही इस क्षेत्र में यह पुस्तक आपको नवीन अनुभवों का भी दिग्दर्शन करायेगी जो अन्यथा आपकी नजरों की पकड़ में शायद ही कभी आ पाते। इसमे वे संशोधन तथा परिवर्धन भी समाविष्ट हैं जो अंग्रेजी के आगामी संस्करण मे आनेवाले हैं और जिन्हें लेखक ने स्वयं हमारे पास पहले से भेज दिया था।

ठाकुरप्रसाद सिंह

सचिव, हिन्दी समिति

खुली सड़क का गीत

पैदल और हलके हृदय से मैं खुली सड़क को पकड़ता हूँ ,
स्वस्थ हूँ, स्वच्छन्द हूँ, संसार है मेरे सामने ,
है मेरे सामने लम्बी गैरिकवर्णी राह, ले जाती हुई मुझे, जहाँ भी मैं चाहूँ ।

अब और मैं प्रचुर वैभव नहीं माँगता, मैं स्वयं ही हूँ प्रचुर वैभव ,
अब और मैं ठुनकता रोता नहीं, न और बिलमाता ही हूँ, न और कुछ चाहता ही हूँ,
हो गयी बस अब घर-भीतर की शिकायतें, ग्रंथालय, कलहमयी आलोचनाएँ,
दृढ़ और निश्चिन्त, मैं खुली सड़क की यात्रा करता हूँ ।

सोचता हूँ सभी वीर कर्मों का चिन्तन हुआ था मुक्त पवन में
और सभी स्वच्छन्द कविताएँ भी ,
सोचता हूँ मैं स्वयं ही यहां रुक जाता और अद्भुत कर्म करता
सोचता हूँ, जो कुछ भी सड़क पर मिलेगा, उसे मैं चाहूँगा ,
और जो भी मुझे देखेगा, मुझे चाहेगा ,
सोचता हूँ जो कोई भी मुझे दिखाई देता है, अवश्य ही सुखी होगा ।

मैं अनन्त व्योम के महान् झकोरों को साँस में भरता हूँ ,
पूरब और पश्चिम हैं मेरे, उत्तर और दक्षिण हैं मेरे ।

जितना मैंने सोचा था उससे अधिक हूँ मैं विराट्, अधिक हूँ मैं श्रेष्ठ ,
मुझे ज्ञात नहीं था कि इतना शिवत्व था मेरे भीतर ।

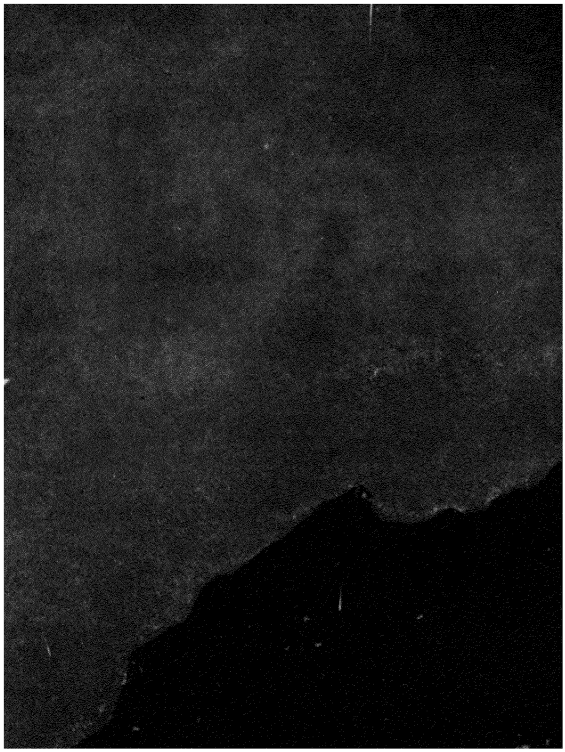
तो आओ ! तुम जो भी हो, मेरे साथ यात्रा करो !
मेरे साथ यात्रा करते समय तुम कभी थकन नहीं जानोगी ।

धरती कभी नहीं थकती ,
धरती है उजड्ड, शान्त, पहले पहल अबोध्य, प्रकृति है उजड्ड ,
और पहले पहल अबोध्य ,

मत हो निराश, बस चलती चलो, वहाँ है दिव्य पदार्थ भलीभाँति प्रच्छन्न
तुम्हारी शपथ, वहाँ है दिव्य पदार्थ, शब्द जितना वर्णन कर सकते
उससे भी कहीं अधिक सुन्दर

साथी ! तुम्हारी ओर हाथ बढ़ाता हूँ !
तुम्हें अपना प्यार देता हूँ जो वैभव से अधिक मूल्यवान् है ,
तुम्हें मैं अपने आपको ही देता हूँ उपदेश या कानून के सामने ;
क्या तुम मुझे अपने आप को दोगी ? क्या तुम मेरे साथ यात्रा करोगी ?
क्या हम, जब तक जियेंगे, परस्पर इस सकल्प पर दृढ़ रहेंगे ?

—वाल्ट ह्विटमन—(लीव्ज आव ग्रास)
(चुने हुए अंश)



प्लेट I—ब्रोकेन की प्रेत-छाया

भूमिका

प्रकृति का प्रेमी एक आन्तरिक प्रेरणा से उत्प्रेरित होकर प्राकृतिक घटनाओं से उतने ही सहज भाव से प्रभावित होता है जितने सहज तरीके से उसका श्वास लेना या जीवन की अन्य क्रियाएँ चलती है। धूप और वर्षा, गर्मी और सर्दी, प्रेक्षण के लिए उसे समान रूप से ग्राह्य होती है, नगर मे, वन मे, रेतीले प्रदेश मे और समुद्र पर, सर्वत्र उसे नयी चीजे मिलती हैं जिनमे वह दिलचस्पी लेता है। प्रति क्षण नवीन तथा रोचक घटनाओं से उसका ध्यान आकृष्ट होता रहता है। देहाती क्षेत्रों मे उत्फुल्ल कदमों से वह घूमता फिरता है, उसकी आखे तथा उसके कान सतर्क रहते है; आसपास के सूक्ष्म प्रभावों के प्रति वह सवेदनशील रहता है, सुवासित वायु मे वह भरपूर सास लेता है, तापक्रम के सूक्ष्म अन्तर की भी अनुभूति करने की वह सामर्थ्य रखता है, यदा-कदा एकाध झाडी को वह छू लेता है ताकि धरती की चीजों से वह घनिष्ठतर सम्पर्क स्थापित कर सके—वह एक ऐसा व्यक्ति है जो जीवन की सम्पन्नता के प्रति अत्यधिक मात्रा मे अभिज्ञ है।

वस्तुत यह सोचना गलत है कि वैज्ञानिक रीति से प्रेक्षण करनेवाला व्यक्ति प्रकृति के भाव-प्रदर्शन की अपरिमित विविधता के काव्य-सौन्दर्य की अनुभूति नही कर पाता है, क्योंकि प्रेक्षण के अभ्यास से सौन्दर्य की हमारी परख और भी पैनी हो जाती है, अत हर एक पृथक्-पृथक् तथ्य जिस विविध वर्णविभूषित पृष्ठभूमि पर चित्राङ्कित होता है उसकी आभा मे वृद्धि हो जाती है। घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्ध, भू-दृश्य के विभिन्न अवयवों मे कार्य-कारण के तारतम्य, उन दृश्यों को सामञ्जस्य के सूत्र मे परस्पर पिरो देते है जो अन्यथा एक दूसरे से अलग-अलग घटनाओं के कममात्र बने रह जाते।

इस पुस्तक मे वर्णित घटनाएँ, अशत हमारे दैनिक जीवन की चीजे है जिनका वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करना रोचक होता है; तथा अशत. ऐसी चीजे है जो अभी तक हमारे लिए अपरिचित रही है, यद्यपि उन्हे किसी भी क्षण देखा जा सकता है, शर्त केवल यह है कि हम नेत्रों पर इस जादू की छडी को घुमा दे कि 'देखना क्या है' इसे हम पहले से जान ले।' और अन्त मे प्रकृति के कुछ विलक्षण और दुर्लभ ऐसे 'करिश्मे'

हैं जो जिन्दगी में बस एकाध बार ही घटते हैं, अतः अत्यन्त निपुण प्रेक्षक को भी उनका अवलोकन करने के लिए बरसों तक प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है। और जब उनका प्रेक्षण वह कर पाता है तो वह उनकी अभूतपूर्वता की अनुभूति तथा एक अवर्णनीय आह्लाद की भावना से ओतप्रोत हो जाता है—यह अनुभूति उसके अन्तरंग मे पैठ जाती है।

चाहे कितना ही असाधारण यह क्यों न प्रतीत होता हो, किन्तु तथ्य यही है कि उन्ही चीजो पर हमारा ध्यान जाता है जिनसे हम परिचित रहते हैं; नयी चीजों को देख पाना अत्यन्त कठिन होता है, भले ही वे एकदम हमारी आँखों के सामने ही मौजूद क्यों न हों। प्राचीन काल मे तथा मध्य युग मे सूर्य के अनगिनत ग्रहणो का अवलोकन किया गया था, फिर भी १८४२ के पूर्व मुश्किल से ही सूर्य के क्रातिचक्र (कोरोना) पर किसी का ध्यान जा सका था, यद्यपि आजकल सूर्य-ग्रहण की यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण घटना समझी जाती है और नगी आँखों से भी हर कोई इसे देख सकता है।

इन घटनाओं के प्रति आपका ध्यान आकृष्ट करने के निमित्त मैंने इस पुस्तक मे उन चीजों का संकलन करने का प्रयत्न किया है जो प्रकृति के योग्य अध्येताओं के प्रयत्न-स्वरूप कालान्तर में हमारे लिए सुपरिचित हो गयी हैं। इसमे सन्देह नही कि प्रकृति में इनसे भी कही अधिक संख्या में अनेक तथ्य भरे पड़े हैं जिनका प्रेक्षण अभी तक नही किया जा सका है; प्रति वर्ष नवीन घटनाओं के सम्बन्ध मे अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होते हैं; इस बात पर विचार करना कुछ अजीब-सा लगता है कि अनेक ऐसी घटनाओं के प्रति हम कितने अन्धे तथा बहरे हैं, जिनका भविष्य की पीढ़ियाँ अवश्य अन्वेषण कर लेगी।

प्रकृति के प्रेक्षण से अभिप्राय सामान्यतः वनस्पतियों तथा जीवों का अध्ययन समझा जाता है; मानो वायु, ऋतुओं तथा बादलों के मनोरम प्रदर्शन, सहस्रों किस्म की ध्वनियाँ जो हमे अपने इर्द-गिर्द मिलती हैं, लहरे, सूर्य की किरणे तथा पृथ्वी की थरथुराहट आदि प्रकृति के अवयव नही हैं! निर्जीव पदार्थ-जगत् के क्षेत्र मे भौतिक विज्ञान के अध्येता के लिए ऐसी पाठ्यपुस्तक, जिसमे उन सभी बातो का उल्लेख किया गया है जो उसके लिए विशेष रूप से प्रेक्षणीय है, उतनी ही आवश्यक है जितनी जीव-वैज्ञानिक के लिए वनस्पति तथा प्राणि-जगत् पर लिखी गयी पाठ्यपुस्तक। अनिवार्यतः हमें ऋतुविज्ञान, [illegible] भूगोल तथा जीवविज्ञान के क्षेत्र मे प्रवेश करना होगा, फिर भी मुझे आशा है कि इस अध्ययन के फलस्वरूप इन विभिन्न क्षेत्रों के बीच ऐक्य का सूत्र हम पा सकेंगे।

चूंकि प्रकृति के सरल तथा प्रत्यक्ष प्रेक्षण पर ही हम विचार करेंगे, अतः निश्चित रूप से हमे निम्नलिखित का परिहार करना पड़ेगा—(१) ऐसी चीजें जो केवल यंत्रों द्वारा ही देखी जा सकती है (यत्रों के बजाय हमें इन्द्रियज्ञान पर ही विशेष रूप से आश्रित होना पड़ेगा और इसके लिए अपनी ज्ञानेन्द्रियों की विशिष्टताओं की पूर्ण जानकारी हमे होनी चाहिए; (२) ऐसे तथ्य जो केवल लम्बे काल तक के अगणित प्रेक्षणों के फलस्वरूप प्राप्त किये जा सकते है; (३) ऐसे सैद्धान्तिक तथ्य जिनका हमारी दृष्टि-अनुभूति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही है।

हम देखेंगे कि इतने पर भी प्रेक्षण की प्रचुर मात्रा की सम्भावना शेष रह जाती है; दरअसल भौतिकी की एक भी प्रशाखा ऐसी नहीं है जो बाह्य क्षेत्र में लागू न हो सके, और अक्सर तो बाह्य क्षेत्र मे यह विज्ञानशालाओ के किसी भी प्रयोग से अधिक व्यापक पैमाने पर प्रदर्शित होती है। अतः यह बात ध्यान मे रखिए कि इस पुस्तक में वर्णित प्रत्येक तथ्य स्वय आप की समझ और प्रेक्षण की सीमा के भीतर आता है। इसकी प्रत्येक बात आप के अवलोकन के लिए है, आपके द्वारा किये जाने वाले प्रयोग के लिए भी !

जहाँ कही हमारी व्याख्या कदाचित् अत्यधिक संक्षिप्त जान पड़ती हो, उस स्थल के लिए पाठक को हम सुझाव देंगे कि वह किसी प्रारम्भिक पाठ्यपुस्तक की सहायता से भौतिकी के आधारभूत सिद्धान्तों का पुनः अनुशीलन कर ले।

भौतिकी के शिक्षण के लिए बाह्य क्षेत्रो के प्रेक्षण के महत्त्व को अभी तक पर्याप्त रूप से आँका नही जा सका है। ये प्रेक्षण हमारी शिक्षा को दैनिक जीवन की आवश्यकताओं के अनुरूप समानुयोजित करने के प्रयत्न मे उत्तरोत्तर अधिक योग देते है; सहस्रों प्रश्न पूछने के लिए ये हमे स्वाभाविक तरीके पर प्रेरित करते हैं और उनकी बदौलत बाद मे हम जान पाते है कि स्कूल मे जो कुछ हमने सीखा है वह स्कूल की दीवारों के बाहर हमे बारम्बार देखने-सुनने को मिलता है। और इस प्रकार प्रकृति के नियमों का सार्वभौम अस्तित्व हमे एक सतत, आश्चर्यजनक तथा प्रभावशाली वास्तविकता के रूप मे प्राप्त होता है।

फिर यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए लिखी गयी है जो प्रकृति के पुजारी हैं, उन किशोरों के लिए जो विस्तृत जगत् के प्राङ्गण में जाकर कैंपफायर के गिर्द इकट्ठे होते है, उस चित्रकार के लिए जो भू-दृश्य के आलोक और वर्णविन्यास की प्रशंसा तो करता है, किन्तु उसे समझ नहीं पाता है; उनके लिए जो देहाती क्षेत्रों में रहते है, उन सब लोगों के लिए जो यात्रा के शौकीन है; तथा शहर में रहनेवालों के लिए भी जिनके

लिए अँधेरी गलियों के कोलाहल में भी प्रकृति के सौन्दर्य का प्रदर्शन लभ्य हो सकती है। प्रदक्ष भौतिकीज्ञ के लिए भी, हम आशा करते हैं कि इस पुस्तक में कुछ नवीन तथ्य अवश्य मिलेंगे, क्योंकि इसमें वर्णित क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तथा अक्सर विज्ञान के सामान्य पाठ्यक्रम के दायरे के यह बाहर पड़ता है। अतः अब यह बात समझी जा सकती है कि क्यों अत्यन्त जटिल प्रेक्षण का तथा साथ-साथ अत्यन्त सरल किस्म के प्रेक्षणों का भी समावेश इस पुस्तक मे किया गया है जिनका वर्गीकरण उनके पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर किया गया है। सम्भवतः यह ग्रन्थ अपने ढंग का एक मात्र प्रयत्न है, अतः यह पूर्णतया दोषमुक्त भी नही है। विषयवस्तु के सौन्दर्य तथा उसकी व्यापकता की गुरुता से मैं अत्यधिक अभिभूत हूँ, तथा इसकी समुचित व्याख्या के निमित्त अपनी असमर्थता के प्रति भी अनभिज्ञ नहीं हूँ। पिछले २० बरसों से मैं व्यवस्थित ढग से इस सम्बन्ध मे प्रयोग करता आ रहा हूँ तथा इस पुस्तक मे मैंने हर प्राप्त पत्रिका के हजारों लेखों का सार भी प्रस्तुत किया है, यद्यपि इसके लिए केवल उन्ही लेखों को मैंने चुना है जो या तो व्यापक सर्वेक्षण पर आधारित हैं, या किन्ही अत्यन्त विशिष्ट तथ्यों पर प्रकाश डालते हैं। किन्तु इस बात से मैं भली-भाँति अवगत हूँ कि यह संकलन कितना अपूर्ण है। अनेक बातें जिनकी खोज की जा चुकी है, अभी तक मेरी जानकारी मे नही आ सकी हैं और अनेक बातें विशेषज्ञों के लिए भी अभी समस्याएँ ही बनी हुई हैं। अतः मैं उन व्यक्तियों के प्रति कृतज्ञ हूँगा जो स्वयं अपने प्रेक्षण द्वारा या प्रकाशित सामग्री के आधार पर मेरी त्रुटियों के सुधारने मे या उन तथ्यों की पूर्ति मे जो छूट गयी हैं, मेरी सहायता करेंगे।

—एम. एम.

विषय-सूची

अध्याय		पृष्ठ
१. धूप और छाया	...	१
२. प्रकाश का परावर्तन	...	८
३. प्रकाश का वर्तन	...	४०
४. वायुमण्डल में प्रकाश-किरणों की वक्रता	...	५१
५. प्रकाशतीव्रता तथा द्युति की नाप	...	९१
६. आँख	...	१०९
७. वर्ण (रंग)	...	१३३
८. उत्तर-बिम्ब तथा विपर्यास की घटनाएँ	...	१४०
९. प्रेक्षण द्वारा आकृति और गति का विवेचन	...	१७०
१०. इन्द्रधनुष, प्रभामण्डल तथा कान्तिचक्र	...	२०१
११. आकाश का प्रकाश तथा उसका वर्ण	...	२८५
१२. भू-दृश्य में प्रकाश और रंग	...	३६२
१३. स्वतः प्रकाशित पौदे, जीव तथा पत्थर	...	४२३
परिशिष्ट	...	४३१
शब्द-सूची	...	४३५
प्लेट-चित्र २–१७		अन्त मे

प्लेट-सूची

I		ब्रोकेन की प्रेत-छाया	आदिपृष्ठ
II		समुद्र में प्रतिबिम्बित सूर्य	अन्त में
III	(a)	वृक्ष की टहनियों में से दिखाई पड़ने वाले प्रकाशवृत्त	,,
	(b)	वही वृक्ष दिन के समय	,,
IV	(a)	पानी के तरङ्गित धरातल से सूर्य की रोशनी का परावर्तन	,,
	(b)	हलके तरङ्गित होनेवाले उथले जल से सूर्य की रोशनी का वर्तन	,,
V	(a)	गौण मरीचिका	,,
	(b)	धूप से प्रकाशित दीवार पर मरीचिका	,,
VI		अस्त होता हुआ सूर्य विकृत दिखाई देता है	,,
VII	(a)	शेड के कठघरों के बीच क्रमदर्शन	,,
	(b)	किश्ती चलाने वाले की लग्गी 'मुड़ी' जान पड़ती है और नदी का पेंदा 'उठा' हुआ	,,
VIII	(a)	शाम को मकानों की छत के सहारे दीखने वाला विपर्यास-हाशिया	,,
	(b)	ऊर्मिल भूमि पर विपर्यास-घटना का प्रेक्षण	,,
IX	(a)	इन्द्रधनुष	,,
	(b)	चन्द्रमा के गिर्द प्रभामण्डल	,,
X		उद्दीप्त बादल	,,
XI		हेलिगेन्शीन	,,
XII		रात्रि के ज्योतिर्मय बादल	,,
XIII		दर्पण में आकाश के ऊर्ध्वबिन्दु का प्रतिबिम्बन	,,
	(a)	आकाश जब नीले वर्ण का है	,,
	(b)	आकाश पर जब बादल छाये हैं	,,
XIV	(a)	पानी की सतह पर हलकी तरंगे	,,
	(b)	पानी की सतह; अंशतः तरंगित और अंशतः शान्त (स्मूथ)	,,
		(द्वि-आणविक तैलस्तर) गहरी सीमा देखिए	,,

XV (a) पुञ्ज बादलों में से गुजरनेवाली सूर्य-किरणों की शलाकाएँ अन्त में
(b) गड्ढे के पानी के विक्षुब्ध धरातल पर गिरनेवाली छाया ,,
XVI (a) हीदर पौदों के मैदान का दृश्य जब सूर्य सामने के रुख है, तथा प्रतिबिम्ब का दृश्य जिसमे सूर्य पीछे की ओर पड़ता है ,,
(b) लान पर घास काटने वाली मशीन के चलाये जाने पर निशान ,,

१. वृक्ष के घने झुरमुट में प्रवेश करती हुई सूर्य-रश्मियाँ। २
२. सूर्य का मंडलक हमें $\frac{1}{100}$ रेडियन के कोण पर दिखलाई देता है। ३
३. सूर्य की तिरछी किरणों द्वारा लोहे के तार की छाया, (a) स्पष्ट छाया, (b) अस्पष्ट छाया। ४
४. दुहरी छाया कैसे बनती है। ६
५. भीतर धँसी हुई खिड़की से सूर्य की रोशनी का परावर्तन। ९
६. टेलीग्राफ के तारों से सड़क के लैम्प का प्रतिबिम्बन। १०
७. क, ख—वस्तु अपने प्रतिबिम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है। १०–११
७. ग—नहर के पानी से सूर्य-रश्मियों का परावर्तन। १२
८. सँकरी अँधेरी गली मे धूप के धब्बे। १३
९. किञ्चित् तरङ्गित पानी द्वारा परावर्तन से प्रकाशरेखाओं का निर्माण। १४
१०. एक छोटे वाटिका-ग्लोब मे विश्व का प्रतिबिम्बन किस प्रकार होता है। १६
११. ट्राम की पटरी पर वर्षा द्वारा वक्र दर्पण का निर्माण। १९
१२. परावर्तित प्रकाश-पथ के दीर्घ अक्ष की गणना। २१
१३. रोशनी के स्तंभ के सबसे अधिक लम्बे अक्ष द्वारा आंख पर बननेवाला कोण। २२
१४. परावर्तित प्रकाश-पथ के लघु अक्ष की गणना। २२
१५. प्रकाश के धब्बे का प्रेक्षण, प्रकाश-स्रोत की स्थिति से भिन्न ऊँचाई के तल से। २३
१६. गोले की सहायता से यह दिखलाना कि स्तम्भ की शक्ल का प्रकाश-पथ कैसे बनता है। २४
१७. (बायाँ) किञ्चित् तरङ्गित होते हुए पानी पर प्रकाश-स्तम्भ। २६
(दाहिना) ऊँचे प्रकाशस्रोत से आनेवाले प्रकाश का प्रतिबिम्बन। ,,
१७. क—लहरों से बननेवाले प्रतिबिम्ब में छल्ले का निर्माण। २७

१७. एक अद्भुत दृश्य; प्रतिबिम्ब आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरने वाले ऊर्ध्व तल मे नहीं पड़ता। २८
१८. क, ख—तरंगित धरातल द्वारा बननेवाले प्रतिबिम्ब असममित कब होते है। २९
१९. तरङ्गें जब निश्चित दिशा में अवस्थित होती है तो प्रकाश के तिरछे धब्बे किस प्रकार बनते है। ३०
१९. क—खिड़की की लहरदार झिरीवाले आवरण पर प्रतिबिम्ब परवलय शक्ल का क्यों दीखता है। ,,
२०. समुद्र में प्रतिबिम्बन—बादल का प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर हटजाता है। ३१
२१. समुद्र पर सूर्य का प्रकाश। ३२
२२. प्रतिबिम्ब का स्थानान्तर। आपतन-कोण की अपेक्षा परावर्तन-कोण अधिक चिपटा है। ३३
२३. ω और △ के प्रेक्षित मान के प्रत्येक जोड़े के लिए एक बिन्दु मिलता है। इस बिन्दु की स्थिति प्रत्येक वक्र के लिहाज से ऑकिए, प्रत्येक वक्र α के एक निश्चित मान के लिए खीचा गया है। ,,
२४. पूर्णतया शान्त समुद्र पर ऊगते हुए सूर्य के प्रतिबिम्ब को देखकर क्या आप को पृथ्वी की वक्रता का पता लग पाता है? ३४
२५. वर्षाजल के खित्ते सड़क-लैम्प के प्रतिबिम्ब के गिर्द चमकती हुई चिनगारियाँ विकीर्ण करते है। ३७
२६. प्रतिबिम्ब के गिर्द चिनगारियाँ किस प्रकार बिखरती हैं। ,,
२७. वृक्ष की चोटियो मे प्रकाशवृत्त किस प्रकार बनते है। ३८
२८. वृक्ष की चोटी पर बने प्रकाशवृत्त और तरङ्गित पानी पर बने प्रकाश-स्तम्भों की तुलना कीजिए। ३९
२९. प्रकाशकिरणों के वर्तन के कारण बाँस मुड़ा हुआ दीखता है। ४०
३०. प्रकाश की किरणें पानी मे प्रविष्ट होती है और तरङ्गों द्वारा वर्तित होकर प्रकाश-रेखाओं पर केन्द्रित हो जाती है। नीली किरणे (बिन्दु० रेखाएँ) अधिक प्रबल वर्तन प्राप्त करती है। ४१
३१. पूर्णतया समानान्तर तल के प्लेट-काँच का बना खिड़की का काँच दुहरे प्रतिबिम्ब का निर्माण करता है, किन्तु वे एक दूसरे के अत्यन्त निकट स्थित होते हैं। ४३

३२. दुहरे प्रतिबिम्ब ऐसे काँच में किस प्रकार बनते हैं जिसकी मोटाई सर्वत्र एक-सी नही होती है। ४४
३३. दोनों परावर्तन प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी γ की सहायता से खिडकी के काँच के आमने-सामने की सतहों का झुकाव किस प्रकार ज्ञात करते हैं। ,,
३४. बहु प्रतिबिम्बों का सबसे अधिक दीप्तिमान् प्रतिबिम्ब सदैव उस ओर पड़ता है जिधर प्रेक्षक स्थित होता है। ४६
३५. वर्तित प्रकाश मे बहु प्रतिबिम्ब। ,,
३५. क–मोटार कार के विन्डस्क्रीन द्वारा वर्तित प्रतिबिम्ब। ४८
३५. ख–खिड़की के काँच पर से ढुलकनेवाली पानी की बूंद द्वारा वर्तन से बिम्ब का निर्माण। ४९
३६. पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण की वक्रता के कारण आकाशीय पिण्ड वास्तव से अधिक ऊँचाई पर स्थित जान पड़ते हैं। ५२
३७. क्षितिज-रेखा के समक्ष लहरो का प्रेक्षण। ५३
३८. दूरस्थ वस्तुओं का विलुप्त होना; पानी की सतह उत्तल प्रतीत होती है। (दोनों ही चित्रों मे किरण की वक्रता अत्यधिक दिखलायी गयी है।) (नीचे–) दूरस्थ वस्तुएँ जो सामान्यतः अदृश्य रहती है, अब दीख जाती हैं; पानी की सतह अवतल जान पड़ती है। ५४
३९ पृथ्वी के निकट किरण की वक्रता की तब्दीली नापना। ,,
४०. धूप से प्रकाशित दीवार पर मरीचिका (ऊर्ध्व दिशा की दूरियाँ चित्र की स्पष्टता के लिए अत्यधिक बढ़ाकर दिखायी गयी हैं।) ५६
४१. मरीचिका उत्पन्न करनेवाली किरण के पथ को कैसे मालूम करते हैं (सभी क्षैतिज दूरियाँ अत्यधिक छोटी करके दिखायी गयी हैं।) ६१
४२. मरीचिका वस्तु के केवल एक भाग को ही प्रदर्शित करती है। ,,
४३. विभिन्न दूरियों से ऐसे द्वीप का अवलोकन किया जा रहा है जहाँ मरीचिका मौजूद है। ६२
४४. समुद्री यात्रा के दौरान मे मरीचिका का प्रेक्षण। ६३
४५. उच्चतर श्रेणी की मरीचिका, एक असाधारण घटना ६४
४६. गर्म और ठण्डे जल के ऊपर के वर्तन के अवस्थान्तर के फलस्वरूप किस प्रकार फाता मोर्गाना (मिथ्या प्रकाश) का निर्माण होता है। ६५

४७. फाता मोर्गाना किस प्रकार उत्पन्न होता है। ६६
४८. हवाई किले (जान्डबूर्त, नेदरलैण्ड मे प्रेक्षित) ६७
४९. दशा A के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति सूर्यास्त के समय। ६९
५०. क—दशा B के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति का सूर्यास्त। ७०
५०. ख–दशा B के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति का सूर्यास्त। ,,
५१. सूर्य की विकृति, जब वायु के विभिन्न घनत्व वाले कई स्तर मौजूद हों। ७२
५२. चन्द्रमा के बहु नवचन्द्रक। ,,
५३. हरा वृत्तखण्ड। ७४
५४. यथार्थ हरी किरण। सूर्य के अस्त होने के क्षण से समय की गणना की गयी है। ७५
५५ अस्त होते हुए सूर्य का स्पैक्ट्रम प्रेक्षण, एन. डिज्क्वेल द्वारा। ,,
५६ हरी किरण कैसे उत्पन्न होती है। ७६
५७. अन्तिम वृत्तखण्ड के छोर के सिरे ऊपर को मुड़े होते हैं। हरी किरण के उत्पन्न होने की सम्भावना है! ७७
५८. किस प्रकार अस्त होते हुए सूर्य के ऊपरी सिरे के पृथक् होने पर हरी किरण उत्पन्न होती है। ,,
५९. वायुमण्डल की विषमता किस प्रकार तारे की प्रकाश-किरणों में झुकाव पैदा करके टिमटिमाहट उत्पन्न करती है। प्रेक्षक यहाँ तारे को ऊपर उठा हुआ और अधिक चमकीला देखता है। ८३
६०. तारे की टिमटिमाहट मे किस प्रकार रंग प्रदर्शित होते हैं। ,,
६१. कुछ तारामडल। ९२
६२. ,, ,, ९३
६३. प्रकाश की किरण जितनी अधिक तिरछी होगी, वायुमण्डल मे से उसका पथ उतना ही अधिक लम्बा होगा। ९५
६४. ऊर्ध्व बिन्दु से विभिन्न दूरियों पर तारे की चमक का ह्रास, दीप्तिमाप-श्रेणी अको मे। ९६
६५. तार की जाली से रुकनेवाले प्रकाश का प्रेक्षण A, B दो दिशाओं से। १०१
६६. वन के वृक्षों के तनों के बीच से दीख सकनेवाले प्रकाश की गणना कैसे कर सकते हैं। १०२
६७. दो रेलिंगों के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन। १०४

६८. दो रेलिंग-व्यवस्थाओं के दर्मियान क्रमदर्शन, जिनके आवर्त भिन्न हैं। १०५
६९. रेलिंगों और उनकी छाया के दर्मियान क्रमिक प्रकाश दर्शन। ,,
७०. जब पानी के अन्दर देखते हैं तो आँखों में [illegible] है। ११०
७१. एक क्षण के लिए दृश्य को हम उसी प्रकार देखते हैं जिस प्रकार मछलियाँ! १११
७२. निकट दृष्टि वाले व्यक्ति को बिना चश्मे के, तारा या दूर का लैम्प इस प्रकार दीखता है। ११५
७३. निकट दृष्टि वाली आँख, बिना चश्मे के, दूर का लैम्प छोटे अनियमित मडलकों के रूप मे देखती है। कोर्निया पर स्थित वर्षा की बूंद एक काले धब्बे की शक्ल मे निरूपित होती है। ११५
७४. दूरस्थ लैम्प के गिर्द प्रकाश-किरणें किस प्रकार उत्पन्न होती हैं। ११७
७५. चश्मे के लेन्स द्वारा बिम्बों का निर्माण। ११८
७६. चश्मे मे से देखने पर दुहरे प्रतिबिम्ब किस प्रकार बनते हैं। ,,
७७. चश्मे के लेन्स द्वारा स्पैक्ट्रम कैसे बनता है। ११९
७८. क—दूर-दूर स्थित कुछ युग्म तारे। ,,
७८. ख—कुछ अन्य युग्म तारे। १२०
७९. चन्द्रमा के सामने बादल का आ जाना O पर स्थित प्रेक्षक के लिए पर्याप्त नही होता कि वह तारा देख सके। १२८
८०. उद्दीपन के दृष्टान्त; सूर्य जब वह अस्त होता है, तथा चन्द्रमा का नव चन्द्रक। १३०
८१. टेलीग्राफ़ के तार उद्दीपन के दृष्टान्त उपस्थित करते हुए। १३१
८२. दुकान की खिड़कियो मे से देखने पर रगों का सम्मिश्रण। १३३
८३. पारे के परमाणु मे इलेक्ट्रान का स्थानान्तरण, मुख्यतः जिसके कारण पारे के दृष्टिगोचर होनेवाले स्पैक्ट्रम की उत्पत्ति होती है। १३६
८४. रेलिंग या कठघरे की घटना—रेलिंग के लम्बे कठघरे मे से देखने पर घूमता हुआ पहिया। १४१
८५. क—पहिया स्थिर धुरी के गिर्द घूम रहा है और रेलिंग के खुले भाग इसके सामने से गुजर रहे हैं। १४२
८५. ख— ,, ,, ,, ,, ,, ,,
८६. विद्युत लैम्प के प्रकाश की तीव्र गति की झिलमिलाहट को दृष्टिगोचर कराना। १४५

८७. तेजी से घूमता हुआ साइकिल का पहिया इस प्रकार दीखता है। १४७
८८. घूमते हुए पहिये की परिधि के एक बिन्दु का गमनपथ। जैसा कि हम देखते हैं प्रत्येक चक्कर मे यह बिन्दु एक क्षण के लिए, जब कि यह भूमि को स्पर्श करता है, स्थिर हो जाता है। ,,
८९. प्रकाशस्रोत एक छोटा-सा वक्रपथ बनाता है। १४९
९०. साइकिल के घूमते हुए पहिये मे प्रकाश तथा छाया की वक्र रेखाएँ। १५१
९१. पत्थर गड़ी हुई सड़क पर से गुजरने वाली साइकिल के पहिये की छाया मे वक्र रेखाएँ। १५२
९२. छाया की सीमारेखा के सलग्न विपर्यास हाशिये। १६०
९२. क—विपर्यास त्रिभुज का निर्माण किस प्रकार होता है। १६९
९३. रेलगाड़ी की गति के धीमे पड़ने पर धरती के गुरुत्वाकर्षण बल की दिशा मे आभासी परिवर्तन। १७१
९४. इधर-उधर हिलती हुई द्विनेत्री दूरबीन द्वारा प्रेक्षण करने पर युग्म तारे का आभासी दोलन। १७८
९५. सन्ध्या के समय पवनचक्की का सिल्हुएत (छायाचित्र)। १७९
९६. विषम मोटाई वाले काँच मे से देखने पर भूमि ऊँची-नीची, तरगमय जान पड़ती है। १८०
९७. आकाश पृथ्वी को मेहराब की तरह ढके हुए जान पड़ता है। १८५
९८. ऊर्ध्वबिन्दु से क्षितिज तक के आभासी चाप का दो भागो मे विभाजन। १८७
९९. क—लम्बी फोकस दूरी वाले लेन्स द्वारा सूर्य के बिम्ब का निर्माण। १८८
९९. ख—लेंस सहित को ऊँचे स्तंभ पर लगाइए। ,,
१००. जहाँ आकाशीय छत अधिक दूरी पर जान पड़ती है वहाँ सूर्य का मडलक अधिक बडा दीखता है। १९०
१०१. प्रेक्षक O ऊपर की चढ़ाई को अधिक बढ़ाकर आँकता है, और नीचे के ढाल को घटाकर। १९४
१०२. आकाश, जैसा कि वह लेटने की स्थिति से तथा खड़े होने की स्थिति से दीखता है। १९६
१०३. एरियल के खम्भों के ऊपर आकाश की आभासी शक्ल। १९८
१०४. चश्मे के लेन्स पर पड़ी हुई वर्षा की बूंद मे प्रकाश का विवर्तन। २०२
१०५. सूर्य की अपेक्षा से वह दिशा जिधर हमे इन्द्रधनुष दिखाई देता है। २०५

१०६. इन्द्रधनुष से प्रति-सूर्यबिन्दु तक की कोणीय दूरी नापना। २०५
१०७. a, h, H, r सभी चाप हैं जिनकी नाप अंशों में की जाती है। २०६
१०८. प्रयोगशाला में इन्द्रधनुष का निर्माण करने के लिए फुहार-उत्पादक। २०९
१०९. पानी से भरे फ्लास्क द्वारा इन्द्रधनुष का निर्माण करना। २११
११०. पानी की बूँद के भीतर प्रकाशकिरण का मार्ग जिससे इन्द्रधनुष बनता है। २१२
१११. गौण इन्द्रधनुष की उत्पत्ति। ,,
११२. वर्षा की बूँदों के बादल पर गिरनेवाली सूर्यकिरणें प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषों का निर्माण करती हैं। २१३
११३. पानी की बूँद में से होकर आनेवाली किरणशलाका में प्रकाश-दीप्ति का वितरण। २१४
११४. सूर्य और वर्षा की बौछार के दर्मियान के बादल के टुकड़े आकाश मे त्रिज्यीय धारियों का निर्माण करते हैं। २१७
११५. इन्द्रधनुष में प्रकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण किस तरह करना चाहिए। २१८
११६. ओस-धनुष २२२
११७. प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष २२४
११८. सूर्य के प्रतिबिम्बन से बना हुआ इन्द्रधनुष (कई रूपों में) २२५
११९. प्रतिबिम्बित ओस-धनुषों का निर्माण २२६
१२०. असामान्य इन्द्रधनुष की घटनाएँ २२७
१२१. प्रभामण्डल की कतिपय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाओं का रेखाचित्र। २३०
१२२. किस प्रकार लघु या २२° के प्रभामण्डल की उत्पत्ति होती है। २३२
१२३. बर्फ के मणिभ जो कृत्रिम सूर्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं। २३५
१२४. सूर्य की बढ़ती हुई विभिन्न ऊँचाइयों के लिए परिवृत प्रभामण्डल के विभिन्न स्वरूप। २३७
१२५. चन्द्रमा के निकट तारे की स्थिति के लिहाज़ से परिवृत प्रभामण्डल। २३८
१२६. बर्फ के षट्पहल प्रिज्म मे प्रकाशकिरण का अल्पतम विचलन २२° तथा ४६° का हो सकता है। २३९
१२७. ९०° वाले बर्फ के प्रिज्म से प्रकाश-किरण का वर्तन २४०
१२७. क—बेलनाकार सतह से परावर्तन द्वारा प्रकाश के शंकु का निर्माण। २४२
१२८. सूर्य के ऊपर और नीचे बननेवाले प्रकाशस्तम्भ की सरलतम व्याख्या। २४३
१२९. एक लघु आभामण्डल (आँख के अत्यन्त निकट प्रेक्षित) २५०

१३०. लघु और बृहद् वृत्त जो ताज़े गिरे हुए तुषार से ढकी भूमि पर अति-परवलय के रूप में प्रकट होते हैं। २५१
१३१. भीगे ऐसफाल्ट पर पानी की बूँद की अनुच्छेद-माप (व्यतिकरण रंगों द्वारा निर्धारित)। २५३
१३१. क—हलकी बर्फ की तह वाली काँच की प्लेट में से देखने पर रंग की उत्पत्ति। २५७
१३२. खिड़की के काँच पर बनी हुई खरोंच द्वारा प्रकाश का विवर्तन। २५९
१३३. एक छोटे आकार के बादल के हाशिये के निकट असममित कान्तिचक्र (कोरोना)। २६५
१३३. क—बादलों पर वायुयान की छाया के गिर्द प्रकाश-मण्डल। २७४
१३३. ख— ,, ,, ,, २७८
१३४. ओस से ढकी घास पर हेलिगेन्शीन। २८२
१३५. नाइग्रोमीटर द्वारा प्रेक्षण; वायुमण्डल के परिक्षेपण की नाप। २९५
१३६. आकाश की समान प्रदीप्ति की रेखाएँ तथा समान नीलेपन की रेखाएँ खींचने के लिए मानचित्र। २९७
१३७. छोटे-बड़े आकार की कणिकाओं द्वारा विभिन्न दिशाओं में प्रकाश का परिक्षेपण। ३०१
१३८. भू-दृश्य का एक बड़ा भाग जब घने बादलों की पेटी से ढका होता है तो कभी-कभी क्षितिज खुशनुमा नारङ्गी वर्ण का दिखलाई पड़ता है। ३०२
१३९. आँख से विभिन्न दूरियों पर स्थित वायु के एक छोटे आयतन से आनेवाले प्रकाश की संरचना। ३०३
१४०. आकाश के प्रकाश के ध्रुवण की जाँच। ३०६
१४१. हेडिंजर ब्रुश; एक अद्भुत आकृति, जो नीले आकाश में देखी जा सकती है और यह ध्रुवण की सूचक है। ३०९
१४२. हेडिन्जर ब्रुश सदैव एक ही तरह का नहीं दीखता है। ३१०
१४३. धुन्ध मे वस्तु के पीछे छायाएँ कैसे बनती हैं। ३१२
१४३. क—धुन्ध के समय ऊँची मीनार के सिरे पर छाया-मंडलक कैसे बनता है। ३१४
१४४. ब्रोकेन की प्रेत-छाया, धुन्ध के रूप में। ३१५
१४५. वर्षा की बूँदों में जगमगाहट उत्पन्न करनेवाला सूर्य का प्रकाश हर दिशा मे परावर्तित तथा वर्तित होता है। ३१६

१४५. क—खिड़की के काँच पर पड़ी हुई पानी की बूंद से प्रकाश का परिक्षेपण। ३१८
१४६. सर्चलाइट से जानेवाली प्रकाशशलाका एक अत्यन्त निश्चित दिशा में अचानक समाप्त होती जान पड़ती है। ३२०
१४७. सूर्यास्त के दौरान मे आकाश का रग, जब कि आसमान साफ़ हो। ३२८
१४८. सक्षिप्त सारणी जो सान्ध्य प्रकाश की विभिन्न घटनाओं के विकासक्रम को प्रदर्शित करती है। ३३३
१४९. उन बादलों की दूरी का अनुमान लगाना जिनकी वजह से सान्ध्य किरणे उत्पन्न होती है। ३३६
१५०. सान्ध्य प्रकाश के रगों की व्याख्या। ३३७
१५१. रात्रिकालीन सान्ध्य प्रकाश । ३५१
१५२. राशिचक्रीय प्रकाश सूर्य के निकट क्यों अधिक तीव्र होता है। ३५६
१५३. पुञ्ज-बादलों पर प्रकाश और छाया। ३६७
१५४. सूर्यास्त के पूर्व बादल पर गिरनेवाले प्रकाश की व्यवस्था। ३७०
१५५. पानी के रंग का प्रेक्षण, इसकी सतह पर होनेवाले परावर्तन का परिहार करते हुए। ३८०
१५६. ३० फुट ऊँचे टीले से समुद्र का अवलोकन। ३८३
१५७. समुद्र की तरंग मे विभिन्न रगों का निर्माण कैसे होता है। ३८६
१५८. गदले जल पर पड़नेवाली छाया के हाशियों पर रंग कैसे प्रकट होते है। ४०१
१५९. विभिन्न प्रकाश-व्यवस्थाओं मे हरी पत्तियाँ। ४०७
१६०. कोण आँकने का सरल उपकरण। ४३२

अध्याय १

धूप और छाया

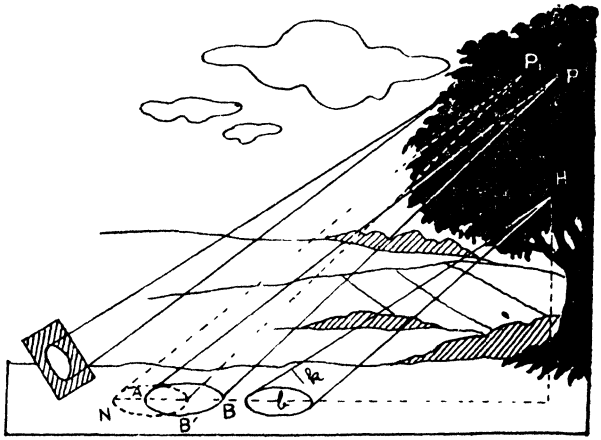
१. सूर्य्य के प्रतिबिम्ब

वृक्षों के झुण्ड की छाया मे भूमि पर प्रकाश के छोटे बड़े अनेक "धब्बे" या खण्ड हम देखते है जो इधर-उधर बेतरतीब बिखरे रहते है, किन्तु सभी की शक्ल समान रूप से दीर्घ वृत्ताकार होती है। इनमे से किसी एक के सामने पेंसिल सीधी रखिए; पेन्सिल और साये के हाशिये को मिलानेवाली रेखा वह दिशा बतलाती है जिधर से प्रकाश की किरणे आकर भूमि पर नन्हा धब्बा बनाती है। अवश्य ये सूर्य्य की किरणे है जो वृक्ष की चोटी के सूराख़ को भेद कर आ रही है; हमारी आँखों को पत्तियो के बीच यत्र-तत्र चकाचौध उत्पन्न करनेवाली चमक दीख पड़ती है।

आश्चर्य की बात यह है कि ये सभी धब्बे एक ही शक्ल के है, यद्यपि इस बात की सम्भावना कम ही है कि ऊपर के सभी सूराख और झरोखे इतने बढ़िया तौर पर एकदम एक ही सरीखे और गोल या मण्डलाकार हो ! इनमे से किसी एक प्रतिबिम्ब के सामने कागज का टुकड़ा इस तरह रखिए कि किरणे कागज की सतह को लम्बवत् काटे। आप देखेंगे कि अब यह धब्बा दीर्घवृत्त की शक्ल का नही बल्कि वृत्ताकार है। कागज को और ऊपर उठाइए, धब्बा छोटा ही होता जायगा। अतः हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि किरणों की शलाकाएँ शकु की शक्ल की है और ये धब्बे दीर्घवृत्त की शक्ल के केवल इसलिए है कि भूमि की सतह इन्हे तिरछे काटती है।

इस घटना की उत्पत्ति का कारण यह है कि सूर्य्य एक बिन्दु मात्र नहीं है। कोई भी एक अत्यन्त सूक्ष्म छिद्र P (चित्र १) सूर्य्य का पूर्णतया स्पष्ट प्रतिबिम्ब A B बनाता है और अन्य सूक्ष्म छिद्र P' कुछ थोड़ा हटा हुआ प्रतिबिम्ब A' B' (बिन्दुओं से प्रदर्शित) बनाता है; कुछ और बड़ा छिद्र जिसमे P और P' दोनों ही हों, सूर्य्य का थोड़ा अस्पष्ट किन्तु अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब A' B बनायेगा।

वास्तव में हम कम-बेश हर तरह के चटकीलेपन वाले धब्बे देख सकते हैं, अधिक चटकीला धब्बा साथ ही साथ कम स्पष्ट भी होगा।



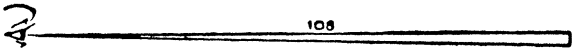
चित्र १—**वृक्ष के घने झुरमुट में प्रवेश करती हुई सूर्य-रश्मियाँ।**

इसकी सम्पुष्टि मे इस बात पर ध्यान दीजिए कि जब सूर्य्य के सामने से बादल गुजरते हैं तो हर धब्बे के ऊपर से उनकी छाया को आप गुजरते हुए देख सकते हैं किन्तु ये उल्टी दिशा मे चलती हैं; सूर्य्य के आंशिक ग्रहण के समय सूर्य्य के ये सभी प्रतिबिम्ब अर्द्ध चन्द्राकार, हँसिया की शक्ल के बनते हैं। जब कभी सूर्य्य-पृष्ठ पर कोई बड़ा धब्बा प्रगट होता है तो यह नीचे बननेवाले स्पष्टतम सूर्य्य-प्रतिबिम्ब पर भी दृष्टिगोचर होता है। आप सूर्य्य का अत्यन्त स्पष्ट प्रतिबिम्ब इस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं—दफ्ती के टुकड़े पर सुई से एक छोटा पूर्णतया वृत्ताकार सूराख बनाइए और इसे धूप मे इस तरह पकड़िए कि सूराख मे से गुजरनेवाली किरणे नीचे छाया की आड़ मे जमीन पर गिरे।

इस ढंग से विभिन्न दूरी पर बननेवाले सूर्य्य-प्रतिबिम्बों को वर्गाकार खानेवाले कागज पर नापिए।

अतः सूर्य्य-मंडलक द्वारा धरती के किसी बिन्दु पर जो कोण बनता है वह सूर्य्य-प्रतिबिम्ब बनानेवाले शंकु के शीर्षकोण A P B के बराबर होगा। इस तरह के छोटे कोण हम प्रायः 'रेडियन' में नापते हैं। हम जब कहते हैं कि यह कोण $\frac{1}{108}$ रेडियन

का है तो इसका अभिप्राय है कि 108 सें० मी० की दूरी पर सूर्य्य 1 से० मीटर व्यास का प्रतीत होता है या 1080 सेंटीमीटर की दूरी पर यह 10 सेंटीमीटर व्यास का प्रतीत होता है (चित्र २)। अतः प्रगट है कि स्पष्ट बननेवाले सूर्य्य-प्रतिबिम्ब का



चित्र २—**सूर्य का मण्डलक हमें $\frac{1}{108}$ रेडियन के कोण पर दिखलाई देता है।**

व्यास उससे नापी गयी सूराख़ की दूरी का 108 वाँ भाग अवश्य होना चाहिए और धुंधले, अस्पष्ट प्रतिबिम्ब के व्यास के लिए इस मान में पत्तियों के बीच के सूराख़ का व्यास भी और जोड़ा जाना चाहिए। वृक्ष के नीचे बननेवाले कम चटकीले किन्तु स्पष्ट प्रतिबिम्ब को कागज़ पर इस तरह प्राप्त करिए कि किरणें कागज पर लम्बवत् गिरे। रोशनी के धब्बे का व्यास k नापिए तथा एक डोरी से कागज़ और पत्तियों के झुरमुट के सूराख़ के बीच की दूरी भी नापिए। क्या k वास्तव में $L \times \frac{1}{108}$ के बराबर है ?

सपाट सतह पर सूर्य्य के प्रतिबिम्ब जब दीर्घवृत्त की शक्ल के बनते हैं तब हम दीर्घवृत्त का लघु अक्ष k और दीर्घ अक्ष b नापते हैं। इन दोनों का अनुपात बराबर होगा वृक्ष की लम्ब ऊँचाई H और दूरी L के पारस्परिक अनुपात के। इसका अर्थ है कि ऊँचाई $H = \frac{k}{b} \times L = 108\frac{kk}{b}$। इस ढंग से 'बीच' वृक्ष की पत्तियों के झुरमुट के नीचे बनने वाले एक विशेष बड़े आकार के सूर्य्य-प्रतिबिम्ब के अक्ष २१ इंच और १३ इंच नापे गये, अतः ऊपर के सूराख़ की, धरती से नापी गयी ऊँचाई ८७० इच या ७२ फुट ६ इच हुई।

ध्यान दीजिए कि प्रातः और सन्ध्या को सूर्य्य के प्रतिबिम्ब अधिक दीर्घ वृत्ताकार बनते हैं जब कि दोपहर के निकट ये अधिक गोल होते हैं। सूर्य्य के बढ़िया प्रतिबिम्ब प्रायः 'बीच', 'लाइम' तथा 'स्काइमोर' वृक्षों के साये में बनते हैं किन्तु पोप्लार, एल्म या मैदानी पेड़ों के नीचे बहुत कम।

छिछले पानी के किनारे खड़े वृक्षों से बननेवाले सूर्य्य-प्रतिबिम्ब को देखिए, ये पानी मे नीचे पेदे पर विचित्र शक्लों में बने हुए दिखलाई देते हैं।

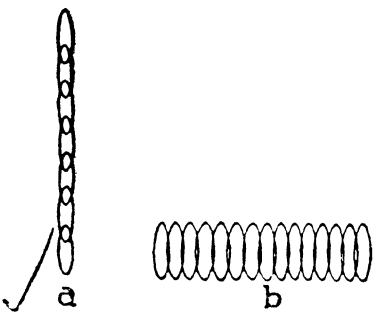
२. छाया

धरती पर बननेवाली स्वयं अपनी छाया को देखिए, आपके पैरों की छाया स्पष्ट होती है किन्तु सिर की नहीं। किसी वृक्ष के तने या खम्भे के निचले भाग की छाया स्पष्ट उभरती है जब कि ऊपरी भाग की छाया ऊँचाई बढ़ने के साथ ही अधिक स्पष्ट और धुँधली होती जाती है।

कागज के तख्ते के सामने अपना हाथ फैलाकर रखिए, छाया स्पष्ट होगी। हाथ को और अधिक दूर रखिए तो प्रत्येक उँगली की प्रच्छाया सँकरी हो जाती है जब कि उपच्छाया चौड़ी और बड़ी होती जाती है, यहाँ तक कि दूरी बढ़ने पर ये एक दूसरे से मिल जाती है।

इन विशिष्टताओ का भी कारण यही है कि सूर्य एक बिन्दु मात्र नहीं है, इसी के अनुरूप सूर्य-प्रतिबिम्ब मे भी हमने यही देखा। उडती हुई तितली या चिड़िया की छाया देखिए (हम इन चीजों पर बिरले ही ध्यान देते है), और आप पायेगे कि यह छाया एक गोल धब्बे सरीखी दीखती है—यह एक "सूर्य-छाया-चित्र" है।

बाड़े को घेरने के काम मे आनेवाली तार की जाली की (जिसमे आयताकार खाने बने थे) छाया एक बार मुझे बहुत ही अजीब-सी लगी क्योंकि उसमे तो केवल खड़े तारों की छाया दीख रही थी, आड़े तारो की नही। सूराख-कटे हुए कागज को धूप मे रखे तो कागज का प्रत्येक सूराख जमीन पर दीर्घवृत की शकल का रोशनी का धब्बा बनाता है। इसी प्रकार तार की छाया को भी हम मान सकते है कि यह नन्हे-नन्हे समान आकृति कैं दीर्घवृतो से बनी है जो अवश्य इस बार काले दीखते है और एक दूसरे के निकट लगे हुए होते है। जब ये तार के दीर्घ अक्ष की दिशा मे पड़ते है तो छाया विशेष स्पष्ट उभरती है और लघु अक्ष की दिशा मे छाया अस्पष्ट रहती है। (चित्र ३)



चित्र ३—सूर्य की तिरछी किरणों द्वारा लोहे के तार की छाया (a) स्पष्ट छाया, (b) अस्पष्ट छाया।

तार की जाली के पीछे एकदम निकट कागज रखिए और फिर इसे उत्तरोत्तर

दूर हटाते जाइए ताकि कागज पर क्रमशः प्रगट होनेवाली विलक्षण छाया का अवलोकन किया जा सके। इसी प्रकार निरीक्षण उन दशाओं में करिए जब सूर्य की किरणें धरती के साथ विभिन्न मान के कोण बनाती हैं, फिर जाली को तिरछी रखकर भी छाया की जाँच करिए।

लोक-कथाओं मे छाया को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसे भयानक शाप समझा जाता था कि किसी व्यक्ति की छाया विलुप्त हो जाय। ख्याल किया जाता था कि यदि किसी व्यक्ति की छाया सिर-विहीन है तो एक वर्ष के अन्दर ही उसकी मृत्यु हो जायगी। इस तरह की किवदन्तियाँ, जो हर देश और काल मे प्रचलित हैं, निःसन्देह हमारे लिए भी बड़ी दिलचस्प हैं, क्योंकि इससे सिद्ध होता है कि नौसिखुए प्रेक्षको के निष्कर्ष पर विश्वास करने मे हमे विशेष रूप से सतर्कता बरतनी चाहिए, चाहे इन प्रेक्षकों की सख्या कितनी ही अधिक क्यों न हो और वे कितने ही एकमत क्यों न हों।

३. सूर्यग्रहण और सूर्यास्त के समय सूर्य-प्रतिबिम्ब और छाया

सूर्य-ग्रहण के दौरान मे अंधकार मे पड़ा चन्द्रमा सूर्य-मण्डलक के सामने सरकता हुआ-सा दिखलाई पडता है, अतः थोड़ी ही देर बाद सूर्य के गोले का बस एक हँसिया सा आकार दृष्टिगोचर होता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस क्षण वृक्षों के झुरमुट के नीचे सूर्य के प्रतिबिम्ब चाहे छोटे हों या बडे हों अथवा अधिक या कम चटकीले, सभी नन्हे अर्द्ध चन्द्राकार हँसिये की शक्ल-जैसे बनते हैं, और इन सबके रुख एक ही ओर होते हैं।

ऐसे वैंक्त पर छाया की शक्ल भी इसी भाँति प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए हमारी उँगलियों की छाया अजीब किस्म की बनती है मानों सिरों पर पंजों के नाखून टेढ़े बने हों। प्रत्येक नन्हीं दीप्तिहीन वस्तु ऐसे समय अर्द्ध चन्द्राकार हँसियों की शक्ल बनायेगी, जैसे एक छोटे डण्डे की छाया एक ही किस्म के नन्हे-नन्हे हँसिया आकार की बहुत सी छाया के जुड़ने से बनती है; जिसमे हाशिये का मोड़ केवल सिरे पर प्रगट होता है।

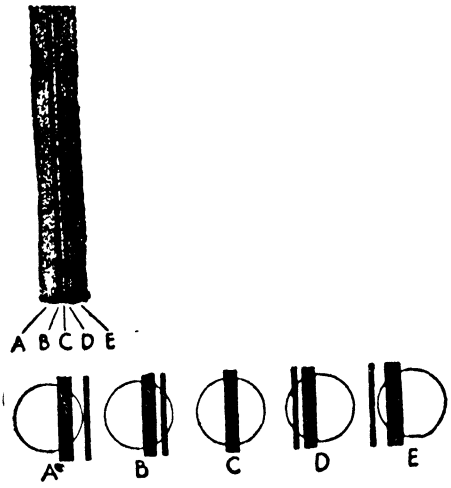
इस तरह की दीप्तिहीन अलग-अलग पड़ी छोटी वस्तु का उपयुक्त उदाहरण गुब्बारा है। वास्तव मे सूर्यग्रहण के वक्त देखा गया है कि गुब्बारा तथा उससे लटकनेवाली टोकरी दोनों की छाया हँसिये की शक्ल की मुड़ी हुई बनती है। वायुयान भी यदि यह काफी ऊँचाई पर हो, ऐसे समय हँसिये के आकार की छाया डालता है।

सूर्यग्रहण चाहे वे आंशिक ही क्यों न हों, प्रायः कम ही लगते हैं। किन्तु खुले क्षितिज के पार जिस समय समुद्र में सूर्य अस्त हो रहा हो, उस समय यदि खिड़की

के काँच पर छोटे बड़े आकार के सिक्के चिपका दें या उन्हें पतले तार से सीधे लटका दें तो उनकी छाया भी उसी प्रकार की हँसिये के आकार की टेढ़ी बनती हुई देखी जा सकती है। सिक्कों के छोटे बड़े आकार के अनुसार छाया की शक्ल तथा प्रकाश-वितरण में तबदीली होती है और जैसे-जैसे सूर्य क्षितिज के नीचे डूबता जाता है वैसे वैसे भी छाया की शक्ल तथा उसकी प्रदीप्ति बदलती है।

४. दुहरी छाया

वृक्षों की पत्तियाँ जब झड़ चुकी होती हैं तो प्रायः हम दो समानान्तर टहनियों की छाया को एक दूसरे के ऊपर पड़ती हुई देखते हैं। जो टहनी हमारे निकट होती है उसकी छाया स्पष्ट और गाढ़ी होती है, और जो टहनी अधिक दूरी पर होती है उसकी छाया अधिक चौड़ी और भूरी दीखती है। अब आश्चर्यजनक बात यह है कि जब संयोग से दोनों में से एक छाया दूसरी के ऊपर पड़ती है, तब हम अधिक स्पष्ट दीखनेवाली छाया के बीचोबीच एक चमकीली रेखा देखते हैं अतः यह छाया दुहरी प्रतीत होती है (चित्र ४)। इसका कारण क्या हो सकता है?



चित्र ४—दुहरी छाया कैसे बनती है।

मान लीजिए कि दूरवाली टहनी अधिक मोटी है और निकट की पतली। छाया के विभिन्न भागों में, तथा निकट की भूमि पर प्रदीप्ति कितनी है यह मालूम करने के लिए कल्पना करिए कि हम उन विभिन्न भागों से सूर्य की ओर बारी-बारी से देख रहे हैं। मान लीजिए, पहले हम अपनी आँख को छाया के [illegible] कुछ इंच बाहर की ओर रखकर सूर्य की ओर देख रहे हैं। हम देखेंगे कि सूर्य का समूचा मण्डलक हमारी ओर रोशनी फेंक रहा है। अब माना कि आँख को हमने इस तरह हटाया कि आँख दूरवाली टहनी की उपच्छाया में बिन्दु A पर स्थित है (चित्र ४)। अब यह टहनी हमें सूर्य-मण्डलक के सामने दीखेगी और चूंकि यह सूर्य के एक हिस्से को अपनी आड़

में रोक रही है अतः इस भाग में, जहाँ हमारी आँख स्थित है, प्रकाश की प्रदीप्ति कम हो जायगी। आँख और अधिक हटाएँ ताकि यह बिन्दु B पर स्थित हो, तब द्वितीय टहनी भी सूर्य के सामने आ जाती है और दोनों टहनियाँ एक साथ सूर्य के प्रकाश के अधिकाश को अपनी आड़ मे रोकती हैं। किन्तु यदि आँख को हटा कर बिन्दु C पर लाये तो वहाँ से दोनों टहनियाँ एक दूसरे की सीध मे दीखेगी और उस दशा मे सूर्य-मण्डलक का वह भाग जो टहनियो की आड़ मे पड़ता है, पुनः कम हो जायगा और इस कारण भूमि के इस भाग पर रोशनी फिर बढ़ जाती है। यदि यह बात हम ध्यान मे रखे कि जब हम भूमि पर छाया को देखते हैं तो हम एक साथ ही उन सभी दशाओं का अवलोकन करते हैं जिन पर अलग-अलग ऊपर विचार किया गया है, तब आसानी से हम समझ सकते हैं कि क्यों समूची छाया का मध्य भाग बगल के दाहिने या बाये भाग की तुलना मे अधिक प्रकाशवान् होता है।

चित्र ४ मे मैंने मोटे तौर पर यह दिखलाया है कि बारी-बारी से बिन्दु A, B, C, D, E पर आँख रखने पर सूर्य-मण्डलक कैसा दिखलाई देगा; अवश्य ऊपर की भाँति यहाँ मान लिया गया है कि दूरवाली टहनी निकट की टहनी की अपेक्षा मोटी दीखती है। प्रकट रूप से यह घटना उस दशा मे दीखेगी जब दोनों ही टहनियाँ भूमि पर सूर्य-मण्डलक (बिम्ब) की अपेक्षा छोटा कोण बनाती हैं।

'कुछ समय हुए मैं समुद्रतट पर टहल रहा था.....मार्च की सन्ध्या का समय था। पश्चिम मे समुद्र के पीछे सूर्य अस्त हो रहा था, और चन्द्रमा पूर्व मे चटकीली रौशनी से प्रकाशित था। काफ़ी लम्बे अरसे तक धरती पर डूबते हुए सूर्य के कारण मेरी छाया बनती रही जो पूर्व की ओर पड़ रही थी, **किन्तु बाद में कुछ बहुत थोड़े समय के लिए मेरी छाया एकदम विलुप्त हो गयी** और तब चन्द्रमा की रोशनी अस्त होनेवाले सूर्य की रोशनी से अधिक तेज़ प्रतीत हुई और मेरी छाया पश्चिम की ओर पड़ने लगी।''

क्या यह प्रेक्षण सही था ?

[पानी की सतह पर पड़नेवाली छाया के लिए देखिए § २१६, २१७ और धुध पर पड़नेवाली छाया के लिए १८३; छाया के हाशिये पर प्रकाश और छायाँ की स्पष्टता के लिए देखिए प्रकरण ९२]

1. From the Icelandic of S. Nordal : Hcl (1917)

अध्याय २

प्रकाश का परावर्त्तन

५ परावर्त्तन का नियम

ऐसी जगह ढूँढ़िए जहाँ अत्यन्त शान्त, स्थिर पानी की सतह से चन्द्रमा प्रतिबिम्बित हो रहा हो। क्षितिज के ऊपर चन्द्रमा द्वारा बननेवाले कोण और क्षितिज के नीचे उसके प्रतिबिम्ब से बननेवाले कोण की परस्पर तुलना करिए—दोनों ही, प्रेक्षण की त्रुटि-सीमा के अन्दर-अन्दर, परस्पर बराबर होंगे।

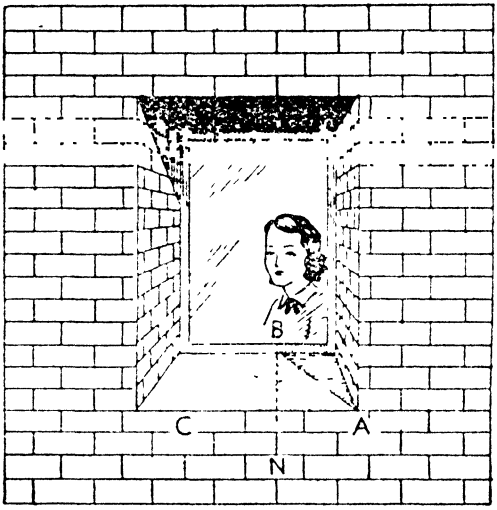
चन्द्रमा यदि आकाश मे बहुत ऊँचाई पर स्थित न हो, तो आप अपनी छड़ी को फैलायी हुई भुजा के छोर पर इस तरह सीधी खड़ी कर सकते हैं कि छड़ी का ऊपरी सिरा चन्द्रमा की सीध मे दीखे तथा हाथ का अँगूठा क्षितिज की सीध मे। अपनी भुजा को इसी स्थिति मे रखकर हाथ को भुजा के गिर्द इस तरह घुमाइए कि छड़ी का सिरा नीचे की ओर हो जाय, अब देखिए कि यह सिरा चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को छूता है या नहीं।

दूरबीन द्वारा नक्षत्रों के प्रतिबिम्ब की इसी ढंग से नाप करके परावर्तन के नियम की अत्यन्त सही जाँच की गयी है।

दीवार मे भीतर की ओर स्थित खिडकी मे सूर्य की किरणे उस वक्त प्रवेश करती है जब कि सूर्य आकाश मे अधिक ऊँचाई पर नही होता (चित्र ५)। छाया अब आपाती किरणों की दिशा बतलाती है; परावर्त्तित प्रकाश अधिक चटकीली रोशनी के धब्बे के रूप मे B C की दिशा मे गिरता है। यह देखा जा सकता है कि अभिलम्ब[1] BN के लिहाज से ये दोनो दिशाएँ समित[2] हैं और इसलिये $\angle ABN = \angle CBN$। यह गुण परावर्त्तन का नियम नही है, बल्कि उससे प्राप्त एक परिणाम है; इसे सिद्ध करिए।

1. Normal 2. Symmetrical

दूर स्थित घरों की खिड़कियाँ केवल उगते हुए या अस्त होने वाले सूर्य को ही क्यों प्रतिबिम्बित करती है ?



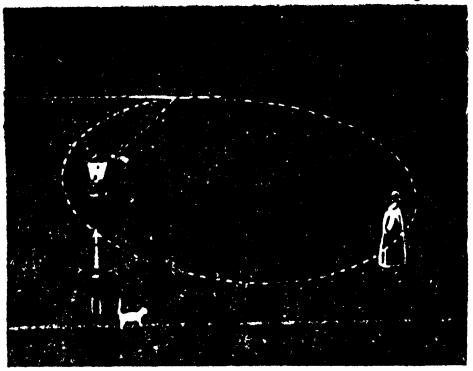
चित्र ५—भीतर धसी हुई खिड़की से सूर्य की रोशनी का परावर्तन।

६. तार से परावर्त्तन

टेलीफोन के तार धूप में चमकते रहते हैं। यदि आप तार के समानान्तर चलें, तो चमक की रोशनी का धब्बा भी आपके साथ-साथ उसी रफ्तार से सरकता हुआ दीख पड़ता है। इसी प्रकार हम देख सकते है कि किस प्रकार रात को, सड़क के खम्भे का लैम्प ऊपर लगे ट्रामलाइन के तार पर प्रकाश की रेखा बनाता है। इन प्रतिबिम्बों की सही स्थिति किस बात से निर्धारित होती है ? अपने मस्तिष्क में तार को स्पर्श करते हुए एक ऐसे दीर्घ वृत्ताभीय[1] ठोस की कल्पना करिए जिसके एक फोकस पर आपकी आँख स्थित हो और दूसरे फोकस पर प्रकाश-स्रोत (चित्र ६)। प्रतिबिम्बित प्रकाश के धब्बे की स्थिति उस स्पर्शीबिन्दु[2] पर होगी जहाँ तार दीर्घ-वृत्ताभीय ठोस को स्पर्श करता है, क्योंकि दीर्घ वृत्ताभीय ठोस का एक सुप्रसिद्ध गुण

1. Ellipsoid 2. Tangent point

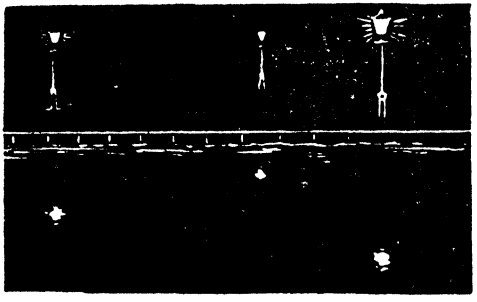
यह है कि इसकी सतह के किसी बिन्दु को दोनों फोकस बिन्दुओं से मिलाने वाली रेखाएँ उस बिन्दु के स्पर्शी धरातल के साथ बराबर मान के कोण बनाती है।



चित्र ६—**टेलीग्राफ के तारों से सड़क के लैंप का प्रतिबिम्बन।**

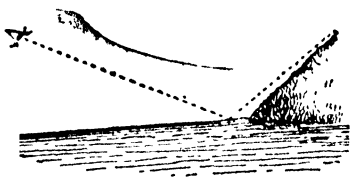
७. वस्तु और उसके प्रतिविम्ब में अन्तर

बहुत-से लोगों का ख्याल है कि शान्त, स्थिर पानी मे किसी दृश्य का प्रतिबिम्ब ठीक उस दृश्य के मानिन्द दीखता है, केवल यह ऊपर से नीचे को उलट जाता है। यह धारणा नितान्त भ्रमपूर्ण है। ध्यान दीजिए, रात्रि मे सड़क पर लगे लैम्प किस प्रकार प्रतिबिम्बित होते हैं! (चित्र ७क) किसी टीले को देखिए जिसका ढाल



चित्र ७ क—**वस्तु अपने प्रतिबिम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है।**

पानी तक पहुँचता हो, तो पानी मे इसका प्रतिबिम्ब छोटा ही दीखता है और यदि पानी की सतह से हम काफ़ी अधिक ऊँचाई पर हों तो प्रतिबिम्ब एकदम विलुप्त भी हो जाता है (चित्र ७ख)। पानी मे खड़ी पत्थर की चट्टान के सिरे का प्रतिबिम्ब आप कभी भी नही देख सकते।



चित्र ७ ख—**वस्तु अपने प्रतिबिम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है।**

ये सभी प्रभाव स्वाभाविक प्रतीत होते हैं बशर्ते आप यह बात ध्यान मे रखे कि परावर्त्तित प्रतिबिम्ब वास्तव में दृश्य के ही तद्रूप होता है, केवल उसे देखने का पहलू बदल जाता है क्योंकि प्रतिबिम्ब मुख्य वस्तु की स्थिति से हटा हुआ होता है। प्रतिबिम्ब मे हमें वस्तु इस प्रकार दिखलाई देती है मानो हम उसे पानी के नीचे के एक ऐसे बिन्दु से देख रहे हैं जो पानी की सतह से उतना ही नीचे है, जितनी हमारी आँख सतह से ऊपर है। वस्तु की दूरी ज्यों-ज्यों बढ़ती है त्यों-त्यों यह अन्तर भी कम होता जाता है (देखिए §§ ५, १३०)।

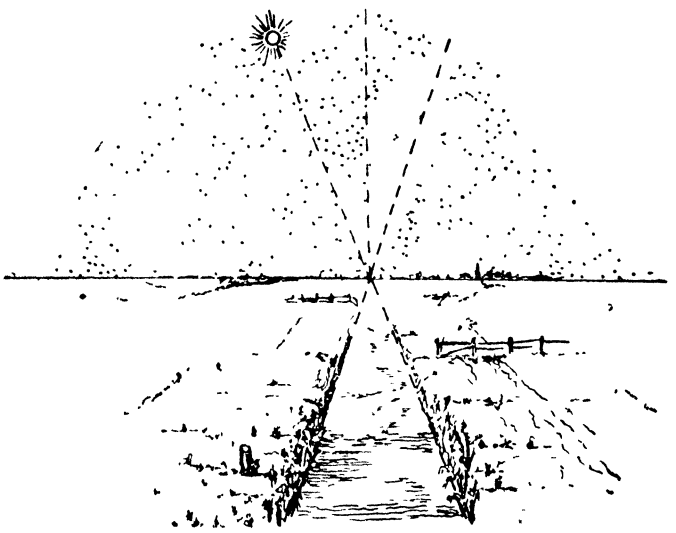
फिर एक और बात पर भी गौर करना होगा। छोटे तालाबों और सड़क के किनारे के गड्ढों के पानी मे दीखनेवाली झाड़ियों और वृक्षों के प्रतिबिम्ब में स्पष्टता और रंगों तथा शेड के सौष्ठव की मात्रा स्वयं वस्तु के मुकाबले मे कहीं अधिक जान पड़ती है। दर्पण के प्रतिबिम्ब में बादल जितने सुन्दर दीखते हैं उतने वे स्वयं कभी नही दीखते। दूकान की खिड़की के काँच से जिसके पीछे पृष्ठभूमि के लिए गहरे रंग का पर्दा लगा हो, सड़क का प्रतिबिम्ब आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट दीखता है। ये अन्तर भौतिक की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक कारणों से अधिक उत्पन्न होते हैं। कुछ लोग इसका कारण यह बतलाते हैं कि प्रतिबिम्बित दृश्य ऐसी भावना उत्पन्न करते हैं मानों हम एक सपाट सतह मे पड़ी तसवीर देख रहे हैं (असलियत यह है कि ठीक वस्तु की तरह ही प्रतिबिम्ब के विभिन्न भाग भी विभिन्न धरातलों मे स्थित होते हैं)। अन्य लोगों का कहना है कि दर्पण के फ्रेम के भीतर प्रतिबिम्ब के बनने के कारण अन्तराल में दृश्य स्थिति अनिश्चित जान पड़ती है, अतः उसका उभार विशेष स्पष्ट महसूस होता है[1]। लेकिन मुझे तो इसका एक अधिक महत्त्वपूर्ण कारण यह जान पड़ता है कि प्रतिबिम्ब मे दीखने वाला दृश्य अपने इर्दगिर्द के आकाश की तेज़ रोशनी की चकाचौध से आँख

1. J, O, S, A, 10, 141, 1925

को प्रभावित नहीं करता अर्थात् दृश्य बहुत कुछ वैसा ही दीखता है जैसा किसी नली में से देखने पर (§ ७१)। फिर प्रतिबिम्बित होने पर प्रकाश की दीप्ति भी कम हो जाती है, अतः इस दशा मे आकाश और बादलों का हम अधिक आसानी से अवलोकन कर सकते हैं जो अन्यथा हमारी आँखो के लिए अत्यधिक चमक पैदा करते हैं।

७ क. गड्ढों और नहरों से प्रतिबिम्बित प्रकाश-किरण-पुंज

धूपवाले दिन पानी की प्रत्येक स्थिर सतह सूर्य की किरणों का परावर्त्तन करती है और ये सभी किरण-रेखाएँ भूमि-प्रदेश पर ऊपर की ओर सर्चलाइट की भाँति आती हुई प्रतीत होती हैं। फिर भी इसे हम बहुत कम अवसरों पर ही देख पाते हैं; प्रकाश्यतः इसके लिए अनुकूल परिस्थितियों की आवश्यकता होती है। इसके लिए सर्वोत्तम अवसर प्रात. या सन्ध्या को मिल सकता है जब कि सूर्य आकाश मे नीचे ही



चित्र ७ ग—नहर के पानी से सूर्य-रश्मियों का परावर्तन।

रहता है और इस कारण परावर्त्तन अधिक प्रबल हो पाता है (देखिए § ५२)। प्रत्यक्ष है कि हवा मे धुन्ध मौजूद होनी चाहिए ताकि किरणरेखा का मार्ग दृष्टिगोचर हो सके, किन्तु कुहरे की उपस्थिति इस घटना को दूषित कर देगी। पानी के गड्ढे या नहर की दिशा सूर्य की ओर होनी चाहिए ताकि किरणे आसानी से पानी तक

पहुँच सकें। हमें सूर्य की दिशा मे देखना चाहिए, उलटी दिशा में नहीं; क्योंकि पहली दशा में धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण अधिक प्रबल होता है (§ १८३)। पानी की सतह समतल, चिकनी होनी चाहिए; ऐसा उस दिन ही हो सकता है जब हवाएँ न चल रही हों; और गड्ढा लम्बा और सीधा होना चाहिए। निचले भूमि-खण्डों में अक्सर अनेक समानान्तर खाइयाँ मिलती हैं, और यदि [illegible] अनुकूल हुई तो रेलगाड़ी पर इन्हे आड़ी दिशा मे पार करते समय हर खाई पर आपको प्रकाश-ज्योति ऊपर की ओर लपकती हुई दीखेगी।

इस बात पर ध्यान दीजिए कि नहर के बाये किनारे पर यदि आप खड़े हैं तो आपको बायी ओर की किरण-शलाका दाहिनी ओर की किरण-शलाका की अपेक्षा अधिक तीक्ष्ण दीख पड़ेगी; और यदि आप दाहिने किनारे पर खड़े हैं तो दाहिनी ओर की किरण-शलाका अधिक तीक्ष्ण दीखेगी (चित्र ७ग)।

८. कपट परावर्तन

मकानों की पक्ति गली मे काली छाया की पट्टी-सी बनाती है, किन्तु बीच-बीच मे रोशनी के अप्रत्याशित धब्बे भी दीखते हैं (चित्र ८)। रोशनी यहाँ कैसे पहुँच पाती है? धब्बे के सामने हाथ रखिए, और उसकी साया की स्थिति देखकर मालूम करिए कि किस दिशा से वहाँ प्रकाश आ रहा है। आप देखेंगे कि गली की दूसरी ओर के मकान की खिड़की से परावर्त्तित होकर यह रोशनी आ रही है।

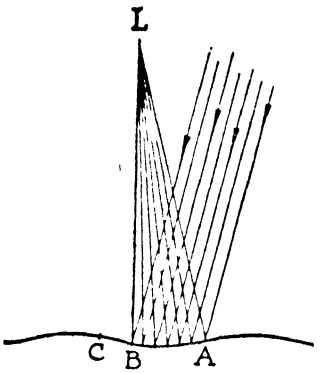


चित्र ८—सँकरी अँधेरी गली में धूप के धब्बे।

इसी प्रकार पानी की नहर की सतह पर रोशनी के धब्बे देखे जा सकते हैं यद्यपि नहर स्वय साये मे स्थित होती है। दूसरी ओर स्थित मकानो से परावर्त्तित होकर ही प्रकाश इन धब्बों तक पहुँचता है।

पानी के किनारे खड़े मकानों की कतार पूर्णतया साये मे होती है, तब भी उन पर रोशनी के धब्बे हिलते-डोलते रहते हैं जो एक नियमित शक्ल मे बहुत कुछ

समानान्तर लकीरों के रूप मे आगे की ओर चलते जान पड़ते हैं। ये पानी की लहरों से परावर्त्तित होनेवाले प्रकाश के धब्बे हैं (चित्र९)। लहर का भाग AB एक अवतल दर्पण सरीखा काम करता है और फोकस बिन्दु L पर यह प्रकाशकिरण की एक चमकीली रेखा बनाता है। लहर के भाग BC की वक्रता कम है, अतः इससे परावर्त्तित होने वाली किरणें बहुत अधिक फासले पर मिलती हैं। इस प्रकार दीवार की हर दूरी के लिए लहर के कुछ भाग ऐसे मिलते हैं जो वहाँ प्रकाश की तीक्ष्ण रेखा बनाते हैं, जब कि अन्य भागों से वहाँ के लिए बस सामान्य रूप से रोशनी पैदा करनेवाला प्रकाश पहुँचता है। इसी प्रकार के प्रभाव बन्दरगाह के घाट तथा पुल के मेहराव की भीतरी सतहों पर भी देखे जा सकते हैं (प्लेट IV a)। दरअसल यह उदाहरण टिमटिमाते हुए सितारे का नमूना (देखिए §४०) उपस्थित करता है।



चित्र ९—किंचित् तरंगित पानी द्वारा परावर्तन से प्रकाश-रेखाओं का निर्माण।

९. प्रतिबिम्ब पर लक्ष्य वेधना

साल्जवर्ग के निकट 'कोनिग्सी' नाम की एक झील है जो चारो ओर से ऊँचे पहाड़ों से घिरी होने के कारण अत्यन्त शान्त रहती है। यहाँ गोली दागने की प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। इस प्रतियोगिता मे प्रतियोगी लक्ष्य के प्रतिबिम्ब पर निशाना साध कर पानी पर गोली दागता है और तब गोली पानी की सतह से टकरा कर उछलती है और लक्ष्य को बेधती है। इस प्रतियोगिता मे भी लक्ष्य भेदने की सम्भावना कम से कम उतनी ही प्रबल अवश्य होती है जितनी उस दशा में जब कि सीधे लक्ष्य पर ही निशाना साधा जाय।

इस सम्बन्ध मे विचित्र बात यह है कि गोली पानी की सतह से वापस नही उछलती बल्कि उसके अन्दर प्रवेश करके कुछ दूर तक भीतर वह चली जाती है। द्रवगतिकीय सिद्धान्त से हम जानते हैं कि गोली के गिर्द के द्रव की हरकत का प्रभाव यह होता है कि गोली को वह सतह की ओर फेंके। फलस्वरूप, अन्त मे सतह से बाहर

दूसरी ओर गोली उसी कोण पर बाहर निकलती है जिस कोण पर पानी की सतह मे वह घुसी थी। पानी के अन्दर पर्दे लटका कर गोली की मार्ग-दिशा का अनुगमन सम्भव हो सका है[1]।

१०. गॉस का हीलियोट्रोप

दर्पण को ऐसी स्थिति मे रखिए कि यह सूर्य की रोशनी को परावर्त्तित कर सके। दर्पण के निकट परावर्त्तित प्रकाश के धब्बे की शक्ल दर्पण की तरह ही होती है, कुछ दूर आगे जाने पर धब्बे की आकृति कुछ अस्पष्ट हो जाती है; और भी अधिक दूरी पर यह वृत्ताकार हो जाता है तथा बहुत दूर जाने पर यह सूर्य के सही प्रतिबम्ब की शक्ल अख्तियार कर लेता है। अब दर्पण के एक हिस्से को ढँक दीजिए तो परावर्त्तित धब्बा अब भी वृत्ताकार बना रहता है, किन्तु इसकी प्रदीप्ति कम हो जाती है। ५० गज से अधिक दूरी पर रोशनी के धब्बे को देख सकना सम्भव न होगा, किन्तु इस फासले पर स्थित प्रेक्षक अब भी धूप मे दर्पण को तेज प्रकाश से चमकता हुआ देख सकेगा।

दर्पण को शिकजे मे लगाकर, या दो ईटो के सहारे, खुली जगह मे इस तरह रखिए कि सूर्य की किरणे परावर्त्तित होने पर पूर्णतया क्षैतिज तल मे पड़े। अब दर्पण की ओर मुँह करके पीछे की ओर उतनी दूर तक हटिए जितनी दूर तक परावर्त्तित रोशनी आपको दीखती रहे। अवश्य परावर्त्तित किरण-पथ की सीध मे अपने को रखना कठिन होगा, किन्तु सौभाग्यवश इस किरणरेखा का व्यास, ज्यों-ज्यो पीछे हटे, त्यों-त्यों बढ़ता जाता है। इस बात की जाँच करने के लिए आप किरणरेखा के पथ मे दाहने-बाये हटकर देख सकते है कि किरणरेखा का दायरा कितना बड़ा है; १०० गज की दूरी पर यह दायरा १ गज चौड़ा मिलेगा। फिर आपको यह ध्यान मे रखना होगा कि इस बीच सूर्य आकाश मे सरक रहा है; इस कारण इस प्रयोग के लिए दोपहर का समय चुनना चाहिए क्योकि तब परावर्त्तित किरणे, बिना किसी विशेष समायोजन के, क्षैतिज बनी रहती है।

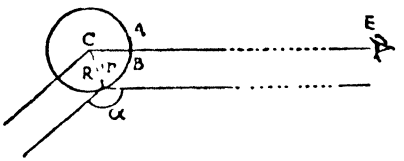
आश्चर्य की बात है कि रोशनी का नन्हा-सा यह धब्बा कितनी दूर तक दिखलाई देता रहता है! त्रिकोण सर्वेक्षण मे गॉस ने इस तरीके से सुस्पष्ट प्रकाश-स्रोत हासिल किये थे जो नापनेवाले यत्रों की दूरबीन द्वारा ६० मील के फासले से भी देखे जा सकते थे। इस प्रकार बनाये गये हीलियोट्रोप मे विशेष यत्र सस्थान लगे होते है ताकि

1. Ramsauer Ann. d. Phys. 84, 730, 1927

प्रकाश-रश्मियों को इच्छानुसार किसी भी दिशा मे फेंक सके। प्रकाश को ढककर या उसे फिर खोल कर मोर्स संकेत (Morse Signats) दूर तक भेज सकते है।

११. वाटिका-ग्लोब में प्रतिबिम्ब

उत्तल दर्पण, जिनके बारे में हम स्कूल मे पढ़ते रहते है, छोटे आकार के होते है तथा इनकी वक्रता भी कम ही होती है। ये दर्पण वाटिका-ग्लोब के उस छोटे-से भाग A B के अनुरूप होते है जो हमारे ठीक सामने पड़ता है और जिसमे स्वयं अपना प्रतिबिम्ब हम देख सकते है (चित्र १०)।



चित्र १०—एक छोटे वाटिका-ग्लोब में विश्व का प्रतिबिम्बन किस प्रकार होता है।

किन्तु समूचा वाटिका-ग्लोब तो अपेक्षाकृत बहुत अधिक दिलचस्प है। सबसे अधिक विलक्षण बात यह है कि इसके अन्दर समूचे गगनमण्डल (अधिक यथार्थ यह है कि आकाश और पृथ्वी) की सतह एक वृत्त के अन्दर हम देख सकते है। वाटिका-ग्लोब एक ऐसे प्रकाश-यंत्र सरीखा काम करता है जिसका द्वारक आदर्श रूप से विशप रूप से चौड़े मुंह का हो। अवश्य ऐसा इसलिए सम्भव हो सका है कि इसके अन्दर बनने वाले प्रतिबिम्ब विकृत होते हैं। ये बिम्ब त्रिज्या की दिशा मे सकुचित हो जाते है; वस्तु, ग्लोब की सतह के जितने निकट होगी उतना ही अधिक विकृत उसका बिम्ब बनेगा (चित्र १०)। सहूलियत के लिए मान लीजिए कि वस्तु और निरीक्षक दोनों ही ग्लोब से काफ़ी अधिक फासले पर है (ग्लोब की त्रिज्या R की तुलना मे)। अब वस्तु यदि ऐसी दिशा मे है कि यह रेखा C E के साथ कोण α बनाती है तो वह वस्तु ग्लोब के केन्द्र C से दूरी $r = R \sin \frac{1}{2}\alpha$ पर प्रतिबिम्बित होगी। सहज ही देखा जा सकता है कि कोण α जैसे-जैसे $180°$ तक बढता जाता है वैसे-वैसे r भी बढ़कर मान R के बराबर हो जाता है, अत. समूचा आकाश और पृथ्वी ग्लोब पर प्रतिबिम्बित होता है। केवल वह नन्हा-सा भाग जो ग्लोब के ठीक पीछे पडता है, इस प्रतिबिम्ब मे मौजूद न होगा; अवश्य ग्लोब से जितनी अधिक दूरी पर हम खड़े होगे, अनुपात से ग्लोब की आड़ में पड़नेवाला भाग भी छोटा होता जायगा।

हेल्महोल्ट्ज़ ने एक बार कहा था कि ग्लोब मे विकृत दीखनेवाला भूमि-दृश्य पूर्णतया सामान्य प्रतीत होगा बशर्ते दूरी नापने का हमारा मानदण्ड भी उसी नियम

के अनुसार लम्बाई में घटा लिया जाय। यह कथन आपेक्षिकता-सिद्धान्त से निकट सम्बन्ध रखता है।

ऋतु प्रकाश-विज्ञान के क्षेत्र में वाटिका-ग्लोब का उपयोग अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण के लिए किया जा सकता है क्योंकि आकाश के एक बृहत् क्षेत्र का अत्युत्तम सर्वेक्षण इससे प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप ग्लोब से चन्द गजों की दूरी पर खड़े हों ताकि सूर्य आपके सिर की आड़ मे छिप जाय तो आप असाधारण स्पष्टता के साथ निम्न-लिखित को देख सकेंगे (आगे देखिये)—(क) छल्ले, प्रकाश मण्डल (हैलो), रंग-बिरगे बादल, बिशप का छल्ला, उषा के शेड; तथा (ख) हेडिजर का ब्रुश और आकाश से प्राप्त प्रकाश का ध्रुवण। प्रतिबिम्ब के छोटे बनने के कारण शेड का हलका चढ़ाव-उतार गहरी प्रवणता में तबदील हो जाता है अतः प्रकाश की द्युति तथा रंग के अन्तर आँखों को अधिक स्पष्ट प्रतीत होते हैं। वाटिका-ग्लोब में देखने पर धुन्धवाले दिन आकाश नितान्त भिन्न दीखता है बनिस्बत उस दिन के जब वायु स्वच्छ तथा ध्रुवीय होती है। सायकिल के हेन्डल पर लगे उत्तल दर्पण की चमकीली सतह मे प्रायः आकाश के नन्हे-नन्हे हलके किस्म के बादल दिखलाई पड़ते हैं जो सीधे ही देखने पर दृष्टि की पकड़ मे नहीं आते।

११ क. साबुन की झाग और बबूले में परावर्तन

ब्वायज, जिसने साबुन की झाग की झिल्लियों से अनेक रोचक प्रयोग किये थे, परामर्श देता है कि किसी शान्त दिन, इमारतों या वृक्षों के दर्मियान एक सुरक्षित कक्ष मे बैठकर खुली हवा मे साबुन के बबूले फूंकने चाहिए। तब आप उसकी कोमल सतह मे आश्चर्यजनक प्रतिबिम्बन देखेंगे। हमारे रुख की सतह एक उत्तल दर्पण जैसा काम करती है, और वाटिका-ग्लोब की भाँति ही सीधे प्रतिबिम्ब प्रदर्शित करती है, और इस सतह के जितने निकट हम आते हैं उतने अधिक विकृत और सकुचित ये प्रतिबिम्ब होते जाते हैं। किन्तु साथ ही साथ इस ओर की सतह के पार पीछे की सतह भी हम देखते हैं जो एक अवतल दर्पण-जैसा काम करती है और प्रतिबिम्ब को उलट देती है। सीधे प्रतिबिम्ब तथा उलटे प्रतिबिम्ब दोनों एक-से ही आकार के होते हैं; एक दूसरे पर पडने के कारण ये अस्पष्ट हो सकते हैं, किन्तु बचत इस बात मे हो जाती है कि पहली सतह दूसरी सतह की तुलना मे हमारी आँख के अधिक निकट होती है।

विशेषतया इन पर ध्यान दीजिए—आकाश का दुहरा प्रतिबिम्ब, स्वयं आपके

सिर की छाया-आकृति जो चमकीली पृष्ठभूमि के सन्मुख काले रंग मे उभरती है, छतों की छाया-आकृतियाँ जो विचित्र रूप से विकृत होती है, आपके हाथ का (जिसमें आप नली पकडे हैं जिसके सिरे पर साबुन का बबूला लटक रहा है) प्रबल रूप से आवर्द्धित प्रतिबिम्ब (जो अवतल सतह मे सर्वोत्तम दीखता है); उस स्थल का प्रतिबिम्ब जहाँ से बबूला लटकता है (अवश्य केवल अवतल सतह मे ही), तथा बादलों के सुस्पष्ट प्रतिबिम्ब जो आकाश मे इतने अस्पष्ट और धुन्ध लिये हुए दीखते थे।

किन्तु सर्वोपरि, आश्चर्यमय उद्दीप्त बादलों के प्रतिबिम्ब को देखने मे आपको आनन्द आयेगा जिनके रग अधिक परिपूर्ण तथा सपृक्त होते हैं..... जब तक कि बबूला फूट न जाय। ये हैं न्यूटन के सुविख्यात व्यतिकरण के रंग (§ १५५)।

इन बबूलों के तथा प्रतिबिम्बो के फोटोग्राफ लीजिए!

१२. पानी की सतह का अनियमित उभार

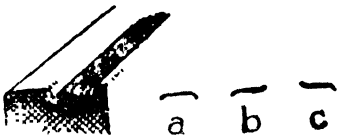
टीलों की आड़ मे पड़े गड्ढे की कल्पना कीजिए जिसके पानी की सतह को हिलाने-डुलाने के लिए हवा वहाँ न पहुँच पाती हो। घास के इक्के-दुक्के डठल या नरकुल की नली पानी से बाहर निकली दिखलाई पडती है। यह दिलचस्पी की बात है कि प्रत्येक डठल ठीक जहाँ वह पानी से बाहर निकलता है वहीं रोशनी के धब्बे से वह घिरा होता है। डठल एक केशनलिका सरीखा काम करता है, अतः पानी के पृष्ठ-तनाव के कारण डठल के गिर्द पानी कुछ ऊपर चढ़ जाता है। पानी का यह उभरा हुआ भाग सूर्य की रोशनी परावर्त्तित करता है, अतः दूर तक यह दिखलाई देता है। यदि गड्ढे के पानी का एक भाग टीले के सायेवाले ढाल को प्रतिबिम्बित करता है और दूसरा भाग चमकीले आकाश को, तब हम देख सकते है कि किस प्रकार टीले की छाया के हाशिये पर पडनेवाले जल के उठे हुए भाग प्रकाश और अन्धकार का विपर्यास प्रदर्शित करते हैं जो इस बात पर निर्भर होगा कि किस दिशा से हम देख रहे हैं।

इसी प्रकार किसी नदी मे जहाँ थोडा भी बहाव मौजूद हो, छोटे-छोटे भँवर हम देख सकते है। प्रत्येक भँवर मे भीतर की ओर दाब कुछ कम होता है, अतः केन्द्र की ओर पानी की सतह नीचे दब जाती है। अनुमानतः बीच के गड्ढे का व्यास २ इच होता है और इसकी गहराई करीब $\frac{1}{10}$ इच। किनारे की छाया के हाशिये पर जहाँ प्रतिबिम्ब से अन्धकार और प्रकाश की सीमा पड़ती है, पानी के हलके आन्दोलन

भी स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। प्रायः इस स्थान पर नन्हीं-नन्हीं चकरियों की कतार-सी दीखती है।

वर्षा हो चुकी है। ट्राम की पटरी से लगा हुआ पानी फैला है। और इस दशा मे क्षैतिज तल मे याने पटरी की आड़ी स्थिति में, एक प्रतिबिम्ब-रेखा दीख पड़ती है—यह ऊपर के केबुल को सँभालनेवाले तार का प्रतिबिम्ब है। यदि हम पटरी के सीधे खड़े हाशिये की ओर देखे तो इस प्रतिबिम्ब की शक्ल समान रूप से दोनों ओर मुड़ी हुई दीखती है (चित्र ११, a), जिससे यह साफ़ प्रगट होता है कि पानी की सतह पृष्ठ-तनाव के कारण वक्र हो जाती है। यदि पटरी के बाये हम खड़े हों तब प्रतिबिम्ब की वक्रता चित्र ११, b की भाँति होगी और यदि पटरी के दाहिने खडे हों तब प्रतिबिम्ब चित्र ११, c की भाँति होगा। इस बात पर गौर करिए कि क्यों प्रतिबिम्ब ऐसी ही शक्ल अख्तियार करते हैं।

स्टीमर पर सवार होकर द्रव की वक्र सतह से बननेवाले प्रतिबिम्ब का अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि इस दशा मे बराबर एक ही स्थिति से और एक ही दिशा से आप लहरों को देखते हैं जो साथ-साथ चल रही हैं। विशेषतया इस बात पर गौर करिए कि जब स्टीमर के अग्र भाग के प्रथम धक्के से पानी की सतह मे उभार आता है तो प्रतिबिम्ब की शक्ल किस प्रकार बदलती है। प्रतिबिम्बों मे प्रबल संकुचन पैदा होता है तथा वे सीधी अथवा उलटी बनती हैं जो इस बात पर निर्भर करता है कि आप सतह के उत्तल भाग को, या अवतल भाग को देख रहे हैं।



चित्र ११, a b c—**ट्राम की पटरीपर वर्षा द्वारा वक्र दर्पण का निर्माण।**

१३. खिड़की का साधारण काँच, तथा प्लेट-काँच

सड़क के मकानों की खिड़कियों के शीशे मे बननेवाले प्रतिबिम्बों को देखकर आप तुरन्त जान सकते हैं कि वे प्लेट काँच के बने हैं या कि खिड़कीवाले काँच के। प्रथम दशा मे परावर्त्तन के प्रतिबिम्बों की आकृति बिगड़ती नही है, किन्तु द्वितीय दशा मे परावर्त्तन इतना अनियमित होता है कि काँच की सतह के उभार आदि साफ़ दीख जाते हैं। इस प्रकार आप अपने नगर के समृद्धिशाली लोगों के मुहल्ले तथा मध्यवर्गीय लोगों के मुहल्ले में अन्तर पायेंगे। समृद्धिशाली लोगों के मुहल्ले में प्लेट

काँचवाले मकानों की क़तार मे आप फौरन इक्के-दुक्के अपवाद स्वरूप मकान को पहचान जाते हैं कि इसकी साथ-साथ बनी खिडकियों के काँच एक ही धरातल में नही हैं क्योंकि उनमे छत के प्रतिबिम्ब एक दूसरे के लिहाज से कुछ हटे हुए दीखते हैं, तथा उसके प्लेट-काँच के हाशिये कुछ विकृत हैं।

१४. पानी की हलकी तरगोवाली सतह पर अनियमित परावर्त्तन[1]

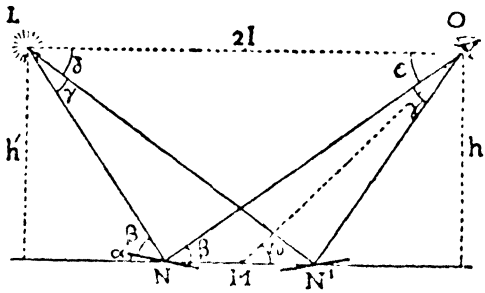
लैम्पों के प्रतिबिम्बित प्रकाश की लकीरें मुझे अनिवार्यत. सन्ध्या के शान्त वातावरण की याद दिलाती हैं। समुद्र में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब देखता हूँ तो वह रोशनी की एक चौडी पट्टी-सी फेकता हुआ प्रतीत होता है। या फिर मुझे प्राचीन नगर ब्रुगेज के मकानो और बुर्जियो की याद आती है—शान्त नहर के पानी मे इनके प्रतिबिम्ब मे रोशनी का प्रत्येक धब्बा, प्रत्येक रंग, एक खडी लकीर की शक्ल मे खिच जाता था तथा ये सभी लकीरें, चाहे छोटी या लम्बी, तरह-तरह की रोशनी और मायावी चमक के साथ कँपती और थिरकती रहती।

चाँद या लैम्प जब निकट के पानी की ऐसी सतह से प्रतिबिम्बित होता है जिसमे हलकी हिलोरें उठ रही हो तो हम देखते हैं कि वास्तव मे प्रत्येक नन्ही तरग एक पृथक् प्रतिबिम्ब का निर्माण करती है। रोशनी मे पडनेवाली ये सभी तरगे मिलकर मोटे तौर पर एक आयताकार पट्टी की शक्ल का प्रतिबिम्ब बनाती हैं जिसका दीर्घ अक्ष उस ऊर्ध्व तल मे पडता है जो आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरती है। यद्यपि लहरो का बनना पूर्णतया अनियमित रहता है तथा वे समान रूप से हर किसी दिशा मे बनती हैं, फिर भी इन लहरों द्वारा अकेले एक प्रकाश-सूत्र से प्रतिबिम्ब के रूप में रोशनी का एक लम्बा फ़ीता-सा प्राप्त होता है जो हमारी आँख की सीध मे पड़ता है—इस मौलिक घटना का हमे समाधान ढूंढ़ना है। पट्टी के उस छोर पर जो हमारी ओर पड़ता है, हम स्पष्ट देख सकते हैं कि पानी मे लहरो के बनने के अनुसार किस तरह रोशनी की पट्टी कभी लम्बी हो जाती है, कभी छोटी, जब कि दूसरे छोर पर जो हमसे दूर पडता है, रोशनी के धब्बे एक दूसरे के निकट खिचकर एक मध्यमान रूप धारण कर लेते हैं।

1. See in particular : J Picard, Arch, Sc. Phys. Nat. 21, 481, 1881; also G Galle, Ann d Phys, 49,255, 1840; A Wigand and E. Everling, Phys, Zs., 14, 1156, 1913; E. O. Hulburt, J. O. S. A. 24,35, 1934; W.Shoulejkin, Nat., 114, 498, 1924, K Stuchtey, Ann. d. Phys, 59, 33, 1919.

अतः सही निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए इस प्रकार की पट्टी मे प्रकाश-दीप्ति के औसत वितरण पर विचार करना होगा और उसके लिए संभाविता के सिद्धान्त पर गणना करनी होगी। ठीक तौर पर इस तरह की गणना पहले कभी नही की गयी है। अत. हम अपने लिए, समस्या को सरल बनाने के निमित्त, मान लेगे कि लहरों की सतह का झुकाव एक निश्चित कोण α से अधिक नही है, और तब इस दशा मे उनसे परावर्त्तित होकर बननेवाले रोशनी के धब्बे की स्थिति सीमाएँ ज्ञात करेगे। या दूसरे शब्दों मे, प्रश्न यह है कि यदि प्रत्येक स्थान पर हर दिशा मे कोण α पर झुकी हुई लहरे मौजूद हों तो हमे मालूम करना है कि प्रकाश से आलोकित होनेवाली इन तमाम लहरों की सतहों का बिन्दु क्या होगा ? इस रूप मे लेने पर भी प्रश्न काफी जटिल बना रह जाता है—

सबसे सरल दृष्टान्त ले कि निरीक्षक तथा प्रकाश-स्रोत दोनों पानी की सतह से समान ऊँचाई पर स्थित है, अर्थात् $h=h'$ (चित्र १२)।



चित्र १२—**परावर्तित प्रकाशपथ के दीर्घ अक्ष की गणना।**

ठीक बीच के बिन्दु M पर एक छोटा दर्पण क्षैतिज तल मे रखे तो यह प्रकाश सूत्र की रोशनी प्रेक्षक O की आँख मे फेकेगा—इस स्थिति पर ही नियमित परावर्त्तन होता है। दर्पण यदि कोण α पर झुका हो तो इसे मध्य बिन्दु M से कुछ फासले पर रखना होगा ताकि यह प्रेक्षक तक रोशनी फेक सके। प्रश्न यह है कि यह दूरी कितनी होनी चाहिए।

प्रकाश-स्रोत और आँख से गुजरनेवाले ऊर्ध्व तल मे दर्पण कोणीय झुकाव के लिए इस प्रश्न का उत्तर सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। मान लीजिए दर्पण एक ओर झुकता है तो उसकी स्थिति N है और दूसरी ओर झुकता है तो स्थिति N' है, तब

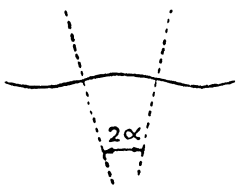
संमिति के कारण MN=MN' होगा। अब निम्नलिखित कोणों पर ध्यान दीजिए—

$$\beta+\alpha=\gamma+\delta$$
$$\beta-\alpha=\epsilon=\delta$$

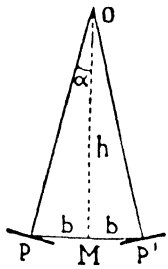
अतः, $\gamma=\alpha+\beta-(\beta-\alpha)=2\alpha$

यह एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष है। **प्रतिबिम्ब की रोशनी के स्तम्भ के सबसे अधिक लम्बे अक्ष द्वारा आँख पर बननेवाला कोण लहरों के दो महत्तम झुकावों के दर्मियान बननेवाले कोण के बराबर है** (चित्र १३)।

अब आँख और प्रकाश स्रोत को मिलानेवाली रेखा के समकोण तल मे M पर रखे दर्पण को घुमाइए और मान लीजिए दर्पण के लिए दो स्थितियाँ P तथा P' मिलती हैं जहाँ से अनुकूल परावर्त्तन होता है (चित्र १४)।



चित्र १३



चित्र १४—**परावर्तित प्रकाशपथ के लघु अक्ष की गणना।**

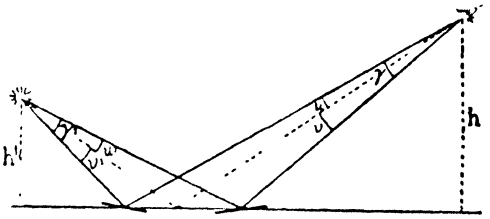
स्पष्ट है कि $MP=MP'=h\tan\alpha$ अतः रोशनी के स्तम्भ की चौड़ाई $2h\tan\alpha$ होगी और स्तम्भ का लघु अक्ष आँख पर कोण PP' $2h\tan\alpha$ बनायेगा। (tangent=स्पर्शरेखा) $OM=\sqrt{l^2+h^2}$

अतः रोशनी के स्तम्भ के दोनो आभासी अक्षो का अनुपात, यदि रोशनी का स्तम्भ बहुत बडा न हो, $\frac{h\tan\alpha}{\alpha\sqrt{h^2+l^2}}$ या सन्निकटतः $\frac{h}{\sqrt{h^2+l^2}}=\sin\omega$ होगा। अतः पहाड़ी की चोटी से नीचे यदि पानी की ओर देख रहे हों तब रोशनी का स्तम्भ लम्बाई मे चौडाई से थोड़ा ही बड़ा दीखेगा क्योकि कोण ω का मान अधिक होने से $\sin\omega$ का मान सन्निकटत. 1 के बराबर होगा। **पानी की सतह पर जितनी ही**

अधिक तिरछी दिशा में देखेंगे उतना ही अधिक लम्बा यह स्तम्भ दीखेगा। यदि हमारी निगाह पानी के तल को करीब-करीब छूती हुई हो, तब यह स्तम्भ बेहद सँकरा दीखेगा।

हमें प्रमुख दायरा[1] तथा गौण दायरे के दर्मियान का अन्तर सदैव ध्यान में रखना चाहिए। प्रमुख दायरा वह वक्र आकृति है जो लहरवाले पानी के धरातल पर इस तरह खीची हुई मानी गयी है कि वह प्रकाशस्तम्भ की सीमा-रेखाएँ प्रगट कर सके, जब कि गौण दायरा दृष्टिरेखा के समकोण धरातल पर प्रमुख दायरे के प्रक्षेपण से प्राप्त होता है। प्रमुख दायरे के अक्षों की गणना आसानी से की जा सकती है, यद्यपि यह एक छ: घात की वक्र आकृति है जो बिन्दु M के गिर्द सममित होगी। अवश्य गौण दायरा थोड़ा असमित हो जाता है, अधिकतम चौड़ा भाग बिन्दु M की अपेक्षा हमारे निकट अधिक पड़ता है जब कि बिन्दु M पर ही हमने आड़े अक्ष की लम्बाई ज्ञात की थी। यह असमिति उस वक्त विशेष रूप से प्रदर्शित होती है जब सतह के साथ दृष्टि-रेखा छोटे मान का कोण बनाती है।

२ सामान्य दशा, जब $h \neq h'$ (चित्र १५) पहले की तरह ही हम इन दोनों निष्कर्षों को सिद्ध कर सकते हैं कि—



चित्र १५—प्रकाश के घब्बे का प्रेक्षण, प्रकाश-स्रोत की स्थिति से भिन्न ऊँचाई के तल से।

$$u+v'=2\alpha$$

$$u'+v=2\alpha$$

$$\therefore u+v+u'+v'=\gamma+\gamma'=4\alpha$$

और आगे गणना करने पर सिद्ध होता है कि रोशनी के घब्बे की सीमारेखा बहुत कुछ दीर्घ वृत्ताकार रहती है, किन्तु निष्कर्ष जटिल ही प्राप्त होते हैं। व्यवहार में

1. Primary oval

h और h′ का अन्तर प्रकाश-स्तम्भ की लम्बाई-चौड़ाई के मान को ही प्रभावित करता है, इनकी निष्पत्ति मे नहीं ।

अवश्य सन्निकटन:

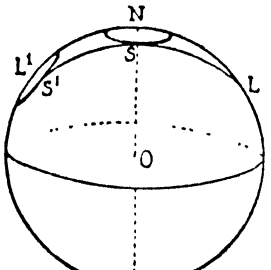
$$\frac{\gamma}{\gamma'}=\frac{h'}{h}$$

अत. $$\gamma=4\alpha\frac{h'}{h+h'}$$

३. विशेष दशा, जब $h=\infty$ । यह दशा सूर्य, चन्द्रमा या अत्यधिक ऊँचाई पर स्थित लैम्प के लिए लागू होती है।

अब सूत्र के रूप इस प्रकार होगे—

$\gamma=4\alpha$ तथा $PP'=2h\tan 2\alpha$ (जैसा कि सिद्ध कर सकते है) । दायरे के अक्ष आँख पर लगभग 4α तथा $4\alpha\sin\omega$ के कोण बनाते है । प्रकाश-स्तम्भ की आभासी लम्बाई और चौड़ाई की निष्पत्ति $\sin\omega$ है जो ठीक उतनी ही है जितनी दशा १ मे, केवल इस बार सभी आयाम पहले की अपेक्षा दो गुने है ।



चित्र १६—गोले की सहायता से यह दिखलाना कि स्तम्भ की शक्ल का प्रकाशपथ कैसे बनता है ।

इन परावर्त्तनों मे प्रकाश-वितरण का एक सामान्य अन्दाज गणना के बिना ही, निम्नलिखित वितर्क से प्राप्त कर सकते है (चित्र १६) :—

कल्पना कीजिए कि अत्यन्त छोटे पैमाने पर निरूपित परावर्तन के तल एक बड़े गोले के केन्द्र के निकट स्थित है; पानी की स्थिर सतह पर खीचा गया अभिलम्ब, बिन्दु N तक पहुँचता है, अतः नन्ही लहरों की झुकी हुई सतहों के अभिलम्ब एक दायरे के अन्दर होगे जिसकी बिन्दु N से कोणीय दूरी α होगी । अनन्त दूरी का प्रकाश-स्रोत गोले के बिन्दु L द्वारा प्रदर्शित है ।

अब यह ज्ञात करने के लिए कि अभिलम्ब OS वाली सतह किरणों को किस प्रकार परावर्त्तित करेगी, यह पर्याप्त होगा कि बृहत् वृत्त का चाप LS को खीचकर उसे बिन्दु S′ तक बढ़ा लें, ताकि $SS'=SL$। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि तमाम छोटी लहरों से परावर्त्तित होनेवाली किरणे एक शंकु बनाती हैं जिसका आधार अत्यन्त दीर्घ वृत्ताकार

है तथा यह दीर्घ वृत्त और भी अधिक चिपटा हो जाता है यदि पानी की सतह को हम और तिरछी दिशा से देखें। यह समझना आसान भी है कि क्यों प्रेक्षक की दृष्टि-रेखाएँ भी वैसी ही शक्ल अख्तियार करती हैं अर्थात् आँख से पानी पर पड़नेवाले रोशनी के धब्बे के सीमा-बिन्दुओं तक खींची जानेवाली रेखाएँ भी शंकु बनाती हैं।

व्यावहारिक रूप से प्रेक्षक को क्या दिखलाई पड़ेगा—इस दृष्टि से आइए अपनी गणना के निष्कर्षों का सारांश प्राप्त करें—प्रथम, यदि हम मानें कि पानी की सतह से हम उतनी ही ऊँचाई पर हैं जितनी ऊँचाई पर प्रकाश-स्रोत, तब प्रकाश-स्तम्भ के दीर्घ अक्ष से आँख पर बननेवाला कोण 2α के बराबर होगा जो लहरों के महत्तम झुकावोंवाले दो तल के दर्मियान बनता है (चित्र १३)। इसी अनुपात में, पानी की सतह पर जितनी अधिक तिरछी दिशा से हम देखते हैं, प्रकाशस्तम्भ का आड़ी दिशा का अक्ष उतना ही अधिक छोटा होगा।

द्वितीय, यदि पानी की सतह से प्रकाश-स्रोत की ऊँचाई हमारी आँख की अपेक्षा अधिक है तो प्रकाशस्तम्भ के सभी विस्तार अधिक लम्बे (कोणीय नाप में) हो जाते हैं; और यदि प्रकाशस्रोत की ऊँचाई अनन्त के सन्निकट पहुँचे, तो ये विस्तार भी पहले की अपेक्षा दो गुने मान के करीब पहुँचते हैं। किन्तु इस दशा में भी दीर्घ अक्ष और लघु अक्ष के दर्मियान की निष्पत्ति करीब-करीब पहले-जैसी ही बनी रहती है।

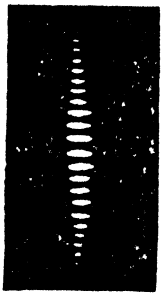
चन्द्रमा से बननेवाले प्रकाश-स्तम्भ की तुलना ऐसे लैम्प के प्रकाश-स्तम्भ से करिए जिसका प्रतिबिम्ब लगभग उसी दिशा में पड़ रहा हो। सामान्य तौर से प्रकाश के धब्बे प्रकाश-स्रोत से जितनी दूर होंगे, वे उतने ही बड़े होते हैं। वस्तुएँ, यदि पानी की सतह के अत्यन्त निकट हैं तो इनके प्रतिबिम्ब स्तम्भ सरीखे खिंचे हुए, लम्बे नहीं, बल्कि करीब करीब एक बिन्दु-जैसे बनेंगे। पानी की सतह के साथ विभिन्न मान के कोणवाली दिशाओं से देखकर इन धब्बों की तुलना करिए।

विभिन्न वेग की हवाओं के वक्र दिखलाई देनेवाले प्रकाश-स्तम्भ की लम्बाई द्वारा बननेवाले कोण 2α को भी नापिए।

ध्यान दीजिए कि वर्षा के समय प्रकाशस्तम्भ कितने बढ़िया तौर पर नियमित, लम्बे और सीधे खड़े से बनते हैं क्योंकि लहरें यद्यपि छोटी होती हैं, किन्तु उनका झुकाव तीव्र होता है।

अलग-अलग प्रत्येक तरंग पर बननेवाले प्रतिबिम्बों की शक्लों का निरीक्षण भी महत्त्व रखता है। प्रत्येक तरंग रोशनी का एक धब्बा बनाती है जो क्षैतिज दिशा में फैला होता है। सूर्य की ऊँचाई जितनी कम होती जाती है उतना ही यह धब्बा

भी पतला होता जाता है और करीब-करीब एक पतली लकीर-सा बन जाता है। ये सभी छोटी लकीरें साथ मिलकर ऊर्ध्व स्तम्भ का निर्माण करती है। (चित्र १७, बायाँ)।





चित्र १७—किंचित् तरंगित होते हुए पानी पर प्रकाश स्तम्भ। ऊँचे प्रकाश-स्रोत से आने वाले प्रकाश का प्रतिबिम्बन।

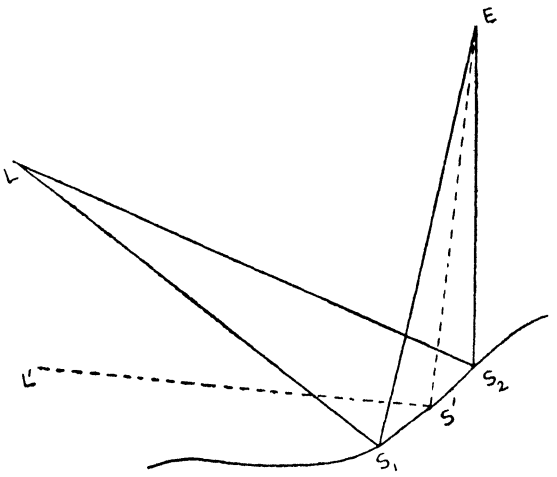
ये प्रतिबिम्ब चारों ओर से घिरे छल्ले की विलक्षण आकृति उस वक्त धारण करते है जब प्रकाशस्रोत ऊँचाई पर होता है तथा इसका विस्तार-क्षेत्र बड़ा होता है (जैसे निअन गैस नली के विज्ञापनवाले प्रकाश-स्रोत) (चित्र १७ दाहिना)।

मान लीजिए, पानी की सतह जब झुक रही हो तो हम नीचे की ओर पानी की ऐसी सतह पर देख रहे है जो इतनी ढालुवाँ है कि प्रत्येक प्रकाश-स्रोत L को लहर के दो पृथक् बिन्दुओ पर प्रतिबिम्बित होते देख सकते है। उदाहरण के लिए लहर के सिरे के बिन्दु S_1 से और गर्त्त के बिन्दु S_2 से प्रतिबिम्बित हम देखते है जब कि दोनो बिन्दुओ पर स्थित स्पर्शी रेखाओ का झुकाव लगभग समान है। उन दोनो के दर्मियान मान लीजिए बिन्दु S′ के निकट ढाल अधिक तेज है, तो यहाँ से हम नीचे के बिन्दु L′ का प्रतिबिम्ब देखते है जो प्रकाश उत्पन्न नही कर रहा है।

अवश्य दोनों बिन्दु S_1 तथा S_2 लहर के एक ही पार्श्व पर है। यदि हम अपनी आँख बगल की ओर हटाते है तो हम दोनो प्रतिबिम्बो के एक दूसरे के निकट आते देखते हैं जो अन्त में एक दूसरे मे आत्मसात् हो जाते है, अत. एक वृत्त या कुडल-सा बन जाता है। (चित्र १७ क)

रोशनी के इन धब्बों के दृश्य स्वरूप की एक और भी विशिष्टता है—प्रत्येक धब्बा सदैव हमारी आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्व धरातल मे ही पड़ता है (अपवाद के लिए देखिए § १५)। चित्राकन के समय या रगीन चित्र बनाते समय सभी चीजों का प्रेक्षपण मैं अपने सामने के ऊर्ध्व धरातल पर प्राप्त करता हूँ; इस कारण प्रकाश का प्रत्येक धब्बा अनिवार्य रूप से ऊर्ध्व दिशा मे खिच उठता है, चाहे यह धब्बा

दृश्य के केन्द्र-बिन्दु से इधर-उधर हटा ही क्यों न हो। क्लादे द्वारा निर्मित उफिज़ी के एक चित्र मे सूर्य चित्र-पटल के हाशिये के निकट दिखलाया गया है, फिर भी चित्रकार



चित्र १७ क—**लहरों से बननेवाले प्रतिबिम्ब में छल्ले का निर्माण।**

ने इसमे एक प्रकाशस्तम्भ दिखलाया है जो सूर्य से चित्र के आमुख के मध्य बिन्दु तक तिरछी दिशा मे आता है—यह गलत चित्रण है।[1]

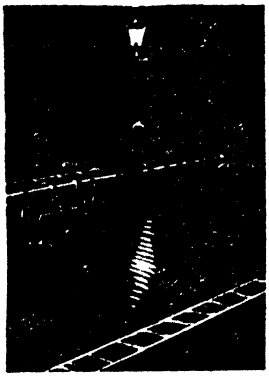
अपना केमरा समुद्र पर फोकस करिए जिस पर सूर्य चमक रहा हो और केमरे के पर्दे पर देखिए कि लहरों से परावर्तित होनेवाला प्रकाश किस प्रकार वितरित हो रहा है। इससे आप पता लगा सकते हैं कि लहरों का ढाल कैसा है और उनकी प्रमुख दिशा क्या है; तथा एक नज़र मे पानी की सतह का समष्टि रूप से अनुदर्शन प्राप्त किया जा सकता है तथा फोटो की प्लेट पर इसे अङ्कित किया जा सकता है।[2]

१५. नन्हीं तरंगों से आलोड़ित पानी की सँकरी सतह से परावर्तन

इस दशा मे प्रकाश के घब्बे प्रायः स्पष्ट तौर से असंमिति का प्रदर्शन करते हैं। मिसाल के लिए नहर के पार दाहिनी ओर के लैम्प को देखें तो अब ये घब्बे आँख और

1. Ruskin, Modern Painters I & II
2. W. Shoulejkin, Loc. cit.

प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्व धरातल मे नही पड़ते बल्कि नहर की ओर, अर्थात् दाहिने झुके प्रतीत होते है (चित्र १८)।



चित्र १८—एक अद्भुत दृश्य; प्रतिबिम्ब, आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्वतल में नहीं पड़ता।

यदि तिर्यक् दृष्टि से बायी ओर के लैम्प को देखे तो ये धब्बे फिर नहर की ओर अर्थात् बाये झुके दीखते है।

फिर भी हमारा सिद्धान्त गलत नही है; क्योंकि यदि वर्षा हो रही हो और हवा न चल रही हो तब चाहे किसी दिशा से देखे, ये धब्बे पूर्णत. ऊर्ध्व धरातल मे स्थित होते है। इनके तिरछे दीखने का कारण हवा का वेग है जो प्राय लहरो को नहर की दिशा मे बहाने की चेष्टा करती है, अत इस दशा मे आदर्श रूप से अनियमित तरग रूप को लेकर गणना का आरम्भ हम नही कर सकते।

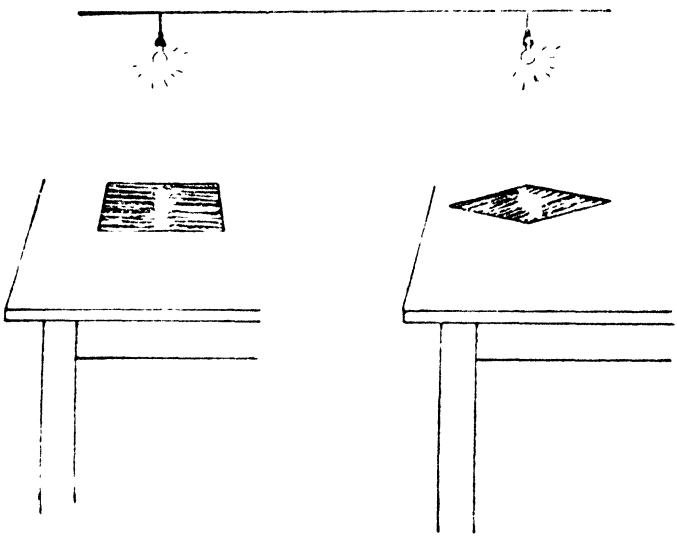
निम्नलिखित प्रेक्षण इस बात को सिद्ध कर सकते हैं—

(क) चौड़े पाट की नदी मे प्रकाशस्तम्भ के झुकाव की दिशा बहुत कम व्यवस्थित रहती है। इस दशा मे नदी के किनारे के समकोण लहरो की दिशा को कोई प्रमुखता नही प्राप्त होती।

(ख) पानी पर बर्फ की हलकी तह यदि जमी हो तब ऐसा प्रतीत होता है मानो बर्फ पर जगह-जगह नन्ही ढेरियाँ उठी है, और प्रकाशस्तम्भ स्पष्ट दिखलाई पडता है, किन्तु यह ऊर्ध्व दिशा मे ही स्थित होता है।

(ग) पानी की बौछार से भीगी ऐसफ़ाल्ट की सडक पर सडक के लैम्प या मोटरकार या सायकिल के हेडलैम्प के प्रतिबिम्ब मे झुकाव उसी प्रकार के देखने को मिलते है जिस प्रकार के तेज हवा मे नहर के पानी पर। वास्तव मे सडक पर गुजरने वाली सवारियो के कारण ये अनियमितताएँ प्रगट होती है। (किस प्रकार ये उत्पन्न होती है, यह भी एक दिलचस्प विषय है)। यदि सडक के धरातल की हम जाँच करे तो हम देखते है कि इस पर वास्तव मे लहरे मौजूद है जिनकी शीर्षरेखाएं सड़क की आड़ी दिशा मे पडती है।

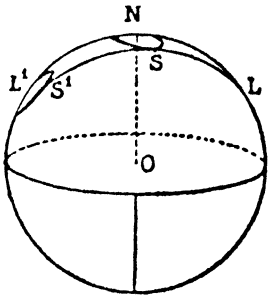
इस घटना का निर्माण करने के लिए काँच का कोई टुकड़ा लीजिए और चिकनाई लगी उँगली से इस पर समानान्तर दिशाओं मे रगड की लकीरे डाल दीजिए। सामने मेज़ पर काँच को क्षैतिज रख दीजिए और उसमे किसी दूरस्थ लैम्प का प्रतिबिम्ब देखिए जो मेज़ की सतह से बहुत ऊँचा न हो। काँच को पहले इस प्रकार अनुस्थापित करिए कि रगड़ की लकीरे परावर्त्तन-धरातल के समकोण पड़े। प्रकाश का विस्तार इसी धरातल मे होगा और इसका प्रक्षेपण ऊर्ध्व तल में पड़ेगा। अब यदि काँच को उसी के धरातल मे कोण p के बराबर घुमाएँ तो प्रकाश का विस्तार g कोण घूम जायगा। यह दिखलाया जा सकता है कि $\text{Tan } g = \text{Tan } p \times \sin \omega$ जिसमे ω पुनः दृष्टिकोण तथा क्षैतिज तल के दर्मियान का कोण है। उदाहरण के लिए यदि काँच को $p = 45°$ के कोण पर घुमाया जाय, तो प्रकाश का विस्तार उसी दिशा मे अपेक्षाकृत बहुत घेरे कोण पर घूमेगा। किन्तु काँच को घुमाना जारी रखे तो प्रकाश का विस्तार उत्तरोत्तर अधिक तेजी से घूमेगा और अन्त मे यह रगड़ की लकीरो की दिशा मे आ जायगा जबकि $p = g = 90°$ होता है। (चित्र १८ क, ख)



चित्र १८ क, ख—**तरंगित धरातल द्वारा बननेवाले प्रतिबिम्ब असंमित कब होते है।**

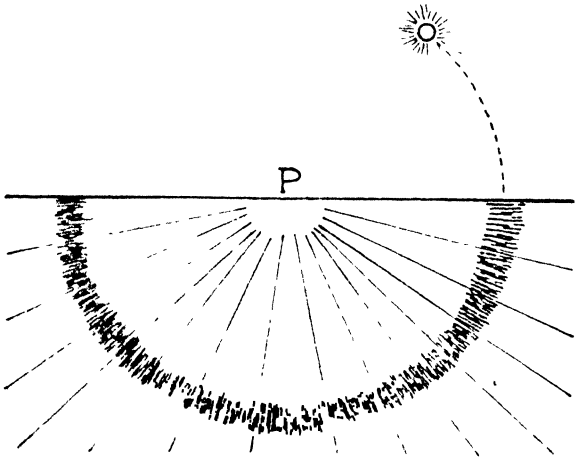
इस विषय की विस्तृत व्याख्या अभी तक की नही गयी है, किन्तु इसकी प्रमुख

विशेषताओं का कुछ अनुमान हम, कम से कम, अनन्त पर स्थित प्रकाशस्रोत के लिए, गोले पर उसका प्रक्षेप प्राप्त करके लगा सकते हैं (चित्र १९)। यदि परावर्त्तन धरातल के अभिलम्ब, बिन्दु N के गिर्द दिखायी गयी वक्र रेखा पर वितरित हो तो परावर्त्तित किरणें बिन्दु L′ के गिर्द दिखायी गयी वक्ररेखा के विभिन्न बिन्दुओं तक पहुँचेंगी; परावर्त्तित प्रकाश-स्तम्भ का अक्ष अब L N L′ से गुजरने वाले धरातल में नहीं पड़ेगा बल्कि यह बगल को हटा हुआ होगा।



चित्र १९—**तरंगें जब निश्चित दिशा में अवस्थित होती हैं तो प्रकाश के तिरछे धब्बे किस प्रकार बनते हैं।**

लहरदार सतह से होनेवाले परावर्त्तन का एक विशेष दृष्टान्त रात को उस समय देखा जा सकता है जबकि बड़ी दूकानों की खिड़कियों के सामने लगे झिरीदार पर्दे से सड़क का लैम्प प्रतिबिम्बित होता है। झिर्रियों पर प्रकाश का एक दायरा देखते हैं जो होना तो परिवलय की शक्ल का है, किन्तु हमारी आँख को वह एक वृत्त का भाग दीखता है। इसकी ज्यामिति समीक्षा अत्यन्त सरल है; बेलनाकार लहरदार सतह से परावर्त्तित होने वाली तमाम किरणें एक शंकु बनाती हैं जिसका अक्ष लहर के शीर्ष के समानान्तर होता है।

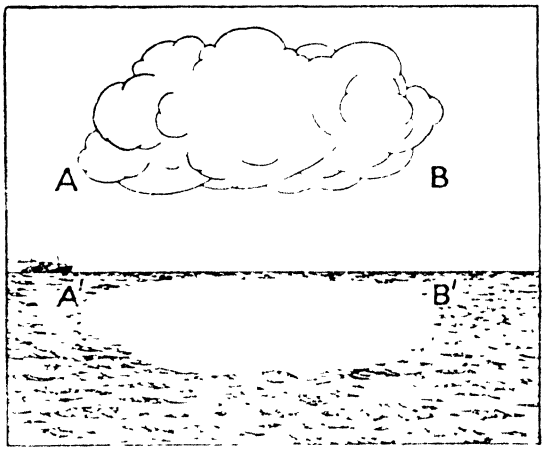


चित्र १९ क—**खिड़की की लहरदार झिरीवाले आवरण पर प्रतिबिम्ब परवलय शक्ल का क्यों दीखता है।**

तदनुसार आँख, जो समानान्तर लहरों वाली ऐसी समूची सतह का सर्वेक्षण करती है जिस पर दूरस्थ प्रकाश-स्रोत की रोशनी पड़ रही है, प्रकाश को सभी दिशाओं से आता हुआ देखेगी। यह रोशनी परस्पर मिलकर एक शकु की सतह बनाती है; इसका अक्ष हमारी आँख से गुजरने वाली वह रेखा होती है जो तरग-शीर्षों के समानान्तर पड़ती है। इस प्रदीप्त वृत्तचाप को बढ़ाये तो यह एक वृत्त बनायेगा जिसपर प्रकाशस्रोत L स्वय स्थित होगा (चित्र १९क)। प्रत्येक बिन्दु पर हम प्रकाश का धब्बा देखते हैं जो लहर के समकोण दिशा मे अवस्थित होता है (यदि दोनो ही प्रेक्षण दिशा के समकोण प्रक्षेपित किये जायँ)। इस व्याख्या से लहरदार झिरी के पर्दो तथा विशेष रूप से अनुस्थापित पानी की लहरो, दोनों से होनेवाले प्रकाश-परावर्त्तन का एक ही साथ समाधान हो जाता है।

१६. तरंगों से आलोड़ित पानी के विस्तृत धरातल से परावर्तन[1]

हलकी हिलोरों वाली समुद्रसतह से होने वाले परावर्त्तन मे एक विशेषता पायी जाती है जिसे हम परावर्त्तित प्रतिबिम्बों का क्षितिज के निकट सरक आना कह सकते

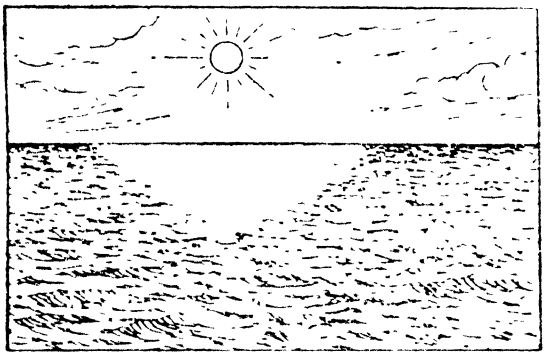


चित्र २०—समुद्र में प्रतिबिम्बन-बादल का प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर हट जाता है।

1. E. O. Hulburt, J. O. S. A., 24, 35, 1934

है।' (चित्र २०) बादल और नीले आकाश के दर्मियान की सीमारेखा A B का प्रतिबिम्ब A' B' क्षितिज के अधिक निकट है जबकि स्वयं रेखा A B और क्षितिज के बीच की दूरी ज्यादा है। वास्तव मे क्षितिज के ऊपर की प्रथम 25° या 35° कोणीय ऊँचाई तक स्थित आकाश का प्रतिबिम्ब मुश्किल से ही दीखता है। इस दशा मे सभी प्रतिबिम्ब अनियमित परावर्त्तन द्वारा बनते हैं, फिर भी यह घटना अत्यन्त स्पष्ट दीखती है और इतनी प्रभावोत्पादक होती है कि समुद्र पर समस्त प्रकाश के वितरण मे उसका स्थान विशेष रूप से प्रमुख होता है। यही कारण है कि समुद्रतट के वृक्ष टीले आदि के प्रतिबिम्ब समुद्र के पानी मे कभी नही दिखलाई देते; उनकी ऊँचाई अपर्याप्त होती है। ऐसी परिस्थितियो मे जहाज के प्रतिबिम्ब भी नही ही दिखलाई पड़ते क्योंकि उपर्युक्त प्रभाव के कारण प्रतिबिम्ब मे जहाज़ के कारण बननेवाला काला धब्बा पिचक कर जहाज़ के पेदे से ही लग जाता है।

लहरो मे सूर्य का प्रतिबिम्ब चकाचौध उत्पन्न करने वाले प्रकाश का अकेला एक ही धब्बा होता है। सूर्यास्त के समय यह प्रतिबिम्ब थोडी बहुत तिकोनी शक्ल का हो जाता है, जिससे यह प्रदर्शित होता है कि प्रतिबिम्ब क्षितिज के निकट सरक आता है (चित्र २१)।



चित्र २१—समुद्र पर सूर्य का प्रकाश।

इन घटनाओं की आसानी से व्याख्या की जा सकती है; लम्बे फासले से लहरों का केवल वह पार्श्व हमे दीखता जिसका रुख हमारी ओर हो। इस कारण ऐसा प्रतीत

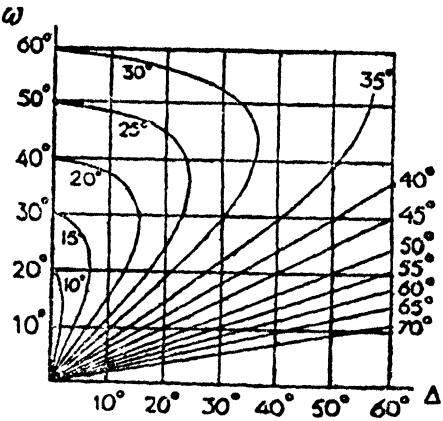
होता है मानो हम आकाश की चीजों का प्रतिबिम्ब तिरछे रखे दर्पण में देख रहे हों (चित्र २२)।

इससे इस बात का भी समाधान हो जाता है कि प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर हटा हुआ क्यो बनता है। प्रतिबिम्ब में आकाश के निचले 30° कोण के भाग के विलुप्त होने का अर्थ है कि लहरों का दोनों पार्श्व का औसत ढाल 15° है; (यदि समुद्र न तो बहुत शान्त है और न बहुत अधिक उद्वेलित।)।



चित्र २२—**प्रतिबिम्ब का स्थानान्तर। आपतन कोण की अपेक्षा परावर्तन कोण अधिक चिपटा है।**

इस घटना का उल्लेख § १४ मे दिये गये सैद्धान्तिक विवेचन मे क्यों नही किया गया? इसलिए कि हम उस दशा का विचार नही कर रहे थे जबकि $\omega < 2\alpha$, अर्थात् जब पानी की सतह पर अत्यन्त तिरछी दिशा से देखा जाता है। यह दशा, जिसके लिए उक्त गणना के फल लागू नही होते है, उस वक्त प्राप्त होती है जबकि पानी का धरातल बहुत अधिक फैला हो; और समुद्र के लिए तो यह शक्ति विशेष रूप से आवश्यक है। सतह जितनी अधिक शान्त होगी उतनी ही अधिक तिरछी दिशा मे हमे देखना पड़ेगा।



चित्र २३—**ω और △ के प्रेक्षित मान के प्रत्येक जोड़े के लिए एक बिन्दु मिलता है। इस बिन्दु की स्थिति प्रत्येक वक्र के लिहाज से आँकिए प्रत्येक वक्र α के एक निश्चित मान के लिए खींचा गया है। (ई० ओ० हलबर्ट, जर्नल आफ दी अप्टिकल सोसाइटी आफ अमेरिका पर आधारित)**

सूर्यकिरणों से प्रकाशित समुद्र-जल की सतह की ओर देखने पर सहज ही हम मालूम कर सकते है कि उपर्युक्त शर्त्त पूरी हो रही है या नही। शर्त्त पूरी होने की दशा मे प्रकाश-स्तम्भ क्षितिज को छू लेगा। अब इस दशा मे प्रकाशस्तम्भ की

लम्बाई नाप कर लहर के झुकाव का मान नहीं प्राप्त किया जा सकता। इसके लिए हमें दूसरा तरीका अपनाना पड़ेगा; लहरों की ढाल का कोण यदि बढ़ जाता है तो उसी हिसाब से क्षितिज का और अधिक चौडा भाग जगमगाहट की रोशनी से भर जाता है।

इस कोण $\triangle$ को नापिए जो क्षितिज पर स्थित धब्बे की चौड़ाई बतलाता है; और सूर्य की कोणीय ऊँचाई ω भी नापिए। और इनके मान से, चित्र २३ के ग्राफ़ पर लहरो की ढाल का कोण α मालूम करिए, अथवा स्पूनर के सूत्र की सहायता से जो सूर्य की 15° से कम की कोणीय ऊँचाई के लिए इस प्रकार सरल रूप मे व्यक्त किया गया है —

लहर की ढाल का कोण $\alpha = \frac{\triangle}{2\omega}$ रेडियन; (1 रेडियन = 57°) (देखिए प्लेट II)

अत्यन्त शान्त समुद्र पर सूर्योदय या सूर्यास्त के समय के सूर्य का प्रतिविम्ब एक पतली रेखा सा बनता है जो करीब करीब सूर्य के आग्नेय गोले से मिल जाता है और इस प्रकार Ω जैसी आकृति बन जाती है (चित्र २४)।



चित्र २४—**पूर्णतया शान्त समुद्र पर उगते हुए सूर्य के प्रतिबिम्ब को देखकर क्या आप को पृथ्वी की वक्रता का पता लग पाता है।**

कभी-कभी जब समुद्र अत्यधिक शान्त होता है तो चिपटे दीर्घवृत्त की शक्ल का प्रतिविम्ब उस वक्त तक भी देखा जा सकता है जबकि क्षितिज से सूर्य की ऊचाई बस 1° रहती है; किन्तु प्राय तुरन्त बाद मे ही इस प्रतिविम्ब का उपर्युक्त त्रिभुजाकार शक्ल के प्रकाश के धब्बे मे परिणत होना दृष्टिगोचर होता है। ऐसी दशाओ मे पृथ्वी के धरातल की वक्रता का भी प्रभाव क्रियाशील होता है। यदि लहरे कतई मौजूद न हो तो हम कह सकते है कि पृथ्वी का गोलापन प्रत्यक्षतः प्रेक्षणीय है। अब तक की अध्ययन की गयी अनुकूलतम दशा मे नापा गया क्षितिज की ओर प्रतिबिम्ब का हटाव पृथ्वीतल की वक्रता के हिसाब से प्राप्त किये गये मान का दो गुना ठहरता है।

१७. अत्यन्त हलके उद्वेलन की दृष्टि-गोचरता

पानी के अत्यन्त हलके उद्वेलन का अवलोकन तरंग-शीर्ष की समानान्तर दिशा मे देखने के बजाय उस वक्त अधिक अच्छी तरह किया जा सकता है जब शीर्षरेखा की

समकोण दिशा में उन्हे देखते हैं। अत. यह देखने के लिए कि नहर पर हवा के कारण लहरे किस प्रकार बनती है, हमे नहर की समानान्तर दिशा मे देखना चाहिए। इससे यह बात भी समझ मे आती है कि क्यों जहाज़ के पीछे उठनेवाली शानदार तरगे पुल पर से स्पष्ट देखी जा सकती है जबकि किनारे पर से करीब करीब वे बिल्कुल ही दृष्टि-गोचर नही हो पाती है। इस घटना का समाधान उसी प्रकार करते है जिस प्रकार लैम्प के प्रतिबिम्ब मे प्रकाश धब्बे का स्तम्भ के रूप मे खिच जाने का। लहरो को समकोण दिशा से देखने पर एक तरह से हम प्रकाशस्तम्भ के दीर्घ अक्ष की दिशा मे अवलोकन करते है, और यदि लहरों की समानान्तर दिशा मे देखे तो हम प्रकाशस्तम्भ के लघु अक्ष की दिशा मे अवलोकन करते होते हैं। इसका अर्थ यह है कि लहर अपनी समकोण दिशा मे अपनी समानान्तर दिशा की अपेक्षा अधिक विचलन उत्पन्न करती है।

१८. गॅदले पानी पर प्रकाश के धब्बे

यद्यपि पानी की सतह दर्पण की तरह चिकनी सपाट होती है, फिर भी रात को प्रायः सड़क के लैम्प के प्रतिबिम्ब के गिर्द प्रकाश के स्तम्भ दिखलाई पडते है। लहरों पर बनने वाले प्रकाश-स्तम्भ की भाँति इनमे जगमगाहट मौजूद नही होती, बल्कि ये पूर्णतया शान्त और स्थिर होते है। सर्वत्र जहाँ कही सतह पूर्णतया स्वच्छ नही होती, ऐसे प्रतिबिम्ब बनते है; प्रगट है कि पानी की सतह पर मौजूद धूल के नन्हे-नन्हे जर्रे सतह पर अनेक अनियमित उभार बनाते है जो प्रकाश किरणों के लिए नन्ही तरगों का काम करते है। फलस्वरूप अधिक तिरछी दिशा से देखने पर ये प्रकाश-स्तम्भ पतले दीखने चाहिए, और वस्तुत. होता भी ऐसा ही है।

लगभग सीधी ऊर्ध्व दिशा से जब किरणे गिरती है तो प्रकाश के ये धब्बे मुश्किल से ही दिखलाई पडते है, किन्तु तिरछी किरणो के लिए ये बहुत ही स्पष्ट रूप से दृष्टि-गोचर होते है और इस प्रकार सतहपर धूलिकणो की मौजूदगी का ये स्पष्ट आभास देते है। इन दोनों दशाओ के परावर्त्तन मे प्रदीप्ति-अन्तर इतना अधिक है कि यह मानना पड़ता है कि इसका कोई विशेष कारण अवश्य होगा। धूल के ये जर्रे इतने छोटे होते है कि यह माना जा सकता है कि प्रकाश का परिक्षेपण करने मे ये समर्थ है। आगे हम देखेगे कि ऐसे ज़र्रों द्वारा किरणो की आपतन दिशा के आसपास परिक्षेपण प्रबलतम होता है (§ १७७)। अवश्य इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि क्यों, ज्यों-ज्यों अधिक तिरछी दिशा से देखते है त्यों परिक्षेपण और प्रकाश का समूचा धब्बा अधिक प्रकाशमान होते जाते हैं।

१९. तुषार पर प्रकाश के धब्बे

कभी-कभी तुषार की सतह नन्ही-नन्ही चिपटी चकरियों और सितारे की शक्ल के जर्रों की तह से ढकी होती है—ये चकरियाँ तथा सितारे करीब-करीब क्षैतिज तल में ही होते हैं। क्षितिज के निकट स्थित सूर्य का प्रतिविम्ब यदि इस तुषार की सतह में देखें तो एक खूबसूरत प्रकाश-स्तम्भ दिखलाई पड़ेगा जिसकी उत्पत्ति का कारण यह है कि तुषार की नन्ही चकरियाँ क्षैतिजतल से अनियमित रूप से इधर-उधर झुकी होती हैं। इस अवसर पर सूर्य को क्षितिज के निकट ही होना चाहिए, क्योंकि तब प्रकाश-स्तम्भ चौड़ाई में सिकुड़ जाता है, अतः और अधिक स्पष्ट दीखने लगता है।

रात के समय जब सड़क के लैम्पों में रोशनी होती रहती है, तब प्रकाश के धब्बे और भी अधिक चित्ताकर्षक दीखते हैं—प्रत्येक लैम्प ताजे तुषार में प्रतिबिम्बित होता है।

२०. सड़क पर प्रकाश के धब्बे

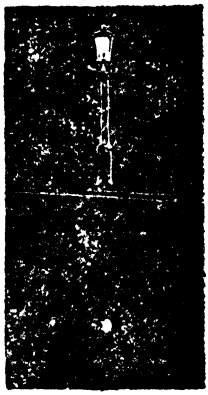
सड़क पर भी उसी किस्म के प्रकाश के स्तम्भ-सरीखे धब्बे बनते हैं जिस तरह हिलोर वाले पानी पर। ये धब्बे सर्वाधिक स्पष्ट उस वक्त दीखते हैं जब कि पानी बरस चुका हो और सारी सड़क गीली हो जाने पर चमक रही हो। आधुनिक ऐसफाल्ट की सड़क पर ये धब्बे अत्यन्त दीप्तिमान दीखते हैं, किन्तु ये पत्थर की रोड़ियों वाली सड़क या पुरानी चाल की ककड़ वाली सड़कों पर भी दिखाई देते हैं। वर्षा के बिना भी, सड़क से प्रकाश का परावर्त्तन इतनी अच्छी तरह होता है कि करीब-करीब हमेशा ही प्रतिबिम्ब में प्रकाश के स्तम्भ प्रगट होते हैं बशर्ते पर्याप्त तिरछी दिशा से हम देखें (देखिए § १५)।

२१. वर्षा के समय परावर्तन

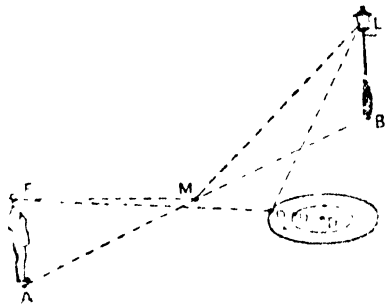
पानी बरसते समय रात को पानी के नाले में सड़क के लैम्प का प्रतिबिम्ब देखिए। लैम्प के प्रतिबिम्ब के चारों ओर जहाँ जहाँ बूंदें गिरती हैं, वहाँ ही प्रकाश की ढेर-सी चिनगारियाँ-सी उत्पन्न होती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिबिम्ब से किरण-रेखाएँ चारों ओर विकीर्ण हो रही हैं (चित्र २५)। फोरेल ने इसी तरह की घटना उस वक्त देखी थी जब उसने गहरे रंग के काँच में से शान्त पानी में सूर्य के प्रतिबिम्ब का अवलोकन किया था जिसके गिर्द पानी में यत्र-तत्र बबूले उठ रहे थे।

इस घटना का समझना आसान है। प्रत्येक बूंद से समकेन्द्रीय तरंगों का समूह बनता है। और इनके पार्श्व से बनने वाले प्रतिबिम्ब सदैव ही तरंग-समूह के केन्द्र और

प्रकाश-स्रोत के प्रतिबिम्ब को मिलाने वाली रेखा पर पड़ते हैं (चित्र २६)। चित्र से यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि पानी की सतह से जब लैम्प L तथा आँख E दोनों समान ऊँचाई पर स्थित होते हैं और बूंद दोनों से समान दूरी के बिन्दु D पर गिरती है, तब बिन्दु D_1 तथा D_2 दोनों ही रेखा M D पर पड़ते हैं; लैम्प का प्रतिबिम्ब M पर दीखता है। यदि तरंग का प्रसार बिन्दु D के गिर्द वृत्त की शक्ल में होता है तो परावर्त्तित



चित्र २५—वर्षा-जल के खित्ते सड़क लैंप के प्रतिबिम्ब के गिर्द चमकती हुई चिनगारियाँ विकीर्ण करते हैं।



चित्र २६—प्रतिबिम्ब के गिर्द चिनगारियाँ किस प्रकार बिखरती हैं।

प्रकाश रेखा D M पर कुछ दूर तक चलता है और इसकी रफ्तार इतनी तेज होती है कि जान पड़ता है कि प्रकाश की एक रेखा वहाँ बन रही है। चाहे बूंद ऊर्ध्व तल E M L में बिन्दु M के सामने गिरती हो या उसके पीछे; दोनो दशाओं में यह सिद्धान्त समान रूप से लागू होता है।

इस घटना का पुनरुत्पादन काँच की एक ऐसी प्लेट पर किया जा सकता है जिसमें लैम्प प्रतिबिम्बित हो रहा हो। इसके लिए एक शीशे के जार के ढक्कन को या पीतल की चकरी को जो खरगद पर चढ़ायी गयी रही हो, प्लेट की सतह पर खिसकाना होगा—अभिप्राय यह है कि वस्तु की सतह पर वृत्ताकार उभरी हुई धारियाँ मौजूद होनी चाहिए।

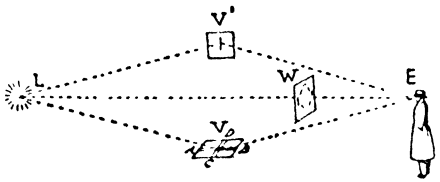
इसके लिए सामान्य उपपत्ति हासिल करने का प्रयत्न कीजिए।

२२. वृक्षों की चोटी पर प्रकाश के वृत्त

रात के समय जब वृक्ष के ठीक पीछे सड़क का लैम्प जल रहा हो, तो यत्र-तत्र टहनियों से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश देखा जा सकता है। प्रकाश के ये धब्बे वस्तुतः रोशनी की छोटी-बड़ी लकीरों-जैसे दीखते हैं जो प्रकाशसूत्र के गिर्द समकेन्द्रीय दायरों मे पड़ते हैं (प्लेट III)।

इस घटना के अवलोकन के लिए सबसे बढ़िया तरीका यह है कि यदि लैम्प वृक्ष के बिलकुल निकट जल रहा हो तो उसके तने की छाया मे खड़े हो जायें। किन्तु धूप मे भी ये वृत्त देखे जा सकते हैं, मिसाल के लिए वर्षा के बाद जबकि शाखाएँ भीग गयी हों, तो धूप के चमकने वाली टहनियाँ मटमैली पृष्ठभूमि पर थिरकती हुई आलोक-रेखाओं का सुन्दर-सा नमूना बनाती हैं। अवश्य आँख को चकाचौध से बचाने के लिए सूरज को छत या दीवार की आड़ मे पड़ना चाहिए। चमकते हुए तुषारकण भी अत्यन्त सुन्दर प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

इस घटना का समाधान इस प्रकार करते हैं (चित्र २७)—

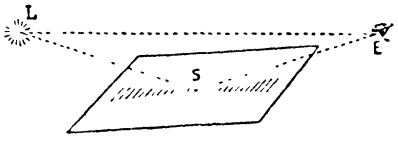


चित्र २७—**वृक्ष की चोटियों में प्रकाशवृत्त किस प्रकार बनते हैं।**

एक छोटी सतह V पर ध्यान दीजिए जो लैम्प की रोशनी को हमारी आँख की दिशा में परावर्त्तित करती है। इस धरातल मे पड़ने वाली सभी टहनियों को हम प्रकाश से चमकती हुई देखेंगे, किन्तु अनुदर्शन के कारण A B की भाँति अवस्थित टहनियाँ बहुत ही छोटी दीखेंगी जबकि C D दिशा की टहनियों की पूरी लम्बाई दिखलाई देगी। चूँकि दोनों ही दिशा में टहनियों की संख्या लगभग एक-सी होती है अतः परावर्त्तित प्रकाश मे मुख्यतः धरातल E L V की समकोण दिशा मे ही स्थित रोशनी की लकीरे हमें दीखेंगी। अन्य छोटी सँतहों के लिए भी जैसे V'आदि जो ऊपर या हमारे बाये या दाहिने स्थित होंगी, यही दशा लागू होती है, फलस्वरूप ऐसा प्रतीत होता है कि हम समकेन्द्रीय वृत्त की प्रकाश-रेखाएँ देख रहे हैं। हमारी दृष्टिरेखा और E L रेखा के दर्मियान का कोण जितना छोटा बनता है, दिशानुकूलन पर यह प्रभाव उतना ही अधिक बढ़ जाता है। फिर लैम्प की तरह

प्रकाश-स्रोत के निकट होने की अपेक्षा सूर्य की तरह प्रकाश-स्रोत जब अनन्त दूरी पर स्थित होता है तो इस दशा मे यह प्रभाव थोड़ा और बढ़ जाता है।

इस दशा की तुलना लहरों से उद्वेलित पानी की सतह पर दीखने वाले प्रकाश के धब्बों से कीजिए (चित्र २८)। एक तरह से हमें इस दशा में कल्पना करना होगा कि टहनियाँ सर्वत्र चारो ओर स्थित न होकर केवल एक ही धरातल (पानी की सतह) में स्थित हैं। इस सतह में पड़नेवाली केवल वे ही नन्हीं लकीरें EL के गिर्द के समकेन्द्रीय वृत्तों के भाग बना पायेंगी जो सबकी सब धरातल ESL के समकोण स्थित होंगी। ये प्रकाश-रेखाएँ मिलकर समष्टि रूप से ESL धरातल में प्रकाश-स्तम्भ का निर्माण करती है। यह क्रिया ठीक पानी की लहरों पर बनने वाले प्रतिबिम्बि की क्रिया के मानिन्द है।



चित्र २८—**वृक्ष की चोटी पर बने प्रकाश वृत्त और तरंगित पानी पर बने प्रकाश स्तम्भों की तुलना कीजिए।**

इसी प्रकार की घटना उस वक्त भी देखने को मिल सकती है जब डूबता हुआ सूर्य खड़ी फस्ल की बालों पर चमकता है या जब धुन्ध के मौसम मे सड़क के लैम्प को मकड़ी के ऐसे जाले में से देखते हैं जो ओस की नन्हीं बूँदों के कारण चमक रहा हो। रेलगाड़ी की खिड़की के काँच पर पड़ी खरोंच रेखाएँ भी इसी तरह के प्रभाव उत्पन्न करती है। (§१५९)। इन सभी दशाओं मे मुख्यतः प्रकाश के आपतन धरातल[1] की समकोण दिशाओं में पड़ने वाली नन्हीं रेखाएँ ही चमकती है अतः ये प्रकाश-स्रोत के गिर्द सम-केन्द्रीय वृत्तों का आभास कराती हैं।

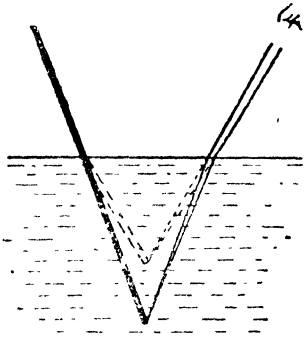
1. Plane of incidence

अध्याय ३

प्रकाश का वर्त्तन

२३. हवा से पानी में जाने वाले प्रकाश का वर्तन[1]

मल्लाह का बाँस, जिससे वह अपनी नाव को ठेलकर आगे बढ़ाता है, ठीक उस ठौर से टूटकर मुड़ा हुआ जान पड़ता है जहाँ से वह पानी में डूबा रहता है। ऐसा प्रतीत होने का कारण यह है कि जब किरणें हवा से पानी मे प्रवेश करती हैं या पानी से हवा मे, तो उनकी दिशा मुड़ जाती है। किन्तु यह ध्यान देने योग्य बात है कि डण्डे का यह मुड़ा हुआ भाग टूटी हुई किरण के प्रतिबिम्ब की स्थिति नही बतलाता क्योंकि डण्डे का प्रतिबिम्ब, किरण की ठीक उलटी दिशा मे मुड़ता है। इन दोनों का परस्पर का सम्बन्ध चित्र २९ में दिखाया गया है।



चित्र २९—प्रकाश-किरणों के वर्तन के कारण बाँस मुड़ा हुआ दीखता है।

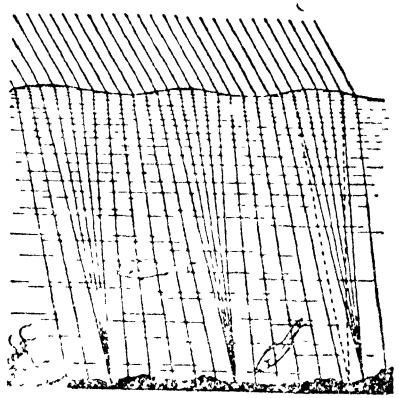
पानी में पड़ी किसी वस्तु की गहराई का अन्दाज़ अपनी आँख से लगाकर उसे शीघ्रता से पकड़ने की कोशिश करिए। साधारणत: इस कोशिश मे आप सफल न होगे क्योकि वर्त्तन के कारण पानी के अन्दर की वस्तु अपनी स्थिति से ऊपर उठी हुई जान पडती है (चित्र २९)। आपने जो गहराई आँकी थी वस्तु उससे नीचे होगी। किन्तु यह घटना इतनी सरल नही है कि केवल इतना कहने से इसका सही-सही समाधान हो जाय कि वर्त्तन वस्तु के बजाय उसका प्रतिबिम्ब एक ऊँचे उठे हुए धरा-तल पर उपस्थित करता है। उदाहरण के लिए जब स्वच्छ जल के नाले के किनारे आप

1. Refraction

सायकिल पर या पैदल जा रहे हों तो पानी के अन्दर के पौदों की स्थितियाँ अजीब तरह से बदलती हैं, उनके हटे हुए प्रतिबिम्ब मानो सरकते रहते हैं; जितनी ही अधिक तिरछी दिशा में आप देखें, प्रतिबिम्ब उतना ही अधिक ऊपर को उठा हुआ जान पड़ता है। (प्लेट VII देखिए)।

स्वच्छ पानी के तालाब में सतह पर उतराते हुए कमल के पत्तों की छाया तालाब के पेंदे में विचित्र रूप से हाशिये पर कटी-फटी-सी दीखती है—मानो नारियल के पत्ते की छाया हो। इसका कारण यह है कि पत्ता हाशियों पर ऊपर की ओर कुछ मुड़ा होता है, अतः पृष्ठतनाव की वजह से हाशिये से लगा हुआ पानी सतह से कुछ ऊपर उठ जाता है। इस प्रकार बने हुए नन्हे प्रिजमों मे से होकर सूरज की किरणें जब गुजरती हैं तो वे छाया वाले भाग मे अनियमित प्रकाश-रेखाओं के रूप में बिखर जाती हैं।

स्वच्छ पानी के छिछले नाले में, या नदी मे किनारे के निकट, पेंदे पर सूरज रोशनी की चमकीली लकीरें बनाता है। लहरों के शीर्ष लेन्स सरीखा काम करते हैं और ये किरणों को फोकस-रेखा पर समेट देते हैं—लहरों की हरकत के साथ-साथ यह रेखा भी धीरे-धीरे हिलती डुलती है (चित्र ३०[१] तथा प्लेट IVb)। इसी प्रकार की घटना परावर्त्तित प्रकाश मे हम देख चुके हैं (§८) और अब उसी के समकक्ष यह घटना हम वर्त्तन में भी पाते हैं। किरणे जब तिरछे गिरती हैं तब इन प्रकाश-रेखाओं के हाशिये रंगीन बनते हैं; सूरज की ओर का हाशिया नीले रग का होता है और दूर का ललछँवे रंग का, क्योंकि नील रंग की किरण लाल रंग की किरणों की अपेक्षा अधिक प्रबलता से वर्त्तित होती है। यह प्रकाश के विक्षेपण या रंग के विस्तरण की घटना है।



चित्र ३०—प्रकाश की किरणें पानी में प्रविष्ट होती हैं और तरंगों द्वारा वर्तित हो कर प्रकाश-रेखाओं पर केन्द्रित हो जाती हैं। नीली किरणें (बिन्दु रेखाएँ) अधिक प्रबल वर्तन प्राप्त करती है।

१. ये घटनाएँ और भी अच्छी तरह देखी जा सकती हैं, यदि जल दूरबीन का उपयोग करें (§२९०)।

पारदर्शी गहरे जल मे सफेद पत्थर का टुकड़ा फेक दीजिए और कुछ फ़ासले से इसे देखिए; यह ऊपर कुछ नीला और नीचे लाल रग का दीखेगा। यह घटना भी रंगों के विस्तरण के कारण है।

२४. असमतल काँच की पट्टिका में से वर्तन

पुरानी चाल की रेलगाडी की खिड़की मे से देखने पर आप पायेगे कि खिड़की के शीशे के कुछ भागों मे से बाहर की वस्तुएँ पूर्णतया विकृत रूप में दिखलाई पड़ती हैं। ऐसे शीशे म से होकर आने वाली सूर्य की किरणे यदि कागज पर गिरे तो इन भागों द्वारा कागज पर चमकीले प्रकाश की तथा गहरी छाया की धारियाँ बनती है। कागज को और दूर हटा कर रखिए तो ये धारियाँ काफ़ी स्पष्ट प्रकाश-रेखाओं का रूप धारण कर लेती हैं।

प्रगट है कि काँच के धरातल परस्पर समानान्तर नही हैं, बल्कि इसके कुछ भाग मोटे हैं और कुछ पतले; ये ही अनियमित लेन्स सरीखा काम करके किरणों को कहीं बिखरा देते हैं तो कही समेट देते हैं और इस प्रकार फोकस रेखाओं का मायावी नमूना बन जाता है (देखिए § २३)।

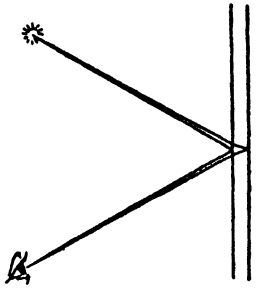
२५. प्लेट काँच से परावर्तित दुहरे प्रतिबिम्ब

सड़क के किनारे पर स्थित खिड़की मे दूर के लैम्प या चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को देखिए। दो प्रतिबिम्ब दिखलाई पड़ेगे, इनमे से एक प्रतिबिम्ब दूसरे के मुकाबले मे अनियमित तरीके पर इधर उधर हटा हुआ दीखेगा जो इस बात पर निर्भर करता है कि खिड़की के शीशे के किस भाग से परावर्त्तन हो रहा है। बहुत दिन नही हुए जब एक दार्शनिक ने कहा था कि इस घटना को 'कारण के बिना प्रभाव उत्पन्न होना' कह सकते हैं।[1] किन्तु भौतिकीज्ञ को तो इसके लिए कारण ढूँढ़ना ही होगा।

हम देखते हैं कि कुछ दुकानों और आफिसो मे सजावट के लिए लगे बढ़िया पालिश वाले काले रंग के काँच की प्लेट के परावर्त्तन मे दुहरे प्रतिबिम्ब नही दीखते। अतः यह स्पष्ट है कि एक प्रतिबिम्ब प्लेट की सामने वाली सतह से परावर्त्तन द्वारा बनता है और दूसरा प्रतिबिम्ब उन किरणों द्वारा बनता है जो काँच के भीतर प्रवेश करके पीछे वाली सतह से परावर्त्तित होती हैं और काँच मे से होकर हमारी आँख तक पहुँचती हैं। किन्तु काले रंग की प्लेट मे द्वितीय प्रतिबिम्ब बनाने वाली किरणें जज़्ब हो जाती हैं।

1. E Barthel, Arch-for system. philos 19, 355, 1913

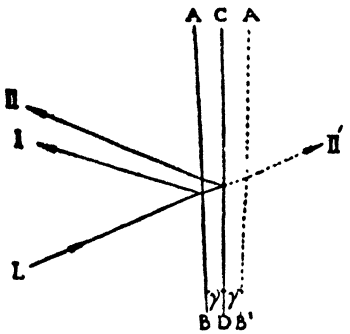
वर्त्तन के कारण एक किरण अपनी दिशा से थोड़ी विचलित हो जाती है। (चित्र ३१)। क्या दुहरे प्रतिबिम्ब इसी कारण बनते हैं? नहीं, क्योंकि यदि ऐसा होता तो (क) वे प्लेट के कुछ भागों पर अन्य भागों की अपेक्षा परस्पर इतने निकट नहीं दीखते; (ख) उनके बीच की दूरी प्लेट की मोटाई से अधिक न होती और तब इन्हे पृथक् दीखना कठिन हो जाता; (ग') किरण के आपतन कोण के बहुत बड़े और बहुत छोटे मान के लिए प्रतिबिम्बों के बीच का हटाव शून्य हो जाना चाहिए (गणना से सहज ही देख सकते हैं कि अधिकतम हटाव करीब 50° के आपतन कोण पर प्राप्त होगा); जबकि वास्तविकता यह है कि लम्ब दिशा के परावर्त्तन मे भी दुहरे प्रतिबिम्ब दिखलाई देते हैं; (घ) अनन्त दूरी के प्रकाश-स्रोत के लिए, जैसे चन्द्रमा, दुहरे प्रतिबिम्ब के बीच की दूरी सदैव ही शून्य रहनी चाहिए।



चित्र ३१—**पूर्णतया समानान्तर तल के प्लेट काँच का बना खिड़की का काँच दुहरे प्रतिबिम्ब का निर्माण करता है, किंतु वे एक दूसरे के अत्यन्त निकट स्थित होते हैं।**

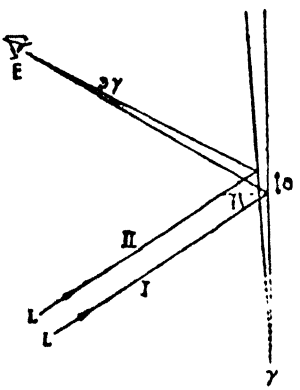
निष्कर्ष यह प्राप्त हुआ कि **समानान्तर समतल सतह वाली काँच की प्लेट से इस तरह के दुहरे प्रतिबिम्ब नहीं प्राप्त हो सकते। अवश्य प्लेट यदि वेज (टंक) की शक्ल की हुई तो सतह के तनिक लहरदार होने के कारण दुहरे प्रतिबिम्ब इस पर बन सकते हैं।** किन्तु इस व्याख्या के पूर्णतया स्वीकार करने के पहले हमें इसका हिसाब लगाना चाहिए कि सामने और पीछे की सतहों के बीच कितना बड़ा कोण बनना चाहिए ताकि दुहरे प्रतिबिम्बों के बीच उतनी ही दूरी मौजूद हो जितनी वास्तव मे पायी गयी है; क्योंकि ऐसी सम्भावना कम ही होती है कि अच्छे किस्म के प्लेटकाच की दोनों सतहे समानान्तर स्थिति से अधिक हटी हुई हों।

पहले मान लीजिए कि सतहे समानान्तर है और तब एक किरण पर ध्यान दीजिए—प्रथम सतह पर विभाजित होने के बाद भी दोनों किरणे परस्पर समानान्तर ही रहती हैं, परावर्त्तन के बाद वे एक दूसरे से केवल थोड़ी दूर हट जाती हैं। अब मानिए कि सतह AB समानान्तर स्थिति से छोटे कोण γ पर झुकी है (चित्र ३२)। इस दशा मे परावर्त्तित किरण I अपनी पूर्व स्थिति से कोण 2γ पर झुक जायगी। किरण II की मार्गदिशा प्राप्त करने के लिए हम कल्पना करते हैं कि CD एक दर्पण है जो सतह



चित्र ३२—दुहरे प्रतिबिम्ब ऐसे काँच में किस प्रकार बनते हैं, जिसकी मोटाई सर्वत्र एक-सी नहीं होती।

AB का परावर्तित प्रतिबिम्ब A'B' पर बनाता है और किरण II का प्रतिबिम्ब II' दिशा में बनाता है। अब हम देखते हैं कि किरण L II' छोटे प्रिज्म ABB'A' से गुजरा है जिसके वर्तन कोर के अल्प कोण का मान 2γ है। ज्यामिति प्रकाश-विज्ञान से हम जानते हैं कि इस तरह का प्रिज्म किरण पथ में $(\mu-1)\ 2\gamma$ का कोणीय विचलन पैदा करता है बशर्ते आपतन कोण का मान अधिक न हो। अतः किरण I और II के बीच का कुल कोण $2\gamma+(\mu-1)\ 2\gamma=2\mu\gamma$ होगा। काँच का वर्तनाङ्क μ 1·52 है अतः विचाराधीन कोण का मान करीब 3γ होगा।



चित्र ३३—दोनों परावर्तन प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी γ की सहायता से खिड़की के काँच के आमने-सामने की सतहों का झुकाव किस प्रकार ज्ञात करते हैं।

इस निष्कर्ष के अनुसार चित्र ३३ में दिखलाया गया है कि बहुत दूर के प्रकाशसूत्र L से आनेवाली करीब-करीब समानान्तर किरणें I और II परावर्तन के उपरान्त E पर स्थित प्रेक्षक की आँख में परस्पर कोण 3γ के झुकाव पर प्रवेश करती हैं।[1]

अतः हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि **यदि दोनों प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी का मान हम ज्ञात कर लें तो काँच की दोनों सतहों के दर्मियान का कोण इसका तृतीयांश होगा।**

उदाहरण के लिए इस कोण का मान इस प्रकार हासिल कर सकते हैं; काँच पर दोनों प्रतिबिम्बों के बीच की दूरी a मालूम करके

१. उपपत्ति की एक अन्य विधि के लिए देखिए §२६।

इसमे आँख और प्लेट के बीच की दूरी R से भाग दीजिए और फिर इसे Cos i से गुणा कर दीजिए।

साधारण प्लेट-काँच के लिए इस तरह से हासिल किये गये कोण के मान एक रेडियन[1] के कुछ सहस्राश या चाप के कुछ मिनट ही प्राप्त होते हैं। अर्थात् प्लेट पर करीब 5 इच आगे बढ़ने पर मोटाई मे केवल $\frac{1}{100}$ इंच का अन्तर आता है। यह अन्तर इतना कम है कि अत्यन्त सावधानी से नापे बिना इसका पता भी नही चल सकता। वास्तव मे जब इस तरह की नाप की गयी तो उपर्युक्त गणना सही पायी गयी।

क्या यह विलक्षण बात नही है कि बिना किसी अन्य साधन के, केवल चलते चलते काच के सूक्ष्म दोष की नाप-जोख हम कर सकते है? और फिर अब हमने यह भी देख लिया कि दुहरे प्रतिबिम्ब की उत्पत्ति की हमारी व्याख्या वास्तव में सही है। जब कभी किसी प्राकृतिक घटना का कारण मालूम करने मे हम असमर्थ रहते हैं तो इसके लिए हमे अपने अज्ञान को ही दोष देना चाहिए।

एक और अधिक व्यापक और अधिक सही सूत्र—दोनो प्रतिबिम्बो के बीच कोणीय दूरी $=2m\gamma\frac{R'}{R+R'}$, जब कि आँख और काँच के बीच की दूरी R है तथा प्रकाश-सूत्र मे काँच तक दूरी R′ है। और 2m के मान निम्नलिखित है—

आपतन कोण	1°	20°	40°	60°	80°	90°
2m	3·0	3·1	3·6	5·0	13·3	∞

बहु प्रतिबिम्बो के अध्ययन के लिए खिड़की मे लगने वाले साधारण काँच का उपयोग नही किया जा सकता, क्योकि असमतल सतह के कारण यह प्रतिबिम्बो को अत्यन्त बुरी तरह विकृत कर देता है। जाँच की यह विधि इतनी सूक्ष्म है कि ऐसे काँच पर ये प्रयोग नही किये जा सकते।

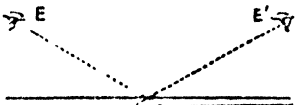
२६. वर्तित प्रकाश द्वारा प्लेट काँच में बनने वाले बहु प्रतिबिम्ब[2]

किसी भी सन्ध्या को ट्रामगाडी, रेलगाडी या मोटर बस की खिडकी के उत्तम श्रेणी के काच मे से दूर के लैम्प या चन्द्रमा को तिरछी दिशा से देखिए। आप कई प्रतिबिम्ब देखेगे जो एक दूसरे से करीब-करीब बराबर दूरी पर होगे। इनमे से पहला प्रतिबिम्ब बिलकुल स्पष्ट दीखेगा और बाद वाले प्रतिबिम्ब क्रमश. अस्पष्ट होते जायँगे। खिड़की

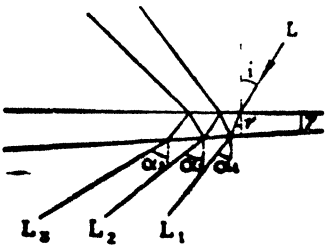
1. For radian see §१ 2- H.M. Reese J.O.S.A, 21, 282, 1931

से जितनी अधिक तिरछी दिशा से आप देखेंगे उतना ही अधिक फासला उनके दर्मियान दीखेगा तथा उनकी प्रकाश-दीप्ति का अन्तर भी उतना ही कम होता जायगा।

स्पष्ट है कि इस किस्म की घटना काँच के सामने की और पीछे वाली सतहों से बार-बार होनेवाले परावर्तन के कारण उत्पन्न होती है। वास्तव मे यह घटना परावर्तन वाले दुहरे प्रतिबिम्बो की उत्पत्ति से बहुत अधिक मिलती जुलती है, और उन्हीं कारणों से हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि ऐसी प्लेट की आमने सामने की सतहे समानान्तर नही है। लेकिन इसके लिए एक और कारण भी है; काँच की समानान्तर प्लेट में सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब अनिवार्य रूप से हमेशा उस सिरे पर पड़ता है जो निरीक्षक के निकटतम है—इससे कोई फर्क नही पड़ता कि हम काँच मे से E दिशा की ओर से देख रहे है या E′ दिशा से। किन्तु **प्रयोग से पता चलता है कि सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब निश्चित रूप से हमेशा एक ही ओर पड़ता है** (हमेशा या तो दाहिनी तरफ या हमेशा बायी तरफ), बशर्ते उस काँच की प्लेट के किसी एक ही निश्चित बिन्दु पर हम देखें (चित्र ३४)। लेकिन एक ही प्लेट मे कुछ भाग ऐसे मिलते है जिनमें सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब दाहिनी ओर पडता है तो अन्य भागो मे उसकी स्थिति बायें होती है, पहली दशा मे प्लेट के उस भाग की शक्ल एक वेज (स्फान) जैसी होती है जिसकी अधिकतम मोटाई हमारी आंख की ओर पडती है और दूसरी दशा मे वेज की अधिकतम मोटाई आंख की विपरीत ओर पडती है।



चित्र ३४—**बहु प्रतिबिम्बों का सबसे अधिक दीप्तिमान् प्रतिबिम्ब सदैव उस ओर पड़ता है, जिधर प्रेक्षक स्थित होता है।**



चित्र ३५—**वर्तित प्रकाश में बहु प्रतिबिम्ब।**

आइए § २५ मे बतायी गयी विधि से कुछ थोडे भिन्न तरीके से कोणीय दूरी की गणना करें। चित्र ३५ मे हम देखते है कि किरणें $L_1, L_2 L_3$. पीछे की सतह पर क्रमश कोण $r \cdot \gamma, r + 3\gamma, r + 5\gamma$ पर गिरती है। अत: इनके निर्गमन के कोण यदि क्रमश: $\alpha_1, \alpha_2, \alpha_3$ . .हो, तब

$$\sin \alpha_1 = n \sin (r+\gamma)$$

या चूंकि कोण γ छोटा ही है

$$\therefore \quad \sin \alpha_1 = n \sin r + \gamma n \cos r$$

इसी प्रकार $\sin \alpha_2 = n \sin r + 3\gamma n \cos r$

घटाने पर $\sin \alpha_2 - \sin \alpha_1 = 2\gamma n \cos r$

इन किरणो के लिए α का मान थोड़ा-थोड़ा करके ही बढ़ता है अत: $\sin \alpha_2 - \sin \alpha_1$ को हम $\sin \alpha$ के अवकल (डिफ़रेन्शियल) के बराबर मान सकते है, अर्थात्

$$\sin \alpha_2 - \sin \alpha_1 = \delta (\sin \alpha)$$
$$= \cos \alpha, \delta \alpha$$
$$= \cos \alpha (\alpha_2 - \alpha_1)$$
$$\therefore \alpha_2 - \alpha_1 = \frac{2n \cos r}{\cos \alpha} \gamma$$

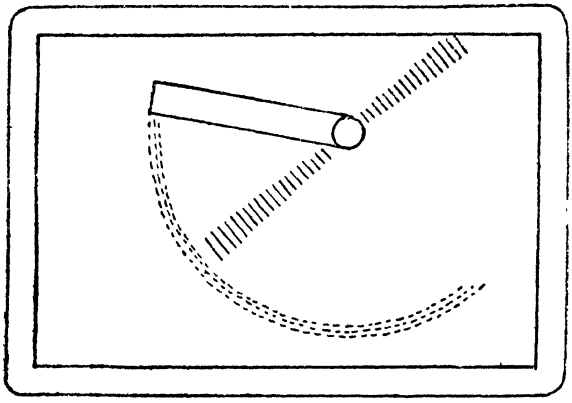
चित्र ३२ का उपयोग करने पर बार-बार के परावर्तनो से बनने वाले प्रतिबिम्बों के लिए भी इसी प्रकार की उपपत्ति लागू की जा सकती है। क्रमश. बनने वाले प्रतिबिम्बो के बीच की दूरी बिलकुल वही रहती है, चाहे वे परावर्तित प्रकाश मे देखे जा रहे है या वर्त्तित प्रकाश मे, ऊपर के सूत्र मे γ के गुणक के मान वास्तव मे वे ही है जो § २५ मे $2m$ के लिए दिये गये है।

२६ a. मोटरकार के वायु अवरोधक काँच (विन्डस्क्रीन) में परावर्तन तथा वर्तन

वायु-अवरोधक काँच को पोछने वाला ब्रुश सामने के काँच पर समकेन्द्रीय वृत्तो का निर्माण करता है और आप देखते है कि अस्त होते हुए सूर्य या सडक के लैम्प की रोशनी किस प्रकार पानी की पतली परत की दायरेनुमा लहरदार सतह में वर्तित होती है। प्रकाश का एक सुन्दर धब्बा सूर्य की दिशा मे खिचा हुआ दिखाई देता है; यह वास्तव मे एक वक्र रेखा का भाग होता है, किन्तु उस थोड़ी-सी दूरी तक जिसका हम सर्वेक्षण करते रहते है, यह लगभग सीधा ही दीखता है (चित्र ३५ क)। सिद्धान्त व्यवहारत: वही है जो हमने खिड़की के झिरीदार परदे या वृत्ताकार तरङ्गिकाओ के लिए अभी दिया है, महत्व इस बात का नही है कि किरणो का विचलन परावर्तन द्वारा होना है या वर्तन द्वारा, बल्कि सारभूत बात यह है कि ये किरणे आपतन तल मे ही रहती है।

फिर भी यहाँ हम एक अत्यन्त विशिष्ट और रोचक ब्योरा दे रहे है। यदि आप बारी-बारी से अपनी दाहिनी और बायी आँखे बन्द करें तो आप देखेंगे कि रोशनी का

फैला हुआ धब्बा एक आँख के लिए दूसरी की अपेक्षा थोड़ा भिन्न होता है—अवश्य ही यह इस कारण होता है कि ये प्रतिबिम्बन सदैव ही धारियों के केन्द्र से सूर्य की



चित्र ३५ क—**मोटरकार के विण्डस्क्रीन द्वारा वर्तित प्रतिबिम्ब।**

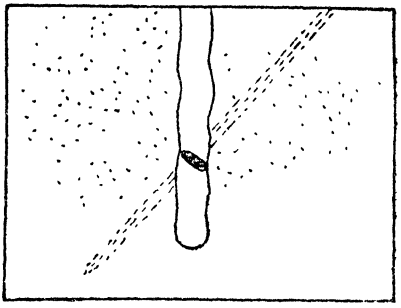
ओर जाते हैं और आप की बायीं आँख सूर्य को दाहिनी आँख की [illegible] के काँच के एक भिन्न बिन्दु पर देखती है। अब यदि आप दोनों आँखों से देखें तो ये दोनों प्रतिबिम्ब परस्पर मिलकर एक त्रि-विमितीय प्रतिबिम्ब बनाते हैं; आप रोशनी के धब्बे को केन्द्र से बहुत दूर पीछे स्थित सूर्य की ओर फैला हुआ देखते है, और केन्द्र की दूसरी ओर भी इसे आप देखते है जो काँच से आप की ओर आता हुआ जान पड़ता है। यह एक अद्भुत उदाहरण है जिसे 'पिण्डदर्शन' का नाम दिया गया है, इसकी चर्चा हम फिर करेंगे।

२७. पानी की बूँदें लेन्स के रूप में

रेलगाड़ी की खिड़की पर पड़ी वर्षा की बूँदे ठीक एक शक्तिशाली लेन्स की भाँति अत्यन्त नन्हे प्रतिबिम्ब बनाती हैं; इतना अवश्य है कि ये प्रतिबिम्ब विकृत ही बनते है क्योंकि वर्षा की बूँद की आकृति एक आदर्श लेन्स की शक्ल से जरा भी नही मिलती है। ये प्रतिबिम्ब ऊपर से नीचे उलटे बनते है, और यद्यपि बाहर के दृश्य रेलगाड़ी की विपरीत दिशा में गति करते जान पड़ते हैं, किन्तु उनके प्रतिबिम्ब उसी दिशा मे चलते दिखाई देते हैं जिस दिशा में रेलगाड़ी जा रही है।

खम्भे का प्रतिबिम्ब ऊपरी सिरे पर पेंदे की अपेक्षा अधिक मोटा होता है। इसका कारण यह है कि लेन्स की फोकस लम्बाई जितनी छोटी होती है, अर्थात् लेन्स

के पार्श्व की वक्रता जितनी अधिक होती है, उतना ही छोटा प्रतिबिम्ब बनता है; अब खिड़की की बूंद का ऊपरी भाग निचले भाग की अपेक्षा अधिक चिपटा होता है, अतः उससे बनने वाला बिम्ब भी बड़े आकार का होता है (चित्र ३५ ख)।



चित्र ३५ ख—**खिड़की के काँच पर से ढुलकनेवाली पानी की बूँद द्वारा वर्तन से बिम्ब का निर्माण।**

काँच की खिड़कियों पर बूँदे इकट्ठी होती हैं तो कुछ बड़ी बूंदें नन्ही धार की रूप मे नीचे लटक जाती है; इन बेलनाकार लेन्सों मे आप वर्त्तन का अध्ययन बखूबी कर सकते है। उनमे दीखने वाले प्रतिविम्बों में दाहना बायाँ उलट जाता है, व्योरे की सभी चीज़े उलटी दिशा मे हरकत करती नजर आती है और इसी प्रकार बाहर के दृश्य मे भी उत्क्रमण हो जाता है।

२८. ओस की बूँदों और तुषार के क्रिस्टल कणों में प्रकाश की रंगबिरंगी जगमगाहट

प्रातः की ओस मे रंगबिरंगे रत्नों का प्रकाश भला किसने नही देखा होगा? ध्यान दीजिए कि लॉन की छोटी घास पर ओस की बूंदे कितनी तेज़ जगमगाहट के साथ अनवरत रूप से चमकती है और हिलती हुई घास की लम्बी पत्तियों पर सितारों की भाँति किस प्रकार वे प्रकाश में लुपझुप झिलमिलाती रहती है।

आइए, घास की पत्ती पर पड़ी ओस का और अधिक ध्यानपूर्वक निरीक्षण करे। बूंद को उठाइए नहीं, छूइए भी नही! नन्ही गोल बूंदे पत्ती को भिगाती नहीं है; बूंदे पत्ती के बिलकुल निकट अवश्य है, किन्तु अधिकांश जगहो पर बूंद और पत्ती के दर्मियान अभी भी हवा की परत मौजूद है। ओसवाली पत्ती का भूरा स्वरूप ओस की सभी नन्ही बूंदो के भीतर और बाहर से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश के कारण है; बहुत-सी किरणे तो घास की पत्ती को स्पर्श भी नही कर पाती है (देखिए §१६८)। बड़े आकार की चिपटी बूँदों को यदि अधिक तिरछी दिशा से देखे तो वे चाँदी की सतह की तरह चमकती हुई दिखलाई देती हैं क्योंकि इस दशा में पीछे वाली सतह से किरणो का पूर्ण परावर्त्तन होता है। किसी एक बड़े आकार की बूंद को चुन लीजिए और एक आँख से इसे देखिए। ज्यों ही आपतित किरणों के साथ काफ़ी बड़े मान के कोण बनाने वाली

दिशा से देखते हैं, त्योंही रंग प्रगट होते हैं। पहले नीला रग दीखता है, फिर हरा और [illegible] पीले, नारंगी, और लाल रग। अवश्य यह उसी प्रकार की घटना है जैसी एक बड़े पैमाने पर किसी भी इन्द्रधनुष मे हम देखते हैं (§११९)।

इसी प्रकार के जगमगाते रग पाले के क्रिस्टल कणों मे और ताजा गिरे हुए तुषार में दिखलाई पडते हैं।

§१२९ और §१५४ की तुलना करिए।

'प्रोफेसर क्लिफ्टन से आप निवेदन करिए कि वे आपको समझाएँ कि क्यो पानी की बूंद यद्यपि हरी पत्ती के रग को हलका बनाती है या नीले फूल को भूरे रग का प्रगट करती है और इस कारण घास या डाक की पत्ती पर यह बूंद धुंधले प्रकाश की दीखती है, फिर भी यह रगो मे विशेष रूप से चटकीलेपन का समावेश करती है यहाँ तक कि कार्नेशन या जगली गुलाब के वास्तविक रग का पता आपको उस वक्त तक नही लग पाता है जबतक कि उस पर ओस की बूंदे न पडी हो।'

रस्किन 'दी आर्ट एण्ड प्लेजर्स आव इग्लैण्ड'

देवदार के बन मे अभी हाल मे एक विशिष्ट सुन्दर घटना का अवलोकन किया गया। प्रेक्षक सूर्य की ओर चल रहा था जो क्षितिज से लगभग १५° की ऊँचाई पर था। उसने धरती को नन्हे परिपूर्ण क्रिस्टलो से ढका पाया और उनमे से प्रत्येक एक तारा की तरह जगमगा रहा था। **इनमें से एक भी श्वेत रंग का नहीं था!** इनमे वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) के सभी रग मौजूद थे। पजो के बल खडे होने पर रगो के शेड नीले की ओर खिसक जाते हैं और जरा झुकने पर लाल वर्ण की ओर। इन सुन्दर रगो का समाधान किया जा सकता है क्योकि ये क्रिस्टल सूर्य के समूचे मडलक द्वारा प्रशाशित नही होते हैं बल्कि वृक्ष की टहनियो के बीच के नन्हे सूराखो के रास्ते ही इन पर प्रकाश गिरता है। सामान्य परिस्थितियो मे सूर्यमडलक के एक भाग से (क्रिस्टल मे से होते हुए) हमारी आँख मे लाल रंग का प्रकाश पहुँचता है और अन्य भाग से हरा या नीला प्रकाश; और ये रग एक दूसरे के साथ मिलकर श्वेत रग से मिलता जुलता प्रकाश उपस्थित करते हैं। किन्तु इस दशा मे आपतित किरण शलाका अत्यन्त पतली थी और प्रत्येक क्रिस्टल केवल एक ही रग वर्त्तित कर सका। रगो के विस्थापन की बात भी समझ मे आती है क्योकि आँख को ऊपर उठाने पर हम उन किरणों को ग्रहण करते हैं जिनका वर्त्तन अधिक प्रबल हुआ है।

अध्याय ४

वायु-मण्डल में प्रकाश-किरणों की वक्रता

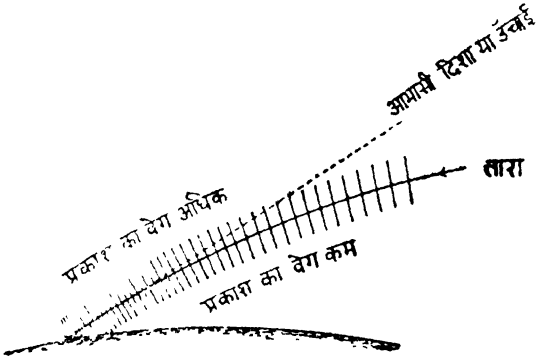
२९. धरती के निकट किरणों की वक्रता

आकाशीय पिण्ड अपनी वास्तविक ऊँचाई के मुकाबले मे क्षितिज से थोड़ी अधिक ऊँचाई पर स्थित मालूम पड़ते है; और ज्यों-ज्यों वे क्षितिज के निकट आते है त्यों-त्यों उनका यह स्थानान्तर बढ़ता जाता है। यही कारण है कि क्षितिज पर सूर्य तथा चन्द्रमा चिपटी शक्ल के दीखते है। सूर्यास्त के समय सूर्य के गोले का निचला सिरा औसत रूप से अपनी वास्तविक स्थिति से ३५ मिनट के कोण पर ऊपर उठा हुआ प्रतीत होता है किन्तु ऊपरी सिरा जो क्षितिज से अधिक ऊँचाई पर है, केवल २९ मिनट ऊपर उठता है। अतः गोले मे ६ डिग्री के कोण का चिपटापन उत्पन्न होता है जो सूर्य के व्यास का $\frac{1}{15}$ भाग है।

यह घटना जिसमे सीधे ही प्रेक्षण से पता चलता है कि किस प्रकार क्षितिज की ओर आने पर आभासी स्थानान्तर बढ़ता है, केवल वायुमण्डल के निचले स्तरो की हवा के घनत्व मे वृद्धि होने का परिणाम है। घनत्व के बढ़ने के साथ ही हवा का वर्त्तनाङ्क भी बढता है अतः प्रकाश का वेग घटता है। [illegible] (सितारा) से उत्सर्जित होनेवाली प्रकाश-तरङ्गे जब हमारे वायुमण्डल मे प्रवेश करती है तो पृथ्वी-तल के निकट की ओर के भाग अपेक्षाकृत कम वेग से चलते है अतः वे धरती की ओर क्रमशः झुकती जाती है। इस कारण तरङ्गाग्र की गमनदिशा प्रगट करने वाली किरणे भी झुक जाती है। और दूरस्थ वस्तुएँ उठी हुई प्रतीत होती है (चित्र ३६)।

धरती के निकट की किरणो का झुकाव, वायुमण्डल मे ताप (टेम्परेचर) के वितरण क्रम के बदलते रहने के कारण दिन प्रतिदिन घटता बढ़ता रहता है। अत्यन्त दिलचस्प बात होगी यदि कई दिनों तक सूर्य के उदय और अस्त होने का समय हम अङ्कित कर लें और फिर उसकी हम पञ्चाग और सारणी मे दिये गये समय से तुलना करे। समय की नाप में कम से कम एक सेकण्ड तक शुद्धता अवश्य प्राप्त करनी चाहिए, और रेडियो सकेत की सहायता से ऐसा कर सकना सम्भव भी है। इस तरह की तुलना में

एक या दो मिनट के अन्तर के मिलने की आशा की जा सकती है। समुद्र तट पर रहने वाला कोई भी व्यक्ति बहुत अच्छी तरह यह प्रयोग कर सकता है क्योंकि वहाँ सूर्यास्त



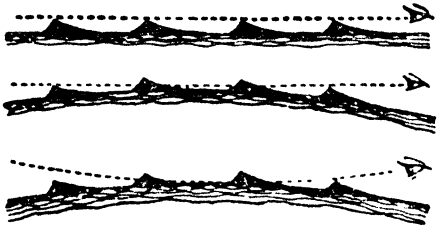
चित्र ३६—पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण की वक्रता के कारण आकाशीय पिण्ड वास्तव से अधिक ऊँचाई पर स्थित जान पड़ते हैं।

का प्रेक्षण साफ़ और खुले क्षितिज के ऊपर किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रयोग के साथ क्षितिज की ऊँचाई, सूर्य-मडलक की आकृति तथा हरी किरणो के निरीक्षण का भी समावेश किया जा सकता है, देखिए § ३०, ३५, ३६।

३०. परावर्त्तन के बिना ही किरणों की असामान्य वक्रता

इस बात पर ध्यान दीजिए कि समुद्रतट से देखने पर दूर की लहरे क्षितिज के सामने उभरी हुई जान पडती हैं जबकि उसी तरह की निकट की लहरे क्षितिज-रेखा को छू नहीं पाती हैं; यद्यपि समान ऊँचाई के शीर्षों को मिलाने वाली रेखा समतल होनी चाहिए और इसीलिए इसे भी क्षितिज से मिल जाना चाहिए। इस घटना का अध्ययन तूफान के वक्त समुद्र-यात्रा मे भी कर सकते हैं—बशर्ते प्रेक्षण निचले डेक से करे। तो आप पायेगे कि निकट की लहरे क्षितिज तक पहुँच नही पा रही हैं, और फिर इनकी तुलना दूर वाली लहरो से भी करिए। स्पष्ट है इस प्रेक्षण का समाधान केवल पृथ्वी की वक्रता द्वारा ही किया जा सकता है; यहाँ पृथ्वी की वक्रता एक वास्तविक तथ्य के रूप मे ठीक आँखो के सामने देखी जा सकती है (चित्र ३७)। किन्तु पृथ्वी के निकट किरणो मे उत्पन्न होनेवाली वक्रता के कारण ऊपर वर्णन की गयी घटना मे अन्तर

आ जाता है। किसी-किसी दिन तो यह प्रभाव बहुत ही अधिक स्पष्ट होता है—लगता है कि क्षितिज बिलकुल निकट आ गया है और किश्तियाँ सामान्य दिनों की अपेक्षा अधिक दूरी पर दीखती हैं तथा वे बड़ी भी प्रतीत होती हैं, मानों धरती की वक्रता बढ़ गयी हो। अन्य दिनो, शान्त समुद्र एक बड़ी अवतल तश्तरी के मानिन्द प्रतीत



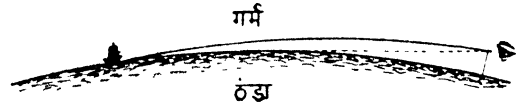
चित्र ३७—**क्षितिज रेखा के समक्ष लहरों का प्रेक्षण।**

होता है। अनेक वस्तुएँ जो सामान्यतः दृष्टिक्षेत्र से बाहर पड़ती हैं, अब दृष्टि-गोचर हो जाती हैं, और वे निकट भी जान पड़ती हैं तथा जितनी बड़ी उन्हें दीखना चाहिए [illegible] दीखती हैं। दूर के जहाज़ जो प्रेक्षक की आँख के लिए क्षितिज पर या उससे परे होने चाहिए थे, अभी भी पानी के गड्ढे मे उतराते हुए से दीखते रहते हैं। वे ऐसे दीखते हैं मानों ऊर्ध्व दिशा मे वे थोडा बहुत पिचक गये हों—हमारी आँख की स्थिति वास्तव मे जहाज के पेटे के ऊपरी हाशिये से नीचे रहती है, तब भी क्षितिज-रेखा पेटे के ऊपर से गुजरती हुई जान पड़ती है। क्षितिज असामान्यतः दूर हटा दीखता है।

इन दोनो लाक्षणिक दशाओ को हम क्रमशः पानी की 'उत्तल सतह' तथा 'अवतल सतह' कह सकते है (चित्र ३८)। पहली दशा उस वक्त उत्पन्न होती है जब वायुमण्डल मे नीचे से ऊपर की ओर घनत्व असामान्यतः धीरे-धीरे घटता है या उस वक्त भी जब कि पेदे के वायुस्तरो मे ऊपर की ओर घनत्व बढ़ता है और द्वितीय दशा उस वक्त उत्पन्न होती है जब नीचे से ऊपर की ओर घनत्व असामान्य तेजी के साथ घटता है। इस तरह की असगतियाँ ताप के असाधारण वितरण-क्रम के परिणाम हैं। यदि हवा की अपेक्षा समुद्र अधिक गर्म है तो नीचे के वायुस्तर ऊपर के स्तरों के मुकाबले मे अधिक गर्म हो जाते हैं। अतः प्रकाश के लिए ये अधिक विरल हो जाते हैं और इसलिए इनका वर्त्तनाङ्क घट जाता है; फलस्वरूप प्रकाशकिरणे धरती से दूर की दिशा मे मुड़ जाती हैं। यदि हवा के मुकाबले समुद्र अधिक ठण्डा

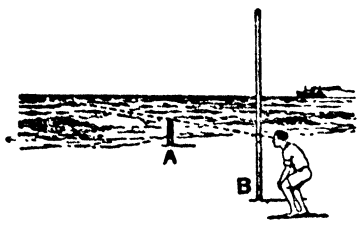
हो, तो किरणें उलटी दिशा में मुड़ती हैं। ऐसे दिनों वाञ्छनीय होगा कि विभिन्न ऊँचाइयों पर हवा का ताप यह देखने के लिए नापा जाय कि उससे इस प्रेक्षण का समाधान होता है या नहीं।





चित्र ३८—**दूरस्थ वस्तुओं का विलुप्त होना; पानी की सतह उत्तल प्रतीत होती है (दोनों ही चित्रों में किरण की वक्रता अत्यधिक दिखलायी गयी है।) (नीचे) दूरस्थ वस्तुएँ, जो सामान्यतः अदृश्य रहती हैं, अब दीख जाती हैं; पानी की सतह अवतल जान पड़ती है।**

प्रकाश की इन दोनों दशाओं की पहचान का एक और लक्षण है—यह है क्षितिज की आभासी ऊँचाई। बिना किसी यत्र की सहायता के, इस ऊँचाई को नापने के लिए समुद्र के ठीक किनारे निर्देशन का एक स्थिर-बिन्दु A निश्चित करिए और फिर किसी लट्ठे या पेड़ के तने पर चलायमान निर्देशन बिन्दु B लीजिए जो तट से एकाध सौ गज की दूरी पर भूमि की ओर हो (चित्र ३९)। बिन्दु B हमारा प्रेक्षणस्थल है, यहीं पर आँख इतनी ऊँचाई पर रखते हैं कि क्षितिज को जानेवाली रेखा ठीक बिन्दु A से



चित्र ३९—**पृथ्वी के निकट किरण की वक्रता की तब्दीली नापना।**

गुजरे। यदि समुद्र का पानी हवा से अधिक ठण्डा हुआ तो क्षितिज इस रेखा से ऊपर उठा हुआ प्रतीत होगा और B की स्थिति नीची हो जायगी, और यदि पानी हवा की अपेक्षा अधिक गर्म है तो क्षितिज नीचा दीखेगा, और B की स्थिति ऊँची चली जाती है। कभी-कभी यह अन्तर ६ मिनट या ९ मिनट तक भी ऊपर या नीचे की दिशा मे प्राप्त होता है, विशेषतया उस वक्त जब कि हवा न चल रही हो। यदि दूरी AB=१०० गज हो तो ये अन्तर क्रमशः ७ और ११ इंच की ऊँचाई प्रगट करेंगे। दूरबीन का उपयोग करने पर प्रेक्षण की इस विधि मे और अधिक सूक्ष्मता लायी जा सकती है।

कुछ बहुत ही विलक्षण दशाओं मे किरणो की वक्रता असामान्यरूप से प्रबल होती है और तब प्रकाश सम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण घटना प्राप्त होती है। किसी-किसी दिन सभी चीजे असाधारण रूप से साफ और स्पष्ट नजर आती है और ऐसे ही दिन कोई दूरस्थ कस्बा, या समुद्र का प्रकाशस्तम्भ, अचानक ही दीखने लग जाता है जब कि साधारण परिस्थितियो मे उसे देख सकना असम्भव ही रहता है, क्योंकि वह क्षितिज के नीचे स्थित होता है। अक्सर तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वह आश्चर्य-जनक रूप से हमारे निकट आ गया हो। दो बार इसी तरह की घटना ब्रिटिश चैनेल पर देखी गयी थी। एक बार ब्रिटिश तट के नगर हेस्टिंग्स से नगी आँखो द्वारा ही सामने का सारा फ्रेंच समुद्रतट देखा जा सका था जब कि साधारण परिस्थितियों में बढ़िया से बढिया दूरबीन की सहायता से भी उसे नही देखा जा सकता। एक अन्य अवसर पर रैम्सगेट से देखने पर डोवर का समूचा किला उस पहाड़ी के पीछे से दिखलाई पडा जो आमतौर पर किले के अधिकाश को अपनी आड़ मे छिपाये रखती है।

फिर इसके प्रतिकूल ऐसे भी दृष्टान्त है जब कि दूर की चीजे जो आम तौर पर क्षितिज से ऊपर निकली रहती है, गायब हो जाती है, मानो वे क्षितिज से नीचे डूब गयी हों। ये दशाएँ भी निकटता का विशेष आभास देती है।

इस तरह के प्रेक्षण के साथ-साथ समुद्र की सतह और हवा के ताप को भी सदैव नापना चाहिए।

३१. छोटे पैमाने पर मरीचिका (प्लेट V)

मरुभूमि की सुविख्यात मरीचिका एक छोटे पैमाने पर आसानी से देखी जा सकती है। एक लम्बी सपाट दीवार या पत्थर का बारजा चुनिए जो दक्षिण रुख हो और सूर्य की रोशनी उस पर पड़ रही हो--इसकी लम्बाई कम से कम १० गज होनी चाहिए। दीवार से सिर टिकाकर तिरछी दिशा में उसे देखिए और किसी व्यक्ति

को, जहाँ तक हो सके अपने से दूर उस दीवार के निकट खड़ा करिए जो हाथ में कोई चमकदार चीज़, जैसे धूप मे चमकती हुई साधारण चाभी, लिये हो। चाभी को वह धीरे-धीरे दीवार के निकट ले आता है; ज्योंही चाभी दीवार के निकट, चन्द इंचों की दूरी पर आती है, त्योही उसका प्रतिबिम्ब विशेष रूप से विकृत हो जाता है और दीवार से परावर्त्तित प्रतिबिम्ब चाभी की ओर खिसकता हुआ जान पड़ता है। अक्सर चाभी पकड़े हुए पूरा हाथ भी प्रतिबिम्बित होता हुआ देखा जा सकता है। एक बार जब सही तरीकेपर इस घटना का प्रेक्षण कर लिया गया हो तब दूर की प्रत्येक ऐसी वस्तु के लिए भी प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है जो दीवार के सहारे तिरछी दिशा मे दृष्टि डालने पर दिखाई देती हो। दीवार की लम्बाई के कम होने पर भी इस प्रतिबिम्ब को देख सकते हैं बशर्ते आँख को दीवार के एकदम निकट रखे—ऐसा करने के लिए दीवार के गोशे मे इतनी जगह होनी चाहिए कि प्रेक्षक भीतर खड़ा हो सके।

यदि एक बहुत ही लम्बी दीवार खूब गर्म हो जाय तो कभी-कभी प्रथम प्रतिबिम्ब के साथ-साथ द्वितीय प्रतिबिम्ब भी दिखलाई पड़ता है जो उलटा नही, बल्कि वस्तु के लिहाज से सीधा ही बनता है। यह उस सामान्य नियम के अनुकूल ही है जो यह बतलाता है कि मरीचिका के बननेवाले बहुप्रतिबिम्ब क्रमवत् एक के बाद दूसरे सीधे और उलटे अवश्य होते हैं (प्लेट Vb)।

परावर्त्तन इसलिए होता है कि गर्म हुई सतह के निकट ही हवा अधिक गर्म होकर अधिक विरल हो जाती है, अतः इसका वर्त्तनाङ्क घट जाता है। इस कारण प्रकाश की किरणें मुडती जाती हैं यहाँ तक कि वे सतह के समानान्तर हो जाती हैं, तदुपरान्त वे सतह से बाहर की ओर फैल जाती हैं (चित्र ४०)।



चित्र ४०—**धूप से प्रकाशित दीवार पर मरीचिका (ऊर्ध्व दिशा की दूरियाँ चित्र की स्पष्टता के लिए अत्यधिक बढ़ाकर दिखायी गयी हैं।)**

कभी-कभी इसे 'पूर्ण परावर्त्तन' भी कहते हैं; किन्तु यह नाम गलत है, क्योंकि स्तरों के बीच किरणो का झुकाव सर्वत्र आहिस्ते-आहिस्ते होता है। बल्कि यह स्मरण रखना चाहिए कि किरणों का मुड़ना करीब-करीब पूरे का पूरा गर्म हुई वस्तु के एकदम निकट घटित होता है। सम्भवतः दीवार के सहारे उसके अत्यन्त निकट ही वायु का एक स्तर इंच के कुछ हिस्से भर मोटा मौजूद

होता है जिसका ताप लगभग दीवार के ताप के बराबर ही है; इसके आगे ताप पहले तो तेजी से गिरता है, फिर अधिक शनैः-शनैः।

यह उचित होगा कि दीवार और उसके निकट के वायुस्तरों का ताप नाप कर यह दिखाएँ कि किरणों की प्रेक्षित वक्रता की परिमाणतः व्याख्या नापे गये ताप के आधार पर किस प्रकार कर सकते है।

छोटे पैमाने की इसी तरह की मरीचिका कुछ अवसरों पर स्टीमर की गर्म चिमनी के सहारे देखी गयी थी। चन्द्रमा, बृहस्पति तथा उगते हुए सूर्य इस प्रकार प्रतिबिम्बित होते थे मानो चाँदी की कलईवाले दर्पण मे वे देखे जा रहे हो; इसके प्रतिकूल जहाज के मस्तूल पर यह प्रभाव प्रगट नहीं होता। किन्तु मेरे विचार मे आधुनिक जहाज़ों की चिमनियाँ इतनी गर्म नही हो पाती है कि वे इस घटना को उपस्थित कर सकें।

धूप मे कुछ देर तक खड़ी रहनेवाली मोटरकार की छत पर देखने से दूर की वस्तुओ के प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से विकृत दिखलाई पड़ते है बशर्ते उस गर्म छत की सतह के सहारे बिलकुल निकट से देखे।

यदि धूप मे पड़ी ऐसी तख्ती को देखे जो २० इच से ज्यादा लम्बी न हो तो दूर की प्रत्येक वस्तु को आप इस रूप मे देख सकेंगे मानो वह तख्ती द्वारा आकृष्ट होकर लम्बाई की दिशा मे खिच उठी हो।

३२. गर्म सतहों पर बड़े पैमाने की मरीचिकाएँ (गौण प्रतिबिम्ब) (प्लेट Va)[1]

मरीचिका की उत्पत्ति के लिए एक चिपटी सतह, तथा लम्बे फासले से प्रेक्षण का किया जाना कम से कम उतने ही आवश्यक है जितना भूमि का अत्यधिक गर्म होना। इसी लिए हालैण्ड सरीखा सपाट भूमि का देश इस प्रकार की घटना के प्रेक्षण के लिए विशेष रूप से उपयुक्त ठहरता है; वहाँ वायु मे बननेवाले प्रतिबिम्ब अक्सर उतने ही स्पष्ट होते है जितने सहारा के तप्त रेगिस्तान मे। अक्सर ये मरीचिकाएं झुकने पर ही देखी जा सकती है; द्विनेत्री दूरबीन का उपयोग करने पर और क्षितिज पर बार-बार इधर-उधर निहारने पर, यह अचरज की बात है कि ये मरीचिकाएँ बहुत अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ती है और ये बार-बार दीखती है।

1. See Pernter-Exner, loc. cit. R. Meyer, Met. Zs, 52, 405, 1935; W. E. Schiele, Veroff-Geophysik. Inst. Leipzig, 7, 101, 1935.

अब हम ऐसी तीन परिस्थितियों का वर्णन करेंगे जब कि यह घटना असाधारण स्पष्टता तथा बहुलता के साथ उत्पन्न होती है।

सर्वप्रथम, यह घटना **ऐसफाल्ट की सपाट सड़क** के ऊपर किसी भी धूपवाले दिन देखी जा सकती है। सतह के ऊपर प्रथम आधे इंच मे थर्मामीटर के ताप मे २०° से लेकर ३०° तक की गिरावट होती है, इसके आगे प्रति इंच के लिए ताप का ह्रास एकाध डिग्री ही रह जाता है।[1] मेरा निज का अनुभव यह है कि आधुनिक कक्रीट की सीधी सडकों के ऊपर बननेवाली मरीचिका और भी स्पष्ट निखरती है। यह सच है कि कंक्रीट की सडक सूर्य की विकिरण-ऊष्मा का उतना शोषण नही करती जितना ऐसफाल्ट की सडक; किन्तु इस दशा मे कक्रीट-सड़क की सतह से ऊष्मा का पुनरुत्सर्जन भी तो कम ही होता है। धूपवाले दिन इस किस्म की सड़क पर पानी फैला हुआ जान पडता है और यदि झुककर देखें तो यह और भी स्पष्ट तथा अधिक दूर तक फैला हुआ दीखता है, और दूर की चमकीली तथा रगीन वस्तुएँ उसमे प्रतिबिम्बित होती हुई जान पडती है। जिसे हम पानी समझते है वह फासले पर प्रतिबिम्बित होनेवाले स्वच्छ आकाश के सिवाय और कुछ नही है। यह महत्त्व की बात है कि व्यस्त यातायात के बावजूद भी, जब कि उसकी वजह से कागज, पत्तियाँ और धूल आदि ऊपर को फिकती रहती है, इस प्रतिबिम्बन मे किसी तरह का व्याघात नही होने पाता। ठीक-ठीक प्रेक्षण कीजिए कि किस कोण पर मरीचिका दृष्टिगोचर होती है और पृष्ठ ६० पर समझाये गये सूत्र की सहायता से भूमि का स्पर्श करनेवाली वायु के ताप की गणना कीजिए।

द्वितीयत **सपाट प्रदेशों के घास के चौड़े मैदानों** मे मरीचिका का उत्पन्न होना एक सामान्य घटना है और कम से कम वसन्त और ग्रीष्म ऋतु मे जब कि मौसम साफ रहता है और अधिक हवाएँ भी नहीं चलती, मरीचिका इन मैदानो का एक विशेष लाक्षणिक गुण माना जा सकता है। क्षितिज के सहारे एक धवल रग की पट्टी-सी दीखती है जिसके ऊपर दूर की मीनारें और पेड की चोटियाँ उतराती हुई जान पड़ती है मानो बिना किसी आधार के वे टिकी हो। झुकने पर आपको निकट की भूमि के दृश्य विकृत रूप मे दिखलाई देते है जिसमे पानी के बड़े-बड़े पल्वलो मे मकान और स्वच्छ आकाश पृष्ठभूमि मे प्रतिबिम्बित होते रहते हैं। सूर्य की दिशा मे यह प्रभाव विशेष रूप से स्पष्ट दिखलाई पड़ता है।

1. H. Futi, Geophys. mag. 4, 387, 1931. L. A. Ramdas. & S. L. Malurkar, Nat. 129, 6, 1932.

दोपहर के करीब, किरणों का झुकाव अक्सर इतना अधिक होता है कि यदि आप खड़े भी रहे तो एसा प्रतीत होता है मानों हर तरफ़ पानी के पल्वल मौजूद हैं। और कुछ थोडा झुकने पर आप देखेंगे कि पानी के ये पल्वल किस तरह सिकुड़ जाते हैं या फिर दो-चार गज ऊँचे चढ़ने पर ये किस तरह और भी फैल जाते हैं। ध्यान दीजिए कि प्रतिबिम्ब की दिशा से आँख को तनिक ऊपर ले जाने पर ये ऊर्ध्व दिशा मे किस तरह खिच उठते तथा विकृत हो जाते है ; यदि आँख को बहुत नीची स्थिति में रखें तो दूर की वस्तुओं के पेदे अब दृष्टि से ओझल हो जाते है और ये वस्तुएँ हवा में लटकी हुई प्रतीत होती हैं। सूर्य से हटी हुई दिशा मे ये जलाशय कम चमकदार प्रतीत होते है, और इसलिए आसानी से उन पर ध्यान नही जाता, किन्तु दूर की वस्तुओं के प्रतिबिम्ब और उनकी विकृति अब और भी अच्छी तरह देखी जा सकती है।

यह दिलचस्प बात होगी कि निचले वायु-स्तरो मे कुछ के ताप अकित किये जायँ जैसे ४०, २०, १०, ४ और ० इंच की ऊँचाइयों पर। सुबह को, यदि धूप निकली हो, तो सबसे ऊँचा ताप धरती के बिलकुल निकट पाया जायगा; यदि ४० इच और ० इंच पर नापे गये ताप का अन्तर ३° हो तो इसका अर्थ है कि परावर्त्तन नगण्य है। यदि यह अन्तर बढकर ५° हो जाता है तो परावर्त्तन औसत दर्जे का है और अन्तर ८° हो तो परावर्त्तन की घटना विशेष प्रबल दिखाई देगी। अधिकतम अन्तर वसन्त ऋतु में ठण्डी रातो के बाद के धूपवाले दिन मे मिलता है।

वुश ने जिसन इस घटना का सबसे पहले विस्तृत और वैज्ञानिक अध्ययन किया था, ब्रेमेन नगर के निकट घास के एक बड़े मैदान मे (सन् १७७९मे) दूर के शहर की मरीचिका का स्पष्ट प्रेक्षण किया था। सर्वाधिक सुन्दर और सर्वा ङ्गपूर्ण मरीचिका तो समुद्रतट पर, बालुकामय, कड़ी और समतल भूमि के पार दिखलाई पड़ती है, विशेष-तया जब मौसम गर्म हो और हवा न बहती हो।[1] जमीन पर यदि हम लेट जायँ ताकि यथासम्भव आँख रेत की सतह के निकट हो तो हमे परावर्त्तित प्रतिबिम्ब स्पष्ट नही दीखेगा। किन्तु अगर हम अपना सिर थोड़ा ऊपर उठाएँ तो अचानक ही ऐसा प्रतीत होता है मानो हम चारों ओर से किसी झील द्वारा घिर गये हैं और ३० से ३५ गज के फासले की चीजे भी जो केवल ५ से लेकर, १० इच तक ऊंची हों, उसमे प्रतिबिम्बित

१. डच उत्तरी सागर द्वीप के समुद्रतट ५ मील लम्बे मैदान में अलौकिक सौन्दर्य की मरीचिकाएँ बनती हैं।

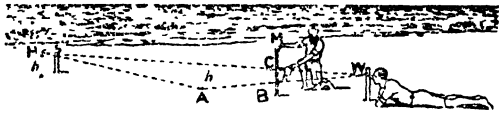
L. G., Vedy Met. Mag., 63, 249, 1928.

होती देखी जा सकती है। हम किसी स्पष्ट और चमकीली वस्तु H को चुन लेते हैं और अपनी आँख किसी निश्चित बिन्दु W पर रखते हैं जो धरती से उतनी ही ऊँचाई पर हो जितनी सामने की वस्तु। वस्तु के लिए कोई टहनी या लकड़ी का डण्डा चुन सकते हैं।

अब हम प्रयोग द्वारा उस प्रकाश-किरण का पथ ज्ञात करते हैं जिसके द्वारा मरीचिका-प्रतिबिम्ब हमें दिखलाई देता है। किसी ज्ञात दूरी के बिन्दु C पर एक आदमी ऊँचाई नापने का डण्डा सीधा खड़ा करता है और एक छोटे-से हत्थे को नीचे से ऊपर खिसकाकर उसे डण्डे के बिन्दु B पर रखता है ताकि विचाराधीन प्रतिबिम्ब उसकी आड़ में ओझल हो जाय; फिर हत्थे को खिसका कर वह उसे ऐसी स्थिति में रखता है कि स्वयं वस्तु का शीर्ष उसके पीछे छिप जाय। वस्तु के शीर्ष H से आँख तक सीधे आनेवाली प्रकाश-किरण HW को हम सीधी रेखा मान सकते हैं, अतः मुड़ कर आनेवाली किरण HAW के प्रत्येक बिन्दु की ऊँचाई हम ज्ञात कर सकते हैं; फलस्वरूप बिन्दु-बिन्दु निर्धारित करके स्वयं इस किरण-पथ को भी हम निश्चित कर सकते हैं। इस प्रकार पता चलता है कि रेत की सतह के निकट किरण का लगभग अकस्मात् परावर्त्तन हो जाता है। यदि यह ठीक है तब हम आशा कर सकते हैं कि निष्पत्ति $\frac{h}{AW} = \frac{h'}{BW}$ का मान स्थिर होगा और यह रेत की सतह तथा अधिक लम्बे पथवाली किरण के बीच बननेवाले कोण के बराबर होगा। यथार्थ में होता भी ऐसा ही है। इस प्रकार बननेवाले कोण के मान १° तक प्राप्त होते हैं। इस कोण के मान से और विभिन्न ताप पर हवा के वर्त्तनाङ्क से (जो हमें ज्ञात है'), सूत्र द्वारा हम भूमि के एकदम निकट की हवा के ताप और आंख की ऊँचाई पर की हवा के ताप का अन्तर डिग्री सेण्टीग्रेड में मालूम कर लेते हैं; सूत्र इस प्रकार है, ताप अन्तर $\triangle$ t (सेण्टीग्रेड में) $= \frac{273}{29.10^{-5}} \cdot \frac{1}{2} \left(\frac{h}{AW}\right)^2$ व्यवहार में यह अन्तर 10° से लेकर 65°F तक मिल सकता है।

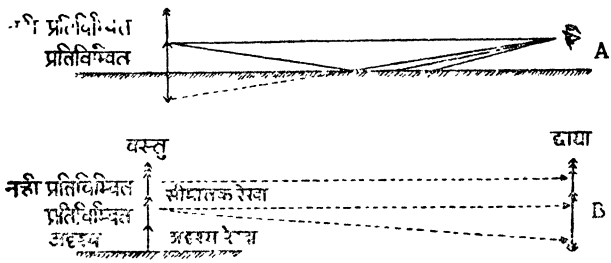
उपर्युक्त उदाहरण में मरीचिका की उत्पत्ति-क्रिया अत्यन्त सरल है। ज्यों ही मैं भूमि पर एक खास सीमा से आगे किसी बिन्दु पर अपनी दृष्टि डालता हूँ, तो दृष्टि रेखा की किरण गर्म स्तरों पर पर्याप्त झुके हुए कोण पर आपतित होती है, अतः इसका अकस्मात् विचलन हो जाता है। प्रभाव बहुत कुछ ऐसा ही होता है मानो उस बिन्दु की भूमि पर कोई दर्पण रखा हो। इस प्रकार दूर की वस्तुएँ दो टुकड़े में विभाजित

हो जाती हैं—ऊपर का भाग तो अकेला ही दीखता है, किन्तु पेदेवाले भाग के साथ उसका उलटा प्रतिबिम्ब भी दिखलाई पड़ता है (चित्र ४२ क)।



चित्र ४१—मरीचिका उत्पन्न करनेवाली किरण के पथ को कैसे मालूम करते हैं। (सभी क्षैतिज दूरियाँ अत्यधिक छोटी करके दिखायी गयी हैं।)

लम्बे फासले पर बननेवाली मरीचिका पर पृथ्वी की वक्रता तथा किरणों की सामान्य वक्रता का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। दूरस्थ चीज़ों के पैर पृथ्वी की वक्रता के कारण, एक खास ओझल रेखा के नीचे अदृश्य रहते हैं। इस ओझल रेखा और इससे कुछ ऊपर स्थित सीमा-रेखा के दर्मियान वस्तु का वह भाग मिलता है जो प्रतिबिम्बित होते हुए दीखता है और इसका प्रतिबिम्ब प्रायः ऊर्ध्व दिशा में संकुचित हुआ रहता है। अन्त मे, सीमा-रेखा से ऊपर वे वस्तुएँ दिखलाई पड़ती हैं जो प्रतिबिम्बित नही हो पाती हैं (चित्र ४२ ख)।

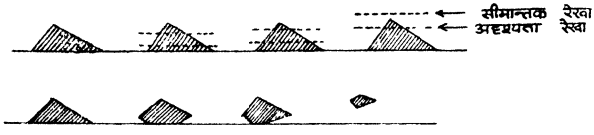


चित्र ४२—मरीचिका वस्तु के केवल एक भाग को ही प्रदर्शित करती है। A. थोड़ी दूर पर। B. लंबी दूर पर।

पृथ्वी की सतह के निकट, ताप की तीव्र वृद्धि के बजाय हम ताप के वितरण की अनेक अपेक्षाकृत अधिक पेचीदा स्थितियों की कल्पना कर सकते हैं जिनमें प्रत्येक के लिए प्रकाश-सम्बन्धी अपने परिणाम अलग-अलग किस्म के होंगे। समुद्रतट के ऊपर बननेवाली अत्यन्त स्पष्ट मरीचिका के लिए उपर्युक्त विधि से प्रायोगिक जाँच करके

ओझल रेखा तथा सीमारेखा की स्थितियाँ ज्ञात कर सकते हैं और फिर उनसे ताप-वितरण क्रम भी मालूम कर सकते हैं। इस निष्कर्ष के साथ स्तरों के सीधे नापे गये ताप की तुलना की जा सकती है। किन्तु समुद्रतट के बिलकुल सपाट न होने की संभावना के कारण इस तरह की जाँच का कार्य अत्यन्त कठिन हो जाता है।

प्रत्येक समुद्र-यात्रा मे बहुत-सी मरीचिकाएँ दिखलाई पड़ती हैं; जिनका समाधान पूर्ववर्णित व्याख्या के अनुसार किया जा सकता है (चित्र ४३, ४४)। यदि घटना



चित्र ४३—**विभिन्न दूरियों से ऐसे द्वीप का अवलोकन किया जा रहा है जहाँ मरीचिका मौजूद है।**

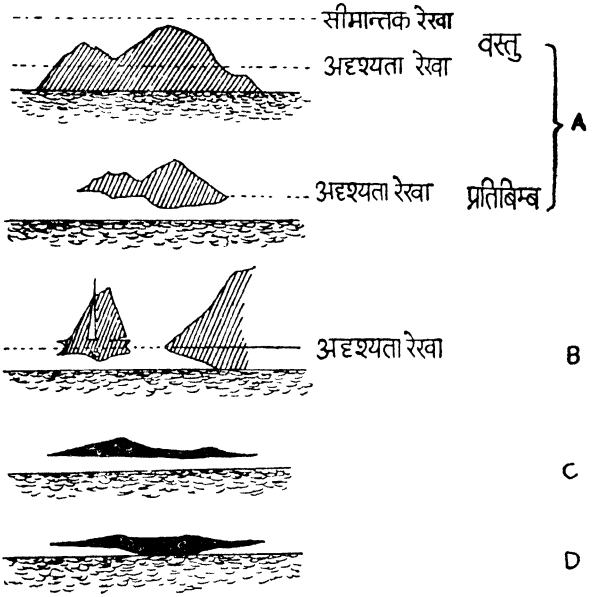
का विकास अपूर्ण रहा, जैसा कि प्रायः होता है, तो (उलटा) प्रतिबिम्ब इतना पिचक जाता है कि यह बस एक छोटी-सी आड़ी रेखा की शक्ल का दीखता है और स्वयं वस्तु के पेदे के साथ यह मिल-सा जाता है। और अब केवल प्रतिबिम्बित आकाश की रोशनी की चमकती हुई झिरी पर ही ध्यान आकृष्ट होता है—यह भी पिचकी होती है किन्तु स्वभावतः इस बात को हम भाँप नही पाते। इसलिये बहुत दूर की वस्तुएँ क्षितिज से कुछ ऊपर मानो उतराती हुई सी प्रतीत होती हैं।

प्रकाश की यह घटना, जो आंशिक विकास पायी हुई मरीचिका के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, लगभग प्रतिदिन ही समुद्र पर दिखलाई देती है, विशेषतया उस दशा मे जब कि हम दूरबीन का उपयोग करते हैं। यदि द्वीप के विभिन्न भाग हमसे विभिन्न दूरियों पर हों तो अधिकतम दूरीवाले भाग ओझल रेखा और सीमारेखा को अपेक्षाकृत अधिक ऊँचाइयों पर स्पर्श करते हैं और चित्र ४४ D मे दिखलायी गयी दशा प्राप्त होती है।

ओझल रेखा और आभासी क्षितिज के दर्मियान की ऊँचाई नाप कर मरीचिका की 'तीव्रता' को अङ्कों मे सरलता से प्रगट कर सकते हैं। नाप की क्रिया परिशिष्ट §२३५ मे दी गयी किसी एक विधि से पूरी की जा सकती है। इस के लिए चाप के कुछेक मिनट के कोणों की नाप करनी होती है।

एक और घटना मिलती है जो इस तरह का प्रभाव उत्पन्न करती है कि कभी-कभी धोखे से इसे ही उपर्युक्त घटना समझा जा सकता है—यह है लहरों के फेन से पानी

की नन्हीं-नन्हीं बूंदों की तह का निर्माण। ये बूंदे समुद्र की हवा में उतराती रहती हैं और दूर की चीजों के निचले भागों को धुन्ध के हलके स्तर से ढँक लेती है।



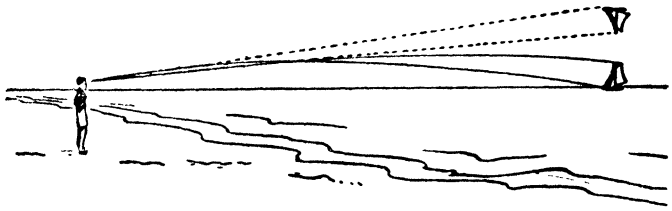
चित्र ४४—समुद्री यात्रा के दौरान में मरीचिका का प्रेक्षण।

मरीचिकाएँ, विकृत रूप मे और परावर्त्तित प्रतिबिम्ब के साथ निम्नलिखित परिस्थितियों में भी देखी गयी हैं—नदी, तालाब मे नहाते समय जब कि हवा के मुकाबले पानी अधिक गर्म हो; बड़ी झीलों पर, वायुमण्डल की अनुकूल परिस्थितियों में; रेलवे लाइन पर जब कि झुकने पर दूर का इंजिन अत्यन्त विकृत शक्ल का दीखता है; समतल रेतीले भूमिखण्ड पर या समतल जुती हुई भूमि पर; टीलों के ढाल पर बशर्त्ते हम ढाल के समानान्तर देखें; और शहर की पत्थर जड़ी हुई सड़क पर, विशेषतया उस दशा मे जब सड़क की उठान के सहारे निकट से कोई देख रहा हो।

३३. ठण्डे पानी के ऊपर मरीचिका (विशिष्ट मरीचिका या अस्पष्ट दर्शन)

जिस प्रकार तप्त भूमि के ऊपर-नीचे की ओर प्रतिबिम्बन होता है, ठीक उसी प्रकार ऊपर की ओर प्रतिबिम्बन मुख्यतः समुद्र के ऊपर देखा जा सकता है, किन्तु बहुत ही कम अवसरों पर। ऐसा उस वक्त होता है जब हवा की अपेक्षा समुद्र बहुत

अधिक ठण्डा रहता है जिससे निम्नतम वायुस्तरों का ताप, समुद्र के ऊपर ऊँचाई के साथ बहुत तेज़ी से बढ़ता है; ताप के इस ढंग के वितरण को ऋतु-वैज्ञानिक 'ताप के उत्क्रमण' (इनवर्शन ऑफ टेम्परेचर) के नाम से पुकारते है (देखिए चित्र ४५)।



चित्र ४५—उच्चतर श्रेणी की मरीचिका, एक असाधारण घटना।

कतिपय शानदार 'विशिष्ट' मरीचिकाओं के उत्तम श्रेणी के प्रेक्षण इङ्गलैण्ड के दक्षिणी समुद्रतट से ब्रिटिश चैनेल के पार दूरबीन द्वारा प्राप्त किये गये थे—ये प्रेक्षण कभी तो अत्यन्त गर्म दिन के बाद की सन्ध्या को लिये गये और कभी उस वक्त जब कि कुहरा बस हट ही रहा था। 'विशिष्ट' या उच्चतर श्रेणी की मरीचिकाएँ एकदम भिन्न परिस्थितियों में भी दिखाई देती है जैसे बसन्त ऋतु में बाल्टिक सागर पर बर्फ के गलने के तुरन्त बाद।

इस प्रकार की मरीचिकाएँ बर्फ जमी हुई सतह पर देखी जा सकती है जब कि अचानक बर्फ गलना शुरू करती है और इस कारण बर्फ के निकट की हवा ऊपर की हवा के मुकाबले में अधिक ठण्डी हो जाती है। किन्तु इसे देख सकने के लिए प्रेक्षक को झुकना पड़ेगा और उसे बर्फ जमी हुई सतह के सहारे उसके निकट से देखना होगा।

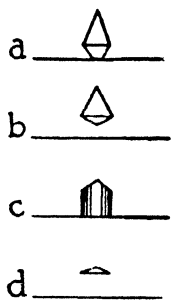
कभी-कभी किरणों के ऊपर की ओर मुड़ने से बहु प्रतिबिम्ब बनते है क्योंकि इस दशा में उनके विकास मे किसी तरह की बाधा नही पड़ती (जैसा कि किरणों के नीचे झुकने पर पृथ्वी की वक्रता के कारण बाधा पड़ती है)। और ये अद्भुत प्रतिबिम्ब उलटे भी बनते है तथा सीधे भी, क्षण-क्षण पर इनका स्वरूप बदलता रहता है तथा वस्तु की दूरी या वायुमण्डल के तापवितरण के अनुसार ही ये परिवर्त्तन घटित होते है।

३४. हवाई किले

कुछ अत्यन्त ही विशिष्ट दशाओं में पूर्णतया विश्वसनीय प्रेक्षकों द्वारा विचित्र मरीचिकाएँ देखी गयी हैं। इनका कहना है कि इन मरीचिकाओं में भूमि के दृश्य-

मय कस्बे, मीनारों और मुडेरों के, क्षितिज के ऊपर उठे हुए दीखते हैं जिनका स्वरूप बदलता रहता है, लगता है जैसे ढह रहे हों; बहुत कुछ परीलोक के दृश्य (फ़ाता मोर्गाना) सरीखे जान पड़ते हैं और गहरे आह्लाद की ये अनुभूति देते हैं, जी चाहता है कि निरन्तर इन्हे देखते ही रहे। आश्चर्य नही कि इसी कारण इन प्रेक्षणों की, जो स्वयं इतने सुन्दर हैं, काव्य और ग्राम्य गीतों में इतनी प्रशंसा की गयी है।

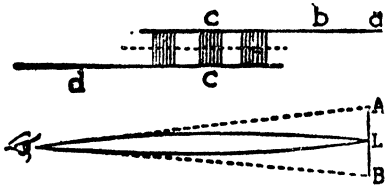
फ़ोरेल ने इस घटना को अपेक्षाकृत सरल रूप में कई बार झील के ऊपर देखा था और करीबं ५० वर्ष के अध्ययन के उपरान्त इसका विस्तृत वर्णन उसने किया। पानी का एक शान्त धरातल, लगभग १० से लेकर २० मील तक चौड़ा, इसके लिए आवश्यक है और आँख को पानी से लगभग २ गज़ से लेकर ४½ गज़ तक की ऊँचाई पर स्थित होना चाहिए;—आँख की ऊँचाई का प्रश्न विशेष महत्त्वपूर्ण है, अतः सही ऊँचाई प्रयोग द्वारा ही निश्चित करनी चाहिए। धूपवाले दिन, तीसरे पहर जब हवा के मुकाबले पानी अधिक गर्म था, फोरेल ने सामने के समुद्रतट पर मरीचिका की चार अवस्थाएँ एक के बाद दूसरी शनैः-शनैः विकसित होती हुई देखी, जिनमे से प्रत्येक अवस्था एक ही स्थान पर दस-बीस मिनट से अधिक देर तक नहीं रह पाती थी।



चित्र ४६—**गर्म और ठंडे जल के ऊपर के वर्तन के अवस्थान्तर के फल स्वरूप किस प्रकार फाता मोर्गाना (मिथ्या प्रकाश) का निर्माण होता है।**

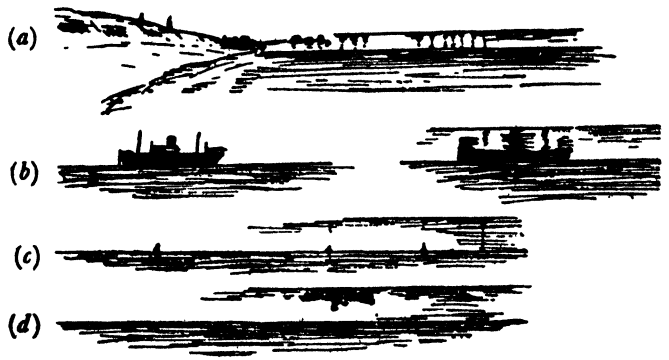
ये चार अवस्थाएँ इस प्रकार थी—(क) गर्म पानी के ऊपर, मरीचिका मे प्रतिबिम्ब वस्तु के नीचे; (ख) ठण्डे पानी के ऊपर, विलक्षण मरीचिका जिसमें वस्तु तो अपनी सामान्य शक्ल की दीखती है किन्तु नीचे का उसका प्रतिबिम्ब बेहद पिचक जाता है (सम्भवतः अस्थायी, झिलमिलाती, परिवर्तनशील शक्ल का); (ग) हवाई किले, इस दशा मे दूर की तट रेखा १०° से २०° तक की कोणीय दूरी में विकृत हो जाती है और ऊर्ध्व दिशा मे आयताकार धारियों के रूप में खिच उठती है (बिम्ब का धारीदार क्षेत्र); और (घ) ठण्डे पानी के ऊपर किरणों का सामान्य झुकाव; इस दशा मे प्रतिबिम्ब तो नहीं दिखलाई देता, किन्तु स्वयं वस्तु ऊर्ध्व दिशा में बहुत अधिक संकुचित दीखती है।

अवस्था (a) और (b) के ऊपरी क्षितिज तथा (d) के निचले क्षितिज की सीमाओं के अन्दर धारीदार क्षेत्र का निर्माण होता है (चित्र ४७)। अवस्था (a) का वर्त्तन (रीफ्रेक्शन) जब धीरे-धीरे अवस्था (d) में परिवर्त्तित होता है तो फल-स्वरूप हवाई किले का प्रतिबिम्ब हवा मे ऊपर उठ जाता है। यह सिद्धान्त कि इस तरह के संक्रमण क्षेत्र मे औसत ऊँचाई के वायु-स्तर मे ही हवा का घनत्व सबसे अधिक होता है, सही जान पड़ता है। इस दशा के लिए किरणों का मार्ग चित्र ४७ में दिखलाया गया है, और जैसा कि इस चित्र से प्रगट होता है, प्रकाश सूत्र L का हरएक बिन्दु ऊर्ध्व दिशा में रेखा AB की सीध में खिच उठता है।



चित्र ४७—फाता मोर्गाना किस प्रकार उत्पन्न होता है।

सम्भवतः हम् जानना चाहेगे कि क्या स्वयं हमारे देश (हालैण्ड) मे भी लाक्षणिक 'फ़ाता मोर्गाना' की घटना देख सकने की सम्भावना हो सकती है। हालैण्ड के उत्तरी समुद्रतट पर इस तरह की कम से कम एक शानदार घटना के देखे जाने का पता है। इस अद्वितीय अवसर पर फोरेल द्वारा वर्णित करीब-करीब सभी लाक्षणिक विशिष्टताएँ प्रेक्षक द्वारा देखी जा सकी थी। प्रेक्षक लिखता है 'गर्मी के मौसम की सन्ध्या के चार बजकर बीस मिनट पर जब ज़ान्दवूर्ट के समुद्रतट पर मैं पहुँचा तो क्षितिज की असमानता ने तुरन्त ही मेरा ध्यान आकृष्ट कर लिया। उत्तर-पश्चिम तथा पश्चिम मे, दक्षिण-पश्चिम की अपेक्षा क्षितिज काफ़ी ऊँचा था; कुछ जगहों पर दो क्षितिज दृष्टिगोचर हो रहे थे, एक के ऊपर दूसरा; दोनों ही एक ओर, पश्चिम और उत्तर के ऊँचे सिरे पर मिले हुए थे, और दूसरी ओर, दक्षिण-पश्चिम के निचले सिरे पर वे मिले हुए थे। उनके बीच का अन्तर करीब-करीब सर्वत्र एक-सा था, लगभग ७ मिनट का कोणीय अन्तर (आँख से भुजा की लम्बाई के फासले पर करीब .०८ इच)। इन दोनों तलों के दर्मियान की वस्तुएँ विचित्र तरह से विकृत हो गयी थीं, अतः तरह-तरह के मायावी शक्ल के प्रतिबिम्ब बन गये थे। (देखिए चित्र ४८)।



चित्र ४८—हवाई किले (जान्डबूर्त, नेदरलेंड में प्रेक्षित)

(a) नूर्डविज्क, काटविज्क, शेवेनिंजेन नगर, धारीदार क्षेत्र में बस खजूर-वृक्षों के वन-सरीखे दीखते हैं !

(b) बन्दरगाह से बाहर जानेवाला स्टीमर, कोई प्रतिबिम्ब नहीं (बायें); फाता मोर्गाना के क्षेत्र में (दाहिने)।

(c) छोटी समुद्री किस्तियां।

(d) स्टीमर क्षितिज के पीछे स्वयं अदृश्य; केवल फाता मोर्गाना में दृष्टिगोचर उलटा प्रतिबिम्ब ऊपरी क्षितिज से लटका हुआ है।

(From J. Pinkhof, Hemel en Dampkring, 31, 252, 1939. Block lent by the Royal Nether-lands Meteorological Institute.)

३५ उदय और अस्त होते समय सूर्य और चन्द्रमा का विरूपण[1] (प्लेट VI)

जब सूर्य आकाश मे कम ऊँचाई पर होता है तो प्रायः अत्यधिक विचित्र विरूपण देखने को मिलते हैं। दृष्टिगोचर होनेवाले वृत्तखण्ड के कोने घिस गये से जान पड़ते हैं या ऐसा प्रतीत होता है मानो चकरी दो भागों मे काटकर जोड़ दी गयी है, या फिर सूर्य की चकरी के नीचे प्रकाश की पट्टी-सी दीखती है जो सूर्य के डूबने के साथ और ऊपर की ओर चढ़ती है। अन्य दशाओं में सूर्य ठीक क्षितिज के नीचे अस्त न होकर उससे कुछ मिनटों की कोणीय ऊँचाई पर ही ओझल हो जाता है। आकृति के ये

1. A L Cotton, Contrib. Lick Obs. 1, 1895, P. A. S. P., 45, 270, 1933 etc.

विरूपण प्रातः की अपेक्षा सन्ध्या को अधिक परिवर्त्तनशील होते जान पड़ते हैं और ऐसा ऋतुसम्बन्धी कारणों की वजह से होता है (देखिए § १९३)।

खुले आकाशवाले दिन जब हवा न चलती हो, इन प्रतिबिम्बों के बनने के दौरान में भिन्न घनत्ववाले वायुस्तरों में फेर-बदल कम होता है, अतः सूर्य के हाशिये के विरूपण वायुमण्डल की स्थिर दशा बतलाते हैं और ये अच्छे मौसम के चिह्न समझे जा सकते हैं। यदि सूर्य की चमक बहुत अधिक हो तो अच्छा होगा कि चाँदी की कलईवाला कागज या फिर साधारण कागज जिसमें नन्हा-सा एक सूराख बना हो, आँख के सामने रख ले या फिर गहरे रंग का काँच आँख के सामने रखें। द्विनेत्री दूरबीन का उपयोग आवश्यक नहीं है, यद्यपि इसके उपयोग से प्रेक्षण की सुविधा जरूर हो जाती है। इस दशा में कालिख लगा हुआ कॉच या सुई के बराबर छिद्रवाला पर्दा ठीक आँख के सामने रखा जा सकता है (दूरबीन के बाहरी लेन्स के सामने नहीं)।

इन घटनाओं की सबसे अधिक दिलचस्प अवस्थाएँ प्रायः सूर्यास्त के १० मिनट पहले आरम्भ होती हैं (या सूर्योदय के १० मिनट बाद तक बनी रहती हैं)। साथ ही सूर्य की चकरी के रंगों के विभिन्न शेड पर भी ध्यान दीजिए, क्षितिज के सबसे निकट वाले हाशिये का रंग गहरा लाल होता है जो ऊपर की ओर क्रमशः नारङ्गी और पीले रग में बदल जाता है। यह भी देखिए कि चकरी पर कभी-कभी दृष्टिगोचर होनेवाले सूर्य के बड़े आकार के धब्बे नन्हीं लकीरों की शक्ल में खिच उठते हैं।[1]

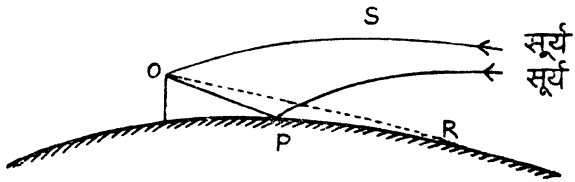
इनका फोटो लेना दिलचस्प होगा, यद्यपि यह थोड़ा कठिन काम है। साधारण केमरे से उतारा गया सूर्य का फोटो अत्यन्त छोटा ही आता है। केवल ऐसी दूरबीन से, जिसकी फोकस लम्बाई कम से कम ३० इंच हो और जिसका मुँह १ से ४ इच तक चौड़ा हो, सन्तोषप्रद फोटो लिया जा सकता है—इस दशा में एक सेकण्ड से कम ही समय तक प्रकाशदर्शन[2] देना आवश्यक होता है, और इतने कम समय के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि दूरबीन को सूर्य की प्रत्यक्ष गति के अनुसार घुमाने का समायोजन करे। इसके लिए पैन्क्रोमेटिक फोटो प्लेट काम में लाइए और इसके सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी भी प्लेट-सम्बन्धी साहित्य पढ़कर हासिल कर लीजिए।

प्रकाश के ये विरूपण अन्य किसी कारण से नहीं, बल्कि साधारण मरीचिका की वजह से उत्पन्न होते हैं; यहाँ हमें पुनः ऊपर की ओर बननेवाली मरीचिका और

1. Havings, Hemel en Dampkring 19,161, 1922
2. Exposure.

नीचे की ओर की मरीचिका के बीच के अन्तर पर गौर करना होगा। इस सम्बन्ध मे हम वास्तविक तथ्य के निकट पहुँच जाते है यदि हम यह मान ले कि सूर्य से आने वाली किरण जब ऐसे वायुस्तर पर पड़ती है जहाँ घनत्व बदलता है तो इसकी दिशा अचानक मुड़ जाती है (वेगेनर के मतानुसार)।

दशा क (चित्र ४९)-जैसा चित्र ४९ मे दिखलाया गया है, वायु का एक पतला स्तर PR भूमि के स्पर्श में स्थित है। अतः हमे सूर्य तो दिशा OS की सीध मे दीखता है और साथ ही साथ उसका परावर्त्तित प्रतिबिम्ब भी उसके नीचे OP दिशा मे दिखलाई देता है और क्षितिज OR इन दोनों के दर्मियान स्थित होता है। सूर्यास्त



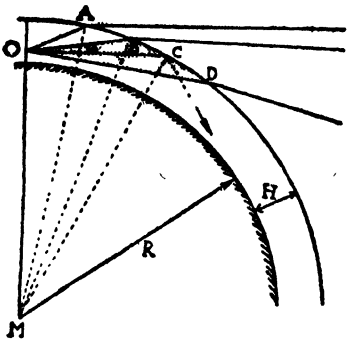
चित्र ४९--**दशा A के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति सूर्यास्त के समय।**

के समय सूर्य का एक चिपटा प्रतिरूप आभासी क्षितिज OP से ऊपर की ओर ठीक उस वक्त निकलता हुआ दीखता है जब सूर्य डूबता है--अतः वास्तविक सूर्य और यह प्रतिरूप, दोनों उस जगह एक दूसरे से मिल जाते है जहाँ हमारा सूर्य डूबने वाला होता है। तत्पश्चात् ये दोनो बिम्ब या चकरियाँ एक दूसरे के ऊपर चढ़ती चलती जाती है और तब गुब्बारे आदि की शक्ल प्राप्त होती है।

दशा ख (चित्र ५०)—इस बार हम कल्पना करते है कि धरती के निकट की हवा ठण्डी है, जब कि अधिक गर्म वायुस्तर ABCD इसके ऊपर है (उत्क्रमण)।[1] बिन्दु M पृथ्वी के गोले का केन्द्र है, जिसके गिर्द दो वृत्तचाप खीचे गये है, एक चाप समुद्र की सतह प्रगट करता है और दूसरा चाप उस वायुस्तर को प्रगट करता है जहाँ घनत्व अचानक बदल गया है। अब कल्पना कीजिए O पर खड़ा प्रेक्षक इस तरह देखता है कि उसकी दृष्टिरेखा उत्तरोत्तर क्षितिज के निकट आती जा रही है; OA दिशा मे उसकी दृष्टिरेखा सूर्य की चकरी के ऊपरी हाशिये को स्पर्श करती है; OB दिशा मे उसे चकरी का तनिक नीचे का भाग दिखलाई देता है, किन्तु इस बार उसकी

1. Inversion

दृष्टिरेखा घनत्व परिवर्त्तन वाले स्तर के साथ अधिक झुकी हुई है; तथा क्षैतिज दिशा OC की सीध में जानेवाली दृष्टिरेखा उस स्तर पर गिरने पर इतना बड़ा कोण बनाती है कि दृष्टिकिरण अधिक झुक जाने के कारण आगे नहीं जा पाती, बल्कि वापस पृथ्वी पर ही लौट जाती है। यदि प्रेक्षक धरती की सतह से कुछ ऊँचाई पर खड़ा होता है, तब वह नीचे की ओर अपनी दृष्टि परिवर्त्तनवाले स्तर पर अपेक्षाकृत छोटे कोण की दिशा में डाल सकता है; जैसे दिशा OD में देखने पर उसकी दृष्टिरेखा परिवर्त्तन-स्तर पर इतना छोटा आपतन कोण बनायेगी कि किरण उस स्तर के पार निकल जायगी। अतः क्षैतिज दिशा के दोनों ओर बिन्दुपथ द्वारा दिखाये गये कोण के दर्मियान वायु-मण्डल के बाहर की कोई भी किरण



चित्र ५० क



चित्र ५० ख—**दशा ख के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति का सूर्यास्त।**

प्रेक्षक तक नही पहुँच पाती; फलस्वरूप उसे एक अन्धी पट्टी दीखती है जिसकी ऊर्ध्व चौड़ाई 2h होगी। यह निम्नलिखित प्रमेय से प्राप्त एक परिणाम है।

O से खींचे गये तमाम जीवाओं[1] मे क्षैतिज जीवा OS ही ऐसी जीवा है जो वृत्त के साथ न्यूनतम कोण बनाती है। उपपत्ति—त्रिभुज MOB में $\frac{\sin \widehat{OBM}}{OM} = \frac{\sin \widehat{MOB}}{MB}$ है,

1. Chords

अतः $\sin \overset{\frown}{OBM} = \frac{R}{R+H} \sin (90°+h) = \frac{R}{R+H} \cos h$

इससे यह स्पष्ट है कि $\overset{\frown}{OBM}$ अपना महत्तम मान उस वक्त प्राप्त करता है जब h=o हो। अन्त में पूर्ण परावर्त्तन की दशा में $\sin \overset{\frown}{OBM} = \frac{1}{n}$ जिसमें n एक स्तर का दूसरे वायुस्तर के मुकाबले में वर्तनाङ्क है। अब $\frac{H}{R}$ के लिये ϵ लिखें और n-1 के लिए δ तथा cos h के स्थान पर उसका निकटतम मान $1-\frac{1}{2}h^2$ लें तब h के लिए हम यह फल प्राप्त करते हैं —

$$h = \pm \frac{\sqrt{2(\delta - \epsilon}}{n}$$

सन्निकटतः $h = +\sqrt{2(\delta - \epsilon}$ क्योंकि n तो करीब-करीब 1 के ही बराबर रहता है।

अतः हम देखते हैं कि अन्धी पट्टी का विस्तार जितना क्षितिज के ऊपर है उतना ही नीचे भी (दुहरे चिह्न $\pm$ के कारण)। H यदि 55 गज़ हो तब $\epsilon = 78 \times 10^{-7}$ और यदि इस दशा के लिए $\delta = 100 \times 10^{-7}$ लें, तब $h = \pm 0.021$ रेडियन $= \pm 7$ मिनट; अतः अन्धी पट्टी की कोणीय ऊर्ध्व चौड़ाई 14 मिनट होगी।

दरअसल इस व्याख्या में हमें किरणों की सामान्य पार्थिव वक्रता का भी विचार करना चाहिए था, किन्तु इस स्थान पर हम इस घटना की केवल प्रमुख विशिष्टताओं पर ही ध्यान दे रहे हैं।

अब यह स्पष्ट है कि वायुमण्डल की इस संरचना के अनुसार सूर्य वास्तविक क्षितिज तक पहुँचने के पहले ही अस्त हो जाता है, यानी उसी क्षण जब कि वह अन्धी पट्टी में प्रवेश करता है। यदि प्रेक्षक पहाड़ी की चोटी या जहाज के डेक पर खड़ा हो तो संभवतः वह अन्धी पट्टी के नीचे की ओर से निकलती हुई सूर्य चकरी का निचला हाशिया देख सकेगा। अवश्य प्रतिबिम्ब विकृत शक्ल के दीखते हैं अर्थात् अन्धी पट्टी के ऊपर तो प्रतिबिम्ब पिचका हुआ होगा और पट्टी के नीचे वह खिंचा हुआ दीखेगा।

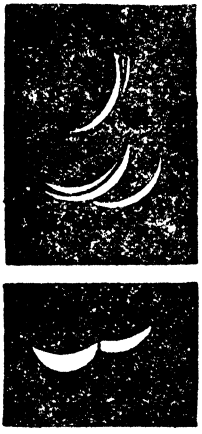
कुछ दशाओं में सूर्य के प्रतिबिम्ब में छोटी-छोटी कई सीढ़ियाँ-सी कटी दिखलाई पड़ती हैं—ये सहज ही इस बात की द्योतक हैं कि आकाश में घनत्व परिवर्तनवाले

एक से अधिक स्तर मौजूद है (चित्र ५१)। कभी-कभी सोपानों के बीच की एकाध कटान[1] दोनों ओर से इतनी गहरी हो जाती है कि ऐसा प्रतीत होता है मानो सूर्य के ऊपरी भाग से एक टुकड़ा कटकर एक क्षण के लिए हवा मे उतराता रह गया हो और फिर वह सिकुड़ कर हरी किरणों की शानदार छटा की [illegible] करते हुए विलुप्त हो जाय। इसके बाद दूसरा टुकड़ा इसी तरह अलग हो सकता है और फिर तीसरा, चौथा आदि (चित्र ५८)।



चित्र ५१—**सूर्य की विकृति, जब वायु के विभिन्न घनत्व वाले कई स्तर मौजूद हों।**

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण मे मैंने दो उदाहरण प्रस्तुत किये थे जिनमे बहु-अर्द्धचन्द्र का विवरण दिया गया है जो विशेष रूप से सुस्पष्ट, सुडौल और एक दूसरे पर आरोपित थे (चित्र ५२)। ये घटनाएँ असाधारण रूप से प्रबल वर्त्तन के कारण उत्पन्न हुई बतलायी गयी है; किन्तु प्रतिबिम्बों के बीच की दूरी इतनी अधिक थी कि इस व्याख्या मे मैं कठिनता से ही विश्वास कर सका था और मन में सन्देह उठा कि कही प्रेक्षकों की आँखों मे ही तो कोई नुक्स नही था।



चित्र ५२—**चन्द्रमा के बहु नवचन्द्रक** (From Onwederers en Optische Verschijnselen in Neder land and Meteorologische Zeitschrift.)

लेकिन मैं गलती पर था। प्रकृति की सम्भावनाएँ सदैव ही हमारे अनुमान से कही अधिक सम्पन्न होती है। क्योंकि देखिए न, अभी हाल मे एक प्रेक्षक ने सूर्य के सात प्रतिबिम्ब देखे जो सुस्पष्ट और नीलापन लिये हुए थे, ये सभी सूर्य के निकट थे जो समुद्र के क्षितिज से १०° की ऊँचाई पर नारङ्गी वर्ण का था*। और **इस बार इस घटना का फ़ोटो भी लिया गया है।** प्रतिबिम्बों के सुस्पष्ट बने रहने के दौरान प्रबल वर्त्तन का होना अत्यन्त आश्चर्यजनक है।

1. Notch * Richord, meterologie 4, 301, 1953

३६. हरी किरण

स्काटलैण्ड की एक प्राचीन किंवदन्ती के अनुसार जिस व्यक्ति ने 'हरी किरण' देख रखी है वह फिर कभी भी भावुकता के मामले में गलती नहीं करेगा। 'आइल आव मैन' द्वीप मे इसे 'जीवित आलोक' के नाम से पुकारते है।

हरी किरण की घटना, लोगों का अभी तक जैसा ख्याल था उसकी अपेक्षा कहीं अधिक बहुलता से देखी जा सकती है। भारत से हालैण्ड आते समय की एक समुद्र-यात्रा मे मैंने दस से भी अधिक बार इस घटना का अवलोकन किया था। निस्सन्देह इसके देखने के लिए सबसे बढिया ठौर समुद्र है; अवलोकन जहाज के डेक से कर सकते है या समुद्रतट से। वैसे भूमि पर भी यह घटना देखी जा सकती है बशर्ते क्षितिज पर्याप्त दूरी पर हो। कभी-कभी यह घटना उस वक्त भी उत्पन्न होती है जब सुस्पष्ट बादलो की पेटी की ओट मे सूर्य छिपने जा रहा हो। ऐसा जान पड़ता है पहाड़ो और बादलों के ऊपर की यह घटना दृष्टिगोचर होती है बशर्ते क्षितिज से इनकी ऊँचाई करीब ३° से अधिक न हो। एकाध अवसर पर हरी किरण आश्चर्य-जनक रूप से कम फासले पर देखी गयी है। रिक्को ने बतलाया है कि किस प्रकार एक बार जब वे काफी निकट की एक चट्टान के साये के हाशिये मे खड़े थे, तो सिर को केवल एक ओर या फिर दूसरी ओर तनिक हटाकर वे इच्छानुसार बार-बार 'हरी किरण' देख सके थे।[2] ह्विटनेल तथा निज्लैण्ड ने इस घटना का अवलोकन एक दीवार के सिरे पर किया था जो ३३० गज की दूरी पर थी। किन्तु ये सभी अपवाद के दृष्टान्त है।

जिन लोगों ने इस घटना का प्रेक्षण किया है वे सभी इस बात से सहमत है कि 'हरी किरण' सबसे अधिक स्पष्ट ऐसी शाम को दीख पड़ती है जब सूर्य अस्त होने के क्षण तक तेज रोशनी से चमकता रहता है; इसके प्रतिकूल सूर्य जब अत्यन्त रक्त-वर्ण का होता है तो 'हरी किरण' करीब-करीब अदृष्टिगोचर ही रहती है।

द्विनेत्री दूरबीन[3] प्रेक्षण मे आम तौर से सहायक होती है और दूरबीन यन्त्र तो

1. Mulder, The 'green ray' or 'green flash' (The Hague 1922). Feenstra Kuiper. • De Groene Straal (Diss. Utract 1926)

इस घटना के व्यापक अध्ययन सहित आधुनिक निबन्धों की एक सूची, तथा आश्चर्यजनक रंगीन फोटोग्राफ वैठिकन वेधशाला द्वारा प्रकाशित किये गये है।

D.T.K O Connell, The Gren Flash(Amsterdom-New York 1958).

2. Mem. Spettr. Ital. 31, 36, 1902. 3. Fieldglasses क्षेत्र-दूरेक्षिका।

और भी अधिक सहायक होते हैं। किन्तु इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि यन्त्र द्वारा सीधे ही सूरज की ओर न देखें सिवाय अस्त होने के ठीक पूर्व के अन्तिम क्षणों में, वरना आँख में चकाचौंध से क्षति पहुँच सकती है। फिर नगी आँखों से भी सूर्य-चकरी के अन्तिम खण्ड का अवलोकन करने में बहुत जल्दी नहीं करनी चाहिए, बल्कि सूर्य की ओर तो अपनी पीठ ही उस वक्त तक रखिए जब तक अन्य कोई व्यक्ति आपको बतलाता नहीं है कि प्रेक्षण का ठीक अवसर अब हो गया।

यह घटना है अत्यन्त परिवर्त्तनशील और बस कुछ ही सेकण्ड तक यह बनी रहती है। एक बार एक टीले के ढाल के ऊपर जिसकी ऊँचाई ६ गज़ थी, दौड़ने पर मैं 'हरी किरण' २० सेकण्ड तक देख सका था; मेरी रफ्तार के कम होने पर यह अपेक्षाकृत अधिक आसमानी रंग की हो जाती और रफ्तार के बढ़ने पर यह अधिक धवल हो जाती। कुछ अवसरों पर बारी-बारी से जहाज़ के विभिन्न डेकों से भी इसे देख सकना सम्भव हो सकता है। जहाज़ की हरकत के कारण, निज्लैण्ड ने इस घटना को क्रम से एक के बाद एक, कई बार देखा था। एक बहुत ही खास मौके पर जब कि किरणों की वक्रता असामान्य रूप से अधिक थी, यह १० सेकण्ड तक तथा और भी ज्यादा देर तक देखी जा सकी थी। पुर्तगाल के गैगो कान्तिन्हो ने तो एक बार समुद्र के दूरस्थ प्रकाशगृह की रोशनी में काफी देर तक इस घटना का प्रेक्षण किया था।

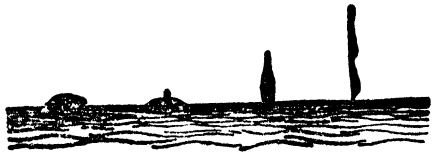
बायर्ड के दक्षिण ध्रुव-अभियान के दौरान में जब कि ध्रुव प्रदेशीय लम्बी रात्रि के उपरान्त पहली बार उगनेवाला सूर्य ठीक क्षितिज के सहारे हरकत कर रहा था, 'हरी किरण' का अवलोकन ३५ मिनट तक किया गया था।

'हरी किरण' की घटना निम्नलिखित तीन रूप धारण कर सकती है—(क) **हरे रंग का हाशिया,** (चित्र ५३) जो दरअसल सदैव ही सूर्यबिम्ब के ऊपरी सिरे पर पहचाना जा सकता है। यह हरा हाशिया ज्यों-ज्यों क्षितिज के नजदीक पहुँचता है त्यों-त्यों यह अधिक चौड़ा होता जाता है, साथ ही साथ इसके निचले भाग का रंग लाल हो जाता है। (ख) **हरा वृत्त-खण्ड** डूबते हुए सूर्य-चकरी के आखिरी वृत्तखण्ड के दोनों छोर का रंग हरा हो जाता है और यह हरा रंग धीरे-धीरे वृत्तखण्ड के केन्द्र की ओर बढ़ता जाता है। यह हरा वृत्तखण्ड अक्सर नंगी आँखों को भी एकाध सेकण्ड तक दिखलाई देता है और द्विनेत्री



चित्र ५३—**हरा वृत्तखण्ड।**

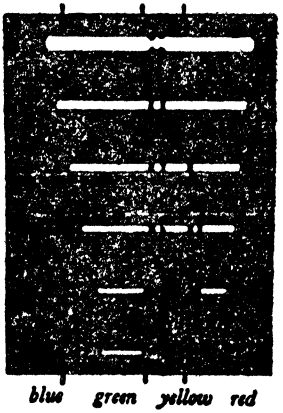
दूरबीन से ३, ४ सेकण्ड तक कभी-कभी यह देखा जा सकता है। (ग) **स्वयं हरी किरण;** यह घटना जो नगी आँखों को भी दिखाई देती है, बहुत ही दुर्लभ अवसरों पर प्रगट होती है। यह हरी किरण ठीक उस क्षण जब सूर्य क्षितिज के नीचे छिप रहा हो, लौ की भाँति ऊपर फिकती हुई दिखाई देती है (चित्र ५४)



चित्र ५४—**यथार्थ हरी किरण; सूर्य के अस्त होने के क्षण से समय की गणना की गयी है। (डी० पो० लागाइज के अनुसार)**

इन तीनों ही शक्लों में इसका रंग अधिकतर नीलम सरीखा ही होता है और पीला तो बिरले ही मौकों पर। कभी-कभी यह नीले रंग की होती है या बैंगनी भी। एक बार चन्द सेकण्ड के दौरान में, जब तक कि घटना का अस्तित्व रहा, इसका रग हरे से नीला और फिर बैंगनी मे बदलता हुआ देखा गया था।

अब हरी किरण की व्याख्या मे किसी तरह के सन्देह की गुजाइश बाकी नहीं रह जाती है। आकाश मे नीचे स्थित होने के कारण सूर्य की श्वेतकिरणों को वायु-मण्डल मे लम्बा फासला तय करना होता है। पीले और नारङ्गी रंग के प्रकाश का अधिकतर भाग जलवाष्प द्वारा जज्ब हो जाता है क्योंकि जलवाष्प के लिए वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) की अवशोषण पट्टियाँ प्रकाश के इन्ही रंगों के प्रदेश मे स्थित होती हैं। सूर्य के प्रकाश का बैंगनी भाग परिक्षेपण के कारण अत्यधिक क्षीण हो जाता है (देखिए § १७२)।



चित्र ५५—**नीला हरा पीला लाल अस्त होते हुए सूर्य का स्पेक्ट्रम प्रेक्षण; एन० डिज्कवेल द्वारा।**

(Hemel en Dampkring. 34, 261, 1936.)

अतः अब शेष रहते हैं लाल और हरे-नीले रंग-जैसा कि प्रत्यक्ष प्रेक्षण से देखा जा सकता है।[1] (चित्र ५५)

फिर वायुमण्डल ऊपर की अपेक्षा नीचे अधिक घना होना है, अतः वायुमण्डल से गुजर कर आनेवाली प्रकाश-किरणे मुड जाती है (§२९) और किरणों का यह झुकाव लाल रोशनी के लिए थोडा कम, तथा अधिक वर्त्तनीय[2] नीली-हरी किरणों के लिए कुछ अधिक होता है। इस कारण सूर्य की दो चकरियाँ हमे दिखलाई पड़ती है जो एक दूसरे को आशिक रूप से ढकती है, नीले-हरे रगवाली चकरी कुछ ऊपर रहती है और लाल रग की चकरी थोडी नीचे हटी रहती है। यही वजह है नीचे का हाशिया लाल रग का दीखता है और ऊपर का हरे रग का (चित्र ५६)। अब यह बात समझ



चित्र ५६—**हरी किरण कैसे उत्पन्न होती है।**

में आ सकती है कि क्यो जब सूर्य आकाश मे नीचे स्थित होता है तो वृत्तखण्ड के छोर हरे रग के दीखते है और क्यो सूर्य का श्वेत रगवाला भाग क्षितिज के पीछे आहिस्ते-आहिस्ते छिपता है जब कि शेष बचे हुए समस्त वृत्तखण्ड पर हरा रग छा जाता है। लेकिन कई परिस्थितियो मे क्षितिज के निकट वर्त्तन असामान्य रूप से प्रबल होता है, फलस्वरूप हरा वृत्तखण्ड विशेष रूप से स्पष्ट अधिक देर तक दिखाई देता रहता है। मरीचिका के उत्पन्न होने की दशा मे यह एक लपट की तरह हरी किरण के रूप मे भी ऊपर को खिच आ सकता है।

इस धारणा की पुष्टि हो सकती है यदि हम पाये कि जब हवा की अपेक्षा समुद्र अधिक गर्म हो तब हरा वृत्तखण्ड (सेगमेण्ट) तथा हरी किरण अनुपस्थित हो क्योकि

१. अत्यन्त प्रबल परिक्षेपण में हरा-नीला भी विलुप्त हो जाता है, यही कारण है अस्त होते समय सूर्य्य यदि गहरे लाल रंग का हुआ तो हरी किरण अदृश्य रहती है।

हरी किरण के वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) का फोटो टी.एस.जैकबसेन द्वारा लिया गया है (Journal R Astron. Soc. Canada 46, 93, 1952, Sky and Telescope, 12, 233,1953.

2. Refrangible

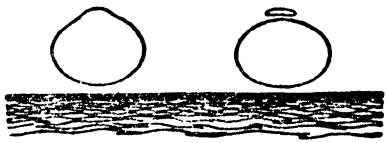
उस दशा में घनत्व में ह्रास तथा किरण का झुकाव दोनों ही विशेष रूप से कम होंगे। दरअसल आभास मिलता है कि बात ऐसी ही है।[1] (चित्र ५७)

कहा जाता है कि हरा वृत्तखण्ड उस वक्त विशेष रूप से अच्छी तरह देखा जा सकता है जब नीचे मरीचिका के लक्षण मौजूद हों, अर्थात् जब निचला किनारा (जीवा) बिलकुल सीधा न होकर दोनों कोनों पर ऊपर की ओर मुडा हो।[2]



चित्र ५७—**अन्तिम वृत्त-खण्ड के छोर के सिरे ऊपर को मुड़े होते हैं। हरी किरण के उत्पन्न होने की सम्भावना है!**

वायुस्तरों की घनत्व पृथक्ता के कारण जब सूर्य की चकरी पर बगल में कटान मौजूद होती है, तो हम देख सकते हैं कि किस तरह सिरे से एक टुकड़ा जब तब पृथक् होकर हरी ज्योति की शक्ल में विलुप्त हो जाता है—एक अत्यन्त चमत्कारपूर्ण दृश्य! (चित्र ५८; देखिए चित्र ५१, §३५)। एक और तथ्य पर विचार करिए जो असामान्य वर्त्तन के अत्यधिक प्रभाव का जबर्दस्त समर्थन करता है; दो अवसरों पर स्टीमर के एक डेक से हरी किरण देखी जा सकी थी किन्तु दूसरे डेक से नहीं, इसका अर्थ है कि घटना इस बात पर निर्भर करती है कि प्रेक्षक किस ऊँचाई पर खडा था।[3] फिर वर्णक्रम में वास्तविक हरी किरण की नाप करने पर पता चलता है कि हरा प्रकाश एक क्षण पूर्व के सूर्य-वर्णक्रम के हरे प्रकाश की तुलना में निश्चित रूप से अधिक प्रबल होता है। यह तर्कसंगत केवल तभी हो सकता है जब असामान्य वर्त्तन होता हो। किन्तु इसके प्रतिकूल 'नेचर' के अनुसार कुछ सिद्धहस्त इस बात पर जोर देते हैं कि किरणों की साधारण पार्थिव वक्रता ही 'हरी किरण' उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त रूप से समर्थ है।[4]



चित्र ५८—**किस प्रकार अस्त होते हुए सूर्य के ऊपरी सिरे के पृथक् होने पर हरी किरण उत्पन्न होती है।**

1. R. W. Wood, Nat, 121, 501, 1928. 2. Nat. 111, 13, 1923

३. इस प्रेक्षण को दुहराना उचित होगा और अच्छा होगा यदि वही प्रेक्षक बारी-बारी से दोनों डेकों पर खडा होकर प्रेक्षण करे।

4. Proc. R. Soc. 126, 311, 1930.

अतः हरी किरण के सम्बन्ध में प्रमुख समस्या जो हमें अभी हल करनी है, वह इस प्रकार है : **वर्त्तन कितना प्रबल होना चाहिए कि इस घटना को एक निश्चित प्रदीप्ति उत्पन्न हो सके ?** इसे हल करने के लिए यह पर्य्याप्त होगा कि कोई व्यक्ति समुद्रतट पर कई दिनों तक इस बात को अङ्कित करे कि ठीक किस वक्त सूर्य अस्त होता है और साथ ही साथ वह हरी किरण की घटना का भी प्रेक्षण करे। प्रेक्षण से प्राप्त समय और गणना से मालूम किये गये समय का अन्तर इस बात का अच्छा सूचक है कि किरण की वक्रता सामान्य से कितनी अधिक विचलित हुई है।

यह ख्याल किया जाता था कि रक्त वर्ण के डूबते हुए सूर्य के अवशिष्ट भाग का पूरक रगों में उत्तर-बिम्ब[1] चक्षुपटल पर बन जाता है जो सम्भवतः हरी किरण की घटना का आभास कराता है (§८८)। इस धारणा का पर्य्याप्त रूप से खण्डन इस बात से होता है कि जिस समय सूर्य उदय होता है उस समय भी हरी किरण देखी जा सकती है यद्यपि इस दशा में यह जानना कठिन ही होता है कि प्रगट होनेवाली रोशनी के लिए ठीक किस ओर देखा जाय। इसके लिए या तो क्षितिज के सबसे अधिक प्रकाशित भाग की ओर देखना होगा या फिर उषःकालीन किरण या हेडिन्जरब्रश (§१९१,§१८२) की तलाश करनी होगी। एक और दलील यह है कि हरी किरण केवल तभी देखी जा सकती है जब क्षितिज काफी अधिक दूरी पर हो; यद्यपि नेत्र-रेटिना पर बननेवाला उत्तर-बिम्ब इस बात से किसी भी तरह प्रभावित न होगा किन्तु स्पष्ट है कि किरण की वक्रता की दृष्टि से यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। काफी दिक्कत उठाकर आटोक्रोम प्लेट पर हरी किरण का फोटो सफलतापूर्वक उतारा गया है।

कुछेक अवसरों पर चन्द्रमा और शुक्र के लिए भी 'हरी किरण' का प्रेक्षण किया गया है और एक अवसर पर वृहस्पति के लिए भी। एक प्रेक्षक ने बतलाया है कि किस तरह उसने शुक्र के प्रतिबिम्ब को इस ग्रह की ओर उठते हुए देखा और जिस क्षण ये दोनों एक दूसरे से मिले, प्रतिबिम्ब का रंग अचानक हलके लाल से हरे रंग में तब्दील हो गया।

३७. हरी तरङ्ग

सुमात्रा के समुद्रतट से यह देखा गया था कि दूर क्षितिज पर धवल शीर्षवाली लहरें हरी प्रतीत होती थीं; अवश्य ही ऐसा छोटी लहरों के लिए ही था, अधिक ऊँची

1. After-image

लहरें हमेशा की तरह धवल रंग की ही दीखती थीं। समुद्र का रंग धूसर था और क्षितिज स्पष्ट रूप से पानी में डूबता हुआ दीख रहा था।

यह घटना हरी किरण की मानिन्द जान पड़ती है, इस दशा में छोटी लहरों का चमकने वाला धवल सिरा अस्त होते हुए सूर्य के अन्तिम हाशिये जैसा प्रभाव उत्पन्न करता है।

३८. लाल किरण[1]

हरी किरण की व्याख्या से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि 'लाल किरण' भी हमें मिलनी चाहिए। उदाहरण के लिए जब क्षितिज पर छाये घने बादलों की पेटी की स्पष्ट ओट के पीछे सूर्य चला जाता है और इसका निचला हाशिया ओट के नीचे से झाँकता हुआ दीखता है, तब निचले भाग से लाल किरण हमे दीख पड़नी चाहिए। कई अवसरों पर यह लाल किरण देखी गयी है किन्तु ऐसे अवसर बहुत कम ही आते है और जान पड़ता है कि यह घटना हरी किरण के मुकाबले मे और भी कम देर तक रहती है।

३३० गज के फासले पर स्थित एक दीवार के सूराख़ में से हरी किरण का अवलोकन करने के दौरान मे ह्विटनेल उसी मौके पर लाल किरण को भी देखने में समर्थ हुआ था।

३९. पार्थिव प्रकाश-स्रोत की झिलमिलाहट

यह घटना जिसे 'झिलमिलाहट[2]' या 'टिमटिमाना' कहते है सबसे अधिक स्पष्ट रूप मे सड़क की सतह के लिए एसफाल्ट पिघलानेवाली भट्टी के ऊपर देखी जा सकती है। दूर की वस्तुएँ काँपती हुई जान पड़ती है मानों उनकी सतह पर लहरे बन रही हों, यहाँ तक कि उन्हे पहचान पाना कठिन हो जाता है; और ऐसा लगता है कि स्वयं हवा भी पारदर्शी नही रही। फिर रेलगाड़ी के इंजन के ब्वायलर या धूप मे तपी हुई लोहे की चद्दरवाली छत के ऊपर से देखने पर दूर की प्रत्येक वस्तु काँपती हुई नज़र आती है। डंठलों वाला खेत या रेतीला मैदान भी धूप में तप जाने पर यह प्रभाव उत्पन्न करने मे समर्थ होता है।

1. Nat,, 94, 61, 1914, सूर्यास्त के क्षण बड़े आकार के सूर्य-धब्बों के विलुप्त होते समय (चश्मे सहित) किये गये लालकिरणों के प्रेक्षण के अत्यन्त रोचक विवरण के लिए देखिए W. M. Lindley J. B. A. A., 47, 298, 1937.

2. Scintillation

झिलमिलाहट की घटना सबसे अधिक स्पष्ट रूप मे चटकीली और रोशनी में चमकती हुई चीज़ों द्वारा उत्पन्न होती है, जैसे श्वेत छालवाले बर्च पेड़ के तने, सफ़ेद रंग के खम्भे, धवल रंग के बालू के खित्ते, वाटिका-ग्लोब, या धूप में चमकती हुई दूर की खिड़कियाँ। गर्मी के दिनों मे या वसन्त मे ठण्ड वाले दिन, रेल की पटरियाँ फासले पर झिलमिलाती नज़र आती है, वे सीधी भी नही मालूम पड़ती बल्कि टेढ़ी-मेढ़ी, मुडी हुई प्रतीत होती है। अगर भूमि के निकट सिर रखे तो झिलमिलाना और भी अधिक बढ़ जाता है और हवा मे उतराती हुई वायु-धारियाँ सी दिखलाई पड़ती है। ये 'लहरे' समुद्र की लहरों से ऊँची हो सकती है। जिस वक्त धूप निकली हो, चश्मा लगाकर दूर की चीजों को वास्तव मे स्पष्ट देखा नही जा सकता। (इसकी जाँच विशेषतया सूर्य की उलटी दिशा मे देखकर करिए)। जाडे के दिनो मे अभ्यस्त आँखे दूरस्थ वस्तुओं के झिलमिलाते प्रतिबिम्ब के कम्पन के प्रेक्षण द्वारा मकानो की छत से ऊपर उठने वाली गर्म वायु को देख सकती है (ओडीमान्स)।

'क्योंकि हवा, जिसमे से होकर हम नक्षत्रों को देखते है, शाश्वत कम्पन की अवस्था में है; जैसा कि **ऊँची मीनारों की छाया** की **कम्पित गति** और अचल सितारों की टिमटिमाहट से देखा जा सकता है।' (न्यूटन्स 'आप्टिक्स' चतुर्थ सस्करण पृष्ठ ११०) हमारे पाठकों मे से भला किसने इसका अवलोकन किया है?

इन सभी घटनाओं का समाधान गर्म वायु की धारा मे से गुजरनेवाली प्रकाश-किरण की वक्रता द्वारा किया जा सकता है—वायु की यह धारा तप्त भूमि से नन्हे फौआरों की भाँति ऊपर उठती है। दो गज से कम ही की ऊँचाई पर ये धाराएँ ठण्डी हवा से इस कद्र मिलजुल चुकी होती है कि उसमे दीखनेवाली धारियाँ छोटी पड़ जाती है। सूर्य से प्रकाशित सफ़ेद रग की सपाट दीवार पर खिड़की की चौखट के ऊपर उठती हुई वायु की धारियाँ नाचती-सी अक्सर देखी जा सकती है—और हलके धुएँ की भाँति ये बारीक छाया भी डालती है। वायु की ये धारियाँ प्रकाशकिरणों की समानान्तरता मे व्याघात उत्पन्न कर देती है, अतः कुछ जगहो पर प्रकाश सिमट कर एकत्र हो जाता है तो कुछ जगहों पर प्रकाश की न्यूनता हो जाती है। यह प्रभाव उसी तरह का है जैसा कि तरंगों से आन्दोलित पानी की सतह या खिड़की के असम तल काँच द्वारा अपेक्षाकृत अधिक प्रबल मात्रा में उत्पन्न होता है (§२३, २४)।

स्पष्ट है कि असमान रूप से गर्म हुए वायु-स्तरों मे से जितनी ही अधिक दूरी तक देखेंगे, झिलमिलाहट उतनी ही अधिक प्रबल होगी। रात को कई मील के फासले पर स्थित रोशनी झिलमिलाती रहती है और जब निकट आते हैं तो उसका झिलमिलाना

कम हो जाता है यहाँ तक कि अन्त में, अधिक निकट आने पर, झिलमिलाना खत्म हो जाता है। सड़क पर खड़ी मोटर सूर्य के प्रकाश को तेज़ चकाचौंध के साथ प्रतिबिम्बित करती है जो ५०० गज के फासले पर बहुत अधिक झिलमिलाहट उत्पन्न करता है; २०० गज की दूरी पर रोशनी पहले की अपेक्षा अधिक स्थिर रहती है और जब मैं और भी अधिक नजदीक पहुँचता हूँ तो झिलमिलाहट पूर्णतया विलुप्त हो जाती है।

यह देखा गया है कि प्रकाश-पथ का वह भाग जो आँखों के निकटतम है, झिलमिलाहट उत्पन्न करने मे सबसे अधिक योग देता है। इसी तरह चश्मा सबसे अधिक कारामद आँख के बिल्कुल नजदीक रखने पर होता है। यदि चश्मे को छपे हुए पृष्ठ पर जिसे आप पढ़ रहे हैं, रखे तो आप देखेंगे कि वह अक्षरों का आकार तनिक भी नही बदल पाता, किन्तु उसे आँख की ओर लाने पर अक्षर बड़े या छोटे हो जाते हैं और चश्मे के लेन्स आँख के जितने ही निकट होंगे—अक्षरों के आकार की तब्दीली भी उतनी ही अधिक होगी। इसी प्रकार झिलमिलाहट का अधिकाश प्रेक्षक के निकट वाली वायु के ताप-परिवर्त्तनो के कारण उत्पन्न होता है। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि थोड़ी देर के लिए यदि घने बादल के कारण सूर्य का विकिरण प्रकाश रुक जाता है ताकि प्रेक्षक के सन्निकट क्षेत्र मे किरणपथ साये मे पड़ जाय तो लगभग तुरन्त ही झिलमिलाहट समाप्त हो जाती है और इसके प्रतिकूल बादल के हट जाने पर झिलमिलाहट पुनः लौट आती है। प्रगट है कि सूर्य से आने वाले विकिरण मे होनेवाली तब्दीली के अनुसार ही धरती की सतह का ताप भी अत्यन्त शीघ्रता से बदलता है।

एक ही स्थान से 'झिलमिलाहट' का बार-बार प्रेक्षण करके आसानी से यह ज्ञात कर सकते है कि विभिन्न ऋतु-दशाओं मे यह किस तरह बदलती है। आसमान में जब बादल छाये रहते है तो झिलमिलाहट सदैव ही कम स्पष्ट होती है (ऐसे व्यापक बादल कि करीब-करीब समूचा ही प्रकाश-मार्ग छाये मे रहे)। सूर्योदय के पहले झिलमिलाहट नगण्य सी ही रहती है, सूर्य के उदय होने के थोड़ी देर बाद ही यह पर्य्याप्त प्रबल हो जाती है और दोपहर के करीब यह प्रभाव अधिकतम हो जाता है। फिर चार या पाँच बजे तक झिलमिलाहट हलकी पड़ जाती है। किन्तु किसी-किसी दिन इसका विकासक्रम बिलकुल ही भिन्न होता है।

झिलमिलाहट, न केवल रेत, मिट्टी, या मकानों के ऊपर बल्कि पानी की सतह पर, बर्फ के ऊपर और जंगल मे झाड़ियों के ऊपर भी देखी जा सकती है—इससे पता चलता है कि ये सभी चीजे विकिरण उष्मा से इस प्रकार प्रभावित हो सकती हैं कि इनका ताप

वायु के ताप से बहुत अधिक भिन्न हो जाय। समुद्रतट के नगरों में दूर की सड़कों के सहारे लगे हुए लैम्पों की क़तार बन्दरगाह मे प्रवेश करते हुए जहाज से देखने पर सुन्दर दृश्य उपस्थित करती है—जहाज जब ब्रिटिश चैनेल या मेसिना जलडमरूमध्य से गुजरता है तब भी यह दृश्य देखा जा सकता है।

धरती के प्रकाश-स्रोतों की झिलमिलाहट मे कभी-कभी रग भी दीख जाते है लेकिन ऐसा तभी होता है जब प्रकाश-स्रोत बहुत अधिक दूरी पर हों। एक अपवादस्वरूप अवसर पर लैम्पो के प्रकाश मे रग की तरंगदीर्घियाँ स्पष्ट देखी गयी थी यद्यपि इन लैम्पों का फासला ३ मील से अधिक न था।

४०. सितारों की झिलमिलाहट[1]

इस बात पर ध्यान दीजिए कि लुब्धक[2] या अन्य कोई चमकीला तारा क्षितिज के निकट स्थित होन पर किस तरह टिमटिमाता है। दूरबीन से अवलोकन करने पर इनकी स्थिति मे हलका परिवर्त्तन होता दिखाई देता है। नंगी आँखों से निहारने पर आप इनकी दीप्ति मे परिवर्त्तन होते देखेगे और रगों का परिवर्त्तन भी।

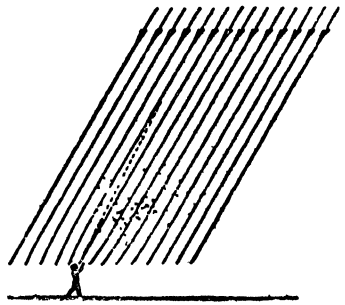
कहने की आवश्यकता नही कि लुपझुप की यह घटना स्वय सितारे पर नही घटती है, बल्कि इसका भी समाधान उसी प्रकार किया जाता है जिस प्रकार धरती के प्रकाश-स्रोतों की झिलमिलाहट के लिए (§३९)।

ये स्थिति-परिवर्त्तन, गर्म और ठण्डी वायु की धारियों मे से गुजरनेवाली प्रकाश-किरणों की वक्रता के कारण उत्पन्न होते है। गर्म और सर्द वायु की धारियाँ हमेशा ही वायुमण्डल मे मौजूद रहती है, विशेषतया उस जगह जहाँ ठण्डे वायुस्तर के ऊपर से गर्म वायुस्तर गुजरता है और इस कारण वायु लहरे तथा भँवरे वहाँ उठती है (चित्र ५९)। दीप्ति मे परिवर्त्तन इस बात से उत्पन्न होते है कि अनियमित रूप से विचलित होनेवाली किरणे धरती की सतह के किसी स्थान पर तो इकट्ठी होकर घनी हो जाती

१. विशद व्याख्या के लिए देखिए Pernter-Exner in the Handbuch der Geophyic vIII Quarterly Journal 80, 241, 1954 हाल मे शरीर वैज्ञानिक हार्ट्रिज ने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि झिलमिलाहट शरीरगत प्रभाव है, जो हमारे रेटिना की कणिकामय संरचना के कारण घटित होता है। इस धारणा की सम्पुष्टि नही हो सकती किन्तु हार्टिज के दिलचस्प प्रयोग इस बात का संकेत देते हैं कि इस घटना में शरीरगत प्रभाव के अवयव मौजूद हो सकते है; विवेचन के लिए देखिए Nature 164, 165, 1950

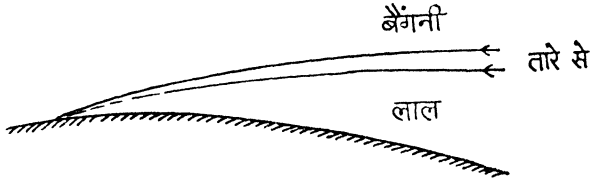
2. Sirius

हैं और कहीं पर उनका वितरण हलका हो जाता है। यदि इसे उत्पन्न करने वाला निरन्तर परिवर्त्तनशील संस्थान समूचा ही हवा के बहाव के साथ हरकत करता है तो कभी तो प्रेक्षक अपने को अधिक प्रकाश वाले भाग मे खड़ा पाता है, कभी कम प्रकाश वाले भाग मे। रग की तब्दीलियाँ किरणों के सामान्य पार्थिव-वक्रता के हलके विक्षेपण के कारण उत्पन्न होती है, फलस्वरूप सितारे से आनेवाली किरणे अपने रग के अनुसार वायुमण्डल मे थोड़े भिन्न मार्गो पर चलती है। क्षितिज पर १०° की ऊँचाई पर स्थित सितारे के लिए गणना के अनुसार १½ मील की ऊँचाई पर लाल और बैंगनी रग की किरणों के बीच की दूरी ११ इच मिलती है और ३ मील की ऊँचाई पर यह दूरी २३ इच हो जाती है। वायु की स्तरधारियाँ औसत तौर पर काफ़ी छोटी होती हैं अतः



चित्र ५९—वायुमंडल की विषमता किस प्रकार तारे की प्रकाश किरणों में झुकाव पैदा करके टिमटिमाहट उत्पन्न करती है। प्रेक्षक यहाँ तारे को ऊपर उठा हुआ और अधिक चमकीला देखता है।

प्रायः ऐसा हो सकता है कि बैंगनी किरण तो उसमे से गुजरती है और इसलिए अपने मार्ग से विचलित हो जाती है जबकि लाल किरण बिना विचलन प्राप्त किये ही आगे चली आती है (चित्र ६०)। अतः झिलमिलाहट के फलस्वरूप सितारे की रोशनी की चमक के बढ़ने-घटने के क्षण विभिन्न रगों के लिए विभिन्न होते हैं।



चित्र ६०—तारे की टिमटिमाहट में किस प्रकार रंग प्रदर्शित होते हैं।

हाल मे इस बात की सम्भावना प्रतीत हुई है कि झिलमिलाहट उत्पन्न करने में प्रकाश का विवर्त्तन भी भाग लेता है विशेषतया अत्यधिक ऊँचाई पर अवस्थित छोटे

आकार की धारियों के लिए। प्रकाश का वितरण अकेले ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियमों द्वारा नही निर्धारित होता बल्कि प्रकाश की तरंग-प्रकृति के कारण उसमें थोड़ा परिवर्त्तन हो जाता है।[1]

ऊर्ध्व विन्दु (जेनिथ) के निकट झिलमिलाहट सबसे कम होती है, इस स्थिति में, जब वायुमण्डल शान्त हो तो चमकीले तारे की टिमटिमाहट केवल जब तब भी देखी जा सकती है। सितारे क्षितिज के जितने ही निकट होंगे उतना ही अधिक वे टिम-टिमायेगे—इसका सीधा-सा कारण यह है कि इस दशा मे हम हवा की अधिक मोटी तह मे से इन्हे देख रहे है और इस कारण प्रकाश बहुत-सी वायुधारियो मे से गुजरता है (चित्र ६३)। ऐसा प्रतीत होता है कि ५०° से अधिक ऊंचाई पर रग की तब्दीलियाँ कभी नही होती, किन्तु ३५° के नीचे ही उनका बाहुल्य होता है। सर्वाधिक सुन्दर झिलमिलाहट चमकीले तारे लुब्धक की होती है जो जाडे की ऋतु मे आकाश मे थोड़ी ऊँचाई पर ही दीखता है।

झिलमिलाहट इतनी तेज़ी के साथ होती है कि हम देख नही पाते कि वास्तव मे होता क्या है। किन्तु निकट दृष्टिदोष के लिए चश्मा पहनने वाला कोई भी व्यक्ति झिलमिलाहट का बढ़िया अध्ययन कर सकता है। इसके लिए चश्मे (अवतल लेन्स वाले) को हाथ मे लेकर आँख के सामने उसे लेन्स के धरातल मे ही इधर-उधर डुलाना होगा। ऐसा करने से सितारे का बिम्ब एक छोटी लकीर की शक्ल मे खिच उठता है। और भी अच्छा होगा यदि चश्मे के लेन्स को वृत्त मार्ग मे घुमाएँ, थोडे अभ्यास के उपरान्त बिना झटका दिये आसानी से ऐसा किया जा सकता है (करीब तीन या चार घेरा प्रति सेकण्ड)। दृष्टि निर्बन्धता के प्रभाव के फलस्वरूप (§८०) चमक और रग की वे सारी तब्दीलियाँ घेरे की परिधि पर चारों ओर वितरित देखी जा सकती है जो सितारे के अवलोकन मे क्रमात् प्रगट होती है—तेज़ झिलमिलाहट की दशा मे यह एक शानदार नज़ारा होता है। कभी-कभी रोशनी की इस पट्टी मे दीप्तिहीन धब्बे भी मिलते है जिससे यह प्रगट होता है कि ऐसे भी क्षण मौजूद होते है जब कि सितारे से हमे रोशनी करीब-करीब नही के बराबर मिलती है। इस बात का अन्दाज लगाकर कि परिधि पर कितने विभिन्न रंग दिखाई देते है, गणना की जा सकती है कि प्रति-सेकण्ड रग की तब्दीली कितनी बार हो रही है। प्रेक्षण की यह विधि इस सिद्धान्त पर आधारित है कि चश्मे का कॉच केवल लेन्स सरीखा ही नही काम करता, बल्कि एक पतले प्रिज्म सरीखा भी, बशर्त्ते लेन्स के केन्द्रीय भाग मे से हम न देखे।

1. C. G. Little Monthly Not. R. Astron. Soc. III 289, 1951

इस झिलमिलाहट की घटना के विश्लेषण के लिए अन्य तरीके भी लभ्य हैं[1] — (क) स्वस्थ दृष्टि वाला व्यक्ति उपर्युक्त रीति से हलकी अवतल सतह वाला कोई भी लेन्स इस्तेमाल कर सकता है, किन्तु उसे अपनी आँख का संविधान इस तरह साधना पड़ेगा मानो सितारा अपेक्षाकृत अधिक निकट है। (ख) नाट्य-दूरबीन द्वारा देखें और उसे धीरे-धीरे ठकठकाते रहें। (ग) जेबी दर्पण में सितारे का प्रतिबिम्ब देखें और साथ ही दर्पण को थोड़े-थोडे कोण पर घुमाते जायँ। (घ) केवल अपनी दृष्टि को सितारे पर एक ओर से दूसरी ओर हरकत करने दें (कार्य अभ्यास के उपरान्त ही ऐसा किया जा सकता है, (देखिए §८२)।

प्रेक्षण की एक सरल विधि लभ्य है जिससे वायु की धारियों की लम्बाई-चौड़ाई का सीधे ही अन्दाज लगा सकते हैं।[2] तेज प्रकाश से झिलमिलाते हुए सितारे को इस तरह देखिए कि आपकी आँखों की दृष्टिरेखाएँ सामने की ओर थोडी मिलती हुई हों—अर्थात् सामने पाँच या छ फुट की दूरी पर स्थित किसी वस्तु पर जो करीब-करीब सितारे की सीध में हो, अपनी आँखों को फोकस करिए। अब आप सितारे के एक नहीं, दो प्रतिबिम्ब देखेंगे और ये दोनों प्रतिबिम्ब एक साथ नहीं, बल्कि बारी-बारी से झिलमिलाते हैं क्योंकि दोनों आँखों के दर्मियान का फासला इतना अधिक है कि वायु की धारी जब तक एक आँख के सामने से गुजरती है तब तक वह दूसरी आँख के सामने अपना प्रभाव नहीं डाल पाती। अतः अधिकाश धारियाँ आँखों के बीच के अन्तर ३ इंच से कम ही चौडी होती हैं।

अत्यन्त सुन्दर झिलमिलाहट **कृत्तिका**[3] तारा समूह की होती है जिसमें तारे एक दूसरे के इतने निकट होते हैं कि समष्टिरूप से उनकी टिमटिमाहट के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रेक्षण करके हम सामने से गुजरने वाली पृथक्-पृथक् वायुधारियों की पहचान कर सकते हैं।

४१. सितारे की झिलमिलाहट कैसे नापी जा सकती है ?

१. किसी घटना को नापने का तरीका यदि न मालूम हो, तो विषय-प्रवेश के लिए हमेशा ही हम किसी अविहित गुणात्मक पैमाने को मान कर नाप का प्रारम्भ कर सकते हैं। जैसे झिलमिलाहट-रहित सितारे के लिए मैं अङ्क ० लेता हूँ और क्षितिज के निकट की सबसे अधिक झिलमिलाहट को, जो मैंने अभी तक देखी है, १० से व्यक्त करता हूँ,

1. Phil. Mag. 13, 301. 1857
2. R. W. Wood, Physical Optics (1905) 3. Pleiades

और इनके दर्मियान की चमक की पहचान मैं बीच की अन्य संख्याओं द्वारा करता हूँ। ध्यान देने की बात है कि इस तरह के प्रारम्भिक पैमाने प्राकृतिक विज्ञान के सभी विभागों के अध्ययन के लिए कितने उपयोगी साबित हुए हैं। आशा के प्रतिकूल अत्यन्त शीघ्र ही हम पैमाने की प्रत्येक सख्या के तात्पर्य से अभ्यस्त हो जाते हैं और बहुत जल्दी ही वह समय आ जाता है जब कि इस गुणात्मक पैमाने को मात्रात्मक पैमाने मे तब्दील करना हम जान लेते हैं।

२. वायु के उद्वेलन के लिए एक और सरल मापदण्ड है क्षितिज के ऊपर की वह ऊँचाई जहाँ रंग विलुप्त हो जाते हैं या फिर वह ऊँचाई जहाँ झिलमिलाहट करीब-करीब अदृष्टिगोचर सी हो जाती है।

३. चश्मे के लेन्स के घुमाने से प्राप्त की गयी रोशनी की तब्दीली की प्रति सेकण्ड सख्या भी झिलमिलाहट की किस्म की नाप के लिए मोटे तौर पर मापदण्ड का काम करती है।

४२. सितारों की झिलमिलाहट सबसे अधिक प्रबल कब होती है[1] ?

प्रबल झिलमिलाहट वास्तव मे यही सिद्ध करती है कि वायुमण्डल सर्वत्र समागी नही है और विभिन्न घनत्ववाले वायुस्तर आपस मे मिले-जुले हैं। चूँकि असमागी वायुमण्डल के साथ-साथ आमतौर पर विशेष प्रकार की ऋतु-दशाएँ भी विद्यमान रहती हैं, अतः प्रकाश्य रूप से ऐसा प्रतीत होता है कि झिलमिलाहट एक खास किस्म के मौसम के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है।

सामान्यतः बैरोमीटर के निम्न दाब, निम्न कोटि के ताप, प्रबल आर्द्रता तथा समदाब रेखा की तीव्र वक्रता और ऊँचाई के साथ दाब के अत्यधिक परिवर्त्तन के साथ झिलमिलाहट बढ़ती है। हवा के सामान्य बहाव के समय, झिलमिलाहट, उस वक्त की अपेक्षा अधिक प्रबल होती है जब कि हवा का बहाव या तो कम हो या बहुत अधिक तेज़। स्पष्ट है कि वायुमण्डल की स्थिर दशा या उसकी गति अनेक पेचीदी बातों पर निर्भर है, अतः वर्त्तमान समय तक सितारों की झिलमलाहट के अवलोकन का उपयोग ऋतुसम्बन्धी पूर्वानुमान प्राप्त करने के निमित्त नही किया जा सका है।

यह दिलचस्प बात है कि बादलों के निकट झिलमिलाहट अधिक प्रबल हो जाती है जो यह सिद्ध करती है कि विभिन्न तापवाले वायुस्तर वहाँ मौजूद हैं।

1. Dufour, Phil. Mag. 19, 216, 1860. Biquourdan, C. R., 160, 579 ff. 1915.

यह भी कहा जाता है कि सन्ध्या के झुटपुटे में झिलमिलाहट बढ़ जाती है—इसका कारण या तो आँखों का शरीरजन्य, प्रकाशसम्बन्धी विभ्रम है या कि उस घड़ी के वायु-मण्डल की विशेष अवस्था का यह परिणाम है। यहाँ तक कहा जाता है कि उत्तरीय प्रकाश झिलमिलाहट को प्रोत्साहन देता है, किन्तु इस बात का ख्याल करते हुए कि वायुमण्डल मे उत्तरीय प्रकाश प्रायः बहुत ऊँचाई (६० मील) पर उत्पन्न होते हैं, इस कथन का समझ मे आना मुश्किल ही जान पड़ता है।

उत्तर के आकाश मे झिलमिलाहट सबसे अधिक प्रबल होती है—इसका समाधान कुछ अन्य पेचीदा सिद्धान्तों के आधार पर किया जा सकता है।

यह प्रश्न एक पहेली ही बना रह जाता है कि रक्तिम वर्ण के तारे क्यों श्वेत तारों की अपेक्षा कम झिलमिलाते हुए प्रतीत होते हैं।

४३. ग्रहों की झिलमिलाहट

नक्षत्रों की अपेक्षा ग्रहों की झिलमिलाहट बहुत कम होती है। यह कुछ अजीब-सा लगता है क्योंकि अन्य बातो में नगी आँखों को वे बिलकुल नक्षत्रों के मानिन्द दीखते हैं। इस अन्तर का कारण यह है कि अत्यधिक दूरी के कारण सबसे बड़ी दूरबीन में भी नक्षत्र एक विन्दु सरीखे ही (अधिक से अधिक कोणीय आकार ०.०५ सेकण्ड) दीखते हैं जब कि ग्रहों के लिए व्यास स्पष्ट दिखलाई पड़ता है—करीब १० सेकण्ड से लेकर ६८ सेकण्ड तक (शुक्र के लिए) तथा ३१ सेकण्ड से लेकर ५१ सेकण्ड तक (वृहस्पति के लिए)। अतः ग्रहों की दशा में वायुमण्डल मे ऊँचाई पर स्थित एक नन्हे से चपटे क्षेत्र AB मे से होकर शकु के आकार मे किरणे गुजरेगी और इनमे से कुछ किरणे हमारी आँख मे प्रवेश करेगी। वायु की धारी, जैसा कि हमे पता है, प्रकाश-किरण में बस कुछेक सेकण्ड के कोण का ही विचलन पैदा करती है, अतः इस कारण आँख मे प्रवेश करनेवाली किरण के अलग हट जाने पर शंकु की अन्य किरणे आँख मे प्रवेश करने लग जाती हैं और विम्ब की चमक मे कोई फर्क नही आने पाता। चमक मे अन्तर केवल तब हम देख पायेगे जब किरणों का समूह जो पहले आँखो के ठीक सामने मिलता था, अब आँख मे ही प्रवेश करने लगे। किन्तु चमक की यह तब्दीली हलकी ही होगी क्योंकि वायु की बहुत-सी धारियों मे से कुछ तो किरणों को आँख की ओर विचलित करती हैं तो कुछ उन्हे आँख से दूर विचलित कर देती है। उदाहरणस्वरूप वृहस्पति के लिए क्षितिज से ३०° की कोणीय स्थिति पर २२०० गज की ऊँचाई पर आँख से उस ग्रह तक जानेवाली शंकु के आकार की किरणशलाका के आधार का व्यास २७ से लेकर ४० इंच तक होगा।

अब सहज ही यह बात समझ मे आती है कि ग्रह की झिलमिलाहट उस वक्त दीखने लग जायगी जब उसकी प्रकाश-किरणों की मार्ग-दिशा का विचलन-मान, ग्रह के आभासी व्यास की कोटि का हो जाय।

यही कारण है कि शुक्र और बुध जो अक्सर काफ़ी सँकरी, नाखूनी शक्ल के दीखते हैं, कभी-कभी बोधगम्य तरीक़े पर झिलमिलाते हैं और इसी कारण क्षितिज के अत्यन्त निकट स्थित होने पर शुक्र मे रंग की तब्दीलियाँ भी नजर आती हैं। जब वायुमडल मे उद्वेलन बहुत ही अधिक प्रबल होते हैं तथा ग्रह आकाश मे नीचे ही स्थित होते है तो लगभग अनिवार्य रूप से चमक मे थोडा बहुत अन्तर अवश्य दिखलाई पडता है।

इस प्रकार झिलमिलाहट हमे एक ऐसा साधन प्रदान करती है जिसकी सहायता से हम नन्हे प्रकाश-स्रोतों के आकार का अन्दाज लगा सकते है जिन्हे कोरी आँखो से देखने पर उनकी चकरीनुमा शक्ल का भान भी नही हो पाता है। कहा तो यहाँ तक गया है कि इस तरीके से हम अचल सितारों के भी व्यास का तखमीना लगा सकते है, किन्तु सप्रति तो ऐसी आशा करना अतिशयोक्ति ही जान पडती है।

४४. छाया की पेटियाँ[1]

अतः सितारों की झिलमिलाहट, वायु के इस महासागर के घनत्व की अनियमित तब्दीलियो के कारण उत्पन्न होती है,जिसके पेदे पर हम धरती के निवासी चलते-फिरते और जीवनयापन करते हैं। वस्तुत. यह उसी तरह की घटना है जैसी कि हलकी लहरों वाले पानी द्वारा सूर्यकिरणों का किसी ठौर घनीकरण और किसी स्थान पर विरलीकरण का होना (§२३)। मछलियों को सूर्य उसी तरह टिमटिमाता हुआ दीखता है जिस तरह हम लोगो को सितारे (चित्र ३०), अन्तर केवल इतना ही होता है कि पानी की परत की **मोटाई** की तब्दीली के बजाय इस दशा मे वायुस्तरो के **घनत्व** की तब्दीली होती है। वायु-घनत्व की तब्दीली का असर अपेक्षाकृत इतना कम होता है कि इस दशा मे केवल अत्यन्त नुकीले बिन्दु सरीखे प्रकाश-स्रोत को ही हम झिलमिलाते हुए देख पाते है।

जिस प्रकार स्वच्छ जल मे प्रकाश के एकत्रीकरण का प्रदर्शन किया गया है ठीक उसी प्रकार वायु की घनत्वधारियो को भी सीधे ही दृष्टिगोचर कराया जा सकता है।

रात के समय, एक बहुत ही अँधेरे कमरे के अन्दर, जिसमे केवल एक छोटी-सी खिड़की खुली हो ताकि शुक्र का प्रकाश भीतर आ सके, सपाट दीवार या सफेद दफ्ती

1. Cl. Rozet C. R. 142, 913, 1906, 146, 325, 1906

के पर्दे की पृष्ठभूमि पर बादल सरीखा एक धुंधलापन गुजरता हुआ देखा जा सकता है। ये 'छाया पेटिकाएँ' हैं। शुक्र ग्रह जब क्षितिज के सन्निकट स्थित होता है केवल तभी ये स्पष्ट देखी जा सकती हैं। झिलमिलाने समय हर बार जब इसकी चमक थोड़ी-सी बढ़ती है तो पर्दे पर एक चटकीली पेटिका गुजरती हुई दिखलाई देती है। इसके प्रतिकूल हर बार जब चमक मे कमी होती है तो अन्धकार की पेटी दीखती है (देखिए चित्र ५९)। पहले का प्रेक्षण चेतना सम्बन्धी ज्ञान की जो अनुभूति कराता है, इस बार का प्रेक्षण उसे ही वस्तुतः ज्ञान के रूप मे प्रदर्शित करता है। वायु की इन धारियों की गति की कोई निश्चित दिशा नही होती, हवा के जिन स्तरों मे इनका निर्माण होता है वहाँ की वायु के तत्कालीन बहाव की दिशा के अनुसार ये भी हरकत करती हैं।

इसी प्रकार वृहस्पति, मङ्गल, लुब्धक, आर्द्रा, प्रमाश, ब्रह्महृदय, अभिजित्, और स्वाती भी इस ढग के प्रेक्षण के लिए उपयुक्त ठहरते हैं, यद्यपि इनकी रोशनी के अपेक्षाकृत हलकी होने के कारण प्रेक्षण करने मे कठिनाई हो सकती है। वायुधारियाँ अधिक अच्छी तरह उस समय देखी जा सकती हैं जब बहुत दूर, करीब १५ मील के फासले की सर्चलाइट से रोशनी आपके निकट किसी दीवार पर गिरती हो।[1]

सूर्य के पूर्ण ग्रहण के अवसर पर ठीक सर्वग्रास के पहले या तुरन्त ही बाद सफेद दीवार या पर्दे पर अत्यन्त मार्के की 'छाया पेटियाँ' देखी जा सकती हैं। ये किसी विशाल पर्दे की सिलवटों का भान कराती हैं। ये भी वायुधारियाँ ही हैं जो सूर्य के पूर्णतया ओझल होने के ठीक पहले उसके नाखूनी हाशिय की लकीर के मानिन्द प्रकाश-स्रोत की रोशनी मे दृष्टिगोचर होती हैं। इस कारण बिन्दु सरीखे प्रकाश-स्रोत के मुकाबले में यह घटना अधिक पेचीदा होती है, क्योंकि, इस दशा में प्रत्येक बिन्दु खिचकर एक चाप की शक्ल धारण कर लेता है (§१, §३); और बादल सरीखी धुंधली धारियाँ ऐसी लकीरों की बनी जान पडती हैं जो सभी सूर्य के नाखूनी हाशिये (सबसे अधिक प्रकाशित भाग) के समानान्तर होती हैं। हवा के बहाव से पेटिकाओं में भी हरकत होती है किन्तु हमे पेटिका की आड़ी दिशा की हरकत ही दिखलाई पड़ती है। कभी-कभी यह घटना केवल कुछ सेकण्डों तक ही रहती है, अक्सर एक मिनट तक या इससे कुछ अधिक देर तक। पेटियों के बीच की दूरी से वायु-धारियों की औसत मोटाई का अन्दाज़ लग सकता है—अधिकतर यह मोटाई ४ से १६ इंच तक मिलती है।

किन्तु यह आवश्यक नहीं कि छायापेटिका को देख सकने के लिए सूर्य के पूर्णग्रहण की प्रतीक्षा की जाय जो बहुत कम और लम्बे कालान्तर पर ही लगते हैं। ऊपर बतायी

1. Nat. 37, 224, 1888.

गयी विधि से हम सूर्योदय (या सूर्यास्त) के समय उन थोड़े से लमहों में प्रेक्षण कर सकते हैं जब कि क्षितिज से ऊपर सूर्य का एक सँकरा-सा ही वृत्तखण्ड निकला रहता है। और तब पेटिकाएँ क्षैतिज दिशा मे स्थित होती हैं और ये हवा के बहाव की दिशा के अनुसार ऊपर, नीचे हरकत करती हैं। हवा के वेग के अनुसार इनकी हरकत का वेग प्रति सेकण्ड १ से ८ गज तक होता है और इनके बीच का अन्तर १ से ४ इच तक होता है। साधारणतः ये तीन, चार सेकण्ड से अधिक देर तक दिखलाई नही देती, क्योंकि शीघ्र ही सूर्यचकरी का दृष्टिगोचर होनेवाला वृत्तखण्ड बहुत अधिक चौड़ा हो जाता है।

अध्याय ५

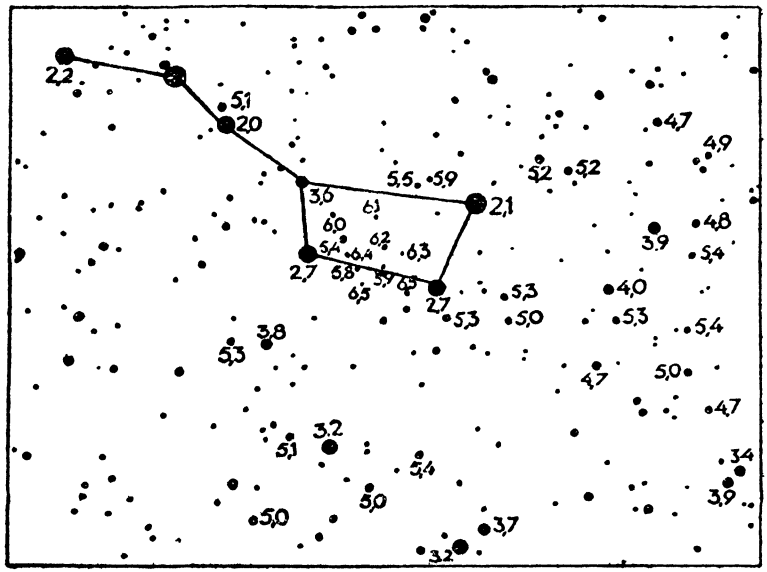
प्रकाशतीव्रता तथा द्युति की नाप

४५. तारे ज्ञात दीप्ति वाले प्रकाशस्रोत के रूप में

तारे एक ऐसा स्वाभाविक श्रेणीक्रम बनाते हैं जिसमें हर मान की दीप्तिवाले प्रकाशस्रोत पाये जाते हैं। फोटोमीटर की सहायता से इनकी दीप्ति अत्यधिक यथार्थता के साथ नापी गयी है; और दीप्तिमात्रा के अनुसार एक मापक्रम पर इनका वर्गीकरण किया गया है। दीप्तिमात्रा का मापक्रम तारे के वास्तविक आकार से कोई सम्बन्ध नही रखता, केवल इनकी द्युति या दीप्तितीव्रता यह प्रदर्शित करता है।

m=दीप्तिमात्रा श्रेणी-सूचक सख्या	i=प्रकाशतीव्रता (स्वतंत्र रूप से माने गये पैमाने पर)	m	i
—1	251	0	100
0	100	0.1	91
1	39.8	0.2	83
2	15.8	0.3	76
3	6.31	0 4	69
4	2.51	0.5	63
5	1 00	0.6	58
6	0.40	0.7	53
7	0.16	0.8	48
		0.9	44

किसी भी श्रेणी-सूचक संख्या का पूर्वगामी श्रेणी-संख्या वाले तारे से 2.51 गुना मन्द प्रकाश देता है। इन सबमे हम पाते हैं कि $i=10^{-0.4m}$ केवल स्थिराक इस सूत्र मे नही दिया गया है। चित्र ६१ मे सप्तर्षि मण्डल के पड़ोस के उन तारों की दीप्तिमात्रा श्रेणीसूचक सख्याएँ दी गयी हैं जो पूरे वर्ष भर दिखलाई देते रहते हैं। चित्र ६२ मे जाड़े मे दीखने वाले मृगशिरा तारा-समूह के लिए श्रेणीसूचक संख्याएँ दी



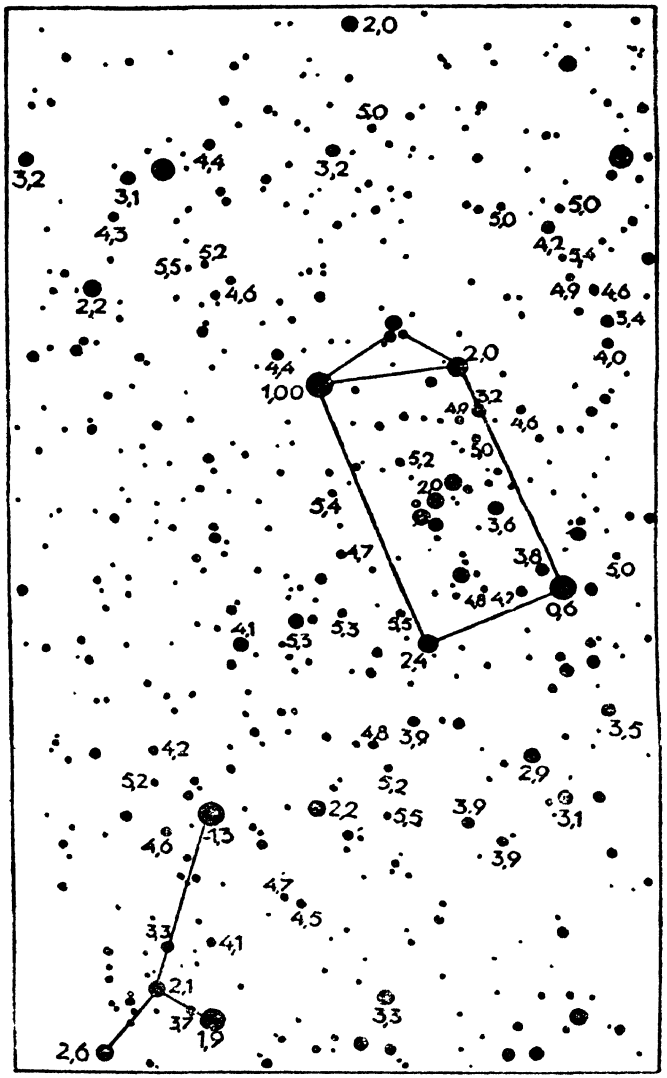
चित्र ६१

गयी हैं। पृष्ठ ९४ पर कुछ चमकीले और सुपरिचित तारों की श्रेणीसूचक सख्याएँ अङ्कित हैं*—

*—गगन-मण्डल के तारे पहचान और नामकरण के लिए समूहो में बाँट दिये गये हैं। जैसे सप्तर्षिमण्डल, मृगशिरा, गरुड आदि। पाश्चात्य ज्योतिष-पद्धति के अनुसार प्रत्येक तारासमूह के सदस्य तारे को इस तारासमूह के नाम के साथ यूनानी अक्षर α, β, γ, δ आदि जोडकर इगित करते है। पृ० ९४ की सारणी में विभिन्न तारासमूहों के सदस्य तारे के प्रचलित भारतीय नाम के सामने उनके नाम ज्योतिष-पद्धति के अनुसार भी दिये गये है।

कुछ यूनानी अक्षरों के उच्चारण इस प्रकार हैं—

α ऐल्फा	ϵ एप्साइलान	ξ ज़ाई
β बीटा	η ईटा	π पाइ
γ गामा	θ थीटा	ϕ फ़ाइ
δ डेल्टा	μ म्यू	ω ओमेगा


2,0
5,0
3,2
4,4
3,2
3,1
4,3
5,0
5,0
4,2
3,4
5,5
5,2
4,6
4,9
4,6
2,2
3,4
2,0
4,0
4,4
1,00
3,2
4,9
4,6
5,2
5,0
2,0
5,4
3,6
4,7
3,8
5,0
4,8
4,7
0,6
4,1
5,3
5,3
5,5
2,4
3,5
4,8
3,9
4,2
2,9
5,2
5,2
2,2
5,5
3,9
3,1
4,6
1,3
3,9
4,7
4,5
3,3
4,1
2,1
3,3
3,7
1,9
2,6

चित्र ६२

लुब्धक	=α श्वान...—1.3	श्रवण	=α गरुड़.... 1.1
अभिजित्	=α वीणा... 0.3	रोहिणी	=α वृष.... 1.1
ब्रह्म हृदय	=α रथी... 0.3	पुनर्वसु	=β मिथुन... 1.3
स्वाती	=α भूतेश... 0.2	मघा	=α सिंह... 1.6
प्रमाश	=α श्वानिका..0.6	कस्तूरी	=α मिथुन... 1.7

अन्य तारों के लिए नक्षत्रों के मानचित्र का निरीक्षण करना चाहिए। अधिकाश लोग रात के स्वच्छ आकाश मे और नगरों की रोशनी से बाहर कम-से-कम छठी श्रेणी तक के तारे का प्रेक्षण कर सकते है।

४६. वायुमण्डल के कारण प्रकाश का ओझल होना

साधारणत, क्षितिज के निकट बहुत कम तारे दिखाई देते हैं क्योंकि हवा मे से गुजरने के दौरान मे किरणे वायु मे अवशोषित हो जाती है। लगभग क्षैतिज दिशा मे चलनेवाली ये किरणे तिरछी गिरने वाली किरणों की अपेक्षा अधिक लम्बा रास्ता तय करती है अत: अवशोषण के कारण इनकी चमक मे अधिक ह्रास होता है।

अब यदि सम्भव हुआ तो चमक का ह्रास, तारों के मानचित्र और उनकी द्युति श्रेणीसूचक संख्या की सहायता से हम मालूम करेगे, यद्यपि तथ्य तो यह है कि इसके लिए § ४५ की स्वय हमारी सारणी ही, जब मृगशिरा आकाश मे नीचे स्थित हो और सप्तर्षि मण्डल ऊँचाई पर हो, पर्याप्त होगी।

h	△	Z	Sec Z
90°	0	0°	1
45°	0.09	45°	1.41
30°	0.23	60°	2.00
20°	0.45	70°	2 92
10°	0.98	80°	5.73
5°	1.67	85°	11 4
2°	3.10	88°	—

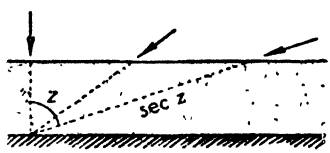
इस सारणी मे दी गयी द्युति-श्रेणीसूचक संख्याएँ उस वक्त के लिए है जब कि तारे आकाश मे ऊँचाई पर स्थित होते है। क्षितिज के निकट ही किसी सितारे को लेते है और ऊर्ध्व बिन्दु के आसपास के किसी तारे के साथ उसकी दीप्ति की तुलना

करते हैं (४५° से अधिक ऊँचाई के तारों की दीप्ति में ह्रास लगभग नगण्य ही होता है)। यथासम्भव ऐसा तारा ढूँढ़ते हैं जिसकी चमक A की चमक के ठीक बराबर हो या फिर ऐसे दो तारे प्राप्त करते हैं जिनके दर्मियान A की चमक पड़ती हो। अब A की आभासी द्युतिसूचक संख्या तथा सारणी मे दी गयी इसकी वास्तविक द्युतिसूचक सख्या का अन्तर मालूम करते हैं तथा इसे △ द्वारा व्यक्त करते हैं; साथ ही तारा A की ऊँचाई भी नाप ली जाती है (§२३५)।

विभिन्न तारों के निमित्त उनकी क्षितिज से नापी गयी विभिन्न ऊँचाइयों h के लिए (१०° की ऊँचाई प्रारम्भिक तखमीने के लिए काफ़ी होगी) यह क्रिया पूरी करने पर जो हमें सारणी मिलेगी वह बहुत कुछ ऊपर दी गयी सारणी के समान होगी।

सारणी के द्वितीय स्तम्भ में दी गयी संख्याएँ वायुमण्डल द्वारा उत्पन्न द्युतिह्रास प्रगट करती हैं। ये संख्याएँ संसार के इस भाग के लिए द्युतिह्रास का औसत मान पूर्णतया खुले आकाश के लिए बतलाती हैं; ये मान विभिन्न स्थानों के लिए बदलते रहते हैं और विभिन्न रातों के लिए तो ये और भी अधिक बदल जाते हैं।

सारणी में ऊर्ध्व बिन्दु से नापी गयी कोणीय दूरी, $Z=90°-h$ तथा Sec Z भी दिये गये हैं। Sec Z वायुमण्डल मे से होकर जानेवाले किरणपथ की लम्बाई का समानुपाती होता है (चित्र ६३)।

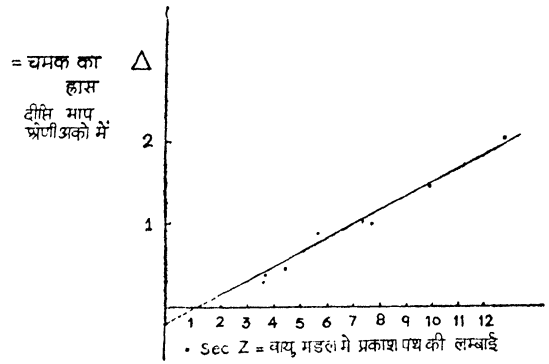


चित्र ६३—**प्रकाश की किरण जितनी अधिक तिरछी होगी, वायु-मंडल में से उसका पथ उतना ही अधिक लंबा होगा।**

अब ग्राफ़ कागज पर △ के मान को Sec Z के मान के साथ प्लाट करिए। आपको बहुत से बिन्दु मिलेंगे जो एक सीधी रेखा के आस-पास पड़ते हैं, जो यथासम्भव उन सब बिन्दुओं के निकट से गुजरती हुई खींची गयी है (चित्र ६४)। अतः इस ग्राफ़रेखा से हम पता लगा सकते हैं कि वायु-मण्डल में गुजरने वाले प्रकाश-पथ की लम्बाई बढ़ने पर तारे की द्युति में कितने द्युति-सूचक अंक का ह्रास होता है।

इस रेखाचित्र की असाधारण रूप से रोचक एक विशिष्टता यह है कि रेखा को बढ़ाकर हम मालूम कर सकते हैं कि यदि धरती को घेरनेवाले वायुमण्डल से ऊपर, अर्थात् स्ट्रैटोस्फियर से भी ऊपर, हम उठ सकते तो तारा कितनी अधिक द्युति से चमकता हुआ प्रतीत होता। इस दशा मे ऊर्ध्व बिन्दु के निकट स्थित तारे की चमक मे ·२ अंक

द्युति की वृद्धि होगी जिसका अर्थ है कि दीप्ति ८३ से बढ़कर १०० हो जायगी (देखिए §१७२)।



चित्र ६४—ऊर्ध्व बिन्दु से विभिन्न दूरियों पर तारे की चमक का ह्रास, दीप्तिमाप श्रेणी अंकों में।

४७. तारे की तुलना एक मोमबत्ती से

नगर से बाहर रात के समय एक खुले मैदान को हम चुनते हैं और वहाँ एक मोमबत्ती की प्रकाशतीव्रता की तुलना एक चमकीले तारे से करते हैं, जैसे ब्रह्महृदय (αरथी)। कितने आश्चर्य्य की बात है कि मोमबत्ती से इतनी अधिक दूरी पर हमें खड़ा होना पड़ता है ताकि उसकी चमक घटकर उस तारे की चमक के बराबर हो जाय। यह दूरी करीब १००० गज या ९०० मीटर मिलती है। अत. ब्रह्महृदय की प्रकाशतीव्रता का मान $\frac{I}{900^2} = \frac{I}{810000}$ 'लक्स' या 'मीटरकैन्डल' प्राप्त होता है।

इस काम के लिए पाकेट लैम्प भी इस्तेमाल किया जा सकता है, लेकिन इस दशा में दूरी और भी अधिक बढ़ानी होगी। लैम्प को मकान की छत पर लगाइए या फिर किसी ऊँची मीनार की खिड़की के बाहर उसे रखिए।

रँग के फर्क पर भी गौर कीजिए।

४८. सड़क के दो लैम्पों की परस्पर तुलना

सन्ध्या के टहलने में हम अक्सर देखते हैं कि जब कभी हम सड़क के दो लैम्पों के दर्मियान होते हैं तो हमें दो छायाएँ मिलती हैं। किसी एक लैम्प के जितने निकट हम

आते हैं, उन दोनों मे से एक छाया उतनी ही अधिक गाढ़ी हो जाती है। जिस समय दोनों छायाएँ समान रूप से गाढ़ी होती है उस वक्त वहाँ पर दोनों लैम्पों का प्रकाश समान रूप से तीव्र होता है; अतः उनकी दूरियों a तथा b से यह निष्कर्ष निकला कि उनकी दीप्ति की निष्पत्ति $\frac{A}{B}=\frac{a^2}{b^2}$।

तप्त मैन्टल वाले लैम्प और बिजली के लैम्प द्वारा बनने वाली छाया के रंग में अद्भुत अन्तर दीखता है।

४९. चन्द्रमा की तुलना सड़क के लैम्प से

एक बार फिर इन प्रकाश-स्रोतों से बननेवाली दो छायाएँ प्राप्त करिए। चन्द्रमा के सामने की छाया कुछ-कुछ लालछवे रग की होगी तथा लैम्पवाली छाया गहरा नीला रग लिये हुए होगी (देखिए § ९६)। हम लैम्प से दूर हटते है तो चन्द्रमा से बचने वाली छाया तो उतनी ही गाढ़ी रहती है किन्तु लैम्पवाली छाया हलकी होती जाती है। मान लीजिए कि लैम्प से २० मीटर की दूरी पर दोनो छायाएँ समान रूप से गाढ़ी दीखती है। सड़क का बिजली का लैम्प जो बहुत तेज रोशनी का न होकर साधारण किस्म का होता है, मेरे अन्दाज से ५० कैन्डल शक्ति का होना चाहिए; अतः २० मीटर की दूरी पर प्रदीप्ति-तीव्रता होगी $\frac{50}{20^2}=0.13$ लक्स।

अतः पूर्णिमा के चाँद के प्रकाश की प्रदीप्तितीव्रता भी इतनी ही होगी; प्रयोग पूर्णिमा की रात मे किया गया था।

प्रयोग शुक्लपक्ष या कृष्णपक्ष की अष्टमी को दुहराइए। इस बार प्रकाश की प्रदीप्ति पहले के आधे से बहुत कम होगी क्योंकि चन्द्रमा की सतह का बहुत-सा भाग चन्द्रमा के पहाड़ों की तिरछी छाया के कारण ढक जाता है (देखिए § १६८)

प्रदीप्तितीव्रता के सही मान इस प्रकार है—पूर्णिमा के चाँद के लिए ०.२० लक्स और शुक्लपक्ष या कृष्णपक्ष की अष्टमी के लिए ०.०२ लक्स।

५०. चन्द्र-बिम्ब-द्युति

हर्शल जब दक्षिण अफ्रीका की यात्रा पर रवाना हुआ था और केपटाउन पर उसका जहाज पहुँचा तो उस वक्त करीब-करीब पूर्णचन्द्र को उसने टेबुल पर्वत के ऊपर उगते हुए देखा, अस्त होते हुए सूर्य से उस समय पर्वत पर रोशनी पड रही थी। उसे ऐसा लगा कि चन्द्रमा पर्वत की चट्टानो के मुकाबले मे कम चमकीला था, और इससे उसने यह निष्कर्ष निकाला कि चन्द्रमा की सतह मटमैले रंग की चट्टानों की बनी होगी।

स्वयं अपने आसपास के वातावरण मे भी इस तरह का प्रेक्षण हम प्राप्त कर सकते हैं; इसके लिए सन्ध्या को लगभग ६ बजे उगनेवाले पूर्णचन्द्र की तुलना किसी सफ़ेद दीवार से करनी होगी जिसपर अस्त होते हुए सूर्य का प्रकाश पड़ रहा हो। सूर्य और चन्द्रमा के बीच की दूरी तथा सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी मोटे तौर पर एक-सी ही है। यदि चन्द्रमा और दीवार एक ही तरह के पदार्थ से बनी हो तो हमारी आँख से उनकी दूरियो मे चाहे कितना भी अधिक अन्तर क्यों न हो, उनकी चमक समान होगी (चिरप्रतिष्ठित दीप्तिमापन सिद्धान्त के अनुप्रयोग का एक बढ़िया उदाहरण)। प्रेक्षण से प्राप्त प्रदीप्ति-अन्तर अवश्य इस कारण होगा कि चन्द्रमा का धरातल गहरे रग की चट्टानो (ज्वालामुखी की राख ?) से बना है।

पूर्णतया सही प्रेक्षण प्राप्त करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा दोनों को क्षितिज से समान ऊँचाई पर होना चाहिए ताकि वायुमण्डल के कारण उनकी प्रकाशतीव्रता में ह्रास दोनो के लिए समान हो।

५१. मैदानी दृश्यों की प्रदीप्ति के लिए कुछ अनुपात

सूर्य की द्युति = ३००,००० × नीले आकाश की द्युति। सफेद बादल की द्युति = १० × नीले आकाश की द्युति। सामान्य धूप वाले दिन जब आकाश नीले रग का होता है, प्रकाश का ८० प्रतिशत तो सीधे सूर्य से आता है और २० प्रतिशत आकाश से।

सूर्यास्त के उपरान्त स्वच्छ आकाश मे एक क्षैतिज सतह पर प्रदीप्ति*

सूर्य की ऊचाई	0°	−1°	−2°	−3°	−4°	−5°	−6°	−8°	−11°	−17°
प्रदीप्ति	400	250	115	40	14	4	1	0.1	0.01	0.001 लक्स

आँखे हर तीव्रता की प्रदीप्ति के लिए अपने को इतनी अच्छी तरह और इतनी शीघ्रता से [illegible] कर लेती है कि पर्याप्त रूप से हम कभी भी अनुभव नही कर पाते कि हमारे आसपास की प्रदीप्ति-निष्पत्तियाँ कितनी अधिक है ! आइए, ऊँचाई पर स्थित सूर्य से प्रकाशित मैदानी दृश्य की तुलना चन्द्रमा द्वारा प्रकाशित मैदान से करे।

[प्रदीप्ति तीव्रता की इकाई = 10^{-6} लैम्बर्ट]

सूर्य का मंडलक	4000,000	लाख	चन्द्रमा का मडलक	900,000
विशुद्ध श्वेत वस्तु	70	लाख	विशुद्ध श्वेत वस्तु	15
मटमैली काली वस्तु	1.4	लाख	मटमैली काली वस्तु	0.3

* Reesinck Physica **11**, 61, 1944 Siedentopf and Holl. Reichsber Phys, **1**, 32, 1944

इससे पता चलता है कि एक ही मैदानी दृश्य में अधिकतम प्रदीप्ति अनुपात ५०:१ से ऊँचा नही है, फिर भी निरपेक्ष मान के हिसाब से प्रदीप्ति का यह अन्तर बहुत अधिक होता है। सूर्य के प्रकाश में मटमैली काली वस्तु चाँदनी के प्रकाश में रखे सफ़ेद कागज की अपेक्षा १०००० गुनी अधिक चमकीली होती है। साये मे रखी चीज़े कदाचित् धूप मे रखी चीजों की अपेक्षा १० गुनी कम चमकीली होती है। प्रवेश-द्वार के अन्दर या झाड़ियों के बीच की खुली जगहे आदि सबसे अधिक अँधेरी होती है जो कभी-कभी आस-पास के धूपवाले भूमिदृश्य के मुकाबले मे अद्‌भुत विपर्यास उपस्थित करती हैं—चमक १ लक्स से अधिक नही होती।

भूमिदृश्य मे प्रदीप्ति या चमक की निष्पत्ति का अनुमान हम विभिन्न वस्तुओं की परावर्त्तन-क्षमता की तुलना करके लगा सकते है: ताज़े हिम के लिए ८०-८५%, पुराने हिम के लिए ४०%तक, घास के लिए १०-३३%, सूखी भूमि के लिए १४%, गीली भूमि के लिए ८–९%, नदी, खाड़ी के लिए ७%,गहरे महासागर के लिए ३%और ताल-तलैया के लिए २%से अधिक नही। वायुयान से नीचे देखने पर बीच के वायु-स्तरों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण के कारण एक हलके आवरण जैसा प्रभाव पड़ता है, अतः इन अङ्कों मे थोडा परिवर्त्तन करना पड़ता है। बादल ८०%तक परावर्त्तन करते हैं।

५२. परावर्तन-शक्ति

क्या पानी मे तारों को प्रतिविम्बित होते आपने कभी देखा है? नगरों में ऐसा अवसर मुश्किल से मिलता है, और देहात मे केवल कभी-कभी—पानी के नाले या झील मे जब कि हवा मे हरकत न हो. अँधेरी रात मे ये प्रतिबिम्ब विशेष स्पष्ट दिखलाई देते हैं। ऊर्ध्वबिन्दु के निकट के प्रथम श्रेणी के तारे हलका प्रतिबिम्ब बनाते हैं जिनकी चमक लगभग पाँचवी श्रेणी के तारे के बराबर होती है। दीप्तिमात्रा की श्रेणी में अक ४ का अन्तर करीब -करीब प्रकाश-तीव्रता के निष्पत्ति-मान ४० के बराबर होता है, अतः लम्बवत् गिरनेवाली किरणों के प्रकाश के केवल २.५ प्रतिशत भाग को ही पानी परावर्त्तित करता है। आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित तारों का प्रतिबिम्बन अपेक्षाकृत बढ़िया होता है।

परावर्त्तन-शक्ति और वर्त्तनाङ्क का पारस्परिक सम्बन्ध फ्रेनेल के सूत्र द्वारा प्राप्त होता है। लम्बवत् गिरनेवाली किरणों के लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{परावर्त्तन शक्ति} = \left(\frac{n-1}{n+1}\right)^2$$

निम्नलिखित तालिका में विभिन्न आपतन कोणों[1] के लिए काँच और पानी की परावर्त्तन-शक्ति के मान दिये गये है ।

आपतन कोण	परावर्त्तन-शक्ति	
	पानी की	काँच की (n=1.52)
0°	0 020	0 043
10°	0.020	0 043
20°	0 021	0 043
30°	0 022	0 043
40°	0.024	0·049
50°	0.034	0·061
60°	0 060	0 091
70°	0.135	0·175
75°	0.220	0 257
80°	0.350	0·388
85°	0.580	0 615
90°	1 000	1 000

अब हम समझ सकते है कि क्यो नगरो मे हम कभी भी तारो को प्रतिबिम्बित होते हुए नही देख सकते; आकाश मे पर्य्याप्त अँधेरा नही रहता है, तृतीय द्युति श्रेणी के तारे मुश्किल से ही दृष्टिगोचर हो पाते है, और फिर पानी की सतह पर बहुत अधिक रोशनी पडती रहती है। परावर्त्तन मे तो केवल ग्रह ही दृष्टिगोचर हो पाते है, सो भी केवल उसी वक्त जब कि वे प्रथम श्रेणी के तारो की अपेक्षा कही अधिक चमकीले होते है।

दिन मे प्रतिबिम्बित नीले आकाश, मकान और वृक्ष आदि की प्रदीप्तियाँ २ प्रतिशत से कही अधिक जान पडती है। कुछ चित्रो मे वस्तु और उसके प्रतिबिम्ब की प्रदीप्ति मे मुश्किल से ही अन्तर देखने को मिलता है। यह आँखों की प्रकाश सम्बन्धी प्रवञ्चना का परिणाम है। इसकी व्याख्या अशतः इस प्रकार है, अधिकतर पानी की सतह को हम ऐसी दिशा से देखते है जो क्षैतिज दिशा के अत्यन्त निकट होती है (चित्र १५६) और अंशतः यह कि मानसिक परिस्थितियो के कारण ऐसा होता है।

1. Angles of incidence

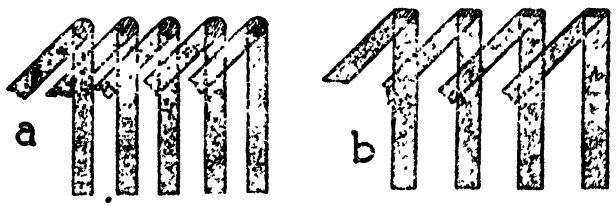
ठीक नीचे दीखने वाली पानी की सतह पर होनेवाले परावर्त्तन की तुलना पाकेट-दर्पण या साधारण काँच के टुकड़े के परावर्त्तन से कीजिए। भिन्न परावर्त्तन कोणों के लिए भी प्रदीप्तियों की तुलना करिए।

इस तरह का अन्धविश्वास प्रचलित है कि गहरे पानी मे तारे कभी भी नही प्रतिबिम्बित होते। निस्सन्देह इसके लिए कोई भी आधार नही है।

काँच के पर्दे की प्रत्येक सतह से ०.०४३ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित होता है, अत. दोनो सतहो से कुल ०.०८६ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित होगा। काँच के बने छोटे कमरो मे जैसे टेलीफोनकक्ष आदि, जिसमे बीच मे लटकनेवाले बिजली के बल्ब से रोशनी की गयी हो, आमने-सामने की खिडकियों के काँच मे प्रतिबिम्बो की पुनरावृत्ति देखी जा सकती है, साधारण दूधिया काँच के बल्ब के लिए प्रत्येक दीवार पर चार प्रतिबिम्ब तक दृष्टिगोचर हो सकते है। पहला प्रतिबिम्ब एक परावर्त्तन से, दूसरा किरणो के तीन बार के परावर्त्तन से, तीसरा पाँच बार के परावर्त्तन से और चौथा सात बार के परावर्त्तन से बनता है। चौथे प्रतिबिम्ब की दीप्ति आरम्भ के आपतित प्रकाश-दीप्ति से $(\alpha\text{-}086)^7$ गुना कम होती है अर्थात् एक करोडवे भाग से भी कम। यह सीधी-सादी गणना इस बात का अत्युत्तम उदाहरण है कि हमारी आँख द्वारा अनुभूत होनेवाली प्रकाश-दीप्ति का परास कितना विशाल है!

५३. तार की जाली में से प्रकाश का गमन

मकानो की छत पर लगे विज्ञापन प्रदर्शित करने वाले प्रकाशस्रोत प्राय. धातु के ढाँचे पर तार की जाली मे फिट किये गये होते है।



चित्र ६५—तार की जाली से रुकनेवाले प्रकाश का प्रेक्षण दो दिशाओं से—

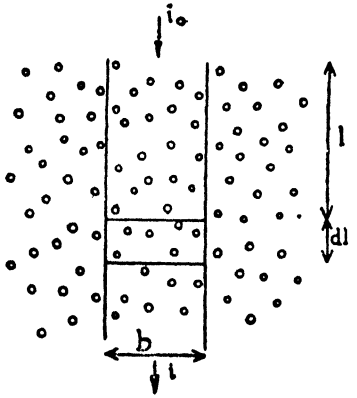
(a) जब तार वृक्षाकार अनुच्छेद के हं।

(b) जब जाली के तार चिपटी पत्ती के बने हं।

दूर से देखने पर जाली के तार अलग-अलग नहीं जान पड़ते बल्कि जाली समान रूप से प्रकाशित भूरे रंग के काँच की सतह सी दिखाई पड़ती है। यह दिलचस्प बात होगी यदि जाली को उत्तरोत्तर तिरछी दिशा से देखें; तब आकाश की पृष्ठभूमि पर इसकी प्रदीप्ति क्रमशः कम होती जाती है। इससे सिद्ध होता है जाली के तार बेलनाकार शक्ल के हैं क्योंकि यदि चिपटे फीते की शक्ल के ये होते तो हर दिशा से देखने पर जाली एक सी ही प्रदीप्ति की दीखती (चित्र ६५)।

५४. वनों की अपारदर्शिता का गुण

जंगल की एक सँकरी पट्टी के आरपार वृक्षों के तनों के बीच से पीछे का प्रकाशित आकाश हम देख सकते हैं। यह ज्ञात करने के लिए कि प्रकाश का कितना भाग जंगल मे से होकर बिना बाधा के गुजर सकता है, कोई न कोई सूत्र हम अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। मान लीजिए कि वन मे वृक्षों का वितरण आकस्मिक ही है, अर्थात् प्रति वर्ग गज़ वृक्षों की संख्या N है, और आँख की ऊँचाई पर वृक्ष के तने का व्यास D है।



चित्र ६६—वन के वृक्षों के तनों के बीच से दीख सकने वाले प्रकाश की गणना कैसे कर सकते हैं।

प्रकाश-किरणों की एक शलाका पर विचार करिए जिसकी चौड़ाई b है। वन के भीतर यह दूरी l तय कर चुकी है (चित्र ६६)। मान लीजिए कि वन मे प्रवेश करने के पहले इसकी दीप्ति i_0 थी और अब दीप्ति i है। इसके आगे किरणें जब क्षुद्र दूरी dl बन के अन्दर और तय करती है तो इसकी क्षुद्र प्रकाशमात्रा di का ह्रास हो जाता है; अतः

$$\frac{di}{i} = -\frac{NDbdl}{b} = -dlND$$

अनुकलन करने पर,

$$i = i_0 e^{-NDL} = i_0 . 10^{-0.43NDL}$$

अतः आपतित किरणों की दिशा मे वन जितनी अधिक दूर तक फैला हुआ होगा, उसमे से गुज़रनेवाली प्रकाशमात्रा उतनी ही कम होती जायगी, ठीक उसी प्रकार

जैसे गहरे रंग के द्रव मे से गुजरने वाला प्रकाश द्रव के स्तर की मोटाई बढ़ने के साथ घटता जाता है। देवदार के बन के लिए मान लीजिए, प्रति वर्ग गज वृक्ष सख्या $N=1$ तथा तने का व्यास $D=0.10$ गज, [illegible] प्राप्त होते है—

$l=10$ गज	$\frac{i}{i_0}=0.37$
$l=25$ गज	$=0.10$
$l=50$ गज	$=0.01$
$l=70$ गज	$=0.001$

अपारदर्शिता की वृद्धि की दर अद्‌भुत रूप से तीव्र है। क्षितिज के उस प्रकाश को देखकर जो अभी तक पेड़ो की आड़ मे नही आ सका है, हम वन की चौड़ाई का अन्दाज लगा सकते है।

बीच (beech) वृक्ष के वन के लिए ND का क्या मान होगा? और देवदार के नये पौदों, तथा पूर्ण विकास पाये हुए देवदार वृक्षों के लिए क्या मान होगा?

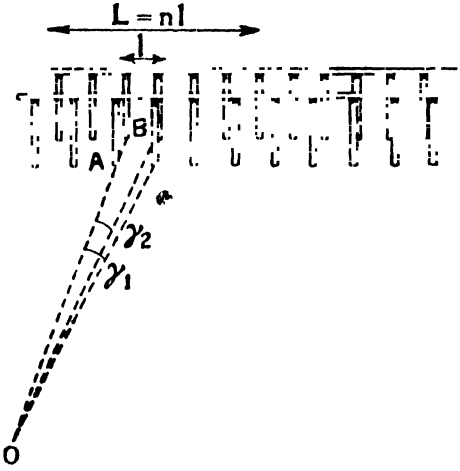
५५. दो कठघरों के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन (प्लेट VII,a)

जब कभी एक कठघरे के खम्भों के दर्मियान दूसरे कठघरे के खम्भे दिखलाई पड़ते है तो हमे रोशनी और अन्धकार की चौड़ी पट्टियाँ दृष्टिगोचर होती है जो हमारे चलने के साथ-साथ ही चलती हुई जान पड़ती है। इसका कारण यह है कि एक कठघरे के खम्भो के बीच की प्रत्यक्ष दूरी दूसरे कठघरे के खम्भो की पारस्परिक दूरी से कुछ भिन्न होती है—या तो इसलिए कि एक कठघरे के खम्भो के बीच का अन्तर दूसरे के खम्भो की दर्मियानी दूरी से भिन्न है या इसलिए कि आँख से एक कठघरे की दूरी दूसरे की दूरी से भिन्न हो सकती है। कुछ दिशाओं से देखने पर एक कठघरे के खम्भे दूसरे के खम्भो की सीध मे पड़ते है और कुछ अन्य दिशाओ से देखने पर एक कठघरे की खुली जगहे दूसरे के खम्भों द्वारा पूरी-पूरी भर जाती है, अतः औसत प्रदीप्ति मे अन्तर दीखता है। हम कह सकते है कि खम्भे कभी सामञ्जस्य की दशा मे आते है, और कभी असामञ्जस्य की दशा मे।

एक बार इस तरह के क्रमिक प्रकाशदर्शन का निरीक्षण कर लेने के उपरान्त यत्र-तत्र हर कही यह घटना हमे देखने को मिलती रहती है। प्रत्येक पुल जिसके दोनों ओर रेलिंग की मुडेर लगी होती है, दूर से देखने पर प्रदीप्ति मे चढ़ाव-उतार प्रदर्शित करता है। प्रकाश का यह क्रमिक चढ़ाव-उतार उस वक्त भी मिलता है जब रेलिंग के खम्भों

के दर्मियान उन्हीं की छाया को हम देखते हैं। इस दशा मे खम्भों के बीच तथा छाया चिह्नों के बीच के अन्तर तो समान होते हैं, किन्तु आँख से खम्भे तथा छाया की दूरियाँ भिन्न होती हैं।

कुछ स्टेशनों पर सामान उठानेवाले लिफ्ट तार की जाली के घेरे के अन्दर स्थित होते हैं। हमारी ओर की जाली और सामने की दूसरी ओर जाली मिलकर एक तरह का म्वारे (moire) सा प्रस्तुत करती है, जैसा तार की एक जाली को दूसरी जाली पर रखने पर प्राप्त होता है या एक कधे को दूसरे कधे पर रखने पर, जबकि दोनों के दाँतो के बीच के अन्तर असमान हो।



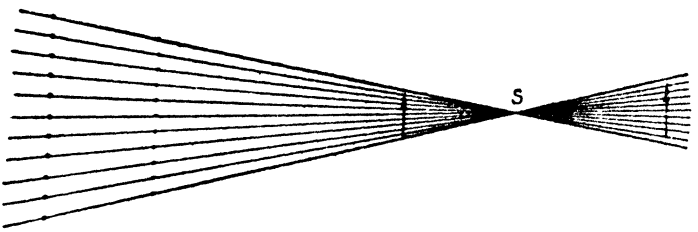
चित्र ६७—**दो रेलिंगों के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन।**

आइए, चित्र ६७ के सरल उदाहरण की विस्तृत व्याख्या करे जिसमे समान अन्तर पर लगे खम्भो की दो पंक्तियाँ देखी जा रही है जो आँख से क्रमश: x_1=OA तथा x_2=OB दूरी पर स्थित हैं। मानो दो क्रमागत खम्भो के बीच का फासला l है जो आँख पर क्रमश: कोण $\gamma_1=\frac{l}{x_1}$ तथा $\gamma_2=\frac{l}{x_2}$ बनाता है। एक क्रमिक प्रकाशदर्शन मे n खम्भे पडेगे जबकि $n=\frac{\gamma_1}{\gamma_1-\gamma_2}=\frac{x_2}{x_2-x_1}$; अर्थात् हमारी दूरी बढ़ने पर यह सख्या भी बढ़ती है। इसके प्रतिकूल एक क्रमिक प्रकाश-दर्शन द्वारा कोणीय दूरी θ हमारी आँख के लिए उतनी ही बनी रहती है क्योंकि $\theta=n\gamma_2=\frac{l}{x_2-x_1}$ एक क्रमिक प्रकाशदर्शन की सही लम्बाई $L=nl=\frac{lx_2}{x_2-x_1}$ हम खम्भो की पक्ति के समानान्तर चलकर मालूम कर सकते है; क्रमिक प्रकाशदर्शन भी उसी रफ्तार से चलेगा जिस रफ्तार से हम चलते हैं। अब वह दूरी नापिए जिसे तय कर लेने पर आप प्रकाशदर्शन

को ठीक उसी स्थिति में देखते हैं जिस स्थिति में वह पहले था। यही दूरी उस क्रमिक प्रकाशदर्शन की लम्बाई होगी। उपर्युक्त विभिन्न सूत्रों की सत्यता की जाँच कीजिए। या फिर n, 0 और L ज्ञात करके x_2, x_2-x_1, तथा l के मान सूत्र से प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार बिना किसी अन्य साधन के दूर से ही रेलिंग के लिए इन सभी राशियों को हासिल कर लेना सम्भव हो जाता है।

यदि दोनो रेलिंग के खम्भो के दर्मियानी फासले एक दूसरे से भिन्न हों तो हमारी आँख के हरकत करने पर क्रमिक प्रकाशदर्शन अद्भुत तरीके से चलते नजर आते हैं।

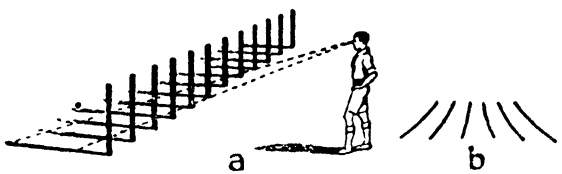
यदि प्रकाश स्रोत s (चित्र 68) के हम सामने हैं तो क्रमिक प्रकाशदर्शन उसी तरफ़ चलते हैं जिधर हम जा रहे हैं और यदि हम प्रकाश स्रोत के पीछे हैं, तो ये उल्टी



चित्र ६८—दो रेलिंग व्यवस्थाओं के दर्मियान क्रमदर्शन, जिनके आवर्त भिन्न हैं।

ओर जाते हुए प्रतीत होते हैं। दूसरे शब्दो मे ये हमारी दिशा मे चलते हैं यदि $\gamma_1 < \gamma_2$ तथा उल्टी दिशा मे चलते हैं जब $\gamma_1 > \gamma_2$। फिर प्रकाशसूत्र के जितने निकट हम जायँगे उतनी ही तेजी से ये चलते हुए नजर आयेंगे।

सीधे खड़े खम्भों वाली बाड की छाया समतल भूमि पर पड़ती है तो इस दशा मे क्रमिक प्रकाशदर्शन कुछ भिन्न किस्म के नजर आते हैं। सिरे पर ये पेंदे की अपेक्षा



चित्र ६९—रेलिंगों और उनकी छाया के दर्मियान क्रमिक प्रकाश दर्शन
(a) प्रेक्षण के समय की परिस्थिति (b) क्रमदर्शन तरंग का स्वरूप।

अधिक निकट होते है और थोड़ी-बहुत वक्रता भी इनमे देखी जा सकती है। किन्तु यह उपर्युक्त व्याख्या के अनुकूल ही है क्योकि परस्पर व्यतिकरण करनेवाले दोनों ढाँचों की दूरी मे सबसे अधिक अन्तर सिरो पर ही होता है। अत बगल के छडो के बीच की कोणीय दूरियाँ जो आँखो को दीखती है, एक दूसरे से बहुत अधिक भिन्न हो जाती है, फलस्वरूप क्रमिक प्रकाशदर्शन इस दशा मे एक दूसरे के बहुत निकट होंगे। पेदे पर ठीक इसका उलटा होता है।

५६. फोटोग्राफी द्वारा दीप्तिमापन[1]

फोटोग्राफी की हर दुकान पर बिक्री के लिए 'डे-लाइट पेपर' मौजूद रहते है जो धूप मे तेजी के साथ लालछवे भूरे रग मे तब्दील हो जाते है। मोटे तौर पर कागज को एक खास रग धारण करने मे जो समय लगता है वह उस पर पडनेवाली प्रकाश-तीव्रता के उत्क्रम अनुपात मे होता है (बुन्सन और रोस्को का नियम)। अत. यदि एक ही किस्म का 'डेलाइट पेपर' हमेशा इस्तेमाल करे और सामान्य लालछवे भूरे रग के कागज के एक टुकडे को तुलना के लिए 'रग का प्रामाणिक शेड' मान ले, तब कही पर भी, केवल यह मालूम करके कि सुग्राही कागज को रग के उस प्रामाणिक शेड को प्राप्त करने मे कितना समय लगता है, प्रकाश की तीव्रता आसानी से ज्ञात कर सकते है। प्रामाणिक कागज को रोशनी मे जहाँ तक सम्भव हो बहुत कम ही रखना चाहिए वरना इसका रग उड जायगा।

प्रामाणिक शेड का चुनाव अत्यधिक सावधानी के साथ करना चाहिए। 'डेलाइट पेपर' की एक पतली पट्टी लेकर एक सिरे से दूसरे सिरे तक उसे कई खण्डों मे धूप मे खोलते जाते है। क्रम से पहले खण्ड को १० सेकण्ड तक, दूसरे को २०, तीसरे को ४०, चौथे को ८०, पाँचवे को १६० , छठे को ३२० और सातवे को ६४० सेकण्ड तक खुला रखकर ढकते चले जाते है। मन्द प्रकाश मे कागज की जाच करने पर हम देखते है कि प्रथम और अन्तिम खण्ड के रग मे उभार कम है किन्तु बीचवाले खण्ड के रग सबसे अधिक स्पष्ट उभरे है। अब किसी पुस्तक का कवर या पोस्टर का कागज इस तरह का चुनिए कि इसका रग पूर्णतया हमवार हो और 'डेलाइट पेपर' के बीचवाले किसी खण्ड के रग से बिलकुल ठीक-ठीक मेल खाता हो। तुलना करते समय रग के शेड यदि पूर्णतया मेल न खाते हों तो आपको उनकी चमक पर अधिक ध्यान देना होगा और इसके लिए आपको चाहिए कि अधमुँदी आँख से दोनो सतहों को देखे। स्मरण रखिए कि 'डेलाइट

1. J. Wiesner, Der Lichtgenuss der Pflanzen (Leipzig, 1907)

पेपर' को मसाले मे न तो धोना है और न हाइपो में डुबाकर उसे स्थायी ही बनाना है, वास्तव मे कागज की यह पट्टी एक बार इस्तेमाल कर लिए जाने पर बाद के लिए रखी भी नही जा सकती।

इसी तरीके से वीजनर ने विभिन्न पौदों के विकास के लिए आवश्यक 'प्रकाश के जलवायु' के सिलसिले मे अनेक परीक्षण किये थे। इस तरीके से भले ही केवल मोटे तौर पर ही तखमीना लग पाता हो, किन्तु विभिन्न परिस्थितियों मे और तरह-तरह के स्थानों पर प्रदीप्ति के मान निकालने की यह एक अत्युत्तम विधि है जिसके बारे मे हमे पहले कुछ भी अन्दाज़ न था।

सूर्य की विभिन्न ऊँचाइयों के लिए एक क्षैतिज तल की प्रदीप्ति का अध्ययन कीजिए।

जिस समय सूर्य चमक रहा हो, किसी क्षैतिज तल पर आने वाले प्रकाश की तुलना करिए, (क) जब किसी परदे की छाया उस पर पड़ रही हो,; (ख) जब परदा हटा लिया गया है; इस रीति से सीधे सूर्य से आनेवाले प्रकाश की तुलना नीले आकाश से आनेवाले प्रकाश के साथ करिए।

क्षैतिज तल मे रखे कागज की ऊपरी और नीचे वाली सतह की प्रदीप्ति की तुलना करिए। इसके लिए पानी के ऊपर अनुपात ६, बजरी के ऊपर १२ और घास पर २५ मिलता है।

समान आकार की नलियाँ लीजिए, उनके पेंदे पर फोटोग्राफ़ी का कागज़ लगाकर नली को विभिन्न कोणों पर तिरछी करके खड़ी करिए और इस प्रकार नीले आकाश की दीप्ति की तुलना विभिन्न दिशाओं के लिए करिए। आम तौर पर सूर्य की दिशा से १०° के कोण बनाने वाली दिशा मे आकाश की रोशनी न्यूनतम होती है (देखिए § १७६)

वन के अन्दर की रोशनी की तुलना बाहर से करिए ('बाहर' का अभिप्राय है वन के हाशिये से कम-से-कम ७ गज़ दूर)।

बीच वृक्ष के वन के भीतर प्रदीप्ति की तुलना करिए—

(क) एप्रिल महीने के मध्य मे, (ख) जब नयी कोंपलें फूट रही हों और (ग) जून महीने के शुरू मे। एक निरीक्षण मे वन के बाहर की प्रदीप्ति की तुलना मे भीतर की प्रदीप्ति क्रमशः $\frac{1}{15}$, $\frac{1}{30}$, तथा $\frac{1}{52}$ मिली थी।

प्रदीप्ति-तीव्रता उन स्थानों की नापिए जहाँ निम्नलिखित पौदे उगते हैं—

बड़े केले (Plantago major)	१
इवी (Hedera helix)	१ से ०.२२ जब इसमे फूल लगते हों १ से ०.०२ ठूँठी टहनियो के समय
हीदर (Calluna vulgaris)	१ से ० १०
ब्रैकेन (Pteridum aquilinum)	अत्यन्त कम, लगभग ०.०२

घने वन के अन्दर पेडो के झुरमुट के नीचे प्रकाश की तीव्रता नापिए—यह रोशनी की न्यूनतम मात्रा है जिसमे टहनियों का विकास पाना सम्भव हो सकता है। इक्के-दुक्के वृक्ष के तले प्रकाश की तीव्रता निम्नलिखित प्राप्त हुई है—लार्च, ०.२०; बर्च, ०.११, चीड, .१०; मरो, ०.०३; बीच, ०.०१; (वृक्ष के बाहर की प्रकाश-तीव्रता के भिन्नाश मे प्रदर्शित)।

अध्याय ६

आँख[1]

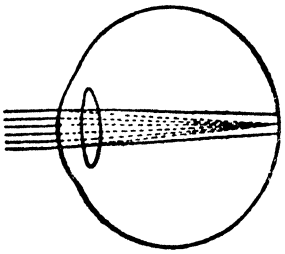
प्रकृति के अध्ययन मे अनिवार्यत. मानव इन्द्रियों का अध्ययन भी सम्मिलित करना चाहिए। भूमि के दृश्यो का यथार्थ प्रेक्षण कर पाने के लिए सर्वप्रथम हमे उस यत्र–मानव नेत्र–से भलीभाँति परिचित होना चाहिए जिसे हम इस कार्य के लिए निरन्तर काम मे लाते है। इस बात की पहचान कर सकना अत्यन्त शिक्षाप्रद है कि प्रकृति वास्तव में क्या प्रदर्शित करती है और हमारी दृष्टिइन्द्रिय उसमे अपनी ओर से क्या योग देती है या उसमे से हटाकर वह क्या निकाल देती है। आँख की विशेषताओ का अध्ययन करने के लिए घर से बाहर के वातावरण से अधिक अनुकूल अन्य कोई वातावरण नही मिल सकता; विशेषतया जबकि प्रकृति ने हमे ऐसे ही वातावरण के लिए समानुयोजित (adapted) किया है।

५७. पानी के अन्दर देखना

क्या आपने कभी पानी के अन्दर आँखो को खुली रखने का प्रयत्न किया है? बस, थोड़ी सी हिम्मत चाहिए, फिर तो ऐसा करना काफ़ी आसान हो जाता है। किन्तु अब तैरनेवाले तालाब मे भी, जहाँ पानी अत्यन्त स्वच्छ रहता है, प्रत्येक वस्तु जिसे हम देखते है असाधारण रूप से अस्पष्ट और धुधली नजर आती है। क्योकि हवा मे तो आँख की बाहरी सतह, कोर्निया ही किरणों को एकत्र करके रेटिना पर बिम्ब का निर्माण करती है; आँख के स्फटिक लेन्स का सहयोग इस क्रिया मे थोड़ा ही होता है। किन्तु पानी के अन्दर कोर्निया की यह क्रिया बहुत कुछ इस कारण रद्द हो जाती है कि आँख के भीतरवाले द्रव और बाहर के पानी के वर्त्तनाङ्क लगभग एक दूसरे के बराबर होते है, अत किरणे कोर्निया को घेरनवाली सतह पर बिना मुड़े ही सीधी भीतर

१. इसे और अगले तीन अध्यायों को पढ़ते समय वाञ्छनीय होगा कि हेल्महोल्ट्ज़ की सुविख्यात कृति Physiologische Optik (द्वितीय या अच्छा होगा कि तृतीय संस्करण) हम देखें।

चली जाती है (चित्र ७०)। इस बात की जाँच करने का यह एक बढ़िया तरीका है कि यदि अकेले नेत्र के स्फटिक लेन्स द्वारा ही बिम्ब का निर्माण होता तो यह क्रिया कितनी अपूर्ण होती। इस दशा मे आँखों मे दूर दृष्टि का दोष इतनी बुरी तरह बढ़ जाता है कि आँख को फोकस करने के सभी प्रयत्न एक तरह से व्यर्थ ठहरते हैं, अतः प्रकाश-सूत्र को चाहे किसी भी दूरी पर क्यो न रखे, हर हालत मे यह धुधला ही दीखता है।



चित्र ७०—जब पानी के अंदर देखते है तो आँखों में बिम्ब का निर्माण नहीं होता है।

मोटी रेखाएँ—पानी के अंदर देखते समय प्रकाश-किरणों का पथ।

बिन्दु रेखाएं—वायु में देखते समय प्रकाश-किरणें।

चीजो को पहचान सकने का एकमात्र तरीका यह रह जाता है कि उन्हे आँख के इतने निकट रखे कि वे आँख पर काफी बडा कोण बनाये, अवश्य इस दशा मे अनिवार्य रूप से मौजूद बिम्ब का धुधलापन उतनी बाधा नही पहुँचाता।

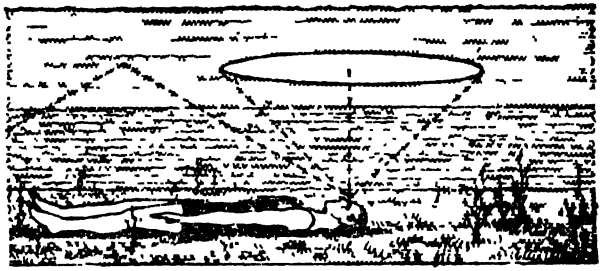
स्वच्छ पानी के अन्दर फ़ार्दिंग का सिक्का करीब एक हाथ की दूरी (२५ इच) पर दीखने लगता है, तथा लोहे का पतला तार तो किसी भी फासले पर नही दिखलाई देता। इसके प्रतिकूल कोई भी तैरता हुआ व्यक्ति १० गज के फासले पर भी दिखाई दे जाता है, क्योंकि इतने बड़े आकार की वस्तु ध्यान आकृष्ट कर ही लेती है। मोटे तौर पर v लम्बाई की वस्तु अधिक से अधिक $30v$ की दूरी पर से देखी जा सकती है, तथा इसकी शक्ल $5v$ के फासले से पहचानी जा सकती है, किन्तु वास्तविक अर्थो मे इसे ठीक-ठीक देख सकना तभी सम्भव है जब इसकी दूरी इसके आकार के लगभग बराबर हो जाय।

पानी के अन्दर निगाह को बाहर की तरह की औसत दृष्टिक्षमता प्रदान करने के लिए हमें बहुत ही अधिक शक्तिवाले चश्मे की आवश्यकता पड़ेगी। लेकिन दुर्भाग्य-वश काँच के चश्मे पानी के अन्दर हवा की तुलना मे केवल एक चौथाई ही प्रभाव उत्पन्न कर पाते है। और भी बुरी बात तो यह है कि इतनी अधिक शक्ति के लेन्स आँख के निकट चन्द मिलीमीटरो की दूरी पर रखे जाने पर अपना पूरा प्रभाव उत्पन्न नही कर पाते है! इन सब बातों को ध्यान मे रखते हुए यह आवश्यक होगा कि शक्ति

१०० का लेन्स इस्तेमाल करे अर्थात् इसका फोकस अन्तर $\frac{1}{2}$ इंच हो ! सूती कपड़े के धागे की जाँच के लिए काम मे आनेवाले गणकयंत्र का लेन्स उपयुक्त होगा।

इस बात पर ध्यान दीजिए कि पानी के अन्दर कोरी आँखों से देखे या फिर लेन्स वाले चश्मे लगाकर, दोनो ही दशाओ मे दूरी का अन्दाज लगाना समानरूप से कठिन होता है। वस्तुएँ अस्पष्ट तथा भूतप्रेतों-जैसी दीखती है।

पानी के अन्दर डूबी हुई स्थिति से ऊपर की ओर भी देखना चाहिए। बाहर से आनेवाली प्रकाश-किरणे पानी के अन्दर प्रवेश करते समय ऊर्ध्व दिशा से अधिक से अधिक ४५° का कोण बनाती है अतः आपके सिर के ऊपर प्रकाश का एक बड़ा वृत्त दीखेगा, और यदि आप तिरछी दिशा मे देखे तो आँख से चलनेवाली किरणों का पानी की सतह पर पूर्ण परावर्त्तन होगा और आपको केवल धुधली रोशनी से प्रकाशित पेदे की भूमि का ही प्रतिबिम्ब दिखलाई पड़ेगा (चित्र ७१)। मछलियों को हमारी दुनिया बस इसी तरह की दीखती है !



चित्र ७१—**एक क्षण के लिए दृश्य को हम उसी प्रकार देखते हैं, जिस प्रकार मछलियाँ !**

पानी के भीतर से दिखाई देनेवाले दृश्य का अत्युत्तम आभास प्राप्त करने का एक तरीका यह है कि पानी मे सीधे खड़े हो जाइए और इस बात की विशेष सावधानी वरतिए कि पानी मे हिलोरे न उठने पाये। अब पानी के अन्दर एक दर्पण को तिरछी स्थिति मे रखिए। आप देखेगे कि किस प्रकार पानी के बाहर की सभी चीजें ऊर्ध्व दिशा मे दबी हुई जान पडती है और क्षितिज के जितने ही अधिक निकट होती है उतनी ही अधिक वे दबी हुई जान पड़ती है, तथा प्रत्येक वस्तु में सुन्दर रंगीन हाशिया नजर आता है।

५८. नेत्र के आन्तरिक भाग कैसे दृष्टिगोचर हो सकते हैं ?

एक अभ्यस्त निरीक्षक स्वयं अपनी आँख का पीतबिन्दु (रेटिना का केन्द्रीय, सबसे अधिक सुग्राहक स्थल) देख सकता है, जो एक ऐसे अधिक गहरे रंग के छल्ले से घिरा होता है जिसमे [illegible] मौजूद नही होती है।[1] सन्ध्या को, बाहर कुछ समय व्यतीत कर लेने के बाद, बादलविहीन, खुले विस्तृत आकाश को ठीक उस वक्त देखिए, जब प्रथम तारे प्रगट हो रहे हों। अपनी आँखे कुछ सेकण्डो के लिए बन्द रखिए और फिर आकाश की ओर मुँह करते हुए उन्हे फुर्ती के साथ खोलिए। सबसे पहले, अन्धकार दृष्टिक्षेत्र की परिधि पर विलुप्त होगा और फिर तेजी के साथ यह केन्द्र की ओर सिकुडेगा जहाँ पीतबिन्दु, गहरे रंग के हाशिये सहित दिखाई भर दे जाता है और कभी-कभी एक लमहे के लिए इससे चमक भी फूट निकलती है।

यदि एक ऊँचे कटघरे के बगल मे आप चले और उस पर तेज सूर्य की रोशनी पड रही हो, तो सूर्य की रोशनी प्रति सेकण्ड कई बार आपकी आँखों मे चमक के रूप मे पहुँचेगी। यदि आप ठीक सामने की ओर देखते रहे और सूर्य की ओर दृष्टि न डाले तो आप यह देखकर आश्चर्यचकित होगे कि प्रत्येक चमक के साथ काली पृष्ठभूमि पर चमकीले अनियमित धब्बों, जालीदार नमूनो और हाशिये की लकीरों की अस्पष्ट शक्ले प्रगट होती हैं।[2] सम्भव है कि ये रेटिना के कपितय भाग हों जो इस असामान्य तरीके की प्रकाश-व्यवस्था मे दिखाई पड़ जाते है।

५८ क. रात्रि की निकट-दृष्टि

सन्ध्या के धुंधलके मे अक्सर चलने-फिरने वाले व्यक्ति ने देखा होगा कि प्रकाश ज्यों-ज्यों कम होता जाता है त्यो-त्यों उसकी आँख अधिक निकट दृष्टा होती जाती है। आप अपनी आँखो की सविधान शक्ति की तबदीली आसानी से नाप सकते है। मान लीजिए कि सामान्य परिस्थितियो मे कदाचित् चश्मे की सहायता से दूर की वस्तुओ को बहुत ही स्पष्ट आप देख सकते हैं जबकि आँखे पूर्ण रूप से विश्रान्त होती है। अब यदि सन्ध्या के धुंधलके मे आप केवल १ मीटर दूरी की वस्तुएँ देख सकते हैं तो आपकी निकट दृष्टि १ डायप्टरी की है, यदि २ मीटर तक देख सकते हैं तो निकट दृष्टि $\frac{1}{2}$ डायप्टरी

१. हेल्महोल्ट्ज कृत Physiologische Optik

२. यह प्रेक्षण सम्भवतः पर्किन्जे की धूप-छाँह आकृति से मेल खाता है (हेल्महोल्ट्ज Physiologische Optik)।

की होगी। औसत प्रेक्षक के लिए रात्रि की निकट दृष्टि 0.6 D की होती है, किन्तु अनेक दशाओ में यह 2D तक पहुँच जाती है।

इस घटना की व्याख्या भिन्न-भिन्न प्रकार से की गयी है—

(१) प्रदीप्ति जब घटती है तो आँख की पुतली फैल जाती है और नेत्र-लेन्स के हाशिये वाले भाग प्रतिबिम्ब-निर्माण मे अधिक महत्वपूर्ण भाग लेते हैं और केन्द्रीय भागों की अपेक्षा ये अधिक मात्रा मे निकट-दृष्टि उत्पन्न करते हैं। दूसरे शब्दो मे घटना का कारण नेत्र का गोलीय विपथन है।

(२) दिन के समय हमारी आँखे पीली किरणो के लिए सबसे अधिक संवेदी होती है जबकि सन्ध्या के धुंधलके मे महत्तम सवेदिता हरे-नीले प्रकाश की ओर हट आती है (§७६)। किन्तु आँख किसी भी साधारण लेन्स की भाँति पीली किरणों की अपेक्षा हरी-नीली किरणो का अधिक मात्रा मे वर्त्तन करती है : अत हरे-नीले प्रकाश के लिए हमारी निकट दृष्टि करीब 0.5 D अधिक होती है। अत. रात्रि की निकट दृष्टि आँख के वर्णविपथन दोष के कारण होती है। उन दशाओ के लिए जिसमे [illegible] तक की निकट दृष्टि के लिए कारण ज्ञात करना है, हमे किसी अन्य व्याख्या की तलाश करनी होगी।

५८ ख. अन्धबिन्दु

नेत्र-रेटिना के बारे मे एक और महत्त्वपूर्ण बात उसका 'अन्धबिन्दु' है जहाँ चाक्षुप-शिरा नेत्र मे प्रविष्ट होती है—इस बिन्दु पर प्रकाश-सवेदी कोप नही पाये जाते। यह स्थल पीतबिन्दु से नाक की ओर लगभग १५° की दूरी पर स्थित होता है। अतः दृष्टिरेखा से १५° की दिशा मे बायी ओर हटी हुई वस्तु हमारी बायी आँख के लिए अदृष्टिगोचर हो जायगी और उतनी ही दाहिनी ओर हटी हुई वस्तु दायी आँख के लिए अदृष्टिगोचर हो जायगी। तारो का अवलोकन करते समय यह बात भलीभाँति देखी जा सकती है।

उस वक्त तक प्रतीक्षा करिए जब तक कि सप्तर्षि मण्डल के तारे δ तथा η एक-सी ही ऊँचाई पर न आ जायँ। भारत मे ऐसा जनवरी-फरवरी की सन्ध्या को होगा। यदि दाहिनी आँख की दृष्टि आप मन्द रोशनी के नक्षत्र δ पर गड़ाएँ तो आप देखेंगे कि चमकीला तारा η विलुप्त हो जाता है! (देखिए चित्र ६१; 3.6 तथा 2.2 श्रेणी सख्या के तारे) इसके लिए आवश्यक हो सकता है कि आप को अपना सिर थोड़ा दाहिने या बायें झुकाना पड़े। अन्य उदाहरण आसानी से मिल सकते हैं; जैसे सप्तर्षि

मण्डल के नक्षत्र α तथा ζ, मृगशिरा के β तथा γ; तथा अभिजित और γ कालिय (ड्रैकोनिस) आदि।

सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह है कि सामान्यत. दृष्टिक्षेत्र के इस 'छिद्र' का हमें भान भी नही होता; कारण यह है कि हमारी आँखे एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर फुदकती रहती है और फिर हमारे पास दो आँखे होती है!

५९. आँख द्वारा बनने वाले अपूर्ण बिम्ब

तारे हमे पूर्ण बिन्दु सरीखे नही दिखाई देते, बल्कि टेढी-मेढ़ी अनियमित शक्ल के ये दीखते है, अक्सर एक प्रकाशबिन्दु की भाँति जिससे किरणे चारों ओर निकल रही हो। आम तौर पर तारे को प्रदर्शित करने के लिए प्रकाबिन्दु से पाँच किरणे निकलती हुई दिखायी जाती है, जो वास्तविकता के अनुकूल नही है। इस प्रयोग के लिए सबसे चमकीला तारा चुनिए, जैसे लुब्धक या और भी अच्छा होगा यदि शुक्र या वृहस्पति ग्रह को ले क्योकि इनके बिम्ब की चकरी इतनी छोटी होती है कि उसे हम बिन्दु मान सकते है और फिर इनकी द्युति सबसे अधिक चमकीले तारे से भी अधिक होती है।

सिर एकतरफ़ हटाइए, पहले दाहिनी ओर, फिर बायी ओर; अब इसी के अनुसार बिम्ब भी एक ओर, फिर दूसरी ओर खिच उठता है। यह प्रभाव विभिन्न व्यक्तियो के लिए विभिन्न मात्रा मे उत्पन्न होता है तथा उसकी प्रत्येक आँख के लिए भी यह भिन्न होता है। लेकिन एक आँख को हाथ से बन्द करके आप दूसरी आँख से यदि विभिन्न तारों को देखे तो आप को सदैव एक सी ही शक्ल दिखाई देगी।

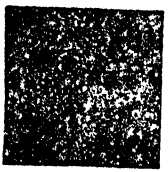
इससे यह सिद्ध होता है कि स्वयं तारे टेढ़ी-मेढ़ी शक्ल के नही है बल्कि यह तो हमारी आँखों का दोष है जो बिन्दु को ठीक बिन्दु के रूप मे निरूपित नही कर पाती।

किरणे उस वक्त और भी लम्बी और बेतरतीब हो जाती है जबकि आँख के गिर्द वातावरण अन्धकारमय हो; और इस कारण आँख की पुतली फैली हुई हो। पर्य्याप्त प्रकाश के वातावरण मे, जब कि पुतली सिकुड कर एक छोटे सूराख़ की शक्ल अख्तियार कर लेती है, ये किरणें लम्बाई मे छोटी हो जाती है। वास्तव मे गुल्स्ट्रैण्ड ने यह सिद्ध किया है कि आँख का स्फटिक लेन्स उन शिराओं के कारण जिनसे यह जुड़ा होता है, हाशिये पर ही आम तौर पर विकृत हो जाता है, अतः प्रकाशकिरणे जब हाशिये वाले भाग में से गुजरती है तो बिम्ब की स्पष्टता कम हो जाती है।

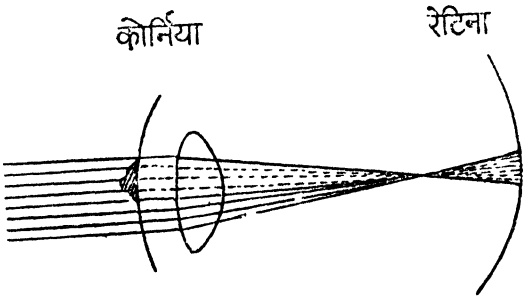
कागज का तख्ता लेकर उसमे १ मिलीमीटर व्यास का सूराख़ करिए, और तख़्ते को आँख की पुतली के सामने रखिए। थोड़ी तलाश करने पर लुब्धक तारा या कोई ग्रह

अवश्य आप को आकाश मे मिल जायगा। कागज के पीछे से उसे देखने पर आप पायेगे कि प्रतिबिम्ब पूर्णतया गोल है। अब सूराख को पुतली के हाशिये की तरफ़ हटाइए तो विम्ब का प्रकाशविन्दु अनियमित रूप से विकृत हो जाता है। अपने प्रयोग मे मैने पाया कि प्रकाशविन्दु पुतली की त्रिज्या की दिशा मे एक लकीर की शक्ल में खिंच उठता है।

अनेक व्यक्तियों को हँसिया के आकार वाले चन्द्रमा की कोरे दुहरी तिहरी दिखाई देती हैं। प्रतिविम्ब में अस्पष्टता के ये दोष मुख्यतः कोर्निया की सतह की क्षुद्र विकृतियो के कारण उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार के आकृति-दोप निकट दृष्टि वाले व्यक्ति को भी चश्मा उतार देने पर दिखाई देते हैं (चित्र ७२); दूर का प्रत्यक्ष लैम्प प्रकाश की चकरी जैसा दीखता है जिसमे दीप्ति का वितरण अत्यन्त ही असम होता है। यदि पानी वरस रहा हो तो आपको रह रह कर नन्ही प्रकाश चकरी पर अचानक एक छोटा गोल गोल धब्बा दीख जायगा, कारण यह है कि कोर्निया की सतह का कुछ भाग पानी की बूँद से ढक जाता है (चित्र ७३)। आप देखेगे कि पूरे १०



चित्र ७२—**निकट दृष्टि वाले व्यक्ति को बिना चश्मे के, तारा या दूर का लेम्प इस प्रकार दीखता है।**



चित्र ७३—**निकट-दृष्टि वाली आँख बिना चश्मे के दूर के लैंप को छोटे अनियमित मंडलकों के रूप में देखती है। कोर्निया पर स्थित वर्षा की बूँद एक काले धब्बे की शक्ल में निरूपित होती है।**

सेकण्ड तक यह धब्बा अपनी शक्ल बनाये रख सकता है वशर्ते इतनी देर तक आप बिना पलक झपकाये देखते रह सकें !

बहुत दूर की मोटरकार-लैम्प की चकाचौध उत्पन्न करन वाली रोशनी जब आँखों पर पड़ती है तो उस तीव्र प्रकाशबिन्दु के गिर्द, समूचा दृष्टिक्षेत्र धुधले प्रकाश से भर जाता है जिसमे धारियाँ सी पडी होती है या कभी-कभी त्रिज्याओं की दिशा मे धारियाँ प्रगट होती हैं। बिम्ब की यह सरचना, आँख की आकृति के अनेक दोषों के कारण होने वाले विवर्त्तन या वर्त्तन से उत्पन्न होती है। लम्बी सकरी नली की शक्ल के सोडियम लैम्प भी प्रकाश-स्रोत के गिर्द धुँधले प्रकाश की चमक देते हैं, किन्तु इस चमक मे बारीक रेखाएँ दीखती हैं जो प्रकाश-स्रोत के ठीक समानान्तर स्थित होती हैं, क्योंकि विवर्त्तन उत्पन्न करने वाली प्रत्येक कणिका बिन्दु के बजाय प्रकाशरेखा का निर्माण करती है।

६०. किरणों के समूह जो तेज चमक वाले प्रकाश-स्रोत से विसर्जित होते जान पड़ते हैं

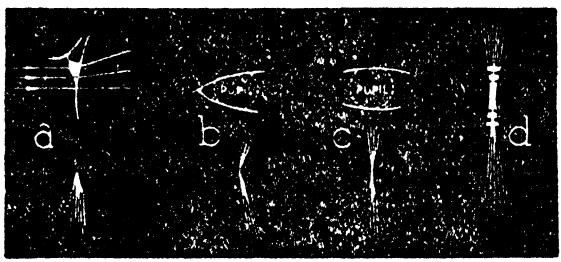
दूर के लैम्प से अक्सर लम्बी सीधी किरणे हमारी आँखों की ओर आती हुई जान पड़ती हैं, विशेषतया उस वक्त जबकि हम उन्हे अधखुली आँखो से देखते हैं। प्रत्येक पत्रक के हाशिये के किनारे पर अश्रु द्रव एक नन्हे लवचन्द्रक[1] का निर्माण करता है जिससे प्रकाश की किरणो का वर्त्तन हो जाता है।[2] चित्र ७४ a मे दिखलाया गया है ऊपर की पलक से किरणे इस प्रकार से वर्त्तित होती हैं कि वे नीचे की ओर से आती हुई प्रतीत होती है; अतः प्रकाश-स्रोत मे नीचे की ओर पूँछ सी लगी दीखती है। इसी प्रकार नीचे की पलक के कारण प्रकाश-स्रोत मे ऊपर की ओर पूँछ बन जाती है। इन पूँछो के निर्माण की क्रिया इस प्रकार भलीभाँति समझी जा सकती है; एक पलक को दबाकर बन्द कर लीजिए और दूसरी को धीरे-धीरे बन्द करिए, या आँख को अधखुली रख कर सिर को ऊपर-नीचे डुलाइए। किरणे ठीक उस क्षण प्रगट होती हैं जब पलक पुतली को ढकना शुरू करती है। निकट-दृष्टि वाले प्रेक्षक को यह घटना आसानी से दीख जाती है क्योकि प्रकाश-स्रोत जो उसे एक फैली हुई चकरी की शक्ल का दीखता है, आंशिक रूप से उस क्षण छिप जाता है।

ये किरणे पूर्णतया समानान्तर नही होती, एक आँख तक पहुँचने वाली किरणे भी पूर्णतया समानान्तर नही होती। सामने स्थित प्रकाश-स्रोत को देखिए और फिर अपने सिर को दाहिनी ओर थोड़ा घुमा लीजिए और तब अपनी आँख इस तरह वापस

1. Meniscus 2. H. Meyer, Pogg Ann, **89**, 429, 1853

घुमाइए कि प्रकाश-स्रोत आप को पुनः दीख जाय। किरणे अब तिरछी दीखेंगी (चित्र ७४, b)। प्रगटतः इसका कारण यह है कि पलक के हाशिये जो इस वक्त पुतली के सामने हैं, अब क्षैतिज नही रहे और किरणो का प्रत्येक समूह, उसे उत्पन्न करने वाली पलक के हाशिये के समकोण ही पड़ता है; प्रेक्षण मे प्राप्त दिशा ठीक इस व्याख्या के अनुसार ही मिलती है। अब यह बात समझी जा सकती है कि क्यों जब हम सीधे सामने की ओर देखते है तो किरणे समानान्तर नही होती है, क्योंकि केवल पुतली की चौड़ाई के विस्तार मे भी पलक की वक्रता का बोध हमे हो जाता है। अपनी उँगली पुतली के दाहिने छोर के सामने रखिए तो समूह की बाये तरफ की किरणे विलुप्त हो जाती है, ठीक जैसा कि उन्हे करना चाहिए था।

लम्बी पूँछ सरीखी किरणों के अलावा (चित्र ७४,c) अत्यन्त चमकीली, कुछ छोटी किरणे भी दीखती है जो पलको के किनारे से होनेवाले परावर्त्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होती है (चित्र ७४, d)। प्रयोग द्वारा इस बात का इतमीनान करिए कि इस



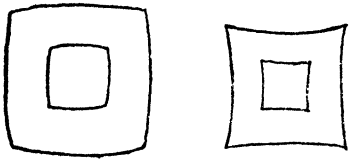
चित्र ७४, a–d—**दूरस्थ लैंप के गिर्द प्रकाशकिरणें किस प्रकार उत्पन्न होती है।**

बार ऊपर की ओर की नन्ही पूँछ ऊपरी पलक द्वारा उत्पन्न होती है तथा नीचे की पूँछ नीचेवाली पलक द्वारा। साधारणतया इन परावर्त्तित किरणों मे विवर्त्तन के आड़े नमूने प्रगट होते हैं।

६१. चश्मे के काँच से उत्पन्न प्रकाशीय घटनाएँ

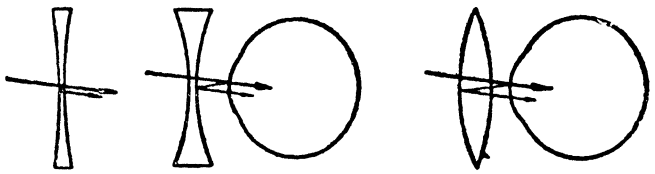
चश्मे के मामूले लेन्स मे से तिरछी दिशा मे देखने पर रेखाएँ विकृत हो जाती है। लेन्स जब अवतल होते है तो हमें 'बैरल-विकृति' मिलती है और उत्तल लेन्स द्वारा

'पिनकुशन' विकृति पैदा होती है (चित्र ७५)। भूमि के दृश्य मे जब यह मालूम करना हो कि दिखाई देने वाली रेखा पूर्णतया सीधी है, या ऊर्ध्वतल मे है तो प्रतिबिम्ब की यह विकृति विशेष रूप से परीशानी उत्पन्न करती है। दृष्टिक्षेत्र के हाशियों पर प्रतिबिम्ब की अबिन्दुकता[1] इतने अधिक परिमाण मे उत्पन्न होती है कि बिम्ब की हर किस्म की बारीकियां मिट-सी जाती है। प्रतिबिम्ब के निर्माण के ये दोष लेन्स के अधिक अवतल या अधिक उत्तल होने के अनुसार विशेष अधिक मात्रा मे उभरते है। नवचन्द्राकार लेन्सो के लिए ये दोष अपेक्षाकृत हलकी मात्रा मे प्रगट होते है।



चित्र ७५—**चश्मे के लेन्स द्वारा बिम्बों का निर्माण।**

सन्ध्या होने पर प्रज्वलित लैम्प को चश्मे मे से देखे तो लैम्प के आस-पास ही एक प्रकाश-चकरी उतराती हुई-सी दीख पड़ती है। यह विशेष स्पष्ट नही होती, किन्तु इसे यदि घूर कर देखते रहे तो आँख की सविधान क्षमता[2] अपने आप बदल जाती है और



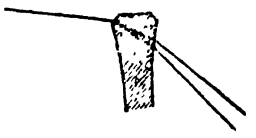
चित्र ७६—**चश्मे से देखने पर दुहरे प्रतिबिम्ब किस प्रकार बनते है।**
I कम शक्ति का लेन्स।
II अवतल लेन्स, जिनकी लेन्स शक्ति—५ से अधिक है।
III उत्तल लेन्स, जिनकी शक्ति +३ से अधिक है।

चकरी या तो हमें बड़ी होती हुई दिखाई पड़ती है या फिर आकार मे घटती हुई। आँखों से चश्मा उतार कर यदि उसे आँख से कुछ फासले पर रखे तो यह चकरी एक प्रकाश

1. Astigmatism 2. Accomodation

बिन्दु की शक्ल की दीखने लगती है जो स्पष्टतः स्वयं उस लैम्प का अत्यन्त छोटे आकार का प्रतिबिम्ब है। यदि तीन लैम्पों के एक समूह को देखें तो पता चलेगा कि प्रतिबिम्ब सीधा बनता है। यह निम्नलिखित से स्पष्ट है--प्रकाश की चकरी लेन्स की सतहों या आँख की कोर्निया की सतहों पर होने वाले दो बार के परावर्त्तन के फलस्वरूप निर्मित होती है। वास्तव में तीन चकरियाँ नजर आनी चाहिए, किन्तु ये तभी दिखाई दे सकती हैं जबकि ये बहुत अधिक अस्पष्ट न हों। व्यवहार मे, दिये गये चश्मे के लिए केवल एक ही प्रकार का दुहरा परावर्त्तन घटित होता है (चित्र ७६)।

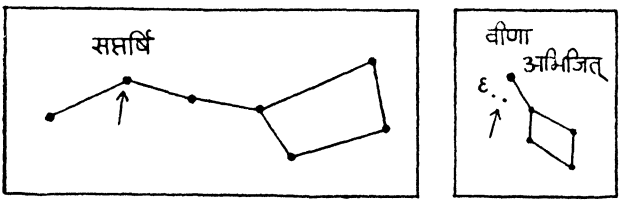
बिना फ्रेम वाले चश्मे के लेन्स जिनके हाशिये सम बना लिये गये हों कभी-कभी किनारों पर सँकरा वर्णक्रम प्रदर्शित करते हैं (चित्र ७७) जो दूर के लैम्प के प्रकाश के कारण उत्पन्न होते हैं। चश्मे के लेन्स पर वर्षा की बूँद के प्रभाव के लिए देखिए §११८।



चित्र ७७—**चश्मे के लेन्स द्वारा स्पैक्ट्रम किस प्रकार बनता है।**

६२. दृष्टि की सूक्ष्मता

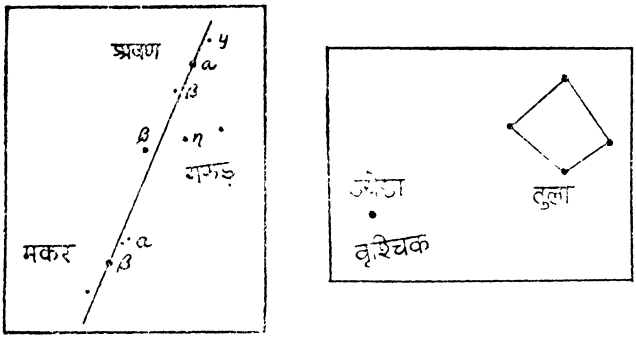
सामान्य आँखो के लिए सप्तर्षि-मण्डल के तारे वशिष्ठ और अरुन्धती को, जो लगभग १२′ के कोणीय अन्तर पर हैं, पहचानने मे तनिक भी कठिनाई नही होती (चित्र ६१, ७८ क)। अब प्रश्न यह है दृष्टि की यह सूक्ष्मता और अधिक कितनी



चित्र ७८ क—**दूर-दूर स्थित कुछ युग्म तारे।**

बारीकी तक हमे ले जा सकती है? तीक्ष्ण निगाह वाले व्यक्ति इससे आधी कोणीय दूरी पर स्थित दो बिन्दुओं को अलग-अलग पहचान सकते हैं जैसी कि युग्म नक्षत्र अल्फ़ा कैप्रिकार्नि (मकर तारा समूह) के दोनों तारे के बीच की दूरी है; यह कोणीय दूरी ६′ है तथा तारो के श्रेणी सूचक अंक क्रमशः ३.८ तथा ४.५ हैं।

बिरले ही व्यक्ति ४′ या ३′ मिनट के कोणीय अन्तर वाले दो बिन्दुओं को एक दूसरे से पृथक् देख सकते हैं।



चित्र ७८ ख—**कुछ अन्य युग्म तारे।**

अल्फ़ा लिब्रा (तुला) के सदस्य नक्षत्रो का कोणीय अन्तर ४′ है तथा उनके श्रेणी सूचक अंक क्रमशः २ ८ तथा ५.३ हैं।

ε लीरा (वीणा) के सदस्य नक्षत्रो का कोणीय अन्तर ३′ तथा श्रेणी-सूचक अक क्रमशः ५.३, तथा ६.३ हैं।

विशेष निपुण प्रेक्षक, जिनकी सख्या बहुत कम ही है, खुले आकाश मे जब कि वायुमण्डल शान्त रहता है, आश्चर्यजनक रूप से अधिक सूक्ष्म बारीकियों को देख सकने में समर्थ होते हैं। इनमे से एक का दावा है कि नगी आँखो से वह तुला राशि के अल्फ़ा तारे को एक युग्म तारे के रूप मे देख पाता है (दोनों तारो का कोणीय अन्तर ४′)। ऐसे प्रेक्षक के लिए शनि स्पष्ट रूप से चिपटा दीखता है तथा शुक्र उपयुक्त अवसरो पर नव-चन्द्राकार दीखता है बशर्ते वह कालिख लगे काँच मे से उसे देखे या सही परिमाण की पारदर्शिता वाले धुएँ के बादल मे से। वह वृहस्पति के दो उपग्रहो को भी देखने मे समर्थ होता है, यद्यपि केवल शाम के झुटपुटे के ही वक्त, जबकि प्रथम और द्वितीय श्रेणी के तारे प्रगट होना आरम्भ करते हैं।

सन्ध्या के झुटपुटे की बेला अन्य प्रेक्षणों के लिए भी उत्तम ठहरती है। उदाहरण के लिए उस क्षण चन्द्रमा के धरातल की विशेषताएँ रात की बनिस्बत बहुत अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ती हैं, क्योंकि तब आँखों को उतनी चकाचौध का सामना नहीं करना पड़ता है।

अवश्य यह एक दिलचस्प प्रयत्न होगा कि अमावस्या के बाद यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र पतले नाखूनी शक्ल के चन्द्रमा का अवलोकन करे। कुछ प्रेक्षकों ने तो अमावस्या के बाद केवल ११ घण्टों के अन्दर-अन्दर चन्द्रमा को देख लिया है। अवश्य इसके लिए यह अत्यन्त जरूरी है कि हमें पता हो कि चन्द्रमा के अवलोकन के लिए हमे देखना किधर है। हमारे अपने देश (हालैण्ड) मे इस अवसर पर सूर्य्य को क्षितिज से कम से कम ८° नीचे अवश्य होना चाहिए। आँख की परिमित विभेदनशक्ति से यह समझा जा सकता है कि दूर हटती हुई वस्तु का दृश्य रूप उत्तरोत्तर बदलता क्यों जाता है। ५० मीटर की दूरी पर वृक्ष की पत्तियो की शक्ल अब पहचानी नहीं जा सकती, यद्यपि आकाश की पृष्ठभूमि पर विपर्यास के कारण ये स्पष्ट अवश्य उभरती है, वृक्ष की चोटी का हाशिया धुँधला दीखता है। किन्तु १० किलोमीटर की दूरी पर जंगल की ऊपरी सीमा-रेखा उतनी ही तीक्ष्ण दीखती है जितनी एक पथरीली पहाडी की सीमा-रेखा। वायुमण्डल के कारण उत्पन्न धुँधलेपन के कारण विपर्यास कुछ मन्द पड़ जाता है, किन्तु सीमारेखा स्पष्ट बनी रहती है।

फासले से एक व्यक्ति आप की ओर चला आ रहा है। पहले उसका चेहरा आप को एक 'सफेद धब्बे' की शक्ल का दीखता है यद्यपि चेहरे के मन्द प्रकाशवाले पृथक व्योरे अभी तक दृष्टिगोचर नही हो पाते है। तदुपरान्त आप आँखे और मुँह को पहचान पाते है किन्तु न होंठ न भौहे आप देख पाते है, यद्यपि आप को आभास मिल जाता है कि चेहरे पर तीन मन्दप्रकाश के धब्बो के अतिरिक्त और कुछ भी मौजूद है। क्षण भर बाद ही आप पहचानने लग जाते है कि यह व्यक्ति शक्ल मे आप के मित्र से मिलता-जुलता है—और फिर आप को निश्चित रूप से इतमीनान हो जाता है कि यह आप का मित्र ही है।

अत: दूर की वस्तु के प्रतिबिम्ब तथा निकट की वस्तु के प्रतिबिम्ब एक घटाये गये पैमाने पर दोनो अनन्य रूप नही होते। दूरस्थ वस्तु के प्रतिबिम्ब मे एक विशिष्ट और रोचक ढंग की तब्दीली आ जाती है। बिम्ब मे सर्वत्र ऐसे व्योरे मौजूद रहते है जिन्हें आँख देख पा सकने मे बस असमर्थ भर रह जाती है, किन्तु उनका अनुमान लगा लेती है और जो उस वस्तु की सरचना बतलाते है।

६३. दृष्टिक्षेत्र के केन्द्रीय, तथा परिधिवाले भागों की सुग्राहिता

न्यूनतम प्रकाश वाले कौन से तारे ऐसे है जो आप की दृष्टि की पकड़ में आ पाते है? सप्तर्षि-मण्डल की वर्ग आकृति को देखिए और फिर हमारे चित्र ६१ से उसकी तुलना करिए। अधिकाश लोग छठी दीप्ति श्रेणी तक के सितारे देख पाते है और कुछ

लोग सातवी श्रेणी तक के तारे भी देख सकते हैं। ये सभी प्रेक्षण शहर से बाहर खुले आकाश मे किये जाने चाहिए।

अब हम यह मालूम करने का प्रयत्न करेगे कि यदि हम तारों की ओर बिलकुल सीधे, दृष्टि जमा कर देखे तो उनमे से कौन-से तारे दृष्टिगोचर बने रह जाते है। तारे पर से निगाह को इधर-उधर बहकने न देकर दृष्टि को ठीक उस पर सीधे ही जमाये रखने के लिए कुछ थोड़ी इच्छा-शक्ति की जरूरत होती है। आप को यह देख कर आश्चर्य्य होगा कि मन्द प्रकाश का प्रत्येक तारा ज्योही उसे आप ध्यान से घूरते हैं, विलुप्त हो जाता है और वहाँ से नजर के जरा-सा इधर-उधर हटते ही वह तारा पुनः प्रगट हो जाता है! व्यक्तिगत रूप से मेरी आँखों के लिए तो चतुर्थ श्रेणी के तारे भी इस प्रयोग मे विलुप्त हो जाते हैं जबकि तृतीय श्रेणी तक के तारे दीखते रहते है, (देखिए चित्र ६१, ६२)।

अत. पीत बिन्दु के लिए, तथा उसके गिर्द के रेटिना के लिए प्रकाश-अनुभूति की न्यूनतम सीमाओं मे करीब-करीब ३ दीप्तिश्रेणी इकाइयों का अन्तर है, जिसका अर्थ है कि इन सीमाओं के लिए प्रकाश-तीव्रताओं की निष्पत्ति १६ होगी! प्रकाशिक सुग्राहिता का यह अन्तर इस कारण उत्पन्न होता है कि पीत बिन्दु का केन्द्रीय भाग लगभग पूरे का पूरा, नन्हे शुकओ के आकार की क्षुद्र कोपिकाओं से बना होता है जबकि हाशिये के निकट की रेटिना की सतह नन्हे दण्डाकार कोषों से बनी होती है जोकि अपेक्षाकृत बहुत अधिक सूक्ष्मग्राही होते है। अनुभव-प्राप्त प्रेक्षक भी इस प्रभाव की मात्रा देखकर आश्चर्य्यचकित रह जाता है—क्योंकि वास्तव मे हम इस बात के अत्यन्त अभ्यस्त हो गये है कि नक्षत्र का अवलोकन और अच्छी तरह करने के लिए हम अनजाने ही अपनी दृष्टि को उसके इधर-उधर बहक जाने देते है।[१]

भलीभांति प्रकाशित कमरे मे कुछ देर ठहरने के उपरान्त जब बाहर रात के अधेरे मे हम जाते हैं तो हलकी प्रदीप्ति के स्तर के प्रति अपने को समुपयोजित करने मे आँख को कुछ देर लगती है। पहले पुतलियाँ फैलती है, [illegible] हो जाती है और अब इसके बाद से हम तृतीय तथा चतुर्थ कोटि के तारे देखने लग जाते हैं बशर्त्ते हम उन पर आँख गड़ाये रखे—यह सीमा अब और आगे नहीं बढ़ पाती किन्तु अप्रत्यक्ष दृष्टिक्षेत्र मे धीरे-धीरे और अधिक मन्द प्रकाश वाले तारे दृष्टिगोचर

१ एडगर ऐलन पो ने लिखा है कि 'यदि दृष्टि गडा कर देखते रहे तो शुक्रग्रह तक दृष्टि से ओझल हो जाता है' (The Murders is the Rue Morque), किन्तु यह सत्य नही हो सकता।

होने लग जाते हैं और आध घण्टे उपरान्त इस अनुभूति की सीमा आन पहुँचती है। प्रकाश्यतः शंकु अन्धकार के प्रति अपना समुपयोजन कर लेते हैं।

इस बात का पता लगाना महत्त्वपूर्ण होगा कि तड़के सुबह को किसी तारे या ग्रह (जैसे शुक्र) को कब तक देखा जा सकता है। आकाश का प्रकाश ज्यों-ज्यों बढ़ता है त्यों-त्यों उस प्रकाश-बिन्दु को पहचान पाना और कठिन होता जाता है—एक अद्भुत बात यह होती है कि अकसर वह तारा दृष्टि से ओझल हो जाता है केवल इस कारण कि हम सही दिशा मे देख ही नही रहे है, यद्यपि पुनः दृष्टि की पकड़ में आ जाने पर वह स्पष्ट रूप से दिखलाई देने लग जाता है। नीले आकाश में चहचहाती हुई नन्ही चिड़िया लवा को देखने के प्रयत्न में भी इसी तरह का अनुभव होता है।

यदि प्रेक्षण सावधानीपूर्वक किया जाय तो शुक्र का अवलोकन पूरी तरह दिन निकल आने तक किया जा सकता है और फिर सारे दिन इसे हम देखते रह सकते हैं। कभी-कभी वृहस्पति के लिए भी ऐसा ही किया जा सकता है किन्तु इसमे कठिनाई अपेक्षाकृत बहुत अधिक है—बिरले ही मौको पर क्षितिज से ऊपर सूर्य के १०° की ऊँचाई तक पहुँचने के समय तक वृहस्पति को देखते रहना सम्भव हो सका है। मङ्गल को उस वक्त देख सकते हैं जब सूर्य क्षितिज के निकट ही हो।

ये प्रेक्षण विशेषतया उस वक्त किये जाने चाहिए जब ग्रह चन्द्रमा के निकट हो; विस्तृत नीले आकाश मे तब चन्द्रमा की स्थिति की सहायता से धुँधले प्रकाशबिन्दु वाले उस ग्रह को अनन्त आकाश मे सहज ही ढूंढा जा सकता है। क्या ये प्रेक्षण तारों के प्रयोग से प्राप्त उस निष्कर्ष के खिलाफ़ नहीं जाते जिसके अनुसार हमने देखा कि नेत्र के पीत बिन्दु की दृष्टि-सुग्राहिता अपेक्षाकृत कम है? ऐसा कदापि नहीं है, क्योंकि दण्डाकार कोष केवल अत्यन्त धुँधले प्रकाश मे ही क्रियाशील होते हैं तथा दिन के प्रकाश मे ये निष्क्रिय बने रहते हैं। दिन के समय पीत बिन्दु वाला नन्हा-सा भाग अत्यन्त सुग्राही होता है, जबकि रात्रि मे आँख की पुतली के हाशिये वाले भाग सुग्राही बन जाते है।

६४. फेश्नर का प्रयोग

किसी दिन जबकि आकाश पर धुँधले, हलके किस्म के बादल छाये हों, हम अपने प्रयोग के लिए एक ऐसा बादल चुनते हैं जो आकाश की पृष्ठभूमि पर बस दीख भर

* G. Pat foort, Annals d' Optique Oculaire 2,39, 1953. विस्तारित क्षेत्रों की दृष्टि-अनुभूति की क्रियाविधि भिन्न होती है।

रहा हो। कालिख लगी हुई काँच की प्लेट या नमरूप से धुंधली पड गयी हुई फोटाग्राफी की प्लेट, अपनी आँखो के सामने रखिए, आप देखेंगे कि वही छोटा बादल अब भी अलग से पहचाना जा सकता है।

इस प्रयोग से फेश्नर ने यह निष्कर्ष निकाला कि आँख दो प्रदीप्तियो की पृथक्-पृथक् पहचान कर सकती है यदि उनका अनुपात (प्रदीप्ति का अन्तर नही) एक निश्चित तथा स्थिर मान का हो (एक प्रदीप्ति दूसरी से लगभग ५ प्रतिशत ऊची हो)।

अत्यन्त गहरे काले रग का काँच लेकर इस प्रयोग को दुहराइए। इस बार बादल नही दीखेगा और प्रकाश के सभी हलके शेड नजर से गायब हो जाते है। इससे पता चलता है कि प्रदीप्ति का वह भिन्नाश जो केवल दिखाई भर देता था, पूर्णतया स्थिर नही है।

फेश्नर के प्रयोग से मिलता-जुलता दृष्टान्त है तारों का दिन के समय विलुप्त होना। प्रदीप्ति के विचार से तारा की और उसके आसपास की चमक का अन्तर तो सदैव एक सा ही रहता है किन्तु उनका अनुपात दिन के समय रात की अपेक्षा बहुत अधिक भिन्न होता है। नियमानुसार हम कह सकते है कि नेत्रों की दृष्टि-अनुभूति मुख्यत प्रदीप्ति-अनुपात द्वारा निर्धारित होती है। दृष्टि-इन्द्रिय की यह विशिष्टता हमारे दैनिक जीवन के लिए अत्यधिक महत्त्व रखती है। इसी की बदौलत प्रकाश की विभिन्न दशाओ मे भी आस-पास की चीजो को उनकी सुनिश्चित शक्ल मे पहचाना जा सकता है।

६५. चन्द्रमा के प्रकाश में भूमि के दृश्य

यदि फेश्नर का नियम पूर्णरूप से लागू होता समझा जाय और यह मान ले कि आँखे केवल प्रकाश-तीव्रता की निष्पत्तियो की ही अनुभूति कर पाती है तो चाँदनी मे दीखने वाले भूमि के दृश्य सूर्य के प्रकाश मे दीखने वाले दृश्य से किसी भी माने मे भिन्न न होने चाहिए क्योकि चाँदनी मे यद्यपि सर्वत्र प्रकाश-तीव्रता हजारो गुनी कम होती है, फिर भी सभी वस्तुएँ करीब-करीब उसी शक्ल और उसी स्थिति के प्रकाश-स्रोत द्वारा ठीक दिन के ही तौर-तरीके से प्रकाशित हो रही होती है।

इससे स्पष्ट है कि जब प्रदीप्ति अत्यन्त क्षीण होती है तो अब इस दशा मे फेश्नर का नियम लागू नही हो पाता। चन्द्रमा के प्रकाश मे भूमि के दृश्य का अवलोकन करिए और विशेष रूप से इस बात पर ध्यान दीजिए कि दिन की तुलना मे प्रदीप्ति का वितरण कितना भिन्न है! मुख्य विशेषता यह है कि वे सभी भाग, जिन पर चन्द्रमा की रोशनी

पूरी तरह नहीं पड़ रही है, करीब-करीब समान रूप से अन्धकार मे होते है, जबकि दिन के प्रकाश मे ऐसे भागो पर विभिन्न कोटि की प्रदीप्तियाँ देखी जा सकती है। इससे यह बात समझ मे आती है कि दिन के प्रकाश मे भूमि के दृश्य का फोटो उतारते समय यदि प्लेट पर प्रकाशदर्शन कम समय तक ही देकर उस निगेटिव से फोटोप्रिन्ट गाढ़ा छाप का तैय्यार करे, तो प्रतीत होता है मानो दृश्य का फोटो चाँदनी रात मे उतारा गया हो। इसी प्रकार रात्रि के दृश्य उपस्थित करने के लिए, चित्रकार दृश्य की लगभग सभी वस्तुओ को समान रूप के गाढ़े शेड मे दिखलाते है अतः शेड के विपर्यास मे अन्तर हलका होने के कारण अनजाने ही हमे ऐसा प्रतीत होता है कि दृश्य पर अत्यन्त हलका प्रकाश पड़ रहा है।

६६. सूर्य के तेज प्रकाश में भूमि के दृश्य

गर्मी मे दिन की प्रदीप्ति, मिसाल के लिए, समुद्र तट पर इतनी प्रबल होती है कि हमारी आँखे करीब-करीब चकाचौध खा जाती है। यहाँ भी औसत प्रकाश की तुलना मे प्रदीप्ति निष्पत्तियाँ हलकी जान पड़ती है—धूप के देदीप्यमान प्रकाश मे सभी वस्तुएँ समान रूप से चकाचौध उत्पन्न करती हुई प्रतीत होती है। चित्रकार इस प्रभाव का समावेश अपने चित्रो मे अक्सर करते है (देखिए §६५)।

६७. प्रेक्षण-गम्य होने के लिए प्रदीप्ति-अनुपात का अल्पतम मान

काँच की खिडकियाँ सूर्य की रोशनी को परावर्त्तित करके सड़क की पटरी पर प्रकाश के धब्बे डालती हैं (§८)। यदि उसी पटरी पर धूप भी पड रही हो तब प्रकाश के ये धब्बे मुश्किल से दीख पड़ते है; पटरी की सतह पूरी तरह समतल नही होती है। किन्तु खिडकी को हिलाने पर या जब हमारे हिलने-डुलने पर छाया उस पर से एक फिल्म की तरह गुजरती है, तो प्रकाश का यह धब्बा तुरन्त ही दीख जाता है (क्या यह एक विलक्षण मनोवैज्ञानिक विशिष्टता नही है? निश्चय ही हमारे नेत्रो मे कुछ विशेष प्रकार की क्षमता मौजूद है जिसके कारण मन्द प्रकाश वाली घटना गत होते ही ये उसे भाँप लेती है।) काँच की प्लेट अपनी प्रत्येक सतह से ४ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित करती है, अर्थात् कुल मिलाकर ८ प्रतिशत; यदि किरणो का आयतन तिरछी दिशा से होता है तो परावर्त्तन कुछ थोड़ा और बढ़ जाता है (§५२)। अतः प्रदीप्ति मे १० प्रतिशत की वृद्धि ही वह अल्पतम सीमा है जो बिना किसी विशेष साधन के, सामान्य परिस्थितियो में, हमारी आँखों द्वारा पहचानी जा सकती है।

सूर्य से प्रकाशित दीवार के सामने यदि पानी का छोटा नाला हो, तो हम उम्मीद करते हैं कि पानी से परावर्त्तित होनेवाले सूर्य-प्रकाश का धब्बा दीवार पर दिखलाई देगा। अब यद्यपि हवा से जब पानी उद्वेलित होता है तो प्रकाश की धारियाँ तो दीवार पर हरकत करती हुई दिखाई देती हैं (§8)। किन्तु स्वयं प्रकाश का धब्बा, जबतक दीवार की सतह एकदम चिकनी सपाट न हो, मुश्किल से ही दीख पड़ता है। अतः प्रदीप्ति मे ३ प्रतिशत की वृद्धि का प्रेक्षण कर सकना केवल अत्यन्त अनुकूल परिस्थितियों मे ही सम्भव है (§८७)।

किसी शाम को दो लम्पों के दर्मियान, एक के इतने निकट खड़े होइए कि वहाँ दूसरे लैम्प के कारण बनने वाली छाया बस विलुप्त भर हो जाय। दोनो लैम्पो से अपनी दूरी नाप कर आप उनसे प्राप्त होने वाले प्रकाश की प्रदीप्ति-अनुपात का मान मालूम कर सकते है और इस प्रकार यह भी मालूम कर सकते हैं कि प्रदीप्ति में प्रतिशत अन्तर कम-से-कम कितना होना चाहिए कि उनसे बनने वाली छाया की बस पृथक् पहचान भर की जा सके (§४८)।

६८. हलके आवरण का प्रभाव

दिन में हम घूमने निकलते हैं—तो मलमल का पतला-सा लगभग पारदर्शी पर्दा, घरों के अन्दर क्या हो रहा है, इसे देखने से हमे रोक देता है। ऐसा कैसे हो जाता है? झीने आवरण वाला पर्दा बाहर की तेज रोशनी से प्रकाशित होता है, और यदि कमरे के अन्दर की चीजों की प्रदीप्ति इसकी अल्पांश ही है, तो पर्दे की एकसमान प्रदीप्ति मे अपनी ओर से ये इतनी अल्प मात्रा की वृद्धि कर पाती है कि हमारी आँख को उसकी अनुभूति नही हो पाती है—अर्थात् यहाँ फेश्नर के नियम के लागू होने का एक दृष्टान्त हमे प्राप्त होता है (§६४)।

रात को जबकि कमरे के अन्दर रोशनी होती रहती है, आप पर्दे मे से भीतर बखूबी देख सकते हैं। पर्दे की हमारी ओर की सतह करीब-करीब अँधेरे में ही रहती है और इस कारण वह कमरे के अन्दर की विभिन्न प्रदीप्ति वाली चीजों पर अपनी ओर से अत्यन्त क्षीण प्रकाश ही डाल पाती है।

कमरे के अन्दर से बाहर की ओर देखने वाले व्यक्तियों के लिए दोनों ही दशाओं में ठीक उलटा असर होता है। इसी तरह की घटना उस वक्त होती है जब चाँदनी रात मे स्पष्ट दीखने वाला वायुयान, सर्चलाइट की रोशनी फेंकते ही अदृश्य हो जाता है! हमारी आँख और वायुयान के दर्मियान की वायु तेज चकाचौंध उत्पन्न करने वाली

रोशनी से प्रकाशित होती है, तो उसके पीछे स्थित वायुयान पर प्रदीप्ति का विपर्यास हलका होने के कारण वह आँखो के लिए अदृश्य बन जाता है।

६८ क. गिर्जाघर की रंगीन काँच की खिड़कियाँ

गेटे ने लिखा है—'धब्बेदार रंगीन काँच से मढ़ी हुई गिर्जाघर की खिड़कियाँ गिर्जे के अन्दर से आश्चर्यजनक रूप से मनोहर और जगमगाते रगों से परिपूर्ण दीखती हैं, किन्तु बाहर से देखने पर उनके रगों की शोभा एकदम गायब हो जाती है। खिड़की के काँच, मुख्यतः, पर्दे की भाँति प्रकाश का परिक्षेपण करते हैं; इनमें नन्हे कण, धूल के जर्रे तथा हवा के बबूले भरे रहते हैं। दिन के तेज प्रकाश का अधिकाश परिक्षेपित हो कर बाहर ही वापस आ जाता है, अतः खिड़कियाँ सामान्य भूरे रंग की दीखती हैं, इसकी तुलना मे भीतर से आने वाली रंगीन, किन्तु फीके प्रकाश की किरणे मुश्किल से ही आँखों को प्रभावित कर पाती हैं।

६९. सान्ध्य आलोक में तारों की दृष्टिगोचरता

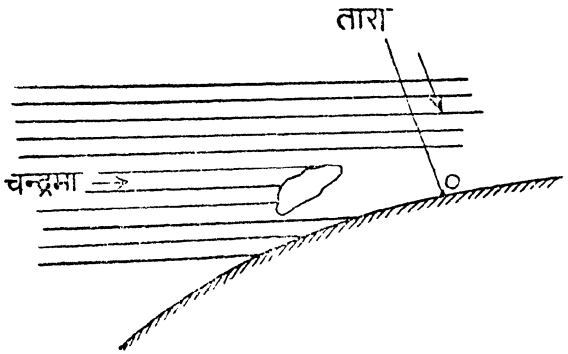
दिन के तेज प्रकाश मे तारों का 'बुझना' यथार्थ मे 'आवरण प्रभाव' ही है। इसके प्रतिकूल हम देख सकते है कि किस प्रकार प्रत्येक सन्ध्या को पहले सबसे अधिक चमक वाले तारे प्रगट होते हैं, फिर बाद मे हलकी रोशनी वाले, और अन्त मे रात्रि का अँधेरा आकाश असख्य तारो के प्रकाश से जगमगाने लगता है। इस क्रमिक परिवर्त्तन का अध्ययन दिलचस्प होता है। तारों की द्युति की श्रेणी-गुणक संख्या का हमे पता रहता ही है और इस संख्या से उनकी प्रकाश-तीव्रता का मान हम ज्ञात कर सकते हैं (§४५); इसके प्रतिकूल हम जानते हैं कि ज्यों-ज्यो सूर्य क्षितिज के नीचे डूबता जाता है त्यो-त्यों आकाश की दीप्ति किसी प्रकार घटती जाती है (§५१)। चन्द्रमा-विहीन स्वच्छ आकाश मे जबकि धुन्ध बिलकुल न हो, मिसाल के तौर पर आकाशीय ध्रुव के गिर्द का क्षेत्र चुन लीजिए। और उन तारों की तलाश कीजिए जो दिन छिपने के साथ ही सबसे पहले प्रगट होते हैं। पहले तो **संशयात्मक अवस्था** मिलती है—किसी तारे को हमने देखा किन्तु निगाह के जरा हट जाने पर पुनः उस नन्हे प्रकाश-बिन्दु को हम देख नही पाते हैं। कदाचित् पाँच मिनट बाद वही तारा इतना स्पष्ट दीखने लगता है कि उसके बारे मे किसी तरह का संदेह बाकी नही रह जाता—बस यह समय, तथा तारे का नाम हम अङ्कित कर लेते है।

ऐसा करना उतना आसान नही है जितना हम समझते हैं! कई सन्ध्या के प्रेक्षण के उपरान्त ही इस क्षेत्र के तारों से हम इतना परिचित हो पाते हैं कि उन्हें देखते ही हम

पहचान ले। इस तरह के प्रेक्षण तड़के सुबह को अपेक्षाकृत अधिक आसान पड़ते हैं, जबकि नक्षत्र-मानचित्र की मदद से पहले ही पहचान लिये गये तारे धीरे-धीरे विलुप्त होते जाते हैं।

इस तरह से अङ्कित किये गये समय से हम क्षितिज के नीचे सूर्य की स्थिति प्राप्त करते हैं और तब आकाश की दीप्ति। अवश्य हम पाते हैं कि तुरन्त के दृष्टिगोचर होने वाले तारे की द्युति s का मान उस वक्त अधिक होता है जबकि पृष्ठभूमि के आकाश की दीप्ति b का मान अधिक होता है, किन्तु ये दोनों पूर्णतया एक दूसरे के समानुपाती नहीं हैं; प्रकाश प्रदीप्ति के घटने पर अनुपात $\frac{s}{b}$ बढ़ जाता है। यह उस निष्कर्ष के अनुरूप है जो रात्रि के समय के लिए भूमि-दृश्य के बारे में बतलाया गया है (§६५)। s और b के दर्मियान ग्राफ खींचने पर हम सामान्यत. पाते हैं कि s का मान $b^{0.50}$ या कदाचित् $b^{0.65}$ का समानुपाती है।

पूर्णिमा की रात को स्वच्छ आकाश में तारों की दृष्टिगोचरता की न्यूनतम सीमा सामान्यत. द्युति-सूचक श्रेणी में दो अङ्क ऊपर चढ जाती है; स्वय चन्द्रमा के गिर्द एक बहुत अधिक चमकीला प्रभामण्डल (आरिएल) मौजूद होता है।



चित्र ७९—**चन्द्रमा के सामने बादल का आ जाना O पर स्थित प्रेक्षक के लिए पर्याप्त नहीं होता कि वह तारा देख सके।**

अतिशय सुन्दर और पूर्ण शशि के चारों ओर,
तारक-दल अपनी आभा को छिपा लेते हैं,
जब कि वह अपनी रुपहली ज्योति फैलाता है,
दूर, सुदूर व्याप्त, वसुधरा के ऊपर।—सैफो

एक बार एक बालक के ख़्याल मे आया कि चन्द्रमा के सामने की बादल की ओट तारों को पुनः दृष्टिगोचर बना सकने के लिए काफ़ी होगी। किन्तु ऐसा होता क्यों नही है? (चित्र ७९)।

दीख भर जाने वाले तारों का प्रेक्षण करके हम एक वक्र रेखा का निर्माण कर सकते है जो चन्द्रमा के निकट आकाश की ज्योति का वितरण क्रम प्रदर्शित करेगी।

६९ a. दिन में तारों की दृष्टिगोचरता

दिन में तो आकाश मे और भी अधिक प्रकाश मौजूद रहता है और तारे पूर्ण रूपसे अदृश्य रहते है। फिर हमारी आँख भी दिन के विशद प्रकाश के अनुकूल अपने को समानुयोजित कर चुकी होती है, अतः इस समय वह सहस्रों गुना कम सुग्राही होती है।

अरस्तू के समय के एक मार्के के विवरण में उल्लेख किया गया है कि गहरे कुएँ, खान के भीतर या चौड़ी चिमनी के अन्दर से देखने पर वायु सामान्य की अपेक्षा कम प्रकाशित दीखती है, और तब अपेक्षाकृत अधिक चमकीले तारों का देख सकना भी सम्भव होता है। बाद के अनेक लेखकों ने भी इस घटना का जिक्र किया है यद्यपि इसके लिए ये अधिकांश अपनी स्मरणशक्ति या दूसरों से सुनी-सुनायी कहानियों पर ही आश्रित रहे है।

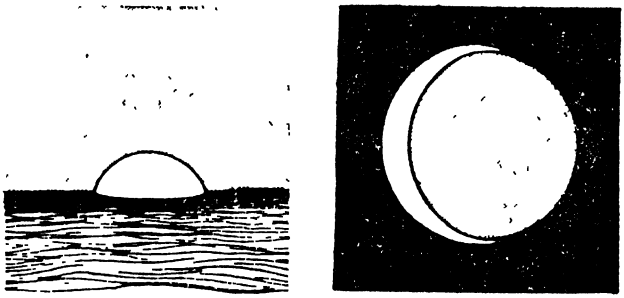
सम्प्रति एक भी ऐसी जगह नहीं है जहाँ से सामान्यतः इस घटना का अवलोकन तथा निरीक्षण किया जा सके, यद्यपि यह सुझाव दिया गया है कि इसके लिए १२ गज़ ऊँचा और २० इच व्यास वाला एक खोखला बेलन लेकर प्रयोग करना चाहिए। जो कुछ भी प्रभाव पड़ सकता है वह केवल इतना कि इस दशा में इर्द-गिर्द से आनेवाले प्रकाश द्वारा आँखों को चकाचौध कम लगेगी। किन्तु इससे तो कुछ विशेष अन्तर नही पड़ता क्योकि सीधे निरीक्षण किया जाने वाला दृष्टिक्षेत्र तो पूर्ववत् प्रकाशित ही रहता है, और प्रयोग मे यही बात निर्णयात्मक है।

इससे भी और अधिक असङ्गत यह कथन है कि तारे दिन के समय, पर्वतों की छाया मे स्थित झील के प्रतिबिम्ब में देखे जा सकते है। इस घटना के 'प्रेक्षकों' ने यह तो देखा कि प्रतिबिम्ब में आकाश की रोशनी कितनी कम थी, किन्तु इस बात को वे भूल गये कि परावर्त्तन के कारण ठीक उसी अनुपात में तारों की चमक भी कम हो जाती है।

७०. उद्दीपन

ऐसा प्रतीत होता है कि अस्त होनेवाला सूर्य क्षितिज रेखा पर कटान-सी उत्पन्न करता है (चित्र ८०)। द्वितीया, तृतीया का चन्द्रमा जब उदय होता है तो चन्द्रमा

के बिम्ब का शेष भाग धूमिल भूरी रोशनी से कुछ-कुछ प्रकाशित दीखता है और हमारा ध्यान इस बात पर आकृष्ट हो जाता है कि नाखूनी चन्द्रमा का बाहरी हाशिया,



चित्र ८०—उद्दीपन के दृष्टान्त सूर्य, जब वह अस्त होता है तथा चन्द्रमा का नव चन्द्रक।

धूमिल रोशनी वाले भाग के बाहरी हाशिये की अपेक्षा एक बड़े वृत्त का हिस्सा जान पड़ता है (चित्र ८०)। टाइको ब्राहे के तखमीने के अनुसार दोनों के लिए व्यासों का अनुपात ६:५ होता है।

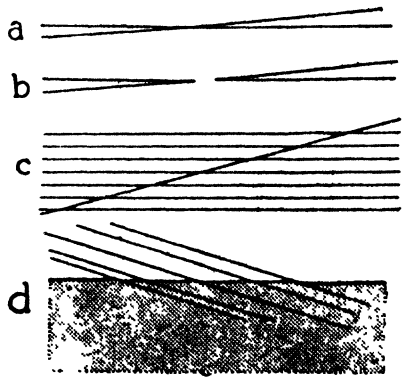
फिर गहरे रग के वस्त्र मे हम सफ़ेद वस्त्र की अपेक्षा अधिक छरहरे दीखते हैं।

लिनार्दो दा विन्ची ने इस घटना के बारे मे एक स्थान पर लिखा है। इस घटना का अवलोकन वृक्ष की खाली टहनियो मे से सूर्य को देखने पर किया जा सकता है। सूर्य के सामने पड़नेवाली ये सभी टहनियाँ इतनी पतली होती हैं कि इस दशा मे वे अदृश्य सी हो जाती हैं, ठीक ऐसा ही उस वक्त होता है जब हम आँख और सूर्य के दर्मियान भाले को रखते हैं। एक बार मैंने एक स्त्री को देखा जो काले वस्त्र पहने थी और उसके सिर पर सफेद शाल था। सिर पर रखे शाल की चौडाई काले वस्त्र से ढके कन्धो की चौड़ाई की दोगुनी प्रतीत हो रही थी। किले की मुडेर पर कटी झिरी की चौड़ाई ठीक उतनी ही होती है जितनी बगल के ठोस भाग की, किन्तु झिरी स्पष्ट रूप से ठोस भाग की अपेक्षा अधिक चौड़ी जान पड़ती है।

अक्सर टेलिग्राफ के दो तार, एक विशेष दिशा से देखने पर एक दूसरे को अत्यन्त छोटे कोण पर काटते हुए दिखाई देते हैं, (चित्र ८१, a)। इसके बारे मे अद्भुत बात यह है कि आकाश की पृष्ठभूमि के समक्ष देखने पर उस स्थान के गिर्द का तीव्र

प्रकाश दाहिने-बाये के गहरे रंग की, तार की दुहरी लाइन के विपर्यास में इतना प्रखर हो उठता है कि कटान बिन्दु दृष्टि से ओझल हो जाता है। अवश्य इसके कारण तार जब थोड़े-बहुत भी हिलते हैं तो श्वेत वर्ण का यह रिक्त स्थल तार की लम्बाई के सहारे इधर-उधर खिसकता रहता है (चित्र ८१, b)।

इसके प्रतिकूल उस वक्त दृश्य का रूप बिलकुल भिन्न होता है, जब पृष्ठभूमि गहरे रग की समानान्तर धारियों की बनी होती है। जैसे पृष्ठभूमि मे सीढ़ियाँ, खपरैल की छत या ईटों की इमारत मौजूद हो, तो इस दशा मे जहाँ कही तार इन धारियो को काटता हुआ दीखता है, वही पर तार अजीब तरह से फूला हुआ और टूटा-सा प्रतीत होता है। यही प्रभाव उस वक्त भी उत्पन्न होता है जब तार को किसी मकान की छत के हाशिये के समक्ष देखें (चित्र ८१, d)–सक्षेप मे, जब कभी ठोस वस्तु का सीधा किनारा तिरछी दिशा में समानान्तर धारियों को काटता है, तभी यह प्रभाव उत्पन्न होता है।



चित्र ८१—**टेलीग्राफ के तार उद्दीपन के दृष्टान्त उत्पन्न करते हुए।**

इन तमाम विरूपणों का मूल कारण इस तथ्य मे निहित है कि आँख के अन्दर वर्त्तन तथा अपूर्ण पुनर्निर्माण के कारण प्रतिबिम्बों का रूपान्तर हो जाता है। दो संलग्न धरातलों के दर्मियान की सीमारेखा अपने मस्तिष्क मे हम उस ठौर बनाते हैं जहाँ प्रकाश की चमक सबसे अधिक तेज़ी से बदलती है, और प्रतिबिम्ब यदि विवर्त्तन के कारण अस्पष्ट बनता हो, तो यह सीमारेखा आदर्श ज्यामिति-रेखा से भिन्न प्राप्त होती है। अतः गहरे रग के क्षेत्र पर चमकीले प्रकाश के क्षेत्र का अवलोकन करने पर इसकी सीमारेखा नियमित रूप से तनिक बाहर की ओर हट जाती है। इस प्रकार के स्थानान्तर को 'उद्दीपन' कहते हैं जिसके कतिपय दृष्टान्त अभी दिये गये हैं।

७१. चकाचौंध

आँख में प्रवेश करनेवाले प्रकाश की तीव्रता जब बहुत अधिक होती है तो 'चकाचौंध' उत्पन्न होती है। चकाचौध से दो बातों का बोध होता है—(क) दृष्टिक्षेत्र में

तेज़ प्रकाश-स्रोत का प्रगट होना जिसके कारण दृष्टिक्षेत्र के शेष भागों में वस्तुएँ स्पष्ट रूप में प्रेक्षणीय नहीं हो पाती हैं; तथा (ख) आँख में पीड़ा या सिर मे चक्कर आने की अनुभूति।

प्रथम दशा का उदाहरण हमे मिलता है जब सामने से आती हुई मोटरकार की हेडलाइट का प्रकाश हमारी आँखों मे पड़ता है। इस परिस्थिति मे सड़क के किनारे के वृक्षों को हम देख नहीं पाते हैं और उनसे करीब-करीब हम टकरा-से जाते है। सामने के दृश्य का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने पर हम पाते है कि प्रत्येक वस्तु प्रकाश के धुन्ध से ढक जाती है, जो रात में दीखने वाले वृक्षों तथा अन्य वस्तुओं की धुँधली शक्ल के मुकाबले में कई गुना अधिक चमक वाला होता है। यह व्यापक धुन्ध, आँख के वर्त्तन-कारी माध्यम द्वारा आपाती किरणों के परिक्षेपण से उत्पन्न होता है—यह माध्यम पर्य्याप्त रूप से दानेदार तथा विषमांगी होता है ताकि प्रकाश का यह परिक्षेपण कर सके। ऐसा भी जान पड़ता है कि चकाचौध उत्पन्न करने वाला प्रकाश न केवल पुतली से होकर नेत्र मे प्रवेश करता है, बल्कि इसका कुछ अंश सीधे स्केलेरोटिक में से होकर भी भीतर प्रवेश कर जाता है। फिर प्रकाशित भाग के इर्द-गिर्द रेटिना की सुग्राहिता बहुत कम हो जाती है; अतः चकाचौंध वाले प्रकाशस्रोत से 10° या इससे अधिक मान के कोण पर सुग्राहिता के घटने का प्रभाव परिक्षेपण जनित धुन्ध की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है।

चकाचौंध से उत्पन्न होनेवाली द्वितीय अनुभूति हम उस वक्त स्पष्ट महसूस करते हैं जब दिन के समय हम आकाश को निहारते है। हमे किसी मकान के साये मे खड़ा होना चाहिए ताकि सीधे सूर्य की ओर हमे न देखना पड़े। ज्यों-ज्यों हमारी दृष्टि इस आकाशीय पिण्ड के नजदीक आती है त्यों-त्यो इसके प्रकाश की प्रचण्ड द्युति अधिक असहनीय होती जाती है, और यदि आकाश मे बादल मौजूद हुए तब तो इस चमक को आँखे कठिनाई से ही सह पाती है। यह देखकर आश्चर्य होता है कि चकाचौध के पीड़ाजन्य प्रभाव की अनुभूति के प्रति एक व्यक्ति दूसरे के मुकाबले में कितना अधिक संवेदनशील होता है!

अध्याय ७

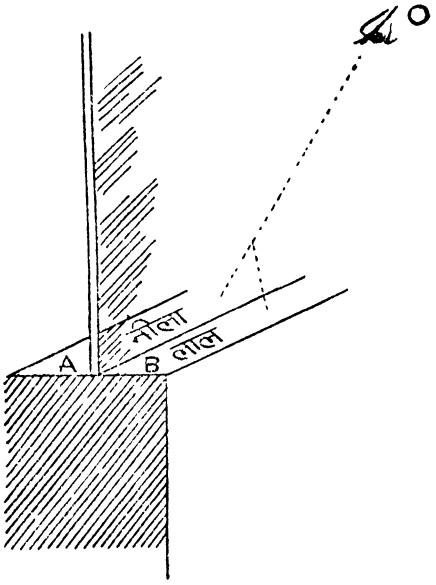
वर्ण (रंग)

सभी सजीव पदार्थ रंग के प्रति सचेष्ट होते हैं—

गेटे, थियरी आव कलर्स।

७२. रंगों का मिश्रण

रेलगाड़ी के कम्पार्टमेण्ट के अन्दर से बाहर का दृश्य खिड़की में से जब हम देखते हैं तो रेलगाड़ी की दूसरी ओर के दृश्य का भी हलका प्रतिविम्ब हमें साथ ही साथ दिखलाई पड़ता है। दोनों ही दृश्यों के प्रतिविम्ब एक दूसरे के ऊपर पड़ते हैं, अतः ऐसी दशा में हम रंगों के मिश्रण का अध्ययन कर सकते हैं। नीले आकाश का परावर्त्तन हरे खेत के प्रतिबिम्ब को हरे-नीले रग का कर देता है और मिश्रण के फलस्वरूप रंग हलका और अपेक्षाकृत कम सपृक्त बन जाता है—रंगों के मिश्रण मे यह विशिष्टता सदैव ही पायी जाती है।



चित्र ८२—**दुकान की खिड़कियों से देखने पर रगों का संमिश्रण।**

आजकल दुकानों की खिड़कियों मे काँच प्रायः फ्रेम के बिना ही लगाये जाते हैं, अतः स्थिति O से काँच मे से होकर खिड़की की भीतरी देहली A देखी जा सकती है और साथ

ही साथ प्रतिबिम्ब द्वारा बाहरी देहली B भी उसी सीध में दिखलाई पड़ती है (चित्र ८२)। यदि खिड़की की देहली के भाग A और B के रंग एक दूसरे से भिन्न हों तो हमें रंगों के सम्मिश्रण का एक बढ़िया दृष्टान्त प्राप्त होता है। इस दशा मे आँख की स्थिति यदि ऊँची होती है तो मिश्रण का रंग A के रंग से अधिक मेल खाता है, और आँख की स्थिति यदि नीची हुई तो मिश्रण से प्राप्त रंग B के रंग से अधिक मेल खाता है—इससे यह भी सिद्ध होता है कि काँच का पर्दा बड़े आयतन कोण वाली किरणों मे अधिक प्रकाश परावर्त्तित करता है।

प्रकृति द्वारा रंगों का मिश्रण एक और तरीके से भी होता है। दूर से देखने पर घास के मैदान के फूलों के रंग मिलकर एकदिल शेड उपस्थित करते है, अत. हरी घास पर खिले डैन्डीलियन के फूल पीले और हरे वर्ण का मिश्रित रंग उत्पन्न कर सकते है। सेव और नासपाती के वृक्षों की कलियाँ समष्टि रूप से गॅदला सफ़ेद (जी हाँ गंदला सफ़ेद ही) रंग उत्पन्न करती है—जो श्वेत और गुलाबी रग की कलियो, हरी पत्तियों, नासपाती के वृक्ष के सुर्ख परागाशय और सेव के पेड़ के पीले परागाशय आदि के रंगों के परस्पर मिलने से बनता है। रगों के इस मिश्रण का भौतिकीय विवेचन इस प्रकार है—हमारी आँख प्रत्येक प्रकाश-बिन्दु का [illegible] प्रतिबिम्ब बनाती है (§५९) अतः विभिन्न रंगों के स्थल एक दूसरे के ऊपर पड़ते है। बिन्दुचित्रण[1] की शैली के लिए चित्रकार इस मानसिक प्रभाव का उपयोग प्रायः करते है।

७३. प्रतिबिम्ब और रंगों की क्रीड़ा

चित्रकला पर लिखते हुए लिनार्दो दा विन्ची कहता है—'अतः चित्रकारो ! अपने मानव आकृति के चित्रण मे दिखलाइए कि वस्त्र-परिधान के रग का प्रतिबिम्बन सन्निकट की त्वचा के शेड को किस तरह प्रभावित करता है। आप गौर वर्ण के शरीर का चित्रण करना चाहते है जिसके गिर्द केवल वायु है। गौर या सफ़ेद वर्ण स्वय कोई रग नहीं होता, बल्कि आसपास के रंग को ही आंशिक रूप से ग्रहण करके यह अपना रग बदलता है। यदि श्वेत वस्त्र-परिधान मे किसी महिला को खुले मैदान मे आप देखे, तो सूर्य के रुख उसके शरीर की चमक इतनी अधिक होगी कि करीब-करीब सूर्य के समान ही उससे आँखों को चकाचौध लगेगी। किन्तु उसके शरीर का वह पार्श्व जो आकाश की रोशनी से प्रकाशित है, कुछ-कुछ नीले शेड की झलक लिये हुए होगा। यदि वह महिला,

1. Pointillism (विशुद्ध रंगों के पृथक् बिन्दुओं द्वारा इस शैली के चित्र तैयार किये जाते हैं। विभिन्न रंगों के रंजकों को परस्पर मिलाते नहीं है जैसा कि सामान्य शैली में किया जाता है।)

मैदान में, धूप से प्रकाशित घास और सूर्य के दर्मियान खड़ी हो तो उसके गाउन के परत और मोड़ जो घास के रुख पर पड़ते है, हरी घास से परावर्त्तित रग प्रदर्शित करेगे।

७४. कलिल[1] दशा में धातुओं का रंग—बैंगनी रंग के खिड़की के काँच

कतिपय पुराने मकानों की खिड़कियों के कांच के रग सुन्दर बैंगनी शेड के होते है। कई बरसो तक सूर्य के प्रकाश के खिड़की पर गिरते रहने के कारण काँच यह बैंगनी शेड धारण कर लेता है। आधुनिक समय मे काँच पर क्वार्ट्ज-पारे के लैम्प के प्रचण्ड प्रकाश को डाल कर रग के समावेश की यही क्रिया अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक पूरी की जा सकती है। काँच मे मौजूद मैनगनीज की अत्यल्प मात्रा कलिल विलयन का रूप धारण कर लेती है जिसके कारण विशेष शेड का रग उत्पन्न होना है; रग का यह शेड न केवल धातु के प्रकाशीय गुणो पर निर्भर करता है, बल्कि उसके कणों के आकार पर भी। यदि उस काँच को आप गरम करे तो यह बैंगनी रग उड जाता है।

फैरेडे एक स्थान पर लिखते है कि उनके जमाने मे कांच का रंग बैंगनी रग मे परिवर्त्तित हो जाता था जबकि उस पर धूप केवल ६ महीने तक ही पड चुकी हो[2]!

७५. विसर्ग लैंप[3] का रंग—गैस में प्रकाश का अवशोषण

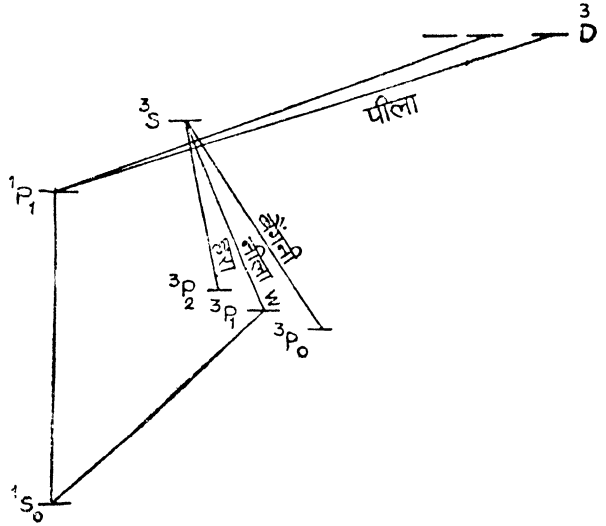
विज्ञापन के रंग-बिरंगे विद्युत् दीप जो रात्रि मे हमारे नगरों को परीलोक मे परिवर्त्तित कर देते है, काँच की नली के बने होते है जिनके अन्दर अल्प दाब पर गैस भरी होती है। और इनके अन्दर से विद्युत्-विसर्जन होता रहता है। नली मे निअन गैस भरने से सुर्ख रग का प्रकाश मिलता है,पारे की वाष्प भरने से नीले या हरे रग का प्रकाश मिलता है—नीले रग के लिए नली का काँच नीले रग का लेते है और हरे रग के लिए काँच हरे रग का लेते है। ऐसा करने से पारे के वाष्प के प्रकाश के अन्य रंग कमजोर पड़ जाते हैं। पीले रग की नली मे हीलियन भरने से पीला प्रकाश मिलता है।

नीले रंग के प्रकाश वाली सीधी विसर्गनली मे एक अद्भुत बात देखने को मिलती है। नली के एक दम निकट खड़े होकर उसकी लम्बाई की दिशा मे देखिए तो आप उसके रग मे फर्क पायेगे; इस दशा मे यह नीले-बैंगनी रग की दीखती है जबकि आड़ी दिशा से देखने पर इसके प्रकाश मे नीले-हरे रंग की मात्रा अधिक रहती है। इसका कारण यह है कि नली के अन्दर से आनेवाले पारे के प्रकाश में मुख्यतः तीन विकिरण मौजूद होते है, बैंगनी, नीला और हरा; जिसमे प्रथम रग का प्रकाश हलका होता है।

1. Collidol 2. Exp-Res. in Chem. Phy p., 142 3. Discharge lamp

यह सम्मिलित विकिरण जब गैस की पतली तह को पार करके बाहर निकलता है तो प्रकाश हमारी आँख को नीले-हरे रंग का प्रतीत होता है। किन्तु लम्बाई की दिशा में देखने पर दूर के सिरे से आँख तक आनेवाले प्रकाश को वाष्प के अन्दर एक लम्बी दूरी तय करनी पड़ती है, तो वाष्प मे नीले रंग की अपेक्षा हरे रंग के प्रकाश का अधिक अवशोषण होता है, अतः नली के प्रकाश के अवयव रंगों के अनुपात मे बिलकुल अन्तर आ जाता है, तदनुसार रग की आभा भी बदल जाती है।

पारे की हरी, नीली और बैंगनी उत्सर्जन रेखाएँ मिलकर तीन रेखाओं का एक समुदाय बनाती है जो स्तर ^3P और ^3S के दर्मियान इलेक्ट्रानो के आदान-प्रदान से उत्पन्न होती है (चित्र ८३)। इलेक्ट्रान जब $^3P_2$ तथा $^3P_0$ के भास-स्थायी[1] स्तर



चित्र ८३—**पारे के परमाणु में इलेक्ट्रान का स्थानान्तरण मुख्यतः जिसके कारण पारे के दृष्टिगोचर होनेवाले स्पेक्ट्रम की उत्पत्ति होती है।**

पर गिरते है तो क्रमशः हरी और बैंगनी रेखाएँ उत्पन्न होती हैं—ये स्तर ऐसे है कि इन पर से इलेक्ट्रान निम्न ऊर्जा वाले स्तरों पर आसानी से नहीं कूद पाते है; अतः इन स्तरो पर उपस्थित इलेक्ट्रान वाले परमाणुओं की संख्या सदैव ही असाधारण रूप से अधिक होती है, और इसीलिए अवशोषण भी इन्ही रगो का अत्यधिक होता है।

1. Metastable

इसी कारण से हरी नली को जब लम्बाई की दिशा में देखते हैं, तो प्रकाश में पीलेपन का पुट बढ़ जाता है। यहाँ भी दो विकिरण विशेषरूप से प्रबल रहते हैं—पारे की हरी और पीली रेखाएँ। हमारे निरीक्षण से एक बार फिर इस बात का समर्थन होता है कि इन दोनों प्रकाशों मे से हरे रंग का अवशोषण अधिक मात्रा में होता है।

७६. पर्किन्ज प्रभाव[1]; शंकु और दंड

लिनार्दो दा विन्ची ने इस बात का पता लगाया था कि हलकी छाया में हरे और नीले रंग अनिवार्यतः अधिक चटक प्रतीत होते हैं और प्रकाशित भागों में पीले, लाल तथा सफ़ेद रंग चटकीले दीखते हैं।

हाशिये पर खिले हुए जीरैनियम[2] के अंगारे सदृश चटकीले लाल रंग के फूल और उनकी पृष्ठभूमि की गहरे हरे रंग की पत्तियों के विपर्यास पर [illegible]। गोधूलि की बेला मे और उसके कुछ देर बाद यह विपर्यास उलट-सा जाता है, अब पत्तियों के मुकाबले मे फूलों का रंग अंधकार लिये हुए दीखता है। कदाचित् आप आश्चर्य्य करें, कि 'क्या सुर्ख रंग के चटकीलेपन की तुलना हरे रंग के चटकीलेपन से की जा सकती है, किन्तु इनके चटकीलेपन में अन्तर इतना तीव्र दीखता है कि इस प्रश्न के बारे में सदेह की कोई गुजाइश बाकी नही रह जाती।

किसी चित्रशाला में नीले और सुर्ख रंग के दो चित्र आप को मिल सकते है जो दिन के प्रकाश मे समान रूप से चटकीले दीखेगे। आप पायेगे कि सन्ध्या के झुटपुटे में इन दोनों मे नीले रंग का चित्र अपेक्षाकृत बहुत अधिक चटकीला प्रतीत होता है; इतना अधिक कि लगता है मानों उसमे से प्रकाश की किरणे विकिरित हो रही हों!

ये 'पर्किन्ज प्रभाव' के दृष्टान्त है। इसका कारण यह है कि सामान्य प्रकाश मे हमारी आँखे रेटिना के उन कोषों की सहायता से अवलोकन करती हैं जिन्हे 'शंकु' कहते हैं, किन्तु बहुत हलकी रोशनी मे उन कोषों की सहायता से आँखे देखती है जिन्हे 'दण्ड' कहते है। शकु की सुग्राहिता पीत वर्ण के लिए सबसे अधिक होती है और दण्ड की सुग्राहिता हरे-नीले प्रकाश के लिए सर्वाधिक होती है—इससे इस बात का समाधान हो जाता है कि विभिन्न रंगो के चटकीलेपन का अनुपात, प्रकाश की चमक की तीव्रता के बदलने पर, क्यों उलट जाता है।

1. Purkinje Effect 2. Geraniums

दण्ड केवल प्रकाश की अनुभूति करा पाते है, रंग की नहीं। चन्द्रमा का प्रकाश इतना मन्द होता है कि व्यावहारिक रूप मे केवल दण्ड ही कार्यशील हो पाते है, अत: इस दशा मे भू-दृश्य के रगो की पहचान नही हो पाती; एक तरह से हम रगों के लिए अन्धे बन जाते है। रग के प्रति यह अन्धापन, अवेरी रात मे और भी अधिक परिपूर्ण बन जाता है (§६३)।

७७. अत्यन्त तेज रोशनी के प्रकाश-स्रोत का रंग श्वेत-सा दीखता है

अपने शहरो मे प्राय. हम देख सकते है कि सन्ध्या को किस तरह विभिन्न प्रकाश-सूत्र नहर के पानी मे प्रतिबिम्बित होकर प्रकाशस्तम्भ के रूप मे प्रगट होते है (§१४)। यह आश्चर्य्य की बात है कि इस दशा मे कितनी आसानी से उनके रगों का अन्तर पहचाना जा सकता है, जैसे प्रदीप्त गैस के लैम्प और साधारण बिजली के लैम्प के रंगों का अन्तर; जबकि स्वय ये प्रकाश-स्रोत लगभग समान रूप के श्वेत रग के ही दीखते है। इसी प्रकार उनके रगो का अन्तर उस वक्त अधिक स्पष्ट हो उठता है जब उन्हे हम कुहरे मे से या खिड़की के धुँधले काँच मे से देखते है। और आँखो के एक विचित्र गुण के कारण जब इनके रग उस वक्त बहुत कुछ श्वेत वर्ण सरीखे दीखने लग जाते है जब इनका प्रकाश एक अत्यन्त ही चमकीले बिन्दु पर केन्द्रित हो।

७८. रंगीन काँच में से भू-दृश्य को देखने पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव

गेटे अपनी कृति फार्बेनलेहर[1] मे लिखता है--'पीत वर्ण से आँखे प्रफुल्लित होती है, हृदय आह्लादित होता है तथा आत्मा प्रसन्न होती है और तुरन्त हम राहत का अनुभव करते है।' पीले रग के काँच मे से बाहर का दृश्य देखने पर कितने ही व्यक्तियों के मनमें हँसने की इच्छा होती है। नीला वर्ण सभी चीजो पर मातम की छाया डालता है। भलीभाँति प्रकाशित भू-दृश्य को सुर्ख रंग एक भयानक दृश्य मे तबदील कर देता है—'क़यामत के दिन सारे आसमान और धरती पर यही रग छा जायगा।' हरा रग अत्यन्त अस्वाभाविक लगता है,सम्भवत: इसलिए कि आकाश हरे रग का बहुत कम ही दीखता है। वागन कोनिश ने भू-दृश्य के रंगो को दो श्रेणियों मे विभाजित करने का प्रयत्न किया था,एक जो प्रसन्नता की अनुभूति देते है, दूसरे जो एक तरह की 'मनहूसियत' लाते है। उसके अनुसार लाल, पीला, नारङ्गी रग तथा पीत-हरे वर्ण प्रथम श्रेणी में आते है और नीला-हरा, नीला तथा बैंगनी द्वितीय श्रेणी मे।

1. Farbenlehre

भू-दृश्य के रंगों के मनोवैज्ञानिक प्रभाव के लिए देखिए वाग़न कोर्निश की 'सीनरी एण्ड द सेन्स आव साइट'[1] (केम्ब्रिज १९३५)।

सजावट तथा प्रतीकों के रंगों के मनोवैज्ञानिक प्रभाव का अध्ययन अनेक लेखकों ने किया है, यद्यपि खुले प्रदेश मे ऐसा कम ही किया गया है।

७९. सिर को नीचे करके रंगों का प्रेक्षण करना

भू-दृश्य के रंगों मे अधिक जीवनतत्त्व, उनकी समृद्धिशालिता को परिवर्द्धित रूप मे देखने के लिए चित्रकारों ने एक पुराना गुर अपनाया है—वह यह कि दृश्य की ओर पीठ करके खड़े हो जाइए, पैरों को फैला दीजिए; और तब नीचे को इतना झुकिए कि टाँगों के बीच से पीछे का दृश्य दीख सके। रंगो के गाढ़ेपन और चटकीलेपन की अनुभूति की वृद्धि, ऐसा ख्याल किया जाता है, इस बात से सम्बद्ध है कि सिर में इस दशा में रुधिर का प्रवाह बढ़ जाता है।

वागन कोर्निश का कहना है कि बगल के सहारे लेटने पर भी यही प्रभाव उत्पन्न होगा। इसके लिए वह कारण यह बतलाता है कि ऊर्ध्व दिशा की दूरी आँकने में जो अतिशयोक्ति साधारणतया हमें मिलती है (§११०) इस दशा में दूर हो जाती है; फलस्वरूप रंगों का उतार-चढ़ाव तीव्रतर दीखता है। प्रश्न यह है कि सिर को झुकाने पर जो विशेष प्रबल प्रभाव उत्पन्न होता है, क्या उसके लिए भी यही व्याख्या लागू होती है?

1. Vaughan Cornish Scenery and the Sense of Sight (Cambridge 1935)

अध्याय ८

उत्तर-बिम्ब[1] तथा विपर्यास[2] की घटनाएँ

८०. प्रकाश की अनुभूति की अवधि

हम रेलगाड़ी मे बैठे है और हमारी उलटी दिशा मे दूसरी रेलगाड़ी तेज़ी से निकल जाती है। कुछ क्षणो के लिए सामने की रेलगाड़ी की खिड़कियो मे से बाहर का दृश्य हमे स्पष्ट दिखलाई पडता है; इसमे झिलमिलाहट करीब-करीब बिलकुल ही नही होती; हाँ, दृश्य उतना चटकीला नही होता।

या फिर प्लैटफार्म पर खड़े होने पर सामने से गुजरती हुई रेलगाड़ी की खिड़कियों मे से उस पार के दृश्य बखूबी हम देख पाते है या खिड़की के काँच मे से प्रतिबिम्बित होने वाले दृश्य हम देख सकते हैं। दोनों ही दशाओ मे यदि हम सामने की ओर दृष्टि जमाये रखे तो प्रतिबिम्ब हमें बिना किसी झिलमिलाहट के दिखाई पड़ेगे।

यह मालूम करने के लिए कि प्रकाश और अन्धकार को एक के बाद दूसरे किस रफ्तार से सामने आना चाहिए ताकि झिलमिलाहट न उत्पन्न हो, आइए ऊँची छडों वाले एक लम्बे बाडे के समानान्तर चले। अपने क़दम की रफ्तार इतनी रखिए कि बाड़े की ओर एक ही दिशा मे बराबर घूर कर देखते रहने पर दृश्य एक समान प्रकाश का प्रतीत हो।

चलने की न्यूनतम रफ्तार जबकि दृश्य की झिलमिलाहट गायब हो जाय, दो बातों पर निर्भर करती है; 'प्रकाश' और 'अन्धकार' के बीच प्रकाशमात्रा के अनुपात पर, तथा प्रदीपन-काल तथा अन्धकार-काल की अवधि के अनुपात पर भी। दर असल बात यह है कि आँख पर प्रकाश का प्रभाव रोशनी के हटने पर तुरन्त ही खत्म नही हो जाता, बल्कि यह धीरे-धीरे घटता है। इसीलिए सिनेमा के अन्दर आँखों में प्रकाश के प्रभाव का लगार घटना-बढ़ना अवश्य एक जटिल क्रिया-विधि होती है।

एक सुविख्यात दृष्टान्त है तुषार के टुकड़ों का गिरना। लिनार्दो-दा-विन्ची का

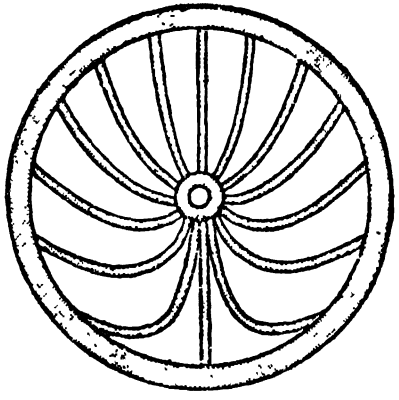
1. After-image 2. Contrast

ध्यान इस बात पर आकृष्ट हुआ था कि 'नजदीक के तुषार के टुकड़े तेज़ी से गिरते हुए प्रतीत होते हैं जब कि कुछ फासले पर के ये टुकड़े धीरे-धीरे गिरते हुए जान पड़ते हैं; और निकट वाले टुकड़े ऐसे जान पड़ते हैं मानो वे सफ़ेद धागे की लच्छियों के रूप में लटक रहे हों जबकि दूर वाले तुषार कण लटकते हुए प्रतीत नही होते।'

वर्षा की बूंदें जो कि तुषार कणो की अपेक्षा बहुत अधिक तेज़ी से नीचे गिरती हैं, नीचे की ओर सदैव ही पतली रेखा की शक्ल में खिंच उठी-सी दीखती हैं।

८१. रेलिंग (या कटघरा) का प्रभाव[1]

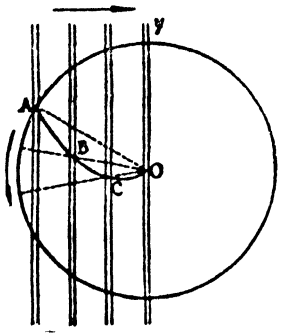
रेलिंग लगे हुए कटघरे मे से देखने पर तेजी से घूमते हुए पहिये की तीलियाँ आश्चर्य-जनक नमूना प्रदर्शित करती हैं। विचित्र बात तो यह है कि यह नमूना पूर्णतया समित ही बनता है, अतः इसे देखकर पता नहीं लगा सकते कि पहिये के घूमने की दिशा क्या है (चित्र ८४)। यद्यपि पहिये मे आगे की ओर तेज़ हरकत होती है और वृत्ताकार गति भी इसमे मौजूद होती है, किन्तु यह नमूना तो करीब-करीब स्थिर ही बना रहता है। स्टेशन पर रेलगाड़ी की रफ्तार जब धीमी होने लगती है तो उस वक्त सामने के रेलिंग मे से इजिन के बड़े पहियो का अवलोकन करने पर यह घटना अपने सर्वांगपूर्ण रूप मे दिख-लाई देती है। यह प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त उभरता है जब पहिये की रिम पर प्रकाश अधिक हो; तीलियों पर अपेक्षाकृत मन्द प्रकाश हो, तथा कटघरे की छड़ों के दर्मियान के खुले भाग सँकरे हों। यदि पहिया केवल घूम रहा है, किन्तु आगे को **लुढ़क नहीं** रहा है तब रेलिंग मे से देखने पर यह नमूना **नहीं** दिखलाई देता है—इसके प्रगट होने के लिए तो परिभ्रमण गति तथा आगे बढ़ने की रैखिक गति, दोनों का संयोजन आवश्यक है।



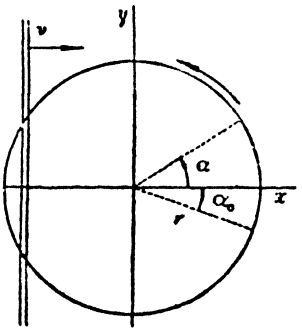
चित्र ८४—रेलिंग या कठघरे की घटना रेलिंग के लम्बे कटघरे में से देखने पर घूमता हुआ पहिया।

1. P. M. Roget, Philos Trans, **115**, 131, 1825

इस प्रभाव की व्याख्या करने के लिए हम प्रारम्भ इस बात से करते हैं कि निरीक्षक पहिये पर ही आँख बराबर गड़ाये रहता है अतः जो कुछ भी वह देखता है उसका सम्बन्ध वह पहिये से ही जोडता है। इस प्रयोग मे इस शर्त को पूरा होना है और ऊपर दिये गये उदाहरण मे प्रकाश आदि का क्रम इसी शर्त के अनुसार है। अतः कल्पना कीजिए कि पहिया एक स्थिर धुरी O के गिर्द घूम रहा है और रेलिग के खुले भाग एक समान गति से इसके सामने से गुजर रहे हैं (चित्र ८५ क)।



चित्र ८५—क



चित्र ८५—ख

मान लीजिए,आरम्भ की स्थिति मे रेलिग का एक खास खुला भाग पहिये के किसी विशेष तीली को बिन्दु A पर काटता है; तो इस तीली का एक हिस्सा इस खुले भाग मे से A पर दिखलाई पडेगा। कुछ क्षणो बाद यह तीली स्थिति OB पर होगी और रेलिंग का खुला भाग भी दाहिने खिसक आया होगा ताकि उस तीली को यह बिन्दु B पर काटे। कुछ और देर बाद कटान बिन्दु C पर पहुँचेगा। इस प्रकार बिन्दु-बिन्दु करके पूरी वक्ररेखा ABCO का निर्माण हो जायगा। अतः नमूने की प्रत्येक वक्ररेखा उन बिन्दुओ के पथ से निर्धारित होती है जिनपर एक खास खुले प्रदेश और एक खास तीली के कटान बिन्दु को हम बहुत ही थोड़े समय के लिए देख पाते हैं। आँख में बननेवाले प्रतिबिम्ब के प्रति दृष्टि-निर्बन्धता[1] के गुण के कारण, ऐसा प्रतीत होता है मानो समूची वक्र रेखा को एक साथ ही देख रहे हों, बशर्ते पहिया काफ़ी तेज़ रफ़्तार से घूम रहा हो।

बाद मे आने वाली प्रत्येक तीली उसी खुले प्रदेश मे से अपनी बारी पर दृष्टिगोचर होकर उसी जाति की वक्ररेखा का निर्माण करेगी, किन्तु इनकी परामितियाँ[2] भिन्न

1. Persistence of vision 2. Panameter

होंगी—इसका अर्थ यह है कि एक सर्वांगपूर्ण नमूना बन जायगा। यदि बाद में आनेवाला रेलिंग का खुला प्रदेश, पूर्वगामी खुले प्रदेश की स्थिति पर आने में उतना ही समय लेता है जितना समय एक तीली की स्थिति पर आने के लिए बादवाली तीली लेती है, तब स्पष्ट है कि वक्ररेखाओं का वही समुदाय बार-बार बनेगा और समूचा नमूना स्थिर बना रहेगा। किन्तु रेलिंग के दर्मियान की दूरियाँ यदि थोड़ी भिन्न हों, तो प्रत्येक तीली खुले प्रदेश पर निर्दिष्ट समय से बस कुछ पहले (या कुछ देर बाद) पहुँचेगी। इस दशा मे प्रत्येक वक्ररेखा उसी जाति की अन्य वक्ररेखा में परिणत हो जायगी, विशिष्टता यह होगी कि इसकी परामिति भिन्न होगी। तब हमें ऐसा नमूना दीखेगा जो धीरे-धीरे अपना स्वरूप, पहिये के घूमने की दिशा मे, या उसकी उलटी दिशा मे बदलेगा। किन्तु स्वरूप के इस परिवर्त्तन मे नमूने की पूरी आकृति नहीं घूमती है, क्योंकि यह नमूना तो ऊर्ध्वरेखा के गिर्द बराबर समित ही बना रहता है। अन्त में इस बात की भी सम्भावना हो सकती है कि रेलिंग के दर्मियान के खुले प्रदेश बहुत ही अधिक चौड़े और बहुत ही सँकरे हो। मिसाल के लिए रेलिंग के खुले प्रदेश की चौडाई यदि तीलियो के बीच की चौड़ाई की आधी हुई तो तीलियों की सख्या की दो गुनी वक्ररेखाएँ हम नमूने मे देखेगे; और यदि खुले प्रदेशों की चौड़ाई एक-सी हुई तो यह नमूना भी स्थिर रहेगा।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सामान्यत. धीरे-धीरे अपना स्वरूप बदलने-वाले नमूने ही अकसर बनेगे। वास्तविकता तो यह है कि पूरी रेलिंग की लम्बाई इतनी कम होती है कि समूची घटना एक सेकण्ड या उससे भी कम समय मे समाप्त हो जाती है, अत नमूने के परिवर्त्तन को महसूस करने का मौका मुश्किल से मिल पाता है। व्यक्ति-गत रूप से मैंने इस घटना का कई बार अवलोकन किया है।

इन वक्ररेखाओ के सेट के लिए समीकरण आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं। चित्र ८५ ख की भाँति नियामक अक्ष चुनिए; तथा रेलिंग के खुले प्रदेश का वेग v मान लीजिए। यदि प्रारम्भिक स्थिति मे सदिश त्रिज्या[1] (अर्थात् तीली) का झुकाव x अक्ष के साथ कोण α_0 के बराबर है और समय t के उपरान्त इसका झुकाव x अक्ष के साथ α हो, तब t क्षण पर तीली और खुले प्रदेश के कटानबिन्दु के नियामक[2] निम्न-लिखित होंगे —

$$x=vt \text{ तथा } y=x \tan \alpha$$

1. Radius vector 2. Co-ordinates of the point of intersection

साथ ही भ्रमणगति तथा रैखिक गति के पारस्परिक सम्बन्ध से हमें निम्नलिखित मिलते हैं, (तीली की लम्बाई r है) —

$$\frac{vt}{r} = \alpha - \alpha_0 \text{ या } x = r(\alpha - \alpha_0)$$

ऊपर के दोनों समीकरणों से α को हटाने पर वाञ्छित वक्रसमूह का समीकरण इस प्रकार मिलता है —

$$y = x \tan\left(\frac{x}{r} + \alpha_0\right)$$

जैसा कि इस समीकरण से प्रगट है, जब α_0 और x के चिह्न एक साथ ही बदलते हैं तो y का मान एक-सा बना रहता है, अर्थात् नमूने की आकृति y अक्ष के गिर्द सममित बनी रहती है।

चलती हुई गाड़ी के बड़े पहिये में से सामने के दूसरे पहिये को देखने पर और भी अधिक जटिल किस्म के नमूने बनते हैं। दृष्टिरेखा थोड़ी भी जब दाहिने या बायें हटती है ताकि दोनों पहिये एक-दूसरे को पूर्णतया ढक नहीं पाते हैं तो अत्यन्त ही विचित्र किस्म की वक्र आकृतियाँ दिखलाई पड़ती हैं। फैरेडे का ध्यान भी इन पर आकृष्ट हुआ था, इन्हें देखकर उसे चुम्बकीय बल रेखाओं का स्मरण हो आया था। ये उन बिन्दुओं द्वारा निर्मित पथरेखाएँ हैं, जहाँ दोनों पहियों की तीलियाँ एक दूसरे को काटती हैं।

८२. झिलमिलाते प्रकाश-स्रोत

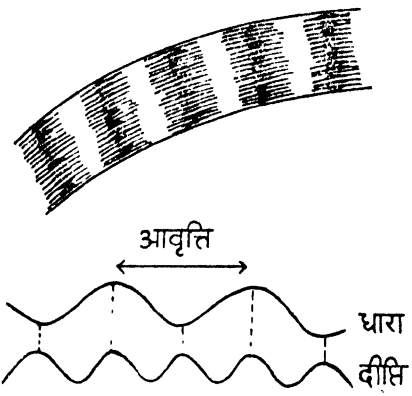
हमारे बड़े नगरों में रात को अनुपम दृश्य उपस्थित करने वाले विज्ञापन दीपों में नारङ्गी प्रकाशवाले निअनलैम्प हमारा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करते हैं। ये ५० प्रतिसेकण्ड आवृत्ति वाली प्रत्यावर्त्ती विद्युतधारा द्वारा परिचालित होते हैं। इसका अर्थ है कि लैम्प की चमक प्रतिसेकण्ड १०० बार घटती-बढ़ती है क्योंकि धारा की दिशा के एक बार के प्रत्यावर्त्तन में चमक दो बार महत्तम मान प्राप्त करती है। प्रकाश की चमक का घटना-बढ़ना इतनी तीव्र गति से होता है कि सामान्यतः हमें इस घट-बढ़ का आभास नहीं होने पाता।

किन्तु यदि आप किसी चमकदार वस्तु को नियनलैम्प के प्रकाश में इधर से उधर हरकत दिलाएँ तो इस तरह बनने वाला ज्योति-पथ एक लहरदार प्रदीप्त सतह-जैसा दीखेगा। उस वस्तु को जितनी अधिक तेज़ रफ्तार से हरकत दिलायेंगे उतनी ही अधिक दूर-दूर ये लहरें बनेंगी। लहरों की संख्या से प्रत्यावर्त्ती विद्युत्धारा की आवृत्ति का हिसाब लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि एक चमकीली कैंची को दायरे में

घुमाएँ ताकि वृत्त का घेरा प्रति सेकण्ड चार बार बनता है और इससे बननेवाले ज्योति-पथ मे १२ तरग-शृग दिखाई देते हैं तो धारा की प्रबलता के परिवर्त्तन की आवृत्ति १२×४=४८ होगी और स्वय प्रत्यावर्त्ती धारा की आवृत्ति २४ प्रति सेकण्ड।

तेजी से दोलन करते हुए दर्पण मे प्रकाश-स्रोत को परावर्त्तित कराकर भी यह प्रयोग किया जा सकता है या काँच के टुकड़े द्वारा, जैसे आपके चश्मे का काँच; या आँख के सामने अपने चश्मे के एक लेन्स को आप एक छोटे दायरे मे घुमा सकते हैं (देखिए § ४०)। फिर अन्त मे,प्रकाश की झिलमिलाहट केवल नगी आँखोसे भी देखी जा सकती है–दृष्टि को पहले नियन लैम्प के निकट किसी विन्दु पर जमाइए और तब एकदम अचानक, निगाह की दिशा बदल दीजिए। इस दशा मे रेटिना पर प्रकाशस्रोत का प्रतिविम्ब हरकत करता है और प्रकाशद्युति की प्रत्येक वृद्धि की अनुभूति पृथक्-पृथक् होती है। दृष्टिरेखा की दिशा को अकस्मात् बदल सकना, जबकि प्रकाशस्रोत से ध्यान हटने न पाये, अत्यन्त दुस्तर कार्य है–प्रेक्षक कभी इस प्रयत्न मे सफल हो पाता है, कभी नही।

फिलामेण्ट वाले ऐसे विद्युत लैम्पो की भी परीक्षा कीजिए जिनमे प्रत्यावर्त्ती धारा वह रही हो। ऐसे लैम्प के प्रकाश मे चाँदी की कलई वाली पेन्सिल को इधर से उधर घुमाएं तो लहरे स्पष्ट रूप से दीखेगी। जिससे यह सिद्ध होता है कि धारा की प्रबलता के प्रत्येक चढाव पर फिलामेण्ट का ताप और उससे निकलने वाली रोशनी थोड़ी बढ़ती है, और उनके दर्मियान ये घट जाती है (चित्र ८६)। जब लैम्प मे सरल धारा भेजी जाती है तो लहरे कत्तई नही दिखलाई पड़ती हैं।



चित्र ८६—**विद्युत लैंप के प्रकाश की तीव्र गति की झिलमिलाहट को दृष्टिगोचर कराना।**

कभी-कभी रात मे जब रेलगाड़ी के डिब्बे की खिड़की मे से बाहर को देखते हैं तो प्रमुख सड़को को प्रकाशित करने के लिए लगाये गये सोडियम लैम्प की ज्योति मे निम्न-लिखित परिस्थिति मे लहरे अत्यन्त स्पष्ट देखी जा सकती हैं। इसके लिए खिड़की और आपके बीच लगभग ६ फुट का फासला होना चाहिए और खिड़की का काँच भीगा

होना चाहिए या धुंधला, और इसकी भीगी सतह पर ऊपर से नीचे की ओर धारियाँ सी पड़ी हों। दूर के लैम्प-की रोशनी ज्योंही काँच के कुछ भागो पर पड़ती है, त्योंही लहरे दृष्टिगोचर हो जाती हैं। इसका कारण यह है कि पानी की परत की मोटाई सर्वत्र एक समान नही रहती, धारियो की जगह, पुँछ जाने के कारण, पतले प्रिज्मों की एक कतार-सी बन जाती है जिनके कोर तथा वर्त्तनकोण ऊर्ध्व दिशा मे पडे होते हैं, और इन कोणो के मान एक बिन्दु मे दूसरे बिन्दु तक बदलते रहते हैं। इनके कारण लैम्प के प्रतिबिम्ब अनियमित रूप से और कभी-कभी अचानक स्थानान्तरित होते हैं। चूंकि इन लैम्पों मे प्रत्यावर्त्ती धारा बहती है, अत: ठीक तेजी से हरकत करनेवाले चश्मे के लेन्स के प्रयोग की तरह ही इस दशा मे भी लहरे दिखलाई पड़ती हैं।

८३. केन्द्रीय तथा परिमितीय दृष्टि-क्षेत्र के लिए अविरत दर्शन की आवृत्ति

ऐसे स्थानो पर जहाँ पावर-हाउस की सप्लाई की प्रत्यावर्त्ती विद्युत्धारा की आवृत्ति कम होती है (प्रति सेकण्ड २०–२५), निम्नलिखित दिलचस्प प्रयोग किया जा सकता है। पहले विद्युत लैम्प की ओर देखिए; लैम्प तो स्थिर चमक का प्रतीत होगा जबकि दीवार की रोशनी झिलमिलाती दीखेगी। फिर दीवार पर दृष्टि जमाइए, तो दीवार की प्रदीप्ति स्थिर, अविरत जान पड़ती है जबकि इस बार लैम्प का प्रकाश झिलमिलाता हुआ मालूम पडता है।[1]

स्पष्ट है कि सीधे केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र तथा परिमितीय दृष्टिक्षेत्र की दर्शन-अनुभूति की क्षमता अवश्य विभिन्न है। सम्भव है कि लैम्प की प्रकाश-तीव्रता का चढाव-उतार बहुत हलका हो और परिमितीय दृष्टि के लिए प्रकाश-तीव्रता की अन्तरीय-सीमा[2] अपेक्षाकृत कम ही हो। इसकी जाँच के लिए किसी चमकीली वस्तु को लेकर उसी लैम्प के प्रकाश मे हम एक वृत्त का निर्माण करते हैं। तो प्रकाश-पथ मे नियमित दूरियो पर प्रकाश की ज्योति का चढ़ाव-उतार उस वक्त भी स्पष्ट दिखलाई पड़ता है जबकि हम नजर जमाकर उसे देखते हैं (§ ८२)। इसका अर्थ है कि हमारे ठीक सामने की ओर की दृष्टि प्रकाश-तीव्रता के थोड़े अन्तर के लिए भी पर्य्याप्त सुग्राही अवश्य है, किन्तु प्रकाश झिलमिलाहट की तेज रफ्तार की तब्दीली का साथ देने मे यह असमर्थ रहती है।

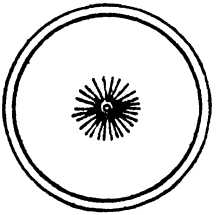
1. Woog C. R. **168**, 1222; **169**, 93, 1919. 2. Differential threshold

प्रयोगशाला के प्रयोग भी आँखों की इस विशिष्टता का अस्तित्व प्रमाणित करते हैं।

सबसे अधिक विचित्र बात तो यह है कि न केवल परिमितीय क्षेत्र मे हम प्रकाश-प्रदीप्ति के चढ़ाव-उतार की अनुभूति करते हैं,बल्कि उनकी प्रतिसेकण्ड सख्या को भी हम कम करके आँकते हैं; हमे ऐसा प्रतीत होता है कि कदाचित् ये चढ़ाव-उतार प्रतिसेकण्ड १० बार से अधिक नही हो रहे है।

८४. सायकिल का पहिया जो प्राकाश्य रूप से स्थिर रहता है

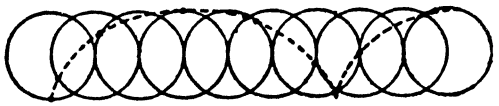
सामने से गुजरती हुई सायकिल का पहिया बहुत कुछ ऐसा ही दीखता है जैसा चित्र ८७ मे प्रदर्शित है। हमारी आँखे तीलियों के केवल उन भागों का अवलोकन कर पाती है जो केन्द्र के निकट स्थित है, क्योकि यहाँ ये धीरे-धीरे हरकत करती है।



चित्र ८७—तेजी से घूमता हुआ साइकिल का पहिया इस प्रकार दीखता है।

किन्तु ऐसी सडक के किनारे जरा इतमीनान से बैठ जाइए जहाँ से बहुत-सी सायकिले अवश्य गुजरने वाली हो। सडक के किसी खास स्थल पर नजर गड़ाइए। ज्योही सायकिल का अगला पहिया आपके दृष्टिक्षेत्र मे प्रवेश करता है, आपको अचानक ही बिलकुल स्पष्ट,बहुत-सी तीलियाँ उस वक्त भी दिखलाई देती है जबकि सायकिल तेजी मे हरकत कर रही हो। यह बहुत ही अद्भुत घटना है—खास बात यह है कि लगातार एक ही दिशा मे नज़र गड़ाये रखे, निकट आती हुई सायकिल की ओर नही देखना है।

व्याख्या इस प्रकार है—पहिये की परिधि का वह बिन्दु जहाँ पहिया जमीन को छूता है, एक क्षण के लिए स्थिर हो जाता है, क्योंकि इस बिन्दु पर ही जमीन की पकड़



चित्र ८८—घूमते हुए पहिये की परिधि के एक बिन्दु का गमनपथ। जैसा कि हम देखते हैं, प्रत्येक चक्कर में यह बिन्दु एक क्षण के लिए, जब कि यह भूमि को स्पर्श करता है, स्थिर हो जाता है।

पहिये पर पडती है (चित्र ८८)। अत. इस विन्दु के निकट तीलियों के सिरे भी क्षण भर के लिए स्थिर होंगे, जबकि धरती मे दूर पडनेवाले विन्दु रैखिक और भ्रमण-गति के सम्मिलित प्रभाव के कारण वक्र मार्ग-रेखा पर चलेंगे। अत. यदि हम भूमि के किसी खास स्थल पर ध्यान जमाकर देखते रह सके तो पहिये के निचले भाग करीब-करीब स्थिर ही जान पडेंगे--दरअसल वास्तविक प्रेक्षण मे दिखलाई भी ऐसा ही पड़ता है। मेरा विश्वास है, तीलियाँ सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त दिखलाई पड़ती है जबकि ये हमारे परिमितीय दृष्टिक्षेत्र मे पड़ती है। अत. पर्य्याप्त सम्भावना इस बात की है कि परिमितीय दृष्टिक्षेत्र मे प्रकाश की तेज रफ्तार की झिलमिलाहट के अवलोकन की क्षमता इस मामले मे भी कारगर होती है।

८५. मोटरकार का पहिया जो प्राकाश्य रूप से स्थिर प्रतीत होता है*

जब मोटरकार निकट आती है तो इसकी रफ्तार चाहे सामान्य ही क्यों न हो, पहिये की तीलियाँ एक दूसरे से पृथक् नही देखी जा सकती है। रेटिना के प्रत्येक विन्दु पर प्रकाश और अन्धकार की झिलमिलाहट इतनी तेज रफ्तार से होती है कि रेटिना पर उत्पन्न होने वाले प्रभाव एक दूसरे मे मिल जाते है, आँख की पेशियाँ, दृष्टि-रेखा द्वारा शकु का निर्माण उतनी तेज रफ्तार से नही कर पाती जितनी तेज रफ्तार की आवश्यकता प्रत्येक तीली को अलग-अलग देख सकने के लिए होती है।

फिर भी रह-रहकर ऐसा होता है कि बस अत्यन्त छोटे लमहे के लिए तीलियाँ दृष्टिगोचर हो जाती है, जैसे, फोटो के 'स्नैपशाट' का दृश्य। आम तौर पर कुछ थोडी-सी तीलियाँ ही दिखलाई पड़ती है, किन्तु कुछ अवसरो पर मुझे प्रतीत होता है कि समूचा पहिया बिलकुल साफ दीख जाता है। सायकिल के पहिये के स्थिर दीखने की व्याख्या इस दशा के लिए सन्तोषजनक साबित न हो पायेगी। यह इतनी अद्भुत घटना है कि कभी-कभी यह कहा जाता है कि कुछ क्षणो पर पहिया वास्तव मे स्थिर हो जाता है जो नितान्त असम्भव बात है!

किन्तु बहुत शीघ्र ही इस बात का पता चल जाता है कि मोटरकार के पहिये का क्षणिक दर्शन लगभग उस वक्त होता है जब हम अपने पैरो को जमीन पर मजबूती से जमाते है, या पहिया उस वक्त भी दीख जाता है जब हम अपने चश्मे को ठकठकाते है (यदि आप का चश्मा निकट-दृष्टि का है) या जब हम अपने सिर को झटका देते हैं।

आजकल बहुत कम ही मोटरकार के पहियों में तीलियाँ पायी जाती हैं। अतः यह घटना कम अवसरों पर ही देखी जा सकती है।

सम्भवत: इन परिस्थितियों में हमारी आँख या दृष्टिरेखा की दिशा मे तीव्र गति से अवमन्दित कम्पन होने लगता है जो कुछ विशेष तीलियों की हरकत के अनुरूप ही होता है, अत: अत्यल्प काल के लिए रेटिना पर बने उनके प्रतिबिम्ब स्थिर बने रह जाते हैं। कदाचित् नेत्र-गोलक का अक्ष ही इधर से उधर की दोलनगति करता है या कि नेत्र-गोलक समष्टिरूप से आँख के कोटर मे हिलता है (रैखिक गति) ? क्या हम परिकल्पना कर सकते हैं कि इस प्रकार के हलके झटके खाकर आँख अपने अक्ष के गिर्द अनियमित चक्रीय गति करने मे समर्थ होती है ?

आँख की कम्पन-गति का प्रत्यक्ष प्रमाण निम्नलिखित से प्राप्त होता है; यदि हम रात्रि मे तेज कदमों से झूमते हुए चले और दूर के लैम्प पर नजर स्थिर जमाये रखें तो देखेगे कि हर कदम के साथ प्रकाश-स्रोत एक छोटा-सा वक्रपथ बनाता है जो बहुत कुछ चित्र ८९ की आकृति के मानिन्द होता है। यह घटना अकसर उस वक्त भी दिखलाई पडती है जब प्रेक्षक स्थिर खड़ा रहकर सामने से गुजरती हुई मोटरकार को देखता है। इसका समाधान इस बात मे मिलता है कि इस दशा मे आँख मे अनजाने ही, अचानक, थोड़ी-बहुत हरकत हो जाती है। आँख मे हलके झटके की गति प्राय होती है, इस बात को हम प्रमाणित कर सकते हैं यदि अस्त होते हुए सूर्य्य को सावधानी के साथ, एक क्षण के लिए देखे। तो अब उत्तर-प्रतिबिम्ब मे नन्हे-नन्हे कई काले बिन्दु देख पड़ेगे न कि अकेली, एक काली अविरत पट्टी (देखिए § ८८)।

चित्र ८९

८६. वायुयान का स्क्रू प्रोपेलर जो प्राकाश्य रूप से स्थिर दीखता है

वायुयान के एक यात्री ने देखा कि तेज रफ्तार के बावजूद भी घूमते हुए प्रोपेलर के ब्लेडो को वह पृथक्-पृथक् करके देख पाता था बशर्ते वह तिरछे करीब ४५° के कोण पर दृष्टि डाले अर्थात् परिमितीय दृष्टिक्षेत्र द्वारा अवलोकन करे। फिर भी प्रोपेलर प्रति सेकण्ड २८ बार घूमता है, अत: प्रति सेकण्ड यह ५६ बार रोशनी को झिलमिलाता है ! तो 'प्रोपेलर' के देखने की अनुभूति और कुछ नही है, बल्कि अत्यन्त ऊँची आवृत्ति की झिलमिलाहट की रोशनी का ही प्रभाव है। इस बात से कि केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र के मुकाबले मे परिमितीय क्षेत्र मे इस घटना का अवलोकन अधिक आसानी से किया जा सकता है, पैरा ८३ मे दिये गये निष्कर्ष के लिए महत्त्वपूर्ण समर्थन प्राप्त होता है।

ये घटनाएँ उस वक्त और भी विलक्षण होती हैं जब प्रोपेलर कुछ धीमी गति से घूमता है, मिसाल के तौर पर, जब वायुयान उड़ान शुरू करने की तैय्यारी कर रहा

होता है। इन दशाओं में इनकी झिलमिलाहट की गति सेकण्ड संख्या को आँकने में हम आश्चर्य्यजनक गलतियाँ करते हैं। केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र मे तो यह संख्या काफ़ी ऊँची लगभग २५ प्रतिसेकण्ड प्रतीत होती है, किन्तु परिमितीय क्षेत्र मे ऐसी अनुभूति होती है मानों प्रकाश-प्रदीप्ति की झिलमिलाहट प्रति सेकण्ड केवल १० बार ही हो रही है! यह उसी तरह की घटना है जैसी हमने अभी झिलमिलाते हुए लैम्प के सम्बन्ध में देखी है (§ ८३)।

८७. सायकिल के घूमते हुए पहिये का प्रेक्षण

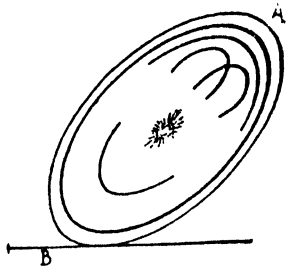
आम तौर पर सायकिल के घूमते हुए पहिये की तीलियाँ अलग-अलग दिखलाई नही देती; ये एक-दूसरे से मिलकर धुँधला पर्दा-सा बनाती है, जो केन्द्र के निकट सबसे अधिक मटमैला होता है और रिम की ओर अधिक दीप्तिमान्। समतल सड़क पर पड़नेवाली पहिये की छाया मे प्रदीप्ति का वितरण इसी प्रकार का होता है। यह छाया कितनी गाढ़ी होती है? प्रत्येक तीली की मोटाई .०८ इंच होती है और रिम पर उनके बीच का फासला औसत रूप से २ इंच होता है। सड़क के किसी बिन्दु पर प्रकाश कितनी देर तक पड़ता है, यह समय पहिये के खुले भाग के क्षेत्रफल तथा पूरे पहिये के क्षेत्रफल के अनुपात पर निर्भर करता है। अतः ऊपर दिये गये अङ्कों की मदद से हम लिख सकते हैं —

$$\frac{\text{सड़क पर प्रकाश जितनी देर तक गिरता है}}{\text{पूरा समय जबतक पहिये पर प्रकाश गिरता है}} = \frac{२}{२+.०८} = \frac{१००}{१०४}$$

ताल्बो के नियमानुसार इससे हमारी आँखों पर वही प्रभाव पड़ता है मानो पहिये से बनने वाली छाया एक स्थिर प्रदीप्ति की हो, जो सड़क के बिना छाया वाले भाग की प्रदीप्ति के १००/१०४ के बराबर है। किन्तु सूर्य की किरणे पहिये पर लम्बवत् नहीं गिरतीं, अतः छाया मे तीलियाँ एक दूसरे के अधिक निकट आ जाती हैं, यद्यपि उनकी मोटाई उतनी ही बनी रहती है। अतः स्पष्ट है कि रिम के नजदीक की छाया आसपास की भूमि के मुकाबले में ४ से लेकर ८ प्रतिशत तक कम प्रदीप्ति वाली होगी, और केन्द्र के निकट प्रदीप्ति की यह कमी सम्भवतः बढ़कर १० से २० प्रतिशत तक हो जाती है। फिर भी प्रदीप्ति के इस अन्तर की अनुभूति कर सकना नितान्त कठिन होता है क्योकि तुलना की जाने वाली दोनों पृष्ठभूमियों को एक दूसरे से अलग करनेवाली टायर की छाया

अत्यन्त गाढ़ी बनती है। केन्द्र की ओर प्रदीप्ति का क्रमिक ह्रास मुश्किल से ही निगाह की पकड़ मे आता है, क्योकि हमारी प्रवृत्ति किसी घिरी हुई सर्वाङ्गपूर्ण आकृति को समष्टि रूप से देखने की होती है, और इस मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण प्रदीप्ति का वास्तविक अन्तर हमारी निगाह से चूक जाता है।

किन्तु विशेष ध्यान से देखने पर पहिये की छाया में आम तौर पर हम एक या अधिक प्रकाश-छल्ले मौजूद पाते है (चित्र ९०)। अक्सर ये सीमित लम्बाई की वक्र आकृतियाँ होती है जो एक ओर खुली रहती है। सायकिल से उतर कर उस स्थल की जाँच कीजिए जहाँ प्रकाश का चाप बनता है। यह उस बिन्दु के सामने पडेगा जहाँ दो तीलियाँ एक दूसरे को काटती हैं--दर असल हम कह सकते है कि ऐसे प्रत्येक कटान-बिन्दु पर एक तीली विलुप्त हो जाती है, अत. छाया का औसत गाढ़ापन अवश्य कम हो जाना चाहिए। लेकिन यह अन्तर कितना हलका होता है! फिर भी हमारी आँखे कितने स्पष्ट रूप से इसकी अनुभूति कर लेती है, क्योकि इस दशा मे तुलना की जानेवाली प्रदीप्तियाँ किसी विभाजक रेखा द्वारा पृथक् न होकर एक दूसरे के साथ सटी हुई रहती है। तीलियों के परस्पर गुँथे जाने के क्रम का वर्णन करना मुश्किल है, बहुधा चार तीलियो का समूह एक साथ गुँथा रहता है और इसी क्रम की पहिये के पूरे भाग मे बार-बार पुनरावृत्ति होती है। दो तीलियो का कटान-बिन्दु एक विशिष्ट वक्ररेखा बनाता है जो एक छोटे, चमकीले चाप की शक्ल की दीखती है। पहिया जब दो तीलियो के दर्मियान की दूरी का चौगुना फासला तय कर लेता है तो छोटे चाप का पुनर्निर्माण होता है। फिर, प्रत्येक समूह मे यदि दो कटान-बिन्दु मौजूद हो तो एक बिन्दु दूसरे बिन्दु के पथ का अनुसरण करता हुआ प्रतीत होता है और तब छोटा चाप विशेष रूप से चमकीला दिखाई पड़ता है। पहली दशा मे चाप अगल-बगल की छाया के मुकाबले मे १ प्रतिशत अधिक दीप्तिमान् दीखेगा और दूसरी दशा मे २ प्रतिशत अधिक। किन्तु चूँकि छाया मे तीलियाँ प्रक्षेपित होने पर आम तौर पर कुछ निकट आ जाती है और चमकीले चाप रिम से कुछ फासले पर ही बनते हैं, अतः दीप्ति-अन्तर



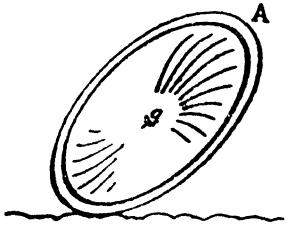
चित्र ९०—सायकिल के घूमते हुए पहिये में प्रकाश तथा छाया की वक्र रेखाएँ।

का परिमाण सम्भवतः ३ से ६ प्रतिशत तक हो सकता है। अतः ये परिमाण, प्रदीप्ति अन्तर की न्यूनतम मात्राएँ प्रगट करते है जो दो संलग्न धरातलों के लिए नज़र की पकड़ मे आ सकती है। यद्यपि सड़क के धरातल का जो यहाँ प्रक्षेपण पर्दे-जैसा काम करता है, समतल न होना एक बड़ी खामी है, फिर भी प्रयोगफल हमारे पूर्ववर्त्ती अनुमान के साथ बखूबी मेल खाते है (§६७)।

इस बात का कारण प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिए कि प्रकाश के चाप और छल्ले, पहिये की दीर्घवृत्तीय छाया के सिरे A के निकट आम तौर पर सबसे अधिक चमकीले बनते हैं और इसकी जाँच कीजिए कि क्यों इनकी आकृति बिन्दु A पर वैसी नही है जैसी B पर।

अपनी सायकिल के पहिये की छाया को देखने के बजाय जब सीधे ही आप बगल में जाती हुई सायकिल के पहिये को देखते है तो ये ही चाप और छल्ले और भी स्पष्ट दीखेगे, क्योकि इस दशा मे ये बिल्कुल साफ़ चमकते है, बिना किसी धुँधलेपन के (देखिए §२)। चमकीली पृष्ठभूमि के सामने तीलियाँ काली प्रतीत होती है, अतः ये अधिक चमकीले दीखते है, किन्तु जब मटमैले रग की पृष्ठभूमि के सामने पहिये पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो छल्ले अपेक्षाकृत मन्द प्रकाश के दीखते है।

तेजी से घूमते हुए सायकिल के पहिये से प्रदर्शित होनेवाले विलक्षण प्रभावों मे इसे आखिरी प्रभाव मत समझ लीजिए। अक्सर ऐसा होता है कि जब आप चक्कर लगाते हुए पहिये की छाया का अवलोकन करते है तो तडित्कौध की तरह तेजी से तीलियो की रेखाएँ स्पष्ट चमक उठती है, ऐसा तभी होता है, जब आपकी आँखे तीव्र-गति से वृत्ताकार घेरे मे हरकत करती है, ताकि अनजाने ही तीलियो की छाया के साथ उसी रफ्तार से आपकी निगाह भी चलती है (देखिए §८५)। यदि आप चश्मा पहनते है तो लेन्स को झटके की थोडी हरकत देना, इस बात के लिए पर्य्याप्त होगा कि तीलियो को अलग-अलग विचित्र झटके खाकर चलते हुए आप देख सके। किन्तु सबसे अधिक विलक्षण छाया आप उस वक्त देखते है जब आप ऊँची-नीची सतह की पत्थर जड़ी सड़क पर सायकिल चलाते है।



चित्र ९१—पत्थर जडी हुई सड़क पर से गुजरने वाली सायकिल के पहिये की छाया मे वक्र रेखाएं।

पृष्ठभूमि के ऊँची-नीची होने के बावजूद भी आप छाया के करीब उसी भाग में त्रिज्यीय वक्ररेखाओं का समूह स्पष्ट देखते हैं। ये रेखाएँ उस दशा में भी प्रगट होती हैं जब आप स्वयं तो समतल सड़क पर सायकिल चलाते हैं, किन्तु पहिये की छाया फुटपाथ के ऊँचे-नीचे पत्थरो पर पड़ती है। स्पष्ट है कि प्रक्षेप-पर्दे की असमतल सतह का प्रभाव वैसा ही होता है जैसा चश्मे के लेन्स को ठक-ठकाने पर। किन्तु रेखाओं की वक्रता कैसे उत्पन्न होती है? और वे आम तौर पर छाया के उसी भाग A में ही क्यों दीखती हैं?

ऊपर वर्णन की गयी वक्ररेखाओं के अतिरिक्त एक और विचित्र हलकी आकृति भी बनती है; अवश्य इसे तभी देखा जा सकता है जब एकदम नयी चमचमाती हुई तीलियोंवाली सायकिल पर सूर्य की किरणे गिरती हैं।

८८. उत्तर-प्रतिबिम्ब

इन प्रेक्षणों के समय बहुत ही अधिक सावधानी बरतिए! आँखों पर अत्यधिक ज़ोर मत दीजिए! एकसाथ लगातार दो से अधिक प्रेक्षण मत कीजिए!

अस्त होते हुए सूर्य को ध्यान से देखिए और तब आँखे बन्द कर लीजिए[1]। अब आँखों मे बाद मे बनने वाले उत्तर प्रतिबिम्ब मे कई नन्ह-नन्हें गोल मंडल मौजूद होगे जो इस बात के प्रमाण हैं कि उस अल्पकाल मे जबकि आपकी नजर सूर्य पर गड़ी रही थी, आपकी आँखो ने हलके झटको मे गति की है। ये मडल आपको विशेष छोटे प्रतीत होगे क्योकि अपनी प्रचण्ड चमक के कारण सूर्य आपको वास्तविक आकार से कुछ बड़ा ही दीखता है; इसका सही आकार तो उत्तर-प्रतिबिम्ब मे ही प्राप्त होता है।

अपनी आँखे फिर खोलिए—जिस ओर आप दृष्टि डाले, उधर ही आपको उत्तर-प्रतिबिम्ब दीखेगे। जितने ही अधिक फासले की वस्तु पर आप प्रतिबिम्ब प्रक्षेपित करेगे उतने ही अधिक बड़े आकार के ये उत्तर प्रतिबिम्ब प्रतीत होगे। अवश्य उनके कोणीय व्यास तो सदैव एक समान ही बने रहते है। यदि आपको मालूम है अमुक वस्तु फासले पर है, फिर भी यह आँख पर उतना ही बड़ा कोण बनाती है, जितना बड़ा कोण एक निकट की वस्तु बनाती है तो आप सहज ही अपने दैनिक अनुभव के आधार पर इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि दरअसल इन दोनो मे दूर वाली वस्तु अवश्य बड़ी होगी।

1. Goethe, Theory of Colours (1840) Titchener, Experimental Psychology (New, York) I, 1, 29, I, 2, 47

मटमैली पृष्ठभूमि पर उत्तर प्रतिबिम्ब हलका दीखता है (पाजिटिव उत्तर प्रतिबिम्ब)। इसकी अनुभूति अच्छी तरह की जा सकती है यदि आँख को बन्द करके उसे हथेलियो मे ढँक दे क्योकि पलके पारदर्शी होती है। इसके प्रतिकूल प्रकाशित पृष्ठभूमि पर उत्तर प्रतिबिम्ब मटमैले रग के बनते है (निगेटिव उत्तर-प्रतिबिम्ब)। स्पष्ट है कि तीव्र प्रकाश रेटिना को स्थानीय तौर पर उत्तेजित कर देता है अत: उस प्रकाश की तो अनुभूति बनी रहती है, किन्तु साथ ही साथ अब रेटिना के उस भाग की सुग्राहिता नवीन प्रकाश-अनुभूतियो के लिए घट जाती है।

इसी प्रकार सूर्य की अपेक्षा कम प्रकाश देनेवाले प्रकाश-स्रोत अपेक्षाकृत हलके उत्तर-प्रतिबिम्ब उत्पन्न करते है। इस दशा मे रेटिना पर प्रभाव डालनेवाली उत्तेजना कुछ सेकण्डो मे या एक सेकण्ड से कम समय मे ही बहुत ही हलकी पड जाती है, केवल रेटिना की श्रान्ति बची रह जाती है अत. अब केवल प्रकाशित पृष्ठभूमि पर विलोम उत्तर-प्रतिबिम्ब देखे जा सकते है।

रंगीन प्रकाश-स्रोतो के लिए उपर्युक्त दशा में उत्तर-प्रतिबिम्ब श्वेत रग से काले रंग मे तब्दील होने के बजाय अपने पूरक रग मे तब्दील हो जाता है; अत. लाल रंग हरे-नीले रग मे परिणत हो जाता है, नारङ्गी रग नीले मे, पीला रग बैंगनी मे, हरा रग गुलाबी मे और इसी तरह रग का परिवर्त्तन उलटे क्रम मे भी चलता है।

सन्ध्या की झुटपुटे की बेला उत्तर-प्रतिबिम्ब के प्रेक्षण के लिए सर्वोत्तम समय है। गेटे द्वारा वर्णित उत्तर-प्रतिबिम्ब की सभी प्रमुख घटनाएँ सन्ध्या को ही देखी गयी थी। इस बेला मे आँखे पूर्ण विश्राम की अवस्था मे रहती है तथा पश्चिम के आकाश की रोशनी और पूर्व के आकाश के अन्धकार के बीच विपर्यास स्पष्टतम होता है।

अपनी कृति 'फाबेन्लेहर्' मे गेटे लिखता है 'एक सन्ध्या को जैसे ही मै सराय के कमरे मे घुसा, एक सुन्दर लडकी मेरी ओर आयी। उसका चेहरा चमचमाते हुए गौर वर्ण का था, बाल काले रग के थे और वह चटकीले लाल रग की बॉडिस पहने हुई थी। मुझसे कुछ फासले पर जब वह खड़ी थी तो मैंने उस झुटपुटे मे उसे गौर से देखा। एक क्षण बाद जब वह चली गयी तो सामने की सफेद दीवार पर मुझे एक काला चेहरा दिखलाई दिया, जो चमकीले प्रकाश से परिवेष्टित था और इस स्पष्ट आकृति के वस्त्र-परिधान खूबसूरत समुद्री हरे रंग के थे।'[1]

1. Goethe, Theory of Colours

कहा जाता है कि आग की नारगी–पीले रग की लपटों को आध घण्टे तक देखते रहने के उपरान्त लोगों को उदय होता हुआ चन्द्रमा नीला प्रतीत होता है।[1]

रात को आँधी-तूफान के समय तडित् कौध के देखने पर उसका उत्तर प्रतिबिम्ब, कभी-कभी प्रकाशित सफेद दीवार या धुँधले प्रकाश के आकाश की पृष्ठभूमि पर साँप की तरह टेढ़ी-मेढ़ी, काले रंग की पतली रेखा की शक्ल मे देखा जा सकता है।[2]

सूर्यास्त के बाद समुद्र-तटपर खड़े होकर यदि फासले पर देखे और क्षितिज पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक नज़र दौड़ाएँ तो एक क्षण ऐसा आता है जबकि हलके प्रकाश वाले आकाश और अन्धकारमय समुद्र के बीच का अन्तर वास्तव मे दृष्टिगोचर नहीं हो पाता। स्पष्टत: इसका कारण यह है कि जितनी अधिक देर तक कोई प्रकाश आँख को उत्तेजित करता है उतना ही उसका उत्तेजक प्रभाव क्षीण हो जाता है; इस क्रिया से रेटिना में श्रान्ति आ जाती है। वास्तव मे यह बात सच है, इसका पता इससे लगता है ज्योंही हम अपनी दृष्टि थोड़ा ऊपर ले जाते है, त्योही समुद्र का निगेटिव उत्तर प्रतिबिम्ब आकाश पर ज्योति की धारी का रूप धारण कर लेता है। यदि हम अपनी दृष्टि नीचे की ओर ले आये तो समुद्र की सतह के सामने हम आकाश का अन्धकारमय उत्तर प्रतिबिम्ब देख सकते है।[3]

८९. एलिजाबेथ लिनो की घटना

प्रख्यात वनस्पतिशास्त्री की पुत्री, एलीजाबेथ लिनो ने एक सन्ध्या को यह देखा कि नास्टूटियम[4] के नारगी रग के फूलो से प्रकाश की ज्योति विकीर्ण हो रही थी। लोगों ने सोचा कि इस घटना का सम्बन्ध विद्युत् से है। डार्विन ने दक्षिणी अफ्रीका की लिली जाति के फूल पर प्रयोग करके इस प्रेक्षण का समर्थन प्राप्त किया था; तथा हैगरेन, डाउडेन और पहले के अन्य आन्वेषकों ने भी इस प्रेक्षण की पुष्टि की है—ये प्रेक्षण सदैव ही उषा या सन्ध्या के झुटपुटे मे प्राप्त किये गये थे। कैनन रमेल ने इस प्रेक्षण की पुनरावृत्ति मेरीगोल्ड तथा प्रज्वलित झाड़ी (डिक्टैम्नस फ्रेक्सिनेला) के साथ की थी और साथ ही साथ उन्होने यह बतलाया था कि कुछ लोगो को यह ज्योति अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट दिखलाई देती है। फिर भी ऐसा प्रतीत होता

1. Cossells Book of Sports and Pastimes (London, 1903) p, 405
2. Nat, **60**, 341, 1905
3. Helmholtz, Physiologische Optik, 3rd Ed. II, 202.
4. Nasturtium (Tropaeolum majus)

है कि यह घटना, जिसके बारे मे उन दिनों समूचे ग्रन्थ लिखे गये, केवल उत्तर-प्रतिबिम्ब के कारण उत्पन्न होती है। गेटे को भी ये उत्तर-प्रतिबिम्ब उस वक्त दीख पड़े थे जब उसने चटकीले रंग के फूलों पर नज़र गडायी और फिर रेतीली सड़क पर दृष्टि डाली। पियोनी, पूर्वीय देश के पॉपी, मेरीगोल्ड तथा पीले क्रोकस के फूलों से मनमोहक हरे, नीले तथा बैंगनी रग के उत्तर-प्रतिबिम्ब प्राप्त हुए थे।[1] ये निरीक्षण विशेषतया सन्ध्या के समय प्राप्त होते हैं तथा ज्वाला-जैसी चमक केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब एक क्षण के लिए हम दृष्टि एक ओर हटाते हैं—उत्तर प्रतिबिम्ब मे इस तरह के सभी ब्योरे के प्राप्त होने की आशा की जा सकती है।

किसी व्यक्ति को जब यह इतमीनान हो जाय कि उसे यह घटना बहुत ही स्पष्ट दिखाई दे रही है तो उसे चटकीले रग के कागज के फूल को असली फूल के निकट रखकर यह देखना चाहिए कि कागज के ये फूल उस घटना का प्रदर्शन करते हैं या नही।

९०. उत्तर-प्रतिबिम्बों में रंगों का परिवर्तन

उत्तर प्रतिबिम्बों के विलुप्त होने की द्रुत गति भिन्न रगों के लिए विभिन्न होती है, विशेषतया उस दशा मे जबकि प्रकाश का प्रभाव अत्यन्त प्रबल रहा हो। यही कारण है कि सूर्य तथा अत्यन्त उजले पदार्थ के उत्तर-प्रतिबिम्ब रगीन दीखते हैं। साधारणतया मटमैली पृष्ठभूमि पर यह उत्तर-प्रतिबिम्ब पहले तो हरे-नीले रग का बनता है, फिर यह गुलाबी रग का हो जाता है।

'सन्ध्या के करीब मैंने लुहारखाने मे ठीक उस समय प्रवेश किया जबकि दहकता हुआ लोहे का एक टुकडा हथौडे के नीचे रखा गया था। कुछ देर तक उसे गौर से देख चुकने के बाद मै पीछे मुड़ा तो सामने, कोयले के खुले हुए गोदाम पर नजर पडी। गुलाबी वर्ण का विशालकाय प्रतिबिम्ब मेरी आँखों के समक्ष उतराता रहा, और जब उस काली पृष्ठभूमि से नजर हटा कर मैंने हलके रग की लकडी की सतह की ओर देखा तो यह प्रतिबिम्ब कम प्रकाशित पृष्ठभूमि पर अर्द्ध हरे रग का और अधिक प्रकाशित पृष्ठभूमि पर अर्द्ध गुलाबी रग का प्रगट हुआ'[2]

धूप में हम बर्फ के ढेर को देख रहे हों, या जब पुस्तक पढ़ते हों जिसपर धूप पड़ रही हो, तो निकट की प्रत्येक चमकदार वस्तु हमे गुलाबी रग की दीखती है; बाद मे साये मे पड़ी गहरे रंग की प्रत्येक वस्तु मनमोहक हरे रग की दीखती है। यहाँ भी चमकीली पृष्ठभूमि पर बनने वाले उत्तर-प्रतिबिम्ब के रग अन्धकारमय पृष्ठभूमि पर बनने वाले

1. Goethe, Theory of Colours 2. Goethe, Theory of Colours

उत्तर-प्रतिबिम्ब के रंग के पूरक होते हैं। कुछ प्रेक्षकों के अनुसार ये उत्तर-प्रतिबिम्ब गुलाबी के बजाय रक्तिम वर्ण के बनते हैं।

आंशिक रूप से इसका एक और कारण भी हो सकता है; सूर्य का प्रकाश न केवल हमारी आँखों मे प्रवेश करता है बल्कि आँख के ऊपर भी वह गिरता है। आँख के ऊपर गिरने वाले प्रकाश का कुछ भाग पलकों और आँख के कोटर को पार करके भीतर पहुँचता है तो इसका रग रक्त वर्ण का हो जाता है। हमारा दृष्टिक्षेत्र इस सामान्य लाल रग की रोशनी से पूर्णतया भर जाता है, और यह हमे उस वक्त स्पष्ट दिखाई पड़ता है जब आस-पास की चीजे मटमैले काले रग की होती हैं। मिसाल के तौर पर काले अक्षर लाल दिखाई देते हैं। अब अगर हम छाया मे चले जायँ, या घर के अन्दर, तो लाल वर्ण के लिए हमारी आँख की श्रान्ति अब भी बनी रहती है, अतः सभी चमकीले भाग हरे दिखलाई पडते हैं।

अस्त होते हुए सूर्य की ओर मुँह करके चले, तो भू-दृश्य की सभी अँधेरी वस्तुएँ हमे लाल रग की दिखलाई पडती हैं; यह प्रभाव उस वक्त विशेष प्रबल होता है जब हम एक क्षण के लिए इस तरह का आयोजन कर लेते हैं कि आँख पर सूर्य की रोशनी तो न पड़े, किन्तु भू-दृश्य को हम देखते रह सकें।

सन्ध्या के प्रकाश मे काले अक्षर लाल रग[1] के देखे गये हैं, सम्भवतःइस कारण कि क्षितिज के निकट के सूर्य की किरणे पाठक की आंखों पर पड़ रही थी।

९० अ. समकालीन विपर्यास[2]

सफेद ड्राइंग कागज का तख्ता लीजिए, इसे अपने सामन सीधा ऊर्ध्व धरातल मे रखिए और ऐसी खिडकी के निकट खडे होइए जिसपर धूप न पड़ रही हो। कागज को खिड़की के धरातल के समकोण रखते हुए दीवार के समानान्तर देखिए तो कागज भलीभाँति प्रकाशित और प्रदीप्त दीखेगा। किन्तु कागज को अब खुली हुई खिड़की के निकट ले आइए ताकि क्षितिज के ऊपर के आकाश के एक भाग को कागज ढक ले, अब अचानक ही कागज काला दिखलाई देने लगता है! तथापि पहले की अपेक्षा इस पर अब कम रोशनी नही पड़ रही है, बल्कि इसके प्रतिकूल यह तो खिड़की के और भी नजदीक आ गया है, अतः इस पर गिरने वाली रोशनी पहले से अधिक होगी। बात तो यह है कि इस दशा मे विपर्यास उत्पन्न करने वाली पृष्ठभूमि बदल जाती है।

1. Ibid 2. Simultaneous Contrasts

यह सरल प्रयोग मौलिक सिद्धान्त प्रगट करता है। खुले आकाश में इस प्रकार के प्रभाव अक्सर दिखलाई देते हैं।

९१. परस्पर सटी हुई विभिन्न प्रदीप्तियों की सतहों के बीच की विपर्यास-सीमारेखा

मुख्यत: सन्ध्या को, अन्धकारमय मकानों की कतार का ढाँचा हलके प्रकाश वाले आकाश के सन्मुख देखने पर, हाशिये पर प्रकाशमण्डित दीखता है। इसकी व्याख्या इस परिकल्पना द्वारा की जा सकती है कि आँख मे अनजाने ही थोड़ी हरकत होती है तो मकानो के दीप्तिमान् उत्तर-प्रतिबिम्ब निकट के आकाश पर प्रगट होते है, अत: वहाँ प्रदीप्ति बढ जाती है। इस रीति से इस प्रभाव की केवल आंशिक व्याख्या हो पाती है; प्रकाशित भाग के गिर्द रेटिना को सतह की सुग्राहिता मे ह्रास होना, इस मामले मे अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व रखता है (§ ७२)।

'एक बार मै घास के मैदान मे बैठा हुआ एक आदमी से बात कर रहा था जो कुछ फासले पर खड़ा था, उसके शरीर का ढांचा धूमिल आकाश के सामने स्पष्ट दीख रहा था। ध्यान से, और लगातार कुछ देर तक, उसे देखते रहने के पश्चात् मैंने अपनी निगाह फेरी तो मुझे उसका सिर दिखाई पड़ा जो जगमगाती हुई प्रकाश-ज्योति से परिवेष्ठित था।'[1]

पतगो के साथ प्रयोग करने के सिलसिले मे पेटर बैक्कैरिया ने देखा कि पतंग तथा इससे बँधी डोरी के गिर्द एक छोटे बादल-जैसा ज्योति-पुज मौजूद था। जब कभी पतग की गति थोडी तेज होती, तो ज्योतिपुज का बादल पीछे ही छूट जाता और क्षणभर के लिए वह इधर से उधर उतराने लगता।[2]

प्रकाशीय विपर्यास की एक अत्यन्त ही अद्भुत मिसाल ऊबड़-खाबड़ जमीन के उन मैदानों मे देखी जा सकती है जहाँ एक के बाद दूसरे टीले दूरी बढ़ने के साथ आकाशीय परिदर्शन[3] के अनुसार हलके पड़ते जाते है, यहाँ तक कि अन्त मे दूर के धुँधलेके मे वे अदृश्य हो जाते है (प्लेट VIII, B)। प्रत्येक टीला सिरे के हाशिये पर पेदे की अपेक्षा अधिक अन्धकारमय दीखता है—यह प्रभाव इतना सुस्पष्ट होता है कि यह बरबस ध्यान आकृष्ट कर लेता है। फिर भी यह है केवल एक दृष्टि-भ्रम ही; जो इस कारण उत्पन्न होता है कि प्रत्येक टीले के सिरे के ऊपर प्रकाशित पट्टी मौजूद होती है और पेदे के सहारे गहरे रग की पट्टी। इसे प्रमाणित करने के लिए भू-दृश्य के ऊपरी भाग को

1. Goethe, Theory of Colours. 2. Ibid 3. Perspective

ढकने के उद्देश्य से कागज का एक टुकड़ा रखना चाहिए (प्लेट VIII, b में बिन्दु रेखाओं की स्थिति पर); यह क्रिया यह दिखाने के लिए पर्य्याप्त होगी कि अब विपर्यास का प्रभाव विलुप्त हो जाता है।

शार्प बतलाता है कि अमावस्या के दो दिन उपरान्त, नाखूनी नवचन्द्र के सम्मुख मन्द रोशनी से प्रकाशित चन्द्रमडलक के बाहरी हाशिये पर हलकी रोशनी दीखती है। तथापि यह विपर्यास घटना नही है, बल्कि यह चन्द्रमा के हाशिये वाले भाग की परावर्त्तन-शक्ति के अधिक होने का परिणाम है; कृष्णपक्ष की अष्टमी के चन्द्रमा मे यह प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।[1]

९२. छाया की सीमारेखा के सहारे विपर्यास का हाशिया

सभी यह जानते है कि दफ्ती के टुकड़े को धूप मे लेकर खड़े हों तो पर्दे पर इसकी छाया पड़गी। हाशिये पर, छाया और प्रकाश के दर्मियान अर्द्धछाया का प्रदेश मिलता है जो सूर्य के परिमित आकार के कारण बनता है (§२)। किन्तु क्या इस बात का सबको पता है कि इस अर्द्धछाया का हाशिया उस स्थल पर जहाँ प्रकाश अर्द्धछाया में तब्दील होता है, **चमकीला** होता है?

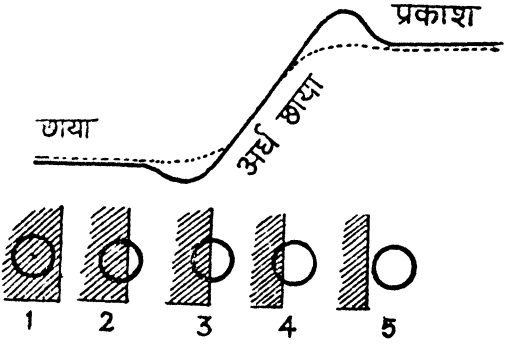
प्रयोग उस वक्त कीजिए जब सूर्य क्षितिज के निकट ही हो ताकि उसका प्रकाश मन्द ही रहे। दफ्ती के टुकडे के पीछे लगभग ४ गज की दूरी पर पर्दा रखिए और इसे इधर-उधर थोड़ा हिलाइए ताकि स्थानीय शिकने दूर हो जायँ। अब उक्त प्रभाव बिलकुल स्पष्ट दीखेगा। प्रेक्षण मे प्राप्त प्रकाश का वितरण चित्र ९२ की पूर्ण रेखा द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

क्या आप इसकी व्याख्या कर सकते है? निम्नलिखित विवेचन से प्रकाश का प्रत्याशित वितरण प्राप्त किया जा सकता है। प्रकाशित पर्दे के क्रमागत बिन्दुओं १, २, ३ से देखने पर सूर्य-मडलक के दफ्ती के पीछे ढक जानेवाले भाग का विस्तार उत्तरोत्तर कम होता जाता है। इन बिन्दुओं की प्रदीप्ति भी सूर्य-मडलक के खुले हुए भाग के क्षेत्रफल की वृद्धि के अनुपात मे ही बढती जाती है, अतः प्रदीप्ति बिन्दु से बने वक्रपथ का अनुगमन करती है। इस प्रकार चमकीले हाशिये का बनना नितान्त असम्भव है—सारा मामला प्रकाशीय दृष्टि-भ्रम के कारण उत्पन्न होता है।

और वास्तव मे सभी परिस्थितियां इसी धारणा का अनुमोदन करती जान पड़ती

1. Phil. Mag. 4, 427. See also Brit. Astr. Ass. **28, 29, 45**
2. K. Groes—Pettersen Ash. Nachr. **196**, 293, 1913

हैं। माश ने सिद्ध किया है कि जब कभी प्रदीप्ति का ह्रास एक समान दर से नहीं होता है तो ये विपर्यास-पट्टियाँ अनिवार्य रूप से प्रगट होती हैं—अर्थात् विपर्यास-पट्टी तभी दीखती है जब प्रदीप्ति-ग्राफरेखा वक्रमार्ग मे जाती है। हमेशा ही ऐसा प्रतीत होता है कि विपर्यास-पट्टी, ग्राफ की वक्ररेखा का ही परिवर्द्धित रूप है। दरअसल बात



चित्र ९२—**छाया की सीमारेखा के संलग्न विपर्यास हाशिये**
.....दीप्ति का वास्तविक वितरण
——दीप्ति का आभासी वितरण

यही है—इसे समझने के लिए या तो हम कल्पना करें कि आँख मे निरन्तर थोड़ी हरकत होती रहती है या यह कि रेटिना के प्रकाशित भाग के निकट उसकी सुग्राहिता घट जाती है।

§९१ मे उल्लिखित दृष्टान्त भी माश के सिद्धान्त के पूर्णतया अनुकूल बैठते हैं—इस दशा मे केवल हमे प्रदीप्ति-वक्र के कोण को, वक्रता की वृद्धि के रूप मे मानना पड़ेगा।

और अन्त मे, समय-समय पर हमे अत्यन्त ही विशिष्ट अवसर इस सिद्धान्त की जाँच के लिए मिलते हैं—अर्थात् सूर्य के आंशिक ग्रहण के वक्त उपर्युक्त प्रयोग को इस अवसर पर दुहराने पर जैसे-जैसे चन्द्रमा के पीछे सूर्य-मडलक के हिस्से छिपते जाते हैं, और जैसे-जैसे छाया डालने वाली दफ्ती की स्थिति हम बदलते हैं, उसी के अनुसार अर्द्ध छाया के हाशिये पर प्रकाश के अनेक असाधारण वितरण-क्रम प्राप्त होते हैं। प्रत्येक वितरण-क्रम मे प्रकाश्य रूप से विपर्यास-पट्टियाँ प्रदर्शित होती हैं और प्रत्येक दशा मे माश के नियम का पालन होता है। अत. आश्चर्य नही कि ये छायाएँ इतनी असाधारण दीखती हैं कि आकस्मिक प्रेक्षकों का भी ध्यान ये अपनी ओर आकृष्ट कर लेती हैं (देखिए §३)।

९३. कृष्ण वर्ण का तुषार (स्नो)

धूमिल आकाश से तिरते हुए से नीचे गिरने वाले तुषार की नन्हीं परत के टुकड़ों का अवलोकन कीजिए। आकाश की पृष्ठभूमि पर ये टुकड़े निश्चय ही काले रंग के दीखते है। यह बात ध्यान मे रखना चाहिए कि काला, धूमिल, और श्वेत रंग केवल अकेले एक गुण के कारण भिन्नता प्रदर्शित करते है, और वह है उनकी प्रदीप्ति, जिसकी नाप के लिए आसपास की पृष्ठभूमि ही, तुलना के मापदण्ड का काम करती है। इस दशा में सभी प्रदीप्तियों की तुलना आकाश से की जाती है, और यह आकाश जितना हम ख्याल करते है उससे कहीं अधिक प्रकाशमान है; कम-से-कम नीचे से दृष्टिगोचर होनेवाली गिरती हुई बर्फ के मुकाबले मे तो आकाश अत्यधिक चमकीला है ही। इस घटना का उल्लेख अरस्तू ने भी किया था।

९४. श्वेत तुषार और धूमिल आकाश

आकाश जब समान रूप से धूमिल रहता है तो हिमाच्छादित भूमि की तुलना में यह बहुत अधिक मटमैला दीखता है। फिर भी स्पष्टतः यह प्रभाव है भ्रमोत्पादक; क्योंकि इसी [illegible] है, और जिस वस्तु पर प्रकाश गिरता है उसकी सतह की प्रदीप्ति प्रकाश-स्रोत की अपेक्षा कदापि अधिक नहीं हो सकती। दीप्ति-मापी यंत्र द्वारा नापने पर आकाश की प्रदीप्ति-मात्रा निस्सन्देह अधिक ठहरती है। यदि दर्पण लेकर उसे इस प्रकार रखे कि आकाश का प्रतिबिम्ब तुषार के प्रतिबिम्ब से सटा हुआ बने तो आप देखेंगे कि श्वेत आकाश की तुलना में तुषार दरअसल भूरे रंग का प्रतीत होता है। इस प्रयोग को अवश्य कीजिए क्योंकि यह उतना ही विश्वसनीय है जितना आश्चर्यजनक।

इतने पर भी विपर्यास का भ्रम दूर नही होता यद्यपि हम जानते है कि वास्तव में बात ठीक उलटी है। इस दशा मे तुषार और उसके आस-पास के अपेक्षाकृत अत्यन्त गहरे शेड के वृक्ष, झाड़ियाँ और मकानों के दर्मियान का विपर्यास ही निर्णायक तत्त्व बन जाता है।

इसी प्रकार बदलीवाले दिन सफेद रंग की दीवार आकाश की अपेक्षा अधिक प्रकाशमान प्रतीत हो सकती है। फोटोग्राफ तथा चित्र इस भ्रमात्मक धारणा के अनुकूल न होने के कारण अत्यन्त अस्वाभाविक लगते है।

९५. रंगों का विपर्यास

अनेक दशाओं मे जबकि वातावरण मे कोई एक विशेष रंग प्रमुखता प्राप्त करता है तो इसके बदले मे पूरक रंग विशेष चटकीला प्रतीत होगा। कुछ दशाओं मे इसकी

व्याख्या उसी प्रकार की जा सकती है जिस प्रकार विपर्यास हाशिये की—अर्थात् इस परिकल्पना द्वारा कि आँख मे अनायास ही निरन्तर हरकत होती रहती है। किन्तु इस सम्बन्ध मे अधिक महत्त्व की बात यह है कि रेटिना के वे भाग जो प्रमुख रग द्वारा उत्तेजित होते है, सलग्न भागो को उस रंग के प्रति कम सुग्राही बना देते है। इसका अर्थ हुआ कि हमारी आँख अब पूरक रग के लिए अधिक सुग्राही बन जाती है—अतः इस कारण आँखो को पूरक रग द्वारा अधिक संतृप्ति और ताजगी की अनुभूति मिलती है। इस दृष्टिकोण से विचार करने पर हम पाते है कि रगो का विपर्यास इस व्यापक नियम का एक और उदाहरण है कि रग और प्रदीप्ति की अनुभूति रेटिना पर अङ्कित होनेवाले सभी प्रतिबिम्बो के सयुक्त प्रभाव द्वारा ही की जाती है।

एक प्रेक्षक ने इस बात पर गौर किया है कि सहन के फर्श में जड़े धूसर रग के पत्थरों के दर्मियान उगी हुई घास, सन्ध्या को, जब बादल रक्तिम वर्ण की अत्यन्त हलकी आभा पत्थरो पर बिखराते है, अत्यन्त ही मनमोहक हरे रग की दीखती है।[1]

जब हम औसत रूप के खुले आकाश मे खेतो मे टहलते है तो चारो ओर हरे रग की प्रमुखता रहती है, और वृक्षो के तने, टीले तथा पगडण्डिया हमे ललछवे रग की दिखलाई पड़ती है।

हरे काँच वाली खिड़की मे से देखने पर धूसर रंग का मकान ललछवे रंग का प्रतीत होता है। फिर समुद्र की लहरे जब मनोहर हरे रंग की दीखती हैं तो छाया मे स्थित भाग गुलाबी रग के दिखलाई देते है[2] (देखिए §§ २१२, २१६)।

यदि आप के आसपास मिट्टी के तेल के लैम्प या मोमबत्ती की रोशनी हो रही है जो सुर्खी लिये हुए होती है, तो आर्क लैम्प या चन्द्रमा की रोशनी हरे-नीले रंग की प्रतीत होगी। यह विपर्यास विशेष रूप से उस वक्त प्रबल होता है जब प्रकाश-स्रोत अत्यधिक प्रचण्ड ज्योति के नही होते—मिसाल के लिए चन्द्रमा और गैस की लौ, दोनों के प्रतिबिम्ब को पानी मे जब हम एक साथ देखते है।

वृक्षों के झुरमुट को पार करके सूर्य की किरणे नीचे जमीन पर जब गिरती है तो इस तरह बनने वाले रोशनी के धब्बे आसपास के सामान्य हरे रंग की तुलना मे हलके गुलाबी रंग के प्रतीत होते है।[3]

1. Goethe, Theory of Colours 2. Ibid
3. Helmholtz 'On the relation of Optics to painting' popular science Literature 2nd Seriesce (London 1873)

लिनार्दो दा विन्ची ने इस बात का उल्लेख किया है कि किस तरह 'काले रंग के वस्त्र-परिधान चेहरे को वास्तविकता से अधिक गौर वर्ण का बना देते हैं, तथा श्वेत वस्त्र चेहरे को साँवले रग का प्रदर्शित करते है, पीले रंग के वस्त्र से चेहरे का रंग खिल उठता है तथा लाल रंग के वस्त्र चेहरे को पीला बना देते है।'

रंग-विपर्यास उस वक्त विशेष रूप से प्रमुख होता है जबकि संलग्न प्रदेशों की प्रदीप्ति मे अन्तर बहुत अधिक नही होता। जब प्रदीप्तियों में अन्तर **अत्यधिक** होता है तब उस दशा मे क्या नतीजा होता है? यह शाम के झुटपुटे में बखूबी देखा जा सकता है जब पश्चिम के अङ्गारे-जैसे नारङ्गी वर्ण के आकाश की पृष्ठभूमि पर मकानों की कतार काले रंग में उभरी हुई प्रतीत होती है। दूर से बस उनका गहरे काले रंग का खाका ही दिखाई पडता है, तमाम ब्योरे और उनकी प्रदीप्तियों के अन्तर गायब हो जाते है। झाड़ियों और टहनियों की भी उसी प्रकार केवल रूपरेखा भर काले मखमल की भाँति दीखती है—उनके निज के रग गायब हो चुके रहते हैं (§२२०); ऐसा इसलिए नहीं होता कि चीज़ों पर पडने वाली रोशनी स्वयं बहुत कम है, क्योंकि उसी मौक़े पर भूमि पर वस्तुओं के रग की सभी बारीकियाँ स्पष्ट रूप से पहचानी जा सकती है।

बर्फ पर कुछ घंटों तक चलते रहने के दर्मियान केवल श्वेत तथा भूरे रंग ही देखने को मिलते है, अतः अब अन्य रंग हमें तृप्ति की और खुशनुमा होने की अनुभूति देते हैं। मानो हमारी आँखों को इन रगों की अनुभूति के लिए पर्य्याप्त विश्राम मिल चुका होता है।

गेटे अपनी कृति 'थियरी आव कलर्स' मे लिखता है "और फिर ये घटनाएँ कुशल प्रेक्षक को हर कही देखने को मिल जाती है, यहाँ तक वह इनसे ऊब-सा जाता है।"

९६. रंगीन छाया

कागज़ के तख्ते पर पेन्सिल को सीधी खड़ी करे ताकि एक ओर से इसपर मोमबत्ती की रोशनी पड़े और दूसरी ओर चन्द्रमा की रोशनी। तब इसकी दोनों छायाओं मे रंग का स्पष्ट अन्तर दीखता है। मोमबत्ती से बननेवाली छाया का रंग नीलापन लिये हुए होता है और चन्द्रमा वाली छाया पीलापन लिये हुए होती है।[1]

यह सही है कि रंग का यह अन्तर **भौतिक** है क्योंकि पहली छाया जहाँ पड़ती है वहाँ कागज़ केवल चन्द्रमा की रोशनी से प्रकाशित होता है और जहाँ दूसरी छाया पड़ती

1. Goethe, Theory of Colours

है वहाँ केवल मोमबत्ती की रोशनी पड़ती है; और चाँदनी निस्सन्देह मोमबत्ती के प्रकाश की अपेक्षा अधिक श्वेत है। किन्तु फिर भी चाँद की रोशनी नीली नही है। स्पष्ट है कि दोनों छायाओं के रंग का अन्तर हमारी शारीरिक प्रक्रिया सम्बन्धी[1] कारणों से उत्पन्न विपर्यास द्वारा सशोधित होकर तीव्रतर हो उठता है।

इसी प्रकार रात मे सड़क के लैम्प तथा चन्द्रमा की रोशनी से बनने वाली अपनी दोनों छायाओं के अन्तर का हम निरीक्षण कर सकते है।

विद्युत् लैम्प के प्रकाश का नारङ्गी रग सोडियम लैम्प की तुलना मे कितना गाढ़ा है, इसका प्रेक्षण उन स्थानों पर किया जा सकता है जहाँ दोनो के प्रकाश परस्पर मिले हुए होते है। सोडियम लैम्प द्वारा बननेवाली छाया मनमोहक नीले रग की होती है; और विद्युत् लैम्प वाली छाया नारङ्गी वर्ण की! ज्योही हम अकेले सोडियम लैम्प के प्रकाश में आते है, हमारी छाया काले रंग की प्रतीत होने लगती है—आगे चलते-चलते जब हम साधारण विद्युत् लैम्प के निकट पहुँचते है तो यही छाया अचानक नीले रंग की हो जाती है; इसके विपरीत अकेले विद्युत् लैम्प के प्रकाश मे बनने वाली छाया, जब हम सोडियम लैम्प के निकट जाते है, अचानक नारङ्गी रग मे परिवर्त्तित हो जाती है। स्पष्ट है कि आँखे अपने वातावरण के प्रति अपने को सामानुयोजित कर लेती है और इस क्रिया में आँख की प्रवृत्ति होती है कि वातावरण के प्रमुख वर्ण को वह श्वेत प्रकाश के रूप मे ग्रहण कर ले, अतः अन्य सभी रंगों की अनुभूति अब इस तथा-कथित 'श्वेत' प्रकाश के लिहाज से की जाती है।

गेटे लिखता है कि चटक पीले रग की वस्तुओं की छाया बैंगनी रंग की बनती है। भौतिक दृष्टि से निस्सन्देह यह बात सच नही है, किन्तु शारीरिक प्रक्रियाओ द्वारा उत्पन्न होने वाले विपर्यास के कारण ऐसा प्रतीत हो सकता है—उदाहरण के लिए जब वस्तु का प्रकाशित भाग प्रेक्षक के सामने पडता है, तो प्रेक्षक को इसकी छाया एक विकट रूप से तीव्र पीले प्रकाश के सानिध्य[2] मे दीख पडती है।

आप जानना चाहेगे कि दोपहर को सूर्य की धूप मे छाया करीब-करीब पूर्णतया रंगविहीन क्यों होती है जब कि आकाश का नीला वर्ण सूर्य के प्रकाश के रग से इतना अधिक भिन्न होता है। इसका उत्तर यह है कि प्रकाशित भाग और छाया की प्रदीप्ति मे अन्तर बहुत ही अधिक है। किन्तु पर्दे को जिसपर छाया पड़ती है यदि तिरछे झुकाएँ, ताकि सूर्य की किरणें इस पर करीब-करीब सतह के समानान्तर पड़े, तो रग का विपर्यास

1. Physiological 2. Juxtaposition

और अधिक स्पष्ट तौर पर उभर आता है। इसका एक प्रख्यात उदाहरण है हिम पर पड़ने वाली छायाएँ—इस दशा में इनके रंग की विशुद्धता विशेष रूप से निखर आती है। इनका रंग नीला इसलिए होता है कि इन्हे केवल नीले आकाश से रोशनी मिलती है। इनका नीलापन स्वयं आकाश के नीलेपन के बराबर तक पहुँचता है। चूंकि इन्हें हम सूर्य के पीलेपन वाले प्रकाश से प्रदीप्त हिम के बगल मे देखते हैं अतः इन्हें तो और भी अधिक नीला दिखना चाहिए। किन्तु प्रदीप्ति मे अन्तर अधिक होने के कारण जितनी आशा की जाती है उसकी अपेक्षा कम ही मात्रा मे यह नीलापन निखर पाता है। अब छाया का प्रेक्षण उस वक्त कीजिए जब सूर्य भू-दृश्य के पीछे छिपने को होता है—विशेषतया छिपने के पूर्व के अन्तिम क्षणों मे। सूर्य जैसे-जैसे नारङ्गी वर्ण, फिर लाल, तब गुलाबी रंग धारण करता है वैसे-वैसे छाया भी क्रमशः नीली, हरी और हरे-पीतवर्ण की होती जाती है। रंग के ये शेड इतने प्रमुख इस कारण होते हैं कि इस दशा मे छाया और निकट के हिम की प्रदीप्ति मे अन्तर दिन की अपेक्षा बहुत कम होता है। क्योंकि अब किरणे हिम धरातल पर अत्यन्त तिरछी होकर गिरती है, अतः अब आकाश का विस्तृत प्रकाश अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता प्राप्त कर लेता है। इसके अतिरिक्त अब सूर्य के रग और भी अधिक संतृप्त हो जाते है।

जाड़े के दिनों मे हार्ज[1] की यात्रा मे दिन छिपने के समय मैं ब्रोकेन[2] से नीचे उतरा; ऊपर तथा नीचे के खेतों पर श्वेत बर्फ पड़ी थी और झाड़ियो का मैदान हिम से ढका था; दूर-दूर खड़े वृक्ष, उभरी हुई पर्वत चोटियाँ, वृक्षो के झुरमुट तथा चट्टाने, पाले से पूर्णतया ढकी हुई थी, और ओडर झील के उस पार सूर्य बस अस्त हो ही रहा था। दिन मे जबकि हिम के रग में पीलेपन का पुट मौजूद था, छायाएँ हलके बैंगनी शेड की दिखलाई देती थीं, किन्तु अब जबकि हिम के प्रकाशित भाग से अधिक चटकीले पीतवर्ण का प्रकाश परावर्त्तित हो रहा था, छायाएँ निश्चित रूप से चटकीले नीले रग की हो गयी थी। किन्तु सूर्य जब ठीक डूबने को हुआ और उसकी रोशनी ने वायुमण्डल से प्रभावित होकर मेरे आसपास की सभी चीजो पर शानदार गुलाबी आभा फैला दी तो छाया का रग हरे वर्ण मे तब्दील हो गया जो विशुद्धता मे समुद्र के रग के मानिन्द था तथा सौन्दर्य मे मरकतमणि का मुकाबला करता था। घटना का दृश्य उत्तरोत्तर अधिक सजीव होता गया; वातावरण परीलोक-सदृश बन गया क्योंकि प्रत्येक वस्तु इन दोनो पूर्णतया सन्तुलित चटकीले प्रकाश वर्णों से आच्छादित थी और तब अन्त मे सूर्य के अस्त

1. Harz 2. Brocken

हो चुकने पर यह शानदार दृश्य धूसर धुंधलके में तब्दील हो गया जो बाद में स्वच्छ रात्रि में परिणत हो गया जिसमे चाँद और सितारे मौजूद थे।'[1]

बर्फ पर पड़ने वाली रंगीन छाया की घटना आंशिक तौर पर और कुछ अद्‌भुत तरीके से मानसिक कारणों पर अवलम्बित है।[2] दिन के वक्त जबकि आकाश नीला दीखता है, ये छायाएँ अधिक संतृप्त नीले रंग की दीखती है बशर्ते इस बात का पता न हो कि हम बर्फ पर देख रहे है। दूरी पर स्थित साये मे पड़ी बर्फ की सतह से छाया में स्थित सफेद वर्फ तथा 'नीले वर्ण की झील' दोनों का आभास हो सकता है। इसी प्रकार बर्फ पर पड़ने वाली छाया केमरे के घर्षित काँच के परदे पर प्राप्त किये जाने पर वास्तविक दृश्य के मुकाबले मे कही अधिक नीले रग की दीखती है, अतः तुरन्त ही यह पहचान मे आ नहीं पाती है। एक प्रेक्षक ने सनोवर के घने वन में से दूर की झाड़ियों पर तुषार का अवलोकन किया तो जाहिर है कि उसका प्रेक्षण पक्षपातरहित था क्योकि तुषार उसे वास्तव में नीले वर्ण का प्रतीत हुआ; परिस्थितियाँ इस प्रकार थीं मानों दोनों ओर से खुली किसी लम्बी नली मे से उसका अवलोकन किया जा रहा हो (§ १७४)।

मनोवैज्ञानिकों को इस बात का भलीभाँति पता है कि एक नन्हें सूराख मे से अवलोकन करने पर रंग अपने असली वर्ण में देखे जा सकते हैं। उस दशा में प्रभाव इस प्रकार का होता है मानों वे छिद्र के ही धरातल में स्थित हों। किन्तु ज्योंही हम कल्पना करते है कि प्रेक्षण की जाने वाली वस्तुएँ अपने निज के वातावरण में हैं तथा उन पर रोशनी सामान्य तरीके से पड़ रही है तो स्वतः ही हम वातावरण के प्रभाव की कमी-बेशी दूर कर लेते हैं, अतः वह वस्तु बदलती हुई दशाओं मे भी विशेष रूप से एक-सी बनी रहती है।

बालकों के निरीक्षण से प्राप्त इसी घटना का (बालक निष्पक्ष प्रेक्षक होते है) अद्‌भुत विवरण एक रूसी लेखक ने दिया है। एक क्षण के लिए भी इस बात मे मुझे सन्देह नही है कि यह विवरण वास्तविक घटना से लिया गया है, यद्यपि लेखक ने कुछ तफसील की बाते छोड़ दी होंगी क्योंकि उसने विवरण अपनी याददाश्त से लिखा है—आकाश का कम-से-कम कुछ भाग तो जब बर्फ गिर रही थी और सूर्य बादलों की ओट में था, अवश्य नीला रहा होगा।

1. Goethe, Theory of Colours
2. I.G. Priest, J.O.S.A., **13**, 308, 1326

"गाल्जा, देख !...अरे यह तो नीली बर्फ क्यों गिर रही है ? देखो !...यह नीली है, एक दम नीली !....."

'बच्चे उत्तेजित हो गये और आह्लादपूर्वक एक दूसरे को सम्बोधित करके चिल्लाने लगे !'

"नीली ! नीली ! !...नीली बर्फ !"

"नीली क्या है ? कहाँ ?"

'मैंने बर्फ से ढके खेतों और हिमाच्छादित पहाड़ों को देखा, मैं भी आह्लादित हो गया। कितना असाधारण दृश्य था ! हर दिशा से घूमती, फहराती बर्फ गिर रही थी, निकट भी, दूर भी, नीली परतों की लहर-जैसी । और बच्चे आह्लादमय उत्तेजना मे चिल्ला रहे थे :'

"क्या नीला आकाश टुकड़े-टुकड़े होकर नीचे गिर रहा है ? क्यों, यही बात है न गाल्जा ?"

"नीला ! नीला ! !"

'और एक बार फिर मैं इन नन्हें-मुन्ने बच्चों की काव्य-जनित तीक्ष्ण अनुभूति की क्षमता से प्रभावित हो गया। एक मैं हूँ कि उनके साथ चलता जा रहा हूँ बिना इस बात की अनुभूति किये हुए कि हमारे चारों ओर नीली आभा तिरती हुई बिखर रही है। जिन्दगी मे कितने शीत काल मैंने बिताये, कितनी ही बार गिरती हुई बर्फ को देखकर मैं आह्लादित हो चुका हूँ, किन्तु एक बार भी तो मैं धरती के ऊपर मँडराती हुई इस नि.सीम नीली बर्फ की अजस्र वर्षा के प्रति आकृष्ट नही हो पाया था।'[1]

९७. परावर्तित रंगीन प्रकाश से उत्पन्न रंगीन छाया

रंगीन वस्तुओं पर जब सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो प्रायः वे इतनी अधिक रोशनी इधर-उधर बिखेरती हैं कि इनके कारण छायाएँ बन जाती हैं जो पूरक रंग प्रदर्शित करती हैं। प्रकाश के इस प्रभाव के प्रेक्षण के लिए एक छोटी पाकेटबुक एक आदर्श साधन साबित होती है। पुस्तिका को इस तरह खोलिए कि इसके दोनों ओर के भाग एक दूसरे के साथ समकोण बनाये—अब इसके दोनों फलकों मे से एक तो सूर्य के प्रकाश को रोकता है और दूसरे फलक पर रंगीन परावर्त्तन अङ्कित होता है। पाकेटबुक की पेन्सिल को कागज के सामने रखते हैं तो इसकी छाया पूरक रंग ग्रहण कर लेती है;

1. From the Dutch translation Fj. Gladkow, Nieuwe Crond (Amsterdam, 1933) p. 161

अत: यह इस बात के लिए एक अत्यन्त ही सुग्राही निर्देशक है कि आपतित प्रकाश रंगीन है अथवा नहीं। दीवार की हरे रंग की सतह या हरी झाड़ियों से बननेवाली छाया गुलाबी रंग प्रदर्शित करती है। पीले रग की दीवार नीली छाया डालती है (एक बार ४०० गज के फासले पर भी ऐसी छाया प्राप्त की गयी थी !) और पीले रंग के पहाड़ी ढाल से भी इसी रग की छाया प्राप्त होती है।[1]

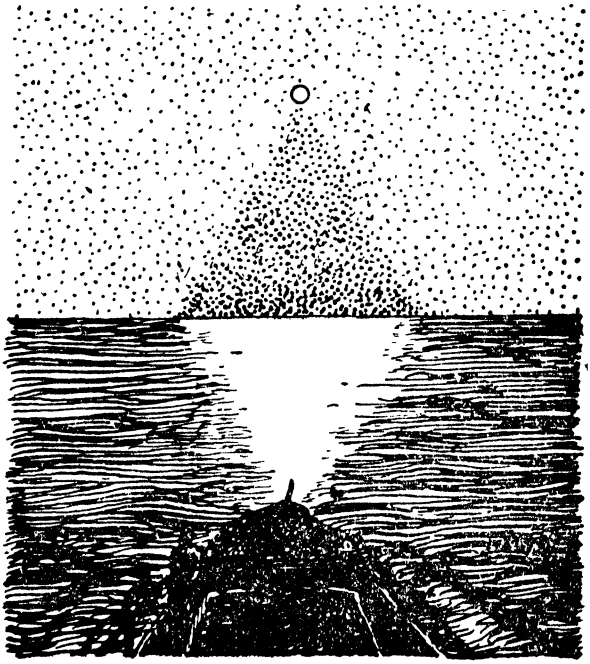
९८. विपर्यास-त्रिभुज

एक प्रेक्षक बतलाता है[2] कि एक बार स्वच्छ रात्रि में अपने जहाज से उसने चन्द्रमा को जो क्षितिज से २०° की ऊँचाई पर था, लहरों द्वारा प्रकाश के एक त्रिभुज के रूप में प्रतिबिम्बित होते देखा जो जहाज़ से लेकर क्षितिज तक फैला हुआ था। विलक्षण बात तो यह थी कि उसी वक्त उसने वैसा ही एक और त्रिभुज देखा जो उलटा और मटमैला था और यह चन्द्रमा से लेकर क्षितिज तक फैला था। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह एक वास्तविक घटना नही थी, बल्कि शारीरिक प्रक्रिया के फलस्वरूप घटी थी—ऐसा सोचने के कारण अनेक हैं; क्योंकि यह घटना उस वक्त भी दिखाई देती है जब समुद्रतट के पहाड़ करीब-करीब चन्द्रमा की ऊँचाई तक पहुँचते है तथा यह उस वक्त विलुप्त हो जाती है जब नीचेवाला प्रकाश का त्रिभुज तथा चन्द्रमा किसी ओट के पीछ आ जाते है। और उलटी ओर मुँह फेरने के बाद उसने जब पुन. उस ओर देखा तो यह भ्रमपूर्ण दृश्य केवल चन्द सेकण्ड बाद ही फिर दृष्टिगोचर हुआ। (चित्र ९२ अ)

यह विवरण मुझे कुछ बहुत विश्वसनीय नहीं जान पड़ा और मैंने इस पुस्तक के द्वितीय सस्करण से इसे निकाल देने का निर्णय कर लिया था। संयोग देखिए कि तभी एक डच प्रेक्षक से ठीक इसी घटना का विवरण मुझे प्राप्त हुआ ! कुछ ही समय उपरान्त इसी तरह के प्रेक्षण अन्य लोगों से भी मुझे प्राप्त हुए। चित्रों तथा विज्ञापन पुस्तिकाओं में भी इस प्रभाव को हम लोगों ने देखा। प्रयोगशाला में बड़ी आसानी से इसकी पुनरावृत्ति की जा सकती है। इसमे सन्देह नही कि यह एक विपर्यास घटना है जिसके कारणों पर प्रेक्षक ने पर्य्याप्त प्रकाश डाला है; लगभग १० सेकड के प्रेक्षण के उपरान्त क्षितिज के ऊपर पहले अन्धकारमय हाशिया दीखता है, तब मटमैला त्रिभुज धीरे-धीरे ऊपर उठता है और करीब ५ सेकण्ड उपरान्त चन्द्रमा तक पहुँच जाता है। यदि आप चमकीले त्रिभुज को ओट मे ले लें, तो यह प्रभाव विलुप्त हो जाता है और यदि आप

1. C. R. 48, 1105, 1859 2. Cl. Martins, C. R. 43, 763, 1856

चन्द्रमा को ओट में लें, तो घटना में तब्दीली बहुत कम होती है, केवल मटमैले त्रिभुज का एकदम चोटी का सिरा विलुप्त हो जाता है।



चित्र ९२ अ—**विपर्यास-त्रिभुज का निर्माण किस प्रकार होता है।**

यह आवश्यक प्रतीत होता है कि **क्षितिज के ऊपर का आकाश** धुँधली रोशनी से प्रकाशित होना चाहिए, मिसाल के लिए, जब धुन्ध चन्द्रमा की रोशनी से प्रकाशित होता है। प्रकाश्यतः इस विपर्यास-त्रिभुज का सम्बन्ध विपर्यास-धारियों से है। इस मटमैले त्रिभुज को एक तरह से लहरों में चमकीले त्रिभुज के प्रतिबिम्ब के रूप में हम देखते हैं—कदाचित् इस अनुभूति का कारण यह है कि हमारी सहज प्रवृत्ति चीजों को संमित रूप तथा योजनाबद्ध आकृतियों में देखने की होती है।

इसी प्रकार की घटना दिन के समय भी देखी गयी है जब चन्द्रमा का स्थान सूर्य ले लेता है, किन्तु अपेक्षाकृत यह बहुत कम स्पष्ट उभर पाती है।

अध्याय ९

प्रेक्षण द्वारा आकृति और गति का विवेचन

९९. स्थिति और दिशा सम्बन्धी प्रकाशीय दृष्टिभ्रम

मान लीजिए कि दृष्टिक्षेत्र मे हम वस्तुओं के दो समूहो को अलग-अलग पहचान पाते है। प्रत्येक समूह मे वस्तुएँ या तो परस्पर समकोण है या एक दूसरे के समानान्तर, किन्तु दोनों समूह एक दूसरे के लिहाज़ से झुकी हुई स्थिति मे है। तब इनमे से एक समूह प्रमुखता प्राप्त कर लेता है और हमारी प्रवृत्ति होती है कि ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज दिशा को निश्चित करने के लिए इसे ही हम अपना सही मापदण्ड मान ले।

रेलवे लाइन के मोड़ पर जब रेलगाड़ी खड़ी होती है या धीरे-धीरे चलती है और हमारा कम्पार्टमेण्ट एक ओर को झुक जाता है तो सभी खम्भे, मकान और स्तम्भ आदि विपरीत दिशा मे झुके हुए प्रतीत होते है। प्रगट है कि हमे अपने कम्पार्टमेण्ट के झुके होने का ज्ञान अवश्य है, किन्तु एक सीमित हद तक ही।

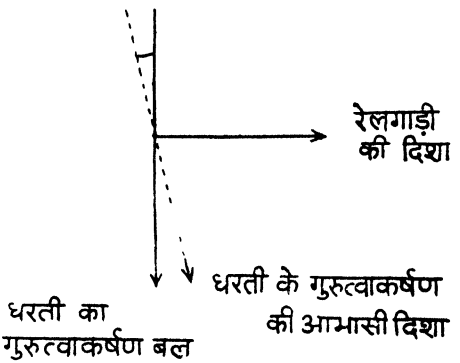
बगल से आने वाली हवा के झोंके से हिलते हुए जहाज के दहलीज मे जब कोई व्यक्ति मुझसे मिलता है तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि ऊर्ध्व दिशा के मुकाबले में वह एक ओर को झुका हुआ है।

सड़क के हलके ढाल का निरीक्षण करते समय भी सायकिल सवार को इसी प्रकार का अनुभव होता है।[1] सदैव ही सड़क का वह भाग जहाँ वह सायकिल चला रहा है, उसे बहुत अधिक क्षैतिज जान पड़ेगा। पहाड़ी के गहरे ढाल पर नीचे आते समय सड़क के बगल मे पड़े नाले का पानी उसे क्षैतिज तल मे नही जान पड़ेगा बल्कि ऐसा प्रतीत होगा मानो पानी की सतह का ढाल स्वयं सायकिल सवार की ओर को है। नीचे की ओर के हलके ढाल पर ऐसा प्रतीत होता है मानो आगे चलकर सड़क का ढाल ऊपर की ओर हो गया है जबकि वास्तव मे सड़क वहाँ समतल ही होती है। फिर दूरी पर स्थित सड़क की चढ़ान बहुत ही अधिक तीव्र जान पड़ती है, इसके प्रतिकूल नीचे की ओर

1. Bragg, The Universe of Light (London 1933) p. 66

की ढलान हलकी ही जँचती है। आँख विशेष रूप से इस बात की अनुभूति करती है कि हमारे सामने सड़क के ढाल की तब्दीली किस प्रकार की है—और इस सिलसिले में हमारी दृष्टि-अनुभूति हमारे उस अनुभव से प्रायः भिन्न होती है जो पैडल चलाते समय रुकावट के बल द्वारा हम महसूस करते हैं।

जिस वक्त रेलगाड़ी ब्रेक लगाकर धीरे-धीरे चलती है, हम एक अद्भुत दृष्टिभ्रम का निरीक्षण कर सकते हैं। अपना ध्यान चिमनियों, मकानों, खिड़की के चौखटों या अन्य सीधी खड़ी वस्तुओं पर जमाइए; तो जिस क्षण रेलगाड़ी की रफ्तार विशेष अधिक परिमाण में घटती है, आप को ऐसा प्रतीत होगा कि ये सभी ऊर्ध्व खड़ी वस्तुएँ सामने की ओर झुक आती हैं—यह प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट ठीक उस क्षण दीखता है जब रेलगाड़ी अचानक रुक जाती है—और फिर तुरन्त ही बाद वे पुनः सीधी खड़ी हो जाती हैं। इन परिस्थितियों मे क्षैतिज तल का मैदान भी तिरछा झुका हुआ दीख पड़ता है और फिर यह पुनः क्षैतिज हो जाता है। व्याख्या इस प्रकार है, ब्रेक के लगने पर हम तनिक आगे की ओर झुक जाते हैं मानों धरती के गुरुत्वाकर्षण की दिशा बदल गयी हो। अब हमारी पेशियों की इस नये ऊर्ध्वधरातल की अनुभूति के लिहाज़ से ये वास्तविक चीजें सामने की ओर हमारी तरफ़ झुकी-सी प्रतीत होती है (चित्र ९३)।



चित्र ९३—**रेलगाड़ी की गति के धीमे पड़ने पर धरती के गुरुत्वाकर्षण बल की दिशा में आभासी परिवर्तन।**

१००. गति की दृष्टि-अनुभूति कैसे होती है ?

आम तौर पर लोगों का ख्याल है कि हरकत उस वक्त प्रगट होती है जब किसी स्थिर बिन्दु के लिहाज़ से वस्तु की स्थिति में परिवर्त्तन का निरीक्षण करते हैं। किन्तु यह बात अनिवार्य रूप से सही नहीं है; ठीक लम्बाई या समय की अवधि की भाँति

ही वेग की भी स्वतंत्र, एकाकी प्रेक्षण-अनुभूति की जा सकती है। जब आप आकाश मे हरकत करते हुए बादलों को देखते हैं तो तुरन्त आप को उनकी दिशा और वेग की अनुभूति प्राप्त हो जाती है।

यह देखा गया है कि १′ या २′ प्रति सेकण्ड तक की मन्द कोणीय गति का पता हमारी दृष्टि-अनुभूति लगा लेती है किन्तु केवल उसी दशा में जबकि दृष्टिक्षेत्र में नाप के लिए स्थिर बिन्दु मौजूद हों (यद्यपि हम भले यह महसूस न कर पाये कि स्थिर बिन्दुओं के लिहाज से हम नाप कर रहे हैं।) इन स्थिर बिन्दुओं की अनुपस्थिति मे इससे दस गुनी रफ्तार तक के प्रेक्षण मे भी अनिश्चितता बनी रहती है—इस दशा में तुलना-तंत्र का कार्य आप की आँख करती है जिसकी पेशियाँ आप को यह महसूस कराती है कि आँख स्थिर है और इस तुलना-तंत्र[1] के लिहाज से आप अपनी दृष्टि इन्द्रिय द्वारा अनुभव करते हैं कि प्रतिबिम्ब रेटिना पर हरकत करते हैं।

आकाश मे गुजरते हुए बादलों का अध्ययन कीजिए और अपने अवलोकन के समय इतमीनान के प्रारम्भिक क्षणों मे तुरन्त उनकी हरकत करने की दिशा निश्चित करने का प्रयत्न कीजिए। इसके लिए विभिन्न परिस्थितियाँ लीजिए—ऊँचे बादल तथा अपेक्षाकृत निकट के बादल; हलकी बयार तथा तेज हवा के झोंके; चाँदनी रात तथा चन्द्रमाविहीन अँधेरी रात। यदि रफ्तार २′ प्रतिसेकण्ड हो तो इसका अर्थ है कि बादल के हाशिये को चन्द्रमा के मडलक को पूर्णतया पार कर लेने मे १५ सेकण्ड लगते हैं।

सूखने के लिए बाहर टाँगे गये चौड़े खाने वाले जाल पर ध्यान दीजिए। रह-रह कर आने वाली हवा के झोंके को जाल पर से गुजरता हुआ हम स्पष्ट देख सकते हैं, किन्तु आँख को यदि किसी एक खाने पर ही जमाये रखे तो मुश्किल से ही किसी किस्म की हरकत का आभास हो पाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी आँख परस्पर-सम्बद्ध नन्ही-नन्ही गतियों के मिश्रित प्रभाव के प्रति विशेष रूप से सुग्राही है।

१०१. गतिशील तारे[2]

सन् १८५० के लगभग एक रहस्यमय घटना के प्रति लोगों के मन मे बड़ी दिलचस्पी उठी थी; तारे को जब आँख गड़ाकर देखते थे तो यह इधर से उधर हिलता हुआ

1. Frame of comparison

2. Pogg Ann 12, 655, 1957. For more recent literature concerning autokinetic visual impressios, see Hdb. d, Phys, Vol 20, Physiologische Optik p. 174

प्रतीत होता था, मानो अपनी स्थिति बदल रहा हो। कहा जाता है कि यह घटना केवल सन्ध्या के धुँधलके मे देखी जा सकती थी और सो भी उस दशा में जबकि प्रेक्षण किये जाने वाले तारे की क्षितिज पर ऊँचाई १०° से कम ही हो। तेज प्रकाश से टिमटिमाता हुआ तारा शुरू मे क्षितिज के समानान्तर, झटके की गति में हरकत करता हुआ प्रतीत होता था, फिर पाँच-छ-सेकण्ड तक यह स्थिर अवस्था में जान पड़ता, और तब उसी प्रकार यह पुनः हरकत करता इत्यादि। कई प्रेक्षकों ने तो इस घटना को इतने स्पष्ट तौर पर देखा कि उन्होंने इसे वस्तुनिष्ठ ही समझा और उसकी व्याख्या करने के प्रयत्न मे इन्होंने बतलाया कि वायु के गर्भ-स्तरों की उपस्थिति के कारण यह घटना उत्पन्न होती है।

किन्तु यहाँ किसी वास्तविक भौतिक घटना की उपस्थिति का प्रश्न ही नहीं उठता। कोरी आँख से दिखाई देनेवाली $\frac{1}{2}$° प्रति सेकण्ड की गति एक औसत शक्ति की दूरबीन द्वारा आसानी से १००° तक आवर्द्धित की जा सकती है; इसका अर्थ है कि तब तारे इधर से उधर दोलन करेंगे और दृष्टिक्षेत्र मे उल्काओं की भाँति तीव्र वेग से एक सिरे से दूसरे सिरे को भागते नजर आयेंगे। यह सोचना कि ऐसा होता है यह एक पूर्णतया निरर्थक सम्भावना है। उस वक्त भी, जबकि वायुमण्डल का उद्वेलन चरम सीमा पर होता है, झिलमिलाहट के कारण तारे का स्थिति-परिवर्त्तन कोरी आँखों की सुग्राहिता की सीमा की पकड़ मे नही आ सकता। किन्तु मानसिक दृष्टि से इस घटना का महत्त्व किसी भी तरह से कम नहीं हुआ है।

व्याख्या प्रायः इस प्रकार की जाती है कि ऐसा आँख की अनायास गति के कारण होता है जिसके लिए तुलना के निमित्त कोई संदर्भ वस्तु लभ्य नहीं होती है। किन्तु [illegible] के उपरान्त यह व्याख्या युक्तिसंगत नही जान पड़ती; तारों का आभासी विस्थापन नेत्र के अन्दर द्रव के अनियमित स्राव के कारण उत्पन्न हुआ जान पड़ता है, और यह स्राव नेत्र की पेशियों के विभिन्न दबाव से प्रभावित होता है (Americ. journ of Psych, 1928-29)।

किसी ने मुझसे एक बार पूछा था कि बहुत दूरी पर उड़ते हुए वायुयान पर दृष्टि जमाकर देखने पर वह सदैव ही नन्हे-नन्हे झटके खाकर हरकत करता हुआ क्यों प्रतीत होता है? इस दशा मे भी वही मानसिक कारण कार्य करता हुआ प्रतीत होता है जो हरकत करते हुए तारे' के लिए लागू होता है—और 'बहुत दूर' की शर्त इस बात की ओर इङ्गित करती है कि यह घटना भी सर्वाधिक रूप से क्षितिज के निकट ही उत्पन्न होती है।

और भला इस बात का समाधान हम कैसे कर सकते हैं कि अचानक ही और एक साथ तीन व्यक्तियों ने लगभग ३० मिनट तक चन्द्रमा को ऊपर नीचे नाचते हुए देखा ?[1]

१०.२. विराम और गति की दशा के सम्बन्ध में दृष्टिभ्रम

एक सुपरिचित दृष्टिभ्रम उस वक्त उत्पन्न होता है जब स्थिर रेलगाड़ी में बैठे हुए आप बगल की रेलगाड़ी को उस वक्त देखते हैं जबकि वह चलना आरम्भ करती है। एक क्षण के लिए तो आप समझ बैठते हैं खुद आपकी ही रेलगाड़ी स्टेशन से रवाना हो रही है। या फिर ऊँची मीनार के पार आकाश में गुजरते हुए बादलों को कुछ क्षणों तक देखते रहने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो बादल तो स्थिर हैं और मीनार ही हरकत कर रही है। इसी प्रकार कुछ लोगों को ऐसा दिखाई देता है मानो स्थिर बादलों के झुड के दर्मियान से चन्द्रमा भागता जा रहा है। पतले तख्ते पर चल कर नाले को पार करते समय इस बात की सावधानी रखिए कि नीचे बहते हुए पानी को न देखें वरना सिर चक्कर खा जायगा—यहाँ स्थिरता और गति की दशा के निर्णय करने की आप की क्षमता अव्यवस्थित हो जाती है क्योंकि आप के दृष्टिक्षेत्र का असाधारण रूप से एक बृहत् भाग गतिशील होता है। प्रथम बार समुद्री यात्रा करनेवाले व्यक्ति को ऐसा जान पड़ता है कि केबिन में लटकी हुई चीजें इधर-उधर झूल रही हैं और स्वयं केबिन स्थिर है।

इन सभी उदाहरणों के दृष्टिभ्रम §९९ में दिये गये दृष्टिभ्रम से निकट का सम्बन्ध रखते हैं। सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विवेचन से पता चलता है कि हमारी प्रवृत्ति उन चीजों को गतिशील मानने की होती है जिन्हे अपने-अपने अनुभव द्वारा हम भू-दृश्य में अक्सर हरकत करती हुई जानते हैं। किन्तु इसके अतिरिक्त एक और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और अधिक व्यापक नियम यह है—हमारे लिए स्थिरता की अनुभूति स्वतः दृष्टिक्षेत्र फ्रेम अर्थात् दृष्टिक्षेत्र को परिवेष्ठित करने वाले तत्त्वों से सम्बद्ध होती है, जबकि गति की अनुभूति दृष्टिक्षेत्र के भीतर घिरे हुए तत्त्वों से सम्बद्ध रहती है। उपर्युक्त दृष्टान्तों में कई एक के लिए यह द्वितीय नियम प्रथम नियम के खिलाफ़ जाता है और जैसा हमारे दृष्टिभ्रम से स्पष्ट है, यह नियम हमारे दैनिक जीवन के सामान्य अनुभवों के बिलकुल विपरीत ही बैठता है।

मैं रेलगाड़ी के कम्पार्टमेण्ट में खिड़की के निकट बैठा हुआ, मानो स्वप्न में बाहर की भूमि को लीन होकर देख रहा हूँ जो रेलगाड़ी की रफ्तार के कारण पीछे को तेज़ी से

1. Nat, 38, 102, 1888

भागती जा रही है। गाड़ी के खड़ी होते ही और उसके स्थिर हो जाने का पूरा अहसास करने के बावजूद भी बाहर दृष्टि डालने पर अनिवार्य रूप से ऐसा लगता है मानों रेलगाड़ी पीछे की ओर धीरे-धीरे सरकती जा रही है—किन्तु यह गति ऐसी नहीं है कि बाहर का समस्त दृष्टिक्षेत्र समान वेग से चलता हुआ जान पड़े। निकट के लिए गति तेज़ जान पड़ती है, दूर के लिए अपेक्षाकृत धीमी, तथा जिस बिन्दु पर मेरी दृष्टि टिकी है उसके दाहिने-बाये के स्थलों के लिए भी गति धीमी जान पड़ती है। समस्त भूदृश्य मेरे बैठने के स्थल के गिर्द चक्कर लगाता-सा प्रतीत होता है; किन्तु एक लचीले पदार्थ की तरह चक्कर लगाते हुए यह दृश्य जैसे खिंच उठता है, फिर सिकुड़ जाता है। इसके घूमने की दिशा, रेलगाड़ी के चलते वक्त की दिशा की उलटी रहती है (§१०७)। यह एक दिलचस्प बात होगी यदि गाड़ी के खड़े होते ही हम उठकर दूसरी ओर की खिड़की के निकट जा बैठें, तब दृश्य के घूमने की दिशा वही होनी चाहिए जो ट्रेन की हरकत के समय थी।

सम्भव है कि अनजाने ही हमारी आँख की पेशियाँ सामने से तेजी के साथ गुजरती हुई चीजों का अनुगमन करने की अभ्यस्त हो जाती हैं और जब गाड़ी खड़ी हो जाती है तो आँख की यह अनायास की हरकत तुरन्त नहीं रुक पाती, अतः कुछ देर तक के लिए हम वास्तविक वेग में अपनी ओर से 'क्षतिपूरक वेग' का सयोजन करते रहते हैं। किन्तु आँख की अकेली एक हरकत द्वारा इस बात का समाधान करना नितान्त असम्भव है कि क्यों दृष्टिक्षेत्र के हाशिये की ओर वेग बदलता जाता है। इस प्रकार के प्रयोग किये गये हैं जिनमे प्रेक्षक केन्द्र-बिन्दु से चारो ओर निरन्तर बिखरती रहने वाली नन्हीं-नन्ही वस्तुओं का अवलोकन कुछ देर तक करता रहता है; जब हरकत बन्द हो जाती है तो चारों ओर से प्रकाशबिन्दु पुनः केन्द्र की ओर आते हुए दीखते हैं। इसकी व्याख्या सम्भवतः आँख की अकेली एक गति द्वारा नहीं की जा सकती। अधिक सम्भावना इस बात की है कि हमारा 'मस्तिष्क' जो दृष्टिक्षेत्र के प्रत्येक भाग मे वेग को एक निश्चित मात्रा मे घटा देने के लिए प्रशिक्षित हो चुका होता है, गति के रुक जाने पर भी अपनी यह क्रिया जारी रखता है।[1]

उपर्युक्त घटना उस वक्त भी दिखाई देती है जब कम्पार्टमेण्ट की खिड़की के काँच के किसी विशेष स्थल पर हम आँख गड़ा कर देखते हैं; इस प्रकार आँख की हरकत का विलोपन हो जाता है; इस घटना के दृष्टिगोचर होने के लिए यह शर्त्त जरूरी है कि

1. Von Kries in Helmholtz

रेलगाड़ी की रफ्तार इतनी तेज न हो कि बाहर की वस्तुएँ केवल एक लकीर-सी खींचती हुई प्रतीत हों।

फिर भी इसके प्रतिकूल ब्रूस्टर का बहुत दिनों पूर्व का प्रेक्षण[1] निश्चित रूप से यह सिद्ध करता है कि आँखे अनायास हरकत करती हैं। रेलगाड़ी की खिड़की से बाहर देखने पर निकट की पत्थर की रोड़ियाँ लकीर के रूप मे खिच उठी दिखाई देती है; किन्तु जल्दी से जरा दूर की जमीन पर नजर डाले तो जरा से लमहे के लिए ये रोड़ियाँ स्थिर-सी जान पड़ती हैं मानों विद्युत् चिनगारियो से ये प्रदीप्त हो उठी हों। मेरी राय मे इससे निश्चय ही यह सिद्ध होता है कि आँखे दरअसल हरकत करती हुई वस्तुओं का अनुगमन करती हैं यद्यपि अनुगमन की गति उनकी रफ्तार के ठीक बराबर नहीं होती।

ब्रूस्टर ने ही एक और निरीक्षण किया था—कागज के तख्ते मे कटी एक झिरी मे से देखते हुए उसने तेजी से भागती हुई पत्थर की उन रोड़ियों का अवलोकन किया तो उसने पाया कि सामने की ओर ही देखते हुए जब उसने आँख को अचानक इधर-उधर फिराया, ताकि रोड़ियों का प्रतिबिम्ब अप्रत्यक्ष दृष्टि-क्षेत्र मे पड़े तो एक लमहे के लिए प्रत्येक रोड़ी स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गयी। आखिर इसकी व्याख्या क्या हो सकती है?

मेरी दाहिनी ओर एक खेल का मैदान है जिसके किनारे रेलिंग की एक लम्बी बाड़ बनी है। इसके किनारे से गुजरते समय मै अपना सिर दाहिने मोड़े रखता हूँ और मैदान मे खेलते हुए बच्चों को देखता रहता हूँ। दो-एक मिनट के बाद मै बिलकुल सामने की ओर निगाह डालता हूँ तो सडक के पत्थर के टुकड़े तथा सामने की अन्य चीजे दाहिने से बाये हरकत करती हुई दीखती है। दुबारा इस प्रयोग को दुहराने के प्रयत्न मे इस बार जब मै बच्चों पर निगाह जमाने के बजाय बाड़ की रेलिंग पर आँख गड़ाता हूँ तो यह घटना उतनी स्पष्ट नहीं उभर पाती है। इस किस्म के प्रेक्षण मे प्रायः देखा जाता है कि यह आवश्यक नहीं है कि आँखे तेजी से हरकत करनेवाली वस्तुओं का ही स्वयं अनुगमन करे; बल्कि बेहतर यही होता है कि निगाह किसी तटस्थ पृष्ठभूमि पर टिका दी जाय जबकि प्रकाश और अन्धकार के सुस्पष्ट विपर्यास वाले प्रतिबिम्ब रेटिना पर से होकर गुजरते रहे।

नीचे गिरती हुई हिम-लच्छियों का अवलोकन करते समय मै अपनी दृष्टि किसी एक लच्छी पर पहले जमाता हूँ जो नीचे को आ रही है, फिर फुर्ती के साथ ऊपर की

1. Proc. Brit. Ass. p. 47, 1848.

किसी और लच्छी पर दृष्टि जमा देता हूँ, और यही क्रम कई मिनट तक जारी रहता है। इसके बाद जब मैं हिमाच्छादित भूमि की ओर निगाह डालता हूँ तो यह सचमुच ऊपर उठती हुई नजर आती है और मुझे ऐसा अनुभव होता है जैसे स्वयं मैं नीचे धँसता जा रहा हूँ।

तेज बहाव वाली नदी की सतह को या पानी पर हरकत करते हुए बर्फ के शिला-खण्डों को चन्द मिनटों तक देखते रहिए और इस दौरान अपनी दृष्टि द्वीप की किसी वस्तु या, मिसाल के लिए, नौका बाँधने वाले खम्भे पर टिकाये रखिए। अब पुनः स्थिर जमीन पर नजर डाले तो आप को 'धारा की उलटी दिशा की गति' दीख पड़ेगी। इसी प्रकार पानी के झरने का कुछ देर तक अवलोकन करने के उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है मानों किनारे की भूमि ऊपर की ओर उठ रही है; 'एक अन्य अवसर पर मैं एक अत्यन्त ऊँचे तथा बहुत सँकरे झरने को देख रहा था, और तब एक चिकने पर्वतीय ढाल पर मैंने नजर डाली तो मुझे उसकी एक पतली पट्टी ऊपर सरकती हुई दिखलाई दी'—पर्किन्ज। पर्किन्ज एक बार खिड़की मे से सड़क से गुजरते हुए घुड़सवारों के जलूस को देख रहा था तो कुछ देर बाद उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि सड़क की दूसरी ओर के मकानों की कतार उलटी दिशा मे हरकत कर रही है। खेत के पौदों की बालियों के बीच पगडण्डी से गुजरते समय यदि आप दूरस्थ चन्द्रमा को देखते रहे तो इस दृष्टिभ्रम के दृष्टिगोचर होने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ एक बार फिर प्राप्त हो जाती है।

सक्षेप मे ये परिस्थितियाँ इस प्रकार है (क) हरकत कम-से-कम एक मिनट तक जारी रहनी चाहिए; (ख) गति का वेग बहुत अधिक नहीं होना चाहिए इसके लिए वेग का एक अनुकूलतम मान होता है; और (ग) दृष्टि बराबर किसी स्थिर या गतिशील वस्तु पर इस प्रकार टिकी होनी चाहिए कि रेटिना पर से गुजरने वाले प्रतिबिम्ब पर्याप्त विपर्यास और सुस्पष्ट विवरण प्रदर्शित कर सके।

१०३. दोलन करने वाले युग्म तारे

सुविख्यात ज्योतिर्विद हर्शेल ने इस घटना का अवलोकन किया था। सप्तर्षि-मण्डल के एक छोड़कर अन्तिम तारे [illegible] दूरबीन से प्रेक्षण कीजिए। आप इस चमकीले तारे के निकट ही मन्द प्रकाश का तारा देखेंगे (चित्र ६१, ७८)। अच्छा होगा यदि प्रयोग उस वक्त आप करे जब मन्द प्रकाश का तारा चमकीले सितारे के ठीक नीचे स्थित हो (यद्यपि प्रयोग उस वक्त भी सफल हो सकता है जब यह तारा अन्य किसी स्थिति मे भी हो)। अपनी द्विनेत्री दूरबीन को आहिस्ते से बायें हटाइए, फिर दाहिनी ओर,

तब वापस बायीं ओर उसे ले आइए और यही क्रम बस इस रफ्तार से जारी रखिए कि तारों के प्रतिबिम्ब नन्हे प्रकाशबिन्दु के रूप मे दीखते रहे। तब ऐसा प्रतीत होगा मानो मन्द प्रकाश का तारा प्रत्येक हरकत मे चमकीले तारे की तुलना मे कुछ पिछड़ जाता है, मानों यह डोरी द्वारा बँधा हो और चमकीले तारे के गिर्द दोलन गति कर रहा हो (चित्र ९४)। इसका कारण यह है कि रेटिना को प्रभावित करने मे प्रकाश को कुछ समय लगता है। और तारे की चमक जितनी अधिक होगी उतना ही कम समय यह रेटिना को प्रभावित करने में लेगी। अतः जितनी देर मे मन्द प्रकाश वाले तारे की स्थिति हम देख पाते है उतने समय मे चमकीला तारा कुछ दूर आगे जा चुका होता है।

चित्र ९४—इधर-उधर हिलती हुई द्विनेत्री दूरबीन से देखने पर युग्म तारे का आभासी दोलन।

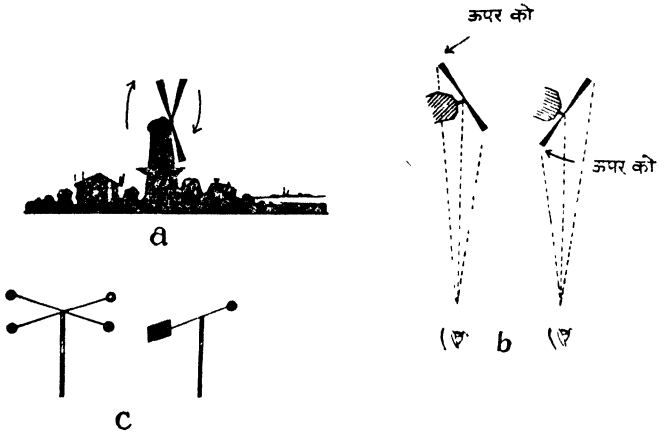
इस घटना के सिद्धान्त का उपयोग पुल्फ्रिच ने एक नये ढग के दीप्तिमापी[1] के निर्माण मे किया है।

१०४. भ्रमणगति की दिशा के सम्बन्ध में प्रकाशीय दृष्टिभ्रम

सन्ध्या के झुटपुटे मे पवन-चक्की के घूमते हुए पखों की सिल्युएत (चित्र ९५, a) को यदि चक्की के धरातल की तिरछी दिशा से देखे तो उसके घूमने की दिशा हमे दक्षिणावर्त्त भी प्रतीत हो सकती है और वामावर्त्त भी (चित्र ९५, b)। घूमने की दिशा को एक ओर से दूसरी ओर परिवर्त्तित देख सकने के लिए यह आवश्यक होता है कि पवन-चक्की पर एक क्षण के लिए ध्यान विशेषरूप से केन्द्रित किया जाय। किन्तु आमतौर पर इतना ही पर्य्याप्त होता है कि केवल शान्तिपूर्वक उसे देखते रहे तो चक्की के घूमने की दिशा अपने आप बदल जाती हुई प्रतीत होती है। अनेक ऋतु-अनुसन्धान वाले स्टेशनों पर रोबिन्सन अनीमोमीटर[2] लगे रहते है—यह एक छोटी पवन-चक्की होती है जो ऊर्ध्व धुरी के गिर्द चक्कर लगाती है। जब कुछ फासले से शान्तिपूर्वक मै बिना विशेष इच्छाशक्ति लगाये उसके घूमते हुए हत्थो को देखता हूँ तो हर २५, ३० सेकण्ड पर वे अपने घूमने की दिशा को उलट देते हुए प्रतीत होते है। इसी प्रकार वायु की दिशा बतलाने वाला हत्था इधर से उधर झूलते समय अपनी दिशा के बारे हमें भ्रम में डाल सकता है विशेषतया उस दशा में जबकि वह बहुत ऊँचाई पर न लगा हो (चित्र ९५, c)।

1. Photometer 2. Anemometer (वायु की रफ्तार नापने का यंत्र)

इन सभी दशाओं में घूमने की दिशा पहचानने की हमारी क्षमता इस बात पर निर्भर करती है कि भ्रमण-मार्ग का कौन-सा भाग हमारे निकट प्रतीत होता है और



चित्र ९५—संध्या के समय पवनचक्की का सिल्युएत (छाया चित्र)

(a) प्रेक्षक इसका प्रेक्षण करता है।

(b) अपने प्रेक्षण का यह क्या अर्थ लगाता है।

(c) अन्य भ्रमोत्पादक सिल्युएत (छाया चित्र)।

कौन-सा भाग दूर। वे भाग जिन पर हमारा ध्यान विशेषरूप से आकृष्ट होता है, साधारणतया हमारे निकट जान पड़ते हैं। अतः घूमने की दिशा का जाहिरा परिवर्त्तन इस कारण उत्पन्न होता है कि हमारे ध्यान का केन्द्रस्थल अचानक बदल जाता है।

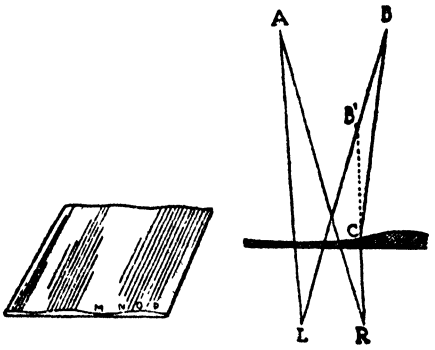
१०५. पिंड-दर्शन की घटना[1]

रेलगाड़ी की खिड़की मे लगे घटिया किस्म के काँच में से देखने पर हमे अजीब दिलचस्प बात दृष्टिगोचर होती है। गाड़ी के खड़ी हो जाने तक इन्तजार कीजिए और जमीन पर पड़ी पत्थर की रोड़ियों का अवलोकन करिए। अपनी आँख काँच के निकट ही लगाये रखिए, अपने सिर को स्थिर बनाये रखिए और अपनी पूर्ववर्त्ती धारणा

1. Steoroscopic Phenomena

को भूल जाइए कि जमीन को चौरस ही दिखना चाहिए। अचानक ही आप अनुभव करेंगे कि जमीन मे उतार-चढ़ाव मौजूद है, बल्कि अत्यन्त तीव्र उतार-चढ़ाव। यदि काँच के समानान्तर आप अपने सिर को हिलाये-डुलाये तो जमीन के ये उतार-चढ़ाव-विपरीत दिशा मे हटते जान पड़ते हैं। यदि आप खिड़की से दूर हटते हैं, तो उस दशा में भी ये उतार-चढ़ाव उतने ही ऊंचे दीखते हैं किन्तु उनके बीच का फैलाव बढ़ जाता है।

इसका कारण यह है कि खिड़की का काँच पूर्णतया समतल नहीं है बल्कि इसकी मोटाई विभिन्न स्थलों पर विभिन्न होती है। आम तौर पर काँच की सतह की उठान तथा उसका गहरापन किसी खास दिशा के समानान्तर चलते हैं, जो इस कारण उत्पन्न होते हैं कि तप्त पिघले हुए काँच को इस्पात के रोलरों के बीच से गुजरना पड़ा है। काँच की इस तरह की लहरदार सतह एक प्रिज्म सदृश काम करती है जिसके वर्त्तन कोर का कोणीय मान कम ही होता है,अत. यह सतह किरणों मे थोड़ा विचलन पैदा कर देती है। चित्र ९६ मे आँखे L और R जमीन के बिन्दु A को देखती हुई मानी गयी हैं अत: काँच



चित्र ९६—**विषम मोटाई वाले काँच में से देखने पर भूमि ऊंची नीची तरंगमय जान पड़ती है।**

की सतह के ऊँचे-नीचे होने का आभास नहीं होने पाता। किन्तु आँखे जब बिन्दु B को देखती हैं तो किरण B Rइस बार सीधी रेखा मे नहीं जाती बल्कि यह मुड़कर B C R मार्ग का अनुसरण करती है। फल यह होता है कि आँखे ऐसी दिशा मे देखती हैं मानों वे B′ पर केन्द्रित हों, जो बिन्दु B की अपेक्षा अधिक निकट स्थित है। काँच की सतह के अन्य किसी भाग मे किरणों का विक्षेप भिन्न होगा अत: उस दशा में दृश्य वस्तु का प्रतिबिम्ब पीछे हट गया हुआ प्रतीत होगा। इस व्याख्या से यह बात समझ मे आ सकती है कि काँच की सतह की मोटाई का थोड़ा अन्तर भी बाहर की चीजो मे अत्यधिक उभार का दृष्टिभ्रम उत्पन्न कर सकता है यद्यपि अलग अलग आँखों पर पड़ने वाले प्रभाव जिस तरीके से एक दूसरे के साथ मिलकर यह भ्रम पैदा करते हैं, वह कभी-कभी काफी जटिल होता है। उदाहरण के लिए यदि

बायीं आँख काँच के समतल भाग में से देखती हैं और दाहिनी आँख ऊँचे-नीचे भाग से तो पिंड-दर्शन का प्रभाव जिस तरीकेसे उत्पन्न होता है उसकी क्रिया-विधि का पता लगाया जा सकता है। अपनी बायी आँख बन्द करके सिर को इधर-से-उधर थोड़ा हिलाइए; तो भूमि का प्रतिरूप काँच के अवतल भागो के लिए उसी दिशा मे हटेगा जिस दिशा मे सिर हटता है (M, चित्र ९६) तथा उत्तल भागों के लिए प्रतिरूप विपरीत दिशा मे हटेगा (O, चित्र ९६) (क्यो ?) अब यदि आप दोनों आँखे खोल दें तो काँच के बिन्दु M और O भूमि के उन स्थलों की सीध में पड़ते हैं जिन्हें हम औसत दूरियों पर देखते हैं। दाहिनी आँख से विन्दु N की सीध में अवलोकन करने पर हम शृंग देखते हैं और P की सीध मे गर्त्त देखेग। स्वयं निजके प्रेक्षण से इनकी जाँच करने का प्रयत्न करिए और प्रेक्षण-फल की बारीकियों का समाधान भी करिए।

इसी से एकदम मिलती-जुलती घटना उस वक्त भी देखने को मिलती है जब हम पानी की हलकी लहरों वाली सतह के अत्यन्त निकट खड़े होते हैं। मिसाल के लिए, वृक्ष की किसी डाल के परावर्त्तित प्रतिविम्ब पर निगाह जमाने का प्रयत्न करिए; चूँकि दोनों आँखे उस लहरदार सतह के एक ही बिन्दु को नहीं देखती अतः इन्हें दीखने वाले दोनों प्रतिबिम्बों के बीच की कोणीय दूरी बराबर बदलती रहती है और आँख के अक्ष को उनपर ठीक तौर से केन्द्रित कर सकना कठिन हो जाता है। इस कारण एक विचित्र प्रकार की अनुभूति पैदा होती है जिसका विवरण दे सकना मुश्किल है। ज्यों ही हम एक आँख बन्द करते हैं त्यों ही पानी की सतह का दृष्टिगोचर होना एक तरह से बन्द-सा हो जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिबिम्ब के बजाय स्वयं वृक्ष को ही हम देख रहे हैं जो हवा के कारण हरकत कर रहा है। दोनों आँखों के खोलते ही अचानक लहर-दार सतह स्वयं दीखने लग जाती है, किन्तु यह सतह **चमचमाती** सी है; यह एक लाक्षणिक घटना है जो उस वक्त उत्पन्न होती है जब कि दोनों आँखों में से प्रत्येक भिन्न प्रदीप्ति के प्रतिबिम्ब ग्रहण करती है—एक प्रकाशमय और दूसरी अदीप्तिमान्।

१०६. चन्द्रमा पर मनुष्य[1]

'चन्द्रमा पर दिखलाई देने वाला मनुष्य' इस बात के लिए एक उत्तम चेतावनी है कि हमे अपने प्रेक्षण पर्य्याप्त तटस्थता के साथ करने चाहिए। चन्द्रमा पर दीखने वाले काले और चमकीले धब्बे वास्तव मे चिपटे मैदान तथा पहाड़ हैं और इनकी स्थितियाँ

1. Harley, Moon-Lore (London, 1885) Titchener, Experimental Psychology

प्रकाश्य रूप से बहुत ही बेतरतीब है। प्रदीप्ति के इस विलक्षण विभाजन में अनजाने ही हम सुपरिचित शक्लों को पहचानने की कोशिश करते हैं। हम इनकी कुछ विशेषताओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं तो ये और भी सुस्पष्ट हो उठती हैं जबकि अन्य शक्लें जिनपर हम कोई ध्यान नहीं देते, अस्पष्ट रह जाती हैं। इस प्रकार पूर्णिमा के चाँद में मनुष्य के चेहरे के कम-से-कम तीन पहलू देखे जा सकते हैं—बगल से दीखने वाला चेहरा, चेहरे का तीन चौथाई, तथा पूरा चेहरा। और चाँद पर स्त्री की शक्ल, टहनियों का बोझ लिये हुए बुढ़िया, खरगोश, तथा केकड़े आदि की शक्लें भी देखी जा सकती हैं।

सर्वश्रेष्ठ प्रेक्षकों ने भी इस प्रकार के दृष्टिभ्रम से धोखा खाया है—मङ्गल की नहरों का प्रेक्षण इस तरह के अनेक दृष्टान्तों में से एक सुविख्यात उदाहरण है। अच्छा ही होगा कि मरीचिका या 'फाता मोर्गाना' (मिथ्या प्रकाश)[1] के अनेक अतिशयोक्तिपूर्ण विवरणों के सम्बन्ध में उपर्युक्त बात का हम ध्यान रखें।

१०७. घूमता हुआ भू-दृश्य तथा साथ चलने वाला चन्द्रमा

दो ऐसे वृक्षों या दो मकानों पर ध्यान दीजिए जो हमसे असमान दूरी पर स्थित हों। ज्यों ही हम चलना आरम्भ करते हैं, हम देखते हैं कि **दूर की वस्तु हमारे साथ चलती है और निकट की वस्तु पीछे छूट जाती है।** यह विस्थापनाभास[2] का एक सरल दृष्टान्त है, जो रेखागणित की एक ऐसी घटना है जिसकी कोई विशेष भौतिक पृष्ठभूमि नहीं होती।

बाल्यावस्था में जब मैं एक रेलगाड़ी के अन्दर बैठा हुआ था तो सबसे पहले जिस बात ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया वह यह थी कि किस प्रकार भू-दृश्य मेरे गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता था। मान लीजिए, रेलगाड़ी में से मैं दाहिनी ओर बाहर देखता हूँ, तो निकट की प्रत्येक वस्तु दाहिनी ओर तेजी से भागती है जबकि दूर की प्रत्येक वस्तु मेरे साथ बायीं ओर चलती है। सारा दृश्य उस काल्पनिक बिन्दु के गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता है जहाँ हमारी दृष्टि टिकी होती है। चाहे मैं दूर के बिन्दु पर नज़र टिकाऊँ या नजदीक के बिन्दु पर हर दशा में उस बिन्दु से आगे के बिन्दु हमारे साथ चलते हुए प्रतीत होते हैं और उससे निकट के बिन्दु पीछे की ओर छूटते जाते हैं। इस प्रयोग को स्वयं करिए! स्पष्ट है कि दृष्टि के ये प्रभाव विस्थापना भास के कारण उत्पन्न होते हैं, किन्तु इसके अतिरिक्त एक नयी बात यह है कि प्रत्येक वस्तु का सम्बन्ध हम उस

1. Fata Morgana 2. Parallax

बिन्दु से जोड़ते है जिसपर हमारी दृष्टि टिकी होती है। हमारी दृष्टि-अनुभूति की यह एक मनोवैज्ञानिक विशिष्टता है। चाहे हम पैदल चलें, सायकिल पर सवार हों या ट्रेन मे जा रहे हों, हम देखते है कि विश्वस्त चन्द्रमा दूर के क्षितिज पर हमारा साथ देता रहता है। सूर्य और सितारे भी ऐसा ही करते है, केवल हम उनकी ओर उतना अधिक ध्यान नहीं देते। इससे सिद्ध होता है कि हमारा ध्यान भू-दृश्य पर केन्द्रित रहता है अतः विस्थापनाभास के कारण दूरस्थित ये आकाशीय पिण्ड भू-दृश्य के मुक़ाबले में हमारे साथ चलते हुए जान पड़ते है।

१०८. सर्चलाइट की घटना[1]—बादलों की पेटी

विस्तृत खुले मैदान में सर्चलाइट प्रकाश किरणों की पतली शलाका क्षैतिज दिशा में फेंकती है। यद्यपि मैं जानता हूँ कि किरणशलाका बिल्कुल सीधी रेखा में जा रही है, फिर भी इस दृष्टिभ्रम को मैं दूर नहीं कर पाता है कि इसमें कुछ वक्रता मौजूद है; बीच मे सबसे ऊँची और दोनों सिरों पर भूमि की ओर [illegible] है। इस बात का इतमीनान करने के लिए कि प्रकाश-किरणों की शलाका एक सिरे से दूसरे सिरे तक बिल्कुल सीधी है, एक मात्र तरीका यह है कि अपनी आँखों के सामने एक सीधी छड़ी मैं रखूं।

इस दृष्टिभ्रम का कारण क्या है? प्रकाश-पथ को मुड़ा हुआ देखने की मेरी इस प्रवृत्ति का कारण यह है कि एक तरफ़ मैं इसे बायीं ओर नीचे को झुका हुआ देखता हूँ और दूसरी ओर दाहिनी ओर झुका हुआ। क्या टेलीग्राफ की साधारण क्षैतिज तार की सीधी लाइनें इसी प्रकार आचरण नहीं करती हैं! किन्तु रात्रि को प्रकाश-किरणों की शलाका का अवलोकन करते समय आस पास की वस्तुएँ हमे नज़र नहीं आती जिनकी सहायता से हम दूरियों का अन्दाज़ लगा सके, अतः शलाका की शक्ल का पहले से हमें कुछ भी पता नही लग पाता।

इसी प्रकार की घटना सड़क पर लगे ऊँचे लैम्पों की क़तार का रात्रि को अवलोकन करने पर देखी जा सकती है, विशेषतया जब उसी के समानान्तर मकानों की कतार मौजूद न हो या जब वे पेड़ों के पीछे छिपे हों। तब लैम्पों की क़तार ठीक सर्चलाइट की प्रकाश-शलाका की ही भाँति झुकी हुई दीखती है।

इसी से एकदम सम्बद्ध यह प्रेक्षण भी है कि अष्टमी और पूर्णिमा के बीच के चन्द्रमा के दोनो कोरों को मिलाने वाली रेखा सूर्य और चाँद को मिलानेवाली दिशा के

1. Bernstein, Zs. f. Psychol. und Physical der Sinnesorgane, 34,132

समकोण बिलकुल नहीं जान पड़ती। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यह दिशा एक वक्र रेखा है। अपनी आँखों के सामने एक डोरी को तनी हुई खीचकर यह दिशा निश्चित करिए; तो आरम्भ में चाहे कितना ही असम्भव यह क्यों न जान पड़ा हो, अब आप देखेंगे कि समकोण होने की शर्त्त पूरी होती है।

आकाश की मेहराबदार छत पर क्षितिज के एक ओर से बादलों की कतारे जो फैलती हुई जान पड़ती है, और आकाश की दूसरी ओर मिलती हुई दीखती है, वास्तव में सीधी, एक दूसरी के समानान्तर, क्षैतिज दिशा मे जाती है, देखिए § १९१ भी।

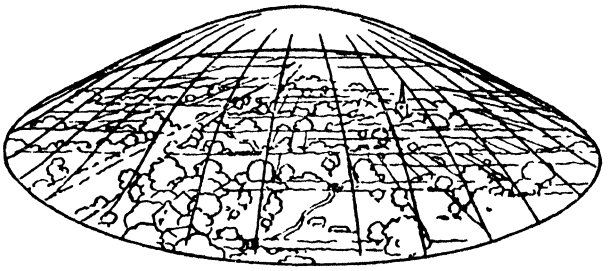
यदि रात के समय प्रकाश-गृह (लाइटहाउस) के निकट उसकी ओर पीठ करके खड़े हों तो अत्यन्त शानदार दृश्य देखने को मिलता है। विशाल प्रकाश-रेखाएँ आस-पास के दृश्य को जब प्रकाशित करती हुई चारों ओर घूमती है तो ये दूसरी ओर क्षितिज के कुछ नीचे एक कल्पित प्रति-प्रकाशस्रोत-बिन्दु'[1] पर परस्पर मिलती हुई जान पड़ती हैं और इसीके गिर्द वे घूमती हुई प्रतीत होती है।[2] ऐसी ही प्रकाश-रेखा को देखकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यह रेखा एक निश्चित धरातल मे पड़ती है जो आकाश मे प्रकाशरेखा की सही स्थिति और मेरी आँख के स्थिति-बिन्दु द्वारा निर्धारित होता है। प्रकाशरेखा जब घूमती है तो इस धरातल की स्थिति भी आकाश में निरन्तर बदलती है किन्तु सदैव ही यह धरातल उस रेखा से गुजरता है जो प्रकाश-स्तम्भ, मेरी आँख तथा प्रतिप्रकाशसूत्र-बिन्दु को मिलाती है। अतः बजाय इसके कि मेरे पीछे के बिन्दु से विकिरित होती हुई किरणे क्षैतिज तल मे बिखरी हुई रेखाओं की तरह दीखे, मुझे ये ऐसी किरणो के रूप मे दीखती हुई प्रतीत होती हैं जिनके निचले भाग तो कटकर अदृश्य हो गये हैं और किरणे क्षितिज के नीचे स्थित 'प्रति-प्रकाश-स्रोत बिन्दु' के गिर्द घूम रही हैं। यह तथ्य कि मैं अनजाने ही इस द्वितीय निष्कर्ष को स्वीकार करता हूँ, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है। और यह मेरी इस प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न होता है कि संस्कृत किरणों को परस्पर सम्बद्ध मानकर मैं कल्पना कर लेता हूँ कि वे आगे जाकर एक अदृश्य बिन्दु पर मिल जाती हैं।

1. Anti-light-source point

2. G. Colange and J. le Grand, C.R., 204, 1882, 1937. इन दोनों व्यक्तियों की यह भ्रमपूर्ण धारणा है कि यह घटना केवल अत्यन्त विशिष्ट परिस्थितियों में ही देखी जा सकती है जैसी कि बेलद्वीप के शक्तिशाली प्रकाश-स्तम्भ के लिए लभ्य है। किन्तु नीदरलैण्डस के कूग स्थित छोटे प्रकाशस्तम्भ के निकट भी इस घटना का भलीभाँति अवलोकन किया जा सका है।

१०६. आकाश की मेहराबदार छत का प्रत्यक्षरूप से चिपटा दीखना[1]

खुले मैदान से आकाश का जब हम सर्वेक्षण करते हैं तो ऊपर का समूचा आसमान न तो अनन्त जान पड़ता है और न एक खोखला अर्द्ध गोला ही प्रतीत होता है जो पृथ्वी घेरे हो। बल्कि यह एक छत मानिन्द दीखता है जिसकी हमारे सिर के ऊपर की ऊँचाई क्षितिज तक के फासले के मुकाबले मे कम होती है (चित्र ९७)। किन्तु यह है केवल



चित्र ९७—**आकाश पृथ्वी को मेहराब की तरह ढके हुए जान पड़ता है।**

अनुभूति, इससे अधिक कुछ भी नहीं। फिर भी हममें से अधिकतर लोगों के लिए यह अत्यन्त विश्वासोत्पादक है, अतः इसका समाधान भौतिक कारणों से नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक कारणों से ही किया जा सकता है।

स्वभावतः किसी भी तरीके से इस चिपटेपन को वास्तव मे नाप सकना असम्भव है; फिर भी हम इसका अन्दाज लगा सकते हैं —

(क) हम प्रारम्भ इस प्रश्न से करते हैं कि अनुपात $\frac{\text{आँख से क्षितिज तक दूरी}}{\text{आँख से ऊर्ध्वबिन्दु तक दूरी}}$ का मान कितना प्रतीत होता है; यह अनुपात अधिकतर २ और ४ के दर्मियान मिलता है जो प्रेक्षक और उसके प्रेक्षण की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

(ख) हम यथासम्भव ऊर्ध्वबिन्दु[2] को क्षितिज से मिलाने वाले **चाप** के मध्यबिन्दु की दिशा का अन्दाज लगाते हैं। इस मध्यबिन्दु के निर्धारित हो जाने पर हम देखते

1. For the very extensive literaturre on this subject and the following one *see* A. Muller, Die Referenzflachen der sonne und Gestirne; E. Reimann, Zs. f. Psych. u. Physiol. der Sinnesorgane, 1920. R. von Sterne, Der Sehraum auf Grund der Erfahrung (Leipzig, 1907).

2. Zenith

है कि यह ४५° की कोणीय ऊंचाई पर नहीं स्थित होता है बल्कि और नीचे अक्सर २०° या ३०° की ऊँचाई पर यह होता है—कुछ बिरले अवसरों पर यह कोणीय ऊँचाई कम-से-कम १२° और अधिक-से-अधिक ४५° तक भी पहुँचती है।

यह आवश्यक है कि इसके लिए निरपेक्ष प्रेक्षक ढूंढ़े जायँ और उन्हें यह बात स्पष्ट समझा देनी चाहिए कि इस प्रयोग मे चाप को दो बराबर भागों में विभाजित करना है, न कि चापकोण को। ऊर्ध्व बिन्दु को भी बिल्कुल सही सही निश्चित करना अत्यन्त आवश्यक है; इसके लिए सबसे बढ़िया तरीका यह है कि पहले दिक्सूचक की किसी एक दिशा की ओर मुँह करे और फिर ठीक इसकी विपरीत दिशा की ओर मुँह करे और देख ले कि दोनों ही बार प्राप्त ऊर्ध्व बिन्दु की स्थिति एक-सी है या नही।

यह वाञ्छनीय होगा कि (क) और (ख) प्रत्येक के लिए ५ बार निरीक्षण अङ्क प्राप्त करके उनका औसत लें।

आकाश का यह आभासी चिपटापन विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करता है। आकाश के मेघाच्छादित होने पर यह अधिक बढ़ जाता है, विशेषतया उस दशा मे जब उच्च-पुञ्जमेघ या उच्च-स्तारमेघ का आवरण छाया रहता है जिससे गहराई का भान होता है और तब आँखे चिपटेपन का क्षितिज तक अनुगमन करती है। सन्ध्या के झुटपुटे मे चिपटापन विशेष रूप से बढ़ जाता है और अधेरी रात में, जबकि तारे खूब चमकते रहते है, यह चिपटापन घट जाता है। सामान्यरूप से क्षितिज और ऊर्ध्वबिन्दु के बीच के कोण का निचला अर्द्धभाग दिन के समय २२° होता है और रात को ३०°। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस सिलसिले में समुद्र पर प्राप्त किये गये प्रेक्षण विशेष महत्त्वपूर्ण होते है—चारों ओर दृष्टिक्षेत्र विस्तृत और खुला होता है तथा आसपास ऐसी कोई चीज़ नही रहती जो प्रेक्षण-फल प्राप्त करने मे आप का ध्यान बँटाये।

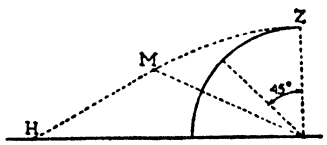
लाल रंग के काँच के बड़े टुकड़े मे से (इतना बड़ा जिससे उसके हाशिये दृश्य को विकृत न कर सके) देखने पर आकाश अधिक चिपटा प्रतीत होता है; नीले रंग के काँच मे से देखने पर यह ऊपर को अधिक उठा हुआ तथा अर्द्ध गोलाकार शक्ल से अधिक मिलता-जुलता दीखता है।[1]

अधिक बारीकी से प्राप्त किये गये प्रेक्षणफलों से आकाश की छत की शक्ल के बारे मे और भी अधिक यथार्थ जानकारी हमे प्राप्त हो सकती है—अवश्य अनजाने ही हमें लगता है कि आकाशीय छत की शक्ल मेहराबदार है। अनेक प्रेक्षकों को आकाश की छत की शक्ल फौज़ी टोपी (हेल्मेट) के मानिन्द जान पड़ती है।

1. Dember en Uibe, Ann. Phys., I, 313, 1920.

११०. ऊँचाई आँकने में अतिरंजना (चित्र ९८)

आकाश की मेहराबदार छत के आभासी चिपटपन का सम्बन्ध इस बात से जुड़ा जान पड़ता है कि क्षितिज के ऊपर की ऊँचाई के आँकने में हम अतिशयोक्ति से काम लेते हैं। स्पष्ट है कि सदैव अनजाने ही **चाप** तथा उसके **कोण** की नाप में हम धोखा खा जाते हैं—जैसे बिन्दु M को इस तरह चुनें कि HM=MZ हो तो क्षितिज से इसकी कोणीय ऊँचाई ४५° से बहुत कम होगी, यद्यपि हमें यह ठीक ऊर्ध्व बिन्दु और क्षितिज के बीचोबीच स्थित जान पड़ता है।



चित्र ९८—**ऊर्ध्व बिन्दु से क्षितिज तक के आभासी चाप का दो भागों में विभाजन।**

जाड़े के दिनों में दोपहर का सूर्य आकाश मे काफी ऊँचाई पर मालूम पड़ता है यद्यपि हमारे (हालैण्ड के) अक्षाश प्रदेश मे यह ऊँचाई क्षितिज से केवल १५° होती है। ग्रीष्म ऋतु मे यह करीब-करीब ऊर्ध्व बिन्दु पर पहुँचता जान पड़ता है जबकि वास्तव में इसकी ऊँचाई मुश्किल से ही ६०° से अधिक आ पाती है।

इसी प्रकार पहाड़ियों की ऊँचाइयों और सामने की चढ़ाई के ढाल की तीव्रता के आँकने मे हम अतिरंजना से काम लेते हैं। प्रेक्षकों ने तो सूर्य और चन्द्रमा के गिर्द २२° कोण वाले प्रभामण्डल के विवरण मे उनकी ऊँचाई को चौड़ाई से ज्यादा बतलाया है (§१३४)।

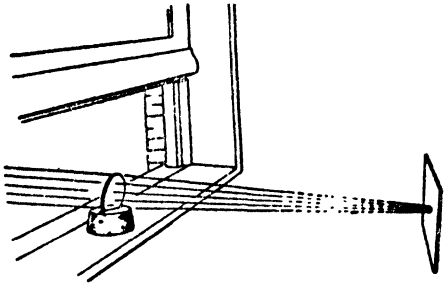
ये दृष्टिभ्रम बहुत कुछ अशों मे दूर किये जा सकते हैं यदि भू-दृश्य को हम अधखुली आँखों से देखें; तब प्रकाशित तथा अँधेरे भाग अलग-अलग केवल बहत् राशियों की शक्ल मे दीखते हैं।

१११. क्षितिज पर सूर्य और चन्द्रमा के आकार में वृद्धि का आभास

यह एक सबसे प्रबल और व्यापक रूप से ज्ञात प्रकाशीय दृष्टिभ्रम है। उगता हुआ चन्द्रमा बहुत ही बड़ा दिखाई देता है, किन्तु जब यह आकाश में ऊँचा चढ़ जाता है तो यह काफ़ी छोटा दीखता है! और सूर्य भी, 'विशालकाय, टमाटर जैसा सुर्ख सूर्य' उगते समय कितना बड़ा दीखता है!"

किन्तु सचमुच क्या यह दृष्टिभ्रम ही है? आइए, सूर्य के प्रतिबिम्ब को प्रक्षेपित

करे और उसे नापे। चश्मे का एक लेन्स लीजिए जिसकी फोकसदूरी करीब दो गज़ हो[1]; कार्क मे बने एक खाँचे में इसे लगाइए और इसे अस्त होते हुए सूर्य के सामने खिड़की की दहलीज पर रखिए (चित्र ९९ क)। खिड़की खुली होनी चाहिए, अन्यथा इसके काँच



चित्र ९९ क—**लम्बी फोकस दूरी वाले लेन्स द्वारा सूर्य के बिम्ब का निर्माण।**



चित्र ९९ ख

प्रतिबिम्ब को अस्पष्ट बना देगे। प्रकाश किरणों को ग्रहण करने के लिए लेन्स के पीछे करीब दो गज की दूरी पर कागज का तख्ता रखते है और तब इस पर सूर्य का एक बढ़िया और स्पष्ट चित्र प्रगट होता है। यदि यह बिम्ब पूर्णतया गोल नही है तो अवश्य ही लेन्स आपतित किरणों के समकोण स्थित नहीं है, अतः इसे इधर-उधर घुमाइए और थोड़ा बहुत इसे तिरछा झुकाइए। यह निश्चित कर लेने पर कि कहाँ पर कागज को रखने पर यथासम्भव सबसे अधिक स्पष्ट सूर्य-प्रतिबिम्ब बनता है, बिम्ब की व्यासरेखा के सिरे पेन्सिल के बिन्दुओं द्वारा अङ्कित करिए और स्केल की सहायता से आधे मिलीमीटर की शुद्धता तक इसकी नाप प्राप्त करिए। अच्छा होगा कि **क्षैतिज** व्यास की लम्बाई नापें क्योकि ऊर्ध्व व्यास वायुमण्डल के वर्त्तन[2] के कारण कुछ छोटा हो जाता है। इन नापों को कई बार दुहराइए, तब उनका औसत मान लीजिए।

इसी प्रयोग को अब उस वक्त करिए जब सूर्य आकाश मे ऊँचाई पर स्थित हो। इस बार प्रयोग की व्यवस्था अधिक जटिल होगी। लेन्स सहित कार्क को किसी ऊँचे स्तम्भ पर कील के सहारे लगा दीजिए। स्तम्भ का उपयुक्त पार्श्व चुनकर और कार्क

१. चश्मे के व्यापारी ऐसे लेन्स की शक्ति +०·५ मानते हैं। बिना घिसा हुआ लेन्स लीजिए जिसके हाशिये कोरे हों।

2. Refraction

को घुमाकर लेन्स के तल को सूर्य-किरणों के ठीक समकोण कर सकते हैं (चित्र ९९ ख)। सूर्य के प्रतिबिम्ब की नाप करिए तो पायेंगे कि प्रतिबिम्ब उतना ही बड़ा रहता है **चाहे सूर्य आकाश में ऊँचाई पर रहे या नीचे** रहे (नाप की शुद्धता की न्यूनतम सीमा तक)। अत्यन्त शक्तिशाली दूरबीन की सहायता से प्राप्त की गयी अत्यन्त शुद्ध नाप में भी रत्ती भर का अन्तर नही पड़ता।

अतः स्पष्ट है कि क्षितिज के निकट स्थित सूर्य और चन्द्रमा के आकार की वृद्धि एक मानसिक घटना है। किन्तु यह घटना भी निश्चित नियमों के अधीन है और इसे अङ्कों में व्यक्त कर सकते हैं। करीब १२ इंच व्यास की सफेद दफ्ती की वृत्ताकार चकरी लीजिए और इसके सामने इतनी दूरी पर खड़े होइए कि दफ्ती की चकरी उतने ही बड़े आकार की दीखे जितना बड़ा चन्द्रमा दीखता है। अवश्य इसके लिए दोनों की सीधे ही **तुलना** नहीं की जा सकती है, अन्यथा आप देखेंगे कि वास्तविक नाप की तरह इस दशा में भी चन्द्रमा का आकार सदा एक-सा ही बना रहता है। अतः आपको चाहिए कि पहले आप चन्द्रमाको देखे और अपने मस्तिष्कपर इसकी अनुभूति को भलीभाँति अंकित कर ले कि चन्द्रमा कितना बड़ा दीखता है और तब पीछे मुड़कर दफ्ती की चकरी के प्रत्यक्ष आकार से उसकी तुलना कीजिए। इससे भी अच्छा तरीका यह है कि काली पृष्ठभूमि पर सफ़ेद चकरियाँ बहुत-सी लगा दी जायँ और तब हर बार एक निश्चित दूरी पर खड़े होकर उन्हे देखे। आकार निर्धारित करने की यह क्रिया, चन्द्रमा जब आकाश मे ऊँचाई पर स्थित हो, तब कीजिए और जब वह नीचे स्थित हो, तब भी।

इस प्रकार की तुलना सूर्य के लिए भी की जा सकती है। गहरे रंग का काँच काम में लाइए, मिसाल के तौर पर काली पड़ गयी हुई फोटोग्राफी की प्लेट; ताकि सूर्य के प्रकाश से आँखों को चकाचौध न लगे। फिर बाद मे नगी आँख से चकरियों को देखिए। ये प्रेक्षण कठिन पड़ते है क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक घटना अनेक सूक्ष्म बातो से प्रभावित होती है जैसे उसके प्रति आप के ध्यान या तल्लीनता मे परिवर्त्तन आदि। देखिए कि कुछ थोड़े अभ्यास के बाद आपको कितनी अधिक सफलता इस प्रयोग मे मिलती है।

इस तरीके से प्राप्त अङ्क हमें बतलाते है कि सूर्य और चन्द्रमा क्षितिज के निकट, आकाश में अपनी ऊँची स्थिति के मुकाबले मे २.५ से लेकर ३.५ गुने तक बड़े आकार के दिखाई देते हैं। अतः निस्सन्देह भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक घटनाओं में अन्तर विशेष-रूप से अधिक है। यह प्रभाव संध्या के धुंधलके के समय अथवा मेघाच्छादित आकाश के समय और भी अधिक प्रबल होता है।

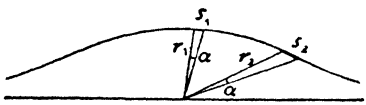
सूर्यास्त के समय सूर्य के आकार की प्रत्यक्ष वृद्धि वहाँ और भी अधिक स्पष्ट होती है जहाँ भूमिखण्ड चौरस होता है बनिस्बत उस वक्त के जब सूर्य ऊँचे पहाड़ों के पीछे अस्त होता है। किन्तु समुद्र पर अस्त होने की दशा में आकार की वृद्धि थोड़ी ही होती है।[1]

अँगूठे और तर्जनी के दर्मियान में से चन्द्रमा को देखिए या किसी नली में से, यह छोटा दिखलाई देता है। ऐसे व्यक्ति जिनकी एक ही आँख होती है, क्षितिज के निकट के चन्द्रमा या सूर्य के आकार की वृद्धि से अनभिज्ञ होते हैं; यदि हम अपनी एक आँख ढंक ले, तो पहले की भाँति कुछ देर तक हमें यह दृष्टिभ्रम दिखलाई देता रहता है किन्तु फिर सन्ध्या के अन्त होते-होते यह दृष्टिभ्रम विलुप्त हो जाता है।

केवल सूर्य और चन्द्रमा ही नहीं, बल्कि तारा-समूह भी क्षितिज के निकट आवर्द्धित आकार के दिखलाई देते हैं। यहाँ तक कि हेडिजर ब्रुश (§१८२) भी क्षितिज पर, आकाश में ऊँचाई की स्थिति के मुकाबले में करीब दो गुने लम्बे तथा दो गुने चौड़े दिखलाई पड़ते हैं।

११२. क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डों के आकार में प्रतीयमान वृद्धि, और आकाश की मेहराबदार छत की शक्ल में पारस्परिक सम्बन्ध

इस बात का प्रयत्न किया गया है कि उपर्युक्त घटनाओं का समाधान आकाशीय मेहराब के प्रतीयमान चिपटेपन के आधार पर किया जा सके। इस धारणा के अनुसार हम कल्पना करते हैं कि सूर्य और चन्द्रमा हमसे उतनी ही दूर हैं जितनी दूर हमारे चारो ओर का आकाश। अतः आकाश मे सूर्य जब नीचे की ओर होगा तो ऊँचाई की स्थिति के मुकाबले मे वह हमसे कई गुना अधिक दूरी पर जान पड़ेगा; किन्तु चूँकि इसका कोणीय व्यास उतना ही बना रहता है अतः हम अनजाने ही समझ लेते हैं कि इसका आकार कई गुना बड़ा हो गया है। चित्र १०० से हम देखते हैं कि चूँकि सूर्य



चित्र १००—**जहाँ आकाशीय छत अधिक दूरी पर जान पड़ती है वहाँ सूर्य का मण्डलक अधिक बड़ा दीखता है।**

1. Vaughan Cornish, Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1955) Chap II which contains an interesting theory about the phenomenon.

की दोनों स्थितियों के लिए कोण α का मान समान है, अतः $\frac{S_1}{S_2} = \frac{r_1}{r_2}$। इस सूर्य मे s_2 तथा s_1 सूर्य के दीखने वाले आकार है तथा r_2 और r_1 तदनुसार उनकी दूरियाँ है।

इस सम्बन्ध की जाँच करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा के प्रतीयमान आकार विभिन्न ऊँचाइयों के लिए आँके गये हैं (देखिए § १११)। ये प्रयोग कठिन है। दिन के नीले आकाश में, तथा रात के तारों से जगमगाते खुले आकाश मे किये गये प्रयोगों के निष्कर्ष से सिद्ध होता है सूर्य और चन्द्रमा के आकार मे बहुत कुछ आकाशीय छत (चापच्छद) की दूरी के अनुपात मे ही परिवर्त्तन होता है। आकाश मे नीचे की ओर स्थित सूर्य का आकार निकटस्थ बादलों के कारण (क्षितिज की पृष्ठभूमि पर छाया आकृति के रूप में दीखनेवाली पार्थिव वस्तुओं के कारण नहीं) अधिक बड़ा प्रतीत होता है। इसका कारण यह है कि मेघाच्छादित आकाश बिना बादलों वाले खुले आकाश के मुकाबले मे अधिक चिपटा प्रतीत होता है अतः ऐसी दशा मे क्षितिज भी हमसे अधिक फासले पर स्थित जान पड़ता है, और अनजाने ही हम सूर्य को इतनी अधिक दूरी पर मान लेते हैं कि अब हम सोच नही पाते कि सूर्य बादलों के सामने है। इसी प्रकार आकाश में चन्द्रमा यदि नीचे की ओर हो तो निकट के बादलों के कारण दिन मे यह अधिक बड़ा प्रतीत होता है। यह एक अत्यन्त अद्‌भुत बात है कि यदि आसमान खुला हो तो सन्ध्या के झुटपुटे में चन्द्रमा दिन या रात की अपेक्षा बहुत बड़ा दीखता है—यह निष्कर्ष इस तथ्य के अनुकूल ही है कि सन्ध्या के झुटपुटे में आकाश की मेहराबदार छत अधिक चिपटी दीखती है। यदि रात मे कुहरा मौजूद हो तो चन्द्रमा अपने आस-पास के आकाश को तेज रोशनी से प्रकाशित करता है, और हमे प्रतीत होता है मानों रात्रि के हलके चिपटेपन वाले आकाश की जगह सन्ध्या के झुटपुटे वाला चिपटा आकाश मौजूद है अतः चन्द्रमा एक बार फिर बड़े आकार का दीखता है। यदि कोई व्यक्ति यह सोचे कि क्षितिज के निकट स्थित होने पर या कुहरे से घिरे होने पर चन्द्रमा के आकार की प्रतीयमान वृद्धि का सम्बन्ध उसकी प्रदीप्ति की कमी के साथ जोड़ा जा सकता है तो उसकी इस गलत धारणा का समाधान निम्नलिखित दो प्रेक्षणों द्वारा किया जा सकता है—(क) नाखूनी शक्ल का **नवचन्द्र** कुहरे मे बड़े आकार का **नहीं** दीखता—इसका कारण समझना आसान है, क्योंकि नवचन्द्र निकट के आकाश में कम ही प्रकाश फैला पाता है। (ख) ऊँचे आकाश मे चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा का आकार बड़ा नहीं दीखता। ऊपर की इन तमाम बातों से यह स्पष्ट है कि पृष्ठभूमि का आकाश ही प्रमुख उपादान है जो हमारे लिए सूर्य और चन्द्रमा का आकार निर्धारित करता है। फिर भी हमें स्वीकार

करना होगा कि दोनों घटनाओं मे इस प्रकार का घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करने के खिलाफ कुछ आपत्तियाँ भी अवश्य हैं। अनेक व्यक्तियों को तो क्षितिज पर स्थित सूर्य या चन्द्रमा **निकटतम दूरी पर** जान पड़ता है और उनकी प्रत्यक्ष दूरी के बारे में कुछ भी अन्तर को महसूस करने मे वे नितान्त असमर्थ रहते हैं, यद्यपि उनके आकार की वृद्धि का स्पष्ट रूप से वे अनुभव करते हैं। मेरे विचार में इस प्रकार की आपत्तियों को निर्णायक नही मानना चाहिए, क्योंकि बहुत सम्भव है कि दूरी के बारे मे एकदम सीधे ही प्रश्न करने पर हम ऐसी मनोवैज्ञानिक प्रेरणाओं को उभार देते हैं जो उन प्रेरणाओं से भिन्न होती हैं जो उनके इस स्वतः निर्णय करने की क्षमता को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं।

११३. अवतल धरती

यह आकाशीय छत की दृष्टि-अनुभूति का प्रतिरूप सरीखा है। जब वायु स्वच्छ होती है तो गुब्बारे से सर्वेक्षण करने पर धरती ऊपर की ओर झुकी जान पड़ती है अतः ऐसा जान पड़ता है मानो हम एक बृहत् अवतल प्लेट के ऊपर-ऊपर उतरा रहे हैं। आँख से गुजरनेवाला क्षैतिज धरातल सदैव ही हमें समतल प्रतीत होता है; तथा इससे ऊपर या नीचे के दूर-स्थित अन्य क्षैतिज धरातल इस स्थिर धरातल की ओर झुके हुए प्रतीत होते हैं। बादलों की पेटी से कुछेक मील ऊपर जब गुब्बारा उतराता है तो ये बादल भी वक्र सतह के प्रतीत होते हैं जिनका उत्तल पार्श्व पृथ्वी की ओर होता है और अवतल पार्श्व ऊपर की ओर। यदि हम बादलों के दो स्तरों के दर्मियान स्थित हों, एक हमारे ऊपर और दूसरा नीचे तो हमें ऐसा महसूस होता है मानों हम घड़ी के दो विशालकाय काँच के दर्मियान उतरा रहे हैं। वायुयान पर से भी इसी प्रकार के प्रेक्षण प्राप्त किये जा सकते हैं।

११४. न्यूनानुमान का सिद्धान्त

'आकाशीय मेहराबदार छत' की प्रत्यक्षत. अस्पष्ट मनोवैज्ञानिक घटना के लिए गणित का सूर्य प्राप्त करने मे स्टेर्नेक ने अत्यन्त कुशलता के साथ कामयाबी हासिल की है। यद्यपि यह सही है कि वह इस सूत्र के लिए किसी तरह की निश्चित व्याख्या नहीं दे पाया है, किन्तु उसने कम-से-कम इसका सम्बन्ध ऐसे प्रेक्षणों के एक बड़े समूह से स्थापित किया है जिनसे हम अपने दैनिक अनुभव मे भलीभाँति परिचित हैं।

वस्तुएँ जितनी अधिक दूरी पर स्थित होती हैं, उनकी दूरियों का अन्तर आँक सकना उतना ही अधिक कठिन होता है। सड़क के लैम्प जो हमसे १६० या १७० गज़ से

अधिक फासले पर होते हैं, सबके सब रात के समय एक ही दूरी पर स्थित जान पड़ते हैं। क्षितिज के पर्वतों मे से या आकाशीय पिण्डों मे से कोई भी दूसरों के मुकाबले में अधिक दूरी पर नहीं जान पड़ते। सामान्य कोटि का अप्रशिक्षित प्रेक्षक सभी लम्बी दूरियों को कम ही आँकता है; उदाहरण के लिए, रात में जलती हुई आग, खुले समुद्र से दिखलाई देने वाले बन्दरगाह की बत्तियाँ, आदि।

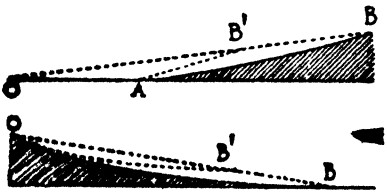
निकट की वस्तुओं के लिए इस न्यूनानुमान की मात्रा कम होती है; तथा वस्तुओं की दूरी के बढ़ने पर यह न्यूनानुमान भी बढ़ जाता है और अन्त मे प्रत्यक्ष प्रतीत होने वाली यह दूरी एक सीमा तक पहुँच कर फिर आगे नही बढ़ती। रेलगाड़ी से देखने पर आयताकार श्वेत समलम्ब चतुर्भुज[1] ▭ के मानिन्द जान पड़ते हैं, क्योंकि भुजा α द्वारा बननेवाले कोण का मान इसकी सही दूरी के हिसाब से तो सही होता है, किन्तु भुजा की आभासी दूरी के हिसाब से यह कोण छोटा बैठता है। रेलगाड़ी जब सुरंग में प्रवेश करती है और खिड़की में से आप सुरंग के प्रवेश-द्वार की ईंटों की बनी दीवार को देखते हैं तो ईंटें उभरी हुई-सी प्रतीत होती हैं और आकार में वे बड़ी जान पड़ती हैं। व्याख्या इस प्रकार है ; यदि सही दूरी आधी हो जाती है तो आँख पर ईंटें पहले की अपेक्षा दो गुना बड़ा कोण बनाती हैं, किन्तु आभासी दूरी केवल डेढ़ गुना ही कम होती है (मिसाल के लिए), अतः ऐसा प्रतीत होता है मानों ईंटे स्वयं आकार में बढ़ गयी हैं।

वान स्टेर्नेक ने व्यक्त दूरी d' और वास्तविक दूरी d को निम्नलिखित सरल सूत्र द्वारा परस्पर सम्बद्ध करने का प्रयत्न किया था — $d' = \frac{cd}{c+d'}$

c हर एक दशा के लिए विशेष स्थिराङ्क है जो दी हुई प्रदीप्ति की दशा मे आँकी जा सकनेवाली महत्तम दूरी बतलाती है। c का मान २०० गज से लेकर १० मील तक पहुँचता है। इस सूत्र से हम देखते हैं कि c की तुलना में जबतक d का मान बहुत कम रहता है, तब तक आभासी दूरी d' करीब-करीब वास्तविक दूरी d के बराबर ही रहती है। यदि d का मान उसी कोटि[2] का हो जाता है जिस कोटि का c, तो अधो-अनुमान मे वृद्धि हो जाती है; यदि c की अपेक्षा d का मान अधिक हो तो आभासी दूरी सीमा के निकट पहुँच जाती है। अतः यह सूत्र हमारे अनुभव का एक उत्तम गुणात्मक[3] विवरण प्रस्तुत करता है। और अधिक सूक्ष्म प्रेक्षणों से पता चलता है कि यह सूत्र मात्रात्मक[4] दृष्टि से भी आश्चर्यजनक रूप से सही सिद्ध होता है।

1. Trapezia 2. Order 3. Qualitative 4. Quantitative

न्यूनानुमान के सिद्धान्त से यह बात समझ में आती है कि कैसे पहाड़ के पेदे पर खड़ा प्रेक्षक O चढ़ाई के ढाल की तीव्रता को अत्यधिक आँकता है—दूरी OB को वह OB' के बराबर समझता है अतः AB के स्थान उसे AB' दिखाई देता है। और इसी तर्क के अनुसार चोटी पर खड़ा प्रेक्षक नीचे की ढाल की तीव्रता को कम करके आँकता है (चित्र १०१)। अब हम देखेंगे कि इस सिद्धान्त द्वारा आकाशीय मेहराबदार छत की आभासी शक्ल की व्याख्या करने का प्रयत्न कैसे किया गया है तथा इसके साथ-साथ इस बात की व्याख्या भी कि क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डों के आकार मे प्रकट रूप से वृद्धि क्यों हो जाती है।



चित्र १०१—प्रेक्षक O ऊपर की चढ़ाई को अधिक बढ़ाकर आँकता है और नीचे के ढाल को घटाकर।

कल्पना कीजिए कि हमारे सिर के ऊपर डेढ़ मील की ऊँचाई पर बादलों की पेटी है। बादलों के इस स्तर को एक अत्यन्त चिपटी प्लेट के मानिन्द दीखना चाहिए क्योंकि पृथ्वी की वक्रता के कारण क्षितिज के बादलों के स्तर से हमारी आँख की दूरी करीब ११० मील होती है जबकि ऊर्ध्व बिन्दु के बादल से आँख की दूरी केवल १.५ मील है। किन्तु मेघाच्छादित आकाश इस शक्ल का बिलकुल ही नहीं दीखता। छोटी दूरी मे न्यूनानुमान थोड़ी मात्रा मे लगता है और लम्बी दूरी मे अधिक मात्रा मे। मान लीजिए कि हम अनुपात $\frac{\text{आँख से क्षितिज तक दूरी}}{\text{आँख से ऊर्ध्व बिन्दु तक दूरी}}$ का मान लगभग ५ आँकते हैं। इसका अर्थ है कि इन परिस्थितियों मे ८ ६ ६ मील। अत न्यूनानुमान के सिद्धान्त के सूत्र से हमे सही मान प्राप्त होता है। (इस प्रयोग को स्वय आजमाइए!)। इससे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि मेघाच्छादित आकाश हमे एक ऐसी मेहराब (चापच्छद) जैसा दीख पड़ेगा जिसकी शक्ल अति परवलयाकार खोखले पिण्ड की भीतरी सतह के मानिन्द होगी—जो वास्तव मे हमारी सामान्य अनुभूति के अनुकूल ही पड़ती है। अतः ध्यान रखिए कि दरअसल आकाशीय छत हमे चिपटी नहीं दिखाई देती है, बल्कि इसके प्रतिकूल, अपनी वास्तविक ऊँचाई से कुछ **अधिक ही ऊंची** यह जान पड़ती है!

किन्तु दिन का नीला आकाश या रात का तारों भरा आकाश कैसा दीखता है?

इसके लिए वान स्टर्नेक बस स्थिराक c के लिए हर बार एक नया मान लेता है और इस प्रकार उसका सूत्र प्रत्येक विशिष्ट दशा के लिए प्राप्त प्रेक्षण का आश्चर्यजनक रूप से सही विवरण प्रस्तुत करता है। किन्तु यह समझ पाना मुश्किल है कि इन दशाओं मे हम किसी खास 'दूरी' के मान के न्यूनानुमानित होने की बात कैसे कर सकते हैं। और यह हमे अधिक व्यापक प्रश्नो की ओर ले जाता है : बादल सरीखी अनिश्चित वस्तुओं के लिए 'दूरी' की अनुभूति आखिर हमे प्राप्त ही कैसे हो पाती है? और फिर नीचे आकाश की दूरी? या फिर रात के बिना बादलों वाले खुले आकाश की दूरी? जहां तक पार्थिव वस्तुओं का सम्बन्ध है जिनकी लम्बाई, चौड़ाई या दूरी से हम अपने अनुभवो द्वारा भलीभाँति परिचित हैं, न्यूनानुमान का सिद्धान्त सही साबित हो सकता है, किन्तु यह अत्यन्त सन्देहजनक है कि यह ऊपर के आकाश पर भी लागू किया जा सकता है या नही। इसके अतिरिक्त अभी तक इस बात पर कोई प्रकाश नही डाला जा सका है कि अधोऽनुमान या न्यूनानुमान की उत्पत्ति कैसे होती है।

११५. दृष्टि-दिशा सम्बन्धी गौस का सिद्धान्त

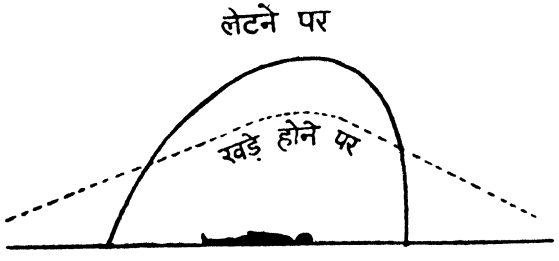
उपर्युक्त पैराग्राफ के सम्बन्ध मे अनेक प्रेक्षण ऐसे मिलते हैं जिनसे यह पता चलता है कि आकाशीय छत की शक्ल तथा क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डों के आकार में प्रगट रूप से वृद्धि, इस बात पर निर्भर करती है कि शरीर के लिहाज़ से हमारी दृष्टि-रेखा की दिशा क्या है। अत. गौस ने यह मान लिया कि पीढ़ी दर पीढ़ी के अनुभव ने समानुयोजन[1] द्वारा हमे इस योग्य बल दिया है कि अपने सामने की ओर की वस्तुओं का [illegible] अपेक्षा अधिक अच्छी तरह कर सके और हमारी यह क्षमता दूरी तथा आकार की लम्बाई-चौड़ाई आँकने की सामर्थ्य को प्रभावित करती है।

पूर्णिमा का चन्द्रमा जब ऊँचे आकाश पर चमक रहा हो, तो उस वक्त हम आराम कुर्सी पर बैठे या जमीन पर ही बैठे, इस तरह कि हमारा सिर किसी ढालुआँ धरातल पर टिका हो। यदि पीछे की ओर काफी झुके किन्तु सिर को शरीर के अन्य भागों के लिहाज़ से सामान्य स्थिति मे ही रखे, तो चन्द्रमा का अवलोकन करने पर यह काफ़ी बड़े आकार का दीखता है। यदि हम अचानक उठ खड़े हों, तब चन्द्रमा को देखने के लिए हमे निगाह ऊपर की ओर उठानी होती है, और अब वह एक बार फिर छोटा दीखता

1. Adaptation

है। इसके ठीक प्रतिकूल, क्षितिज पर पूर्णिमा का चन्द्रमा हमे उस दशा मे छोटा दीखता है जब हम आगे की ओर झुकते है।

दोनो ही घटनाएँ एक के बाद दूसरी उस वक्त देखी जा सकती है जब सूर्य क्षितिज से ३०° या ४०° की ऊचाई पर हो और धुन्ध के कारण इसकी चमक मन्द पड़ गयी हो। पीछे की ओर तथा सामने की ओर बारी-बारी से झुकिए तो उसी क्रम से सूर्यमडलक बड़ा और छोटा दीखेगा। पीठ के बल जमीन पर लेट जाइए, अब इस वक्त आकाश, उस ओर जिधर आप का सिर है, दबा हुआ प्रतीत होता है और इसके सामने ही दिशा



चित्र १०२—आकाश, जैसा कि वह लेटने की स्थिति से तथा खड़े होने की स्थिति से दीखता है।

में वह पूर्णतया गोलाकार दीखता है (चित्र १०२)। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि (शरीर के लिहाज) से निगाह जब नीचे की ओर जाती है या सामने की ओर, तो प्रस्तुत दशा के लिए दोनो के समान प्रभाव होते है, जबकि ऊपर की ओर निगाह जाती है तो वस्तुएँ संकुचित हुई जान पड़ती है।

क्षैतिज दण्ड[1] के सहारे घुटनो के बल नीचे को लटक जाइए, और जबकि आप का सिर नीचे लटकता हो, चारो ओर इधर-उधर देखिए। आकाश आप को अर्द्ध गोले की शक्ल का दीखेगा।

ये सभी प्रेक्षण एक दूसरे का समर्थन करते हैं। इसके अतिरिक्त तारा-समूह को जब दूरबीन से देखते है ताकि भू-दृश्य के बाहरी प्रभावों से प्रेक्षण मुक्त रहे, तो इसी प्रकार जब वे क्षितिज के निकट नीचे ही स्थित होते है, तो वे बडे दीखते है। इस दशा मे किसी भी तरह प्रभाव डालने वाली चीज बस केवल निगाह की दिशा ही हो सकती है।

1. Horizontal bar

अतः अब दर्पण की सहायता से सूर्य और चन्द्रमा के आभासी आकार की और अधिक जाँच करने का प्रयत्न मत कीजिए—क्योंकि उदाहरण के लिए, आकाश मे ऊँचाई पर स्थित चन्द्रमा को दर्पण मे आप इस तरह देखते है कि आप की दृष्टि क्षैतिज दिशा मे स्थित रहती है। यदि किसी भी तरह प्रेक्षक को दर्पण की उपस्थिति का भान हो जाता है तो दृष्टि-भ्रम कुछ अशो मे नष्ट हो जाता है। इसी कारण इस ढंग के प्रयोग का पूरा करना अत्यन्त कठिन होता है।

अभी बतलायी गयी दृष्टि-अनुभूतियो के सम्बन्ध मे दिये गये अन्य बहुत से सिद्धान्तों का आसानी से खण्डन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए कहा गया है कि आकाशीय छत की शक्ल के लिए एक 'भौतिक सिद्धान्त' प्रस्तुत किया जा सकता है। यह सिद्धान्त वस्तुतः इस दुर्बोध्य तथ्य के रूप मे है कि आकाश जितना अधिक चमकीला होगा, उतना ही अधिक दूर वह प्रतीत होगा; दूरी प्रदीप्ति के वर्गमूल के अनुपात मे बढ़ती है। ऊर्ध्व बिन्दु पर नीला आकाश क्षितिज की तुलना मे मन्द प्रकाश का होता है अतः इस कारण इसकी ऊँचाई कम प्रतीत होगी। किन्तु इस सिद्धान्त का पर्य्याप्त रूप से खण्डन इस बात से हो जाता है कि आकाश पर जब चारो ओर समान रूप से बादल छाये रहते है तो ऊर्ध्व बिन्दु पर आकाश क्षितिज की अपेक्षा अधिक चमकीला रहता है, किन्तु फिर भी यह चिपटा प्रतीत होता है। फिर इसके अतिरिक्त भी, मेघाच्छादित आकाश में बादलो का वह भाग जो सूर्य के सामने पड़ता है, शेष भाग के मुकाबले मे अधिक चमकीला दीखता है, तब भी यह चारो ओर के भाग के मुकाबले मे हमारे अधिक निकट प्रतीत होता है।

११६. आकाशीय छत की दूरी का हमारा अनुमान पार्थिव वस्तुओं द्वारा किस प्रकार प्रभावित होता है

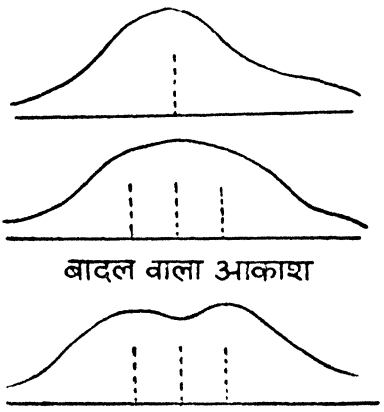
यदि आप मकानो की एक लम्बी कतार के सामने खड़े हों और ठीक अपने सामने के मकानो को देखे तो इनके ऊपर का आकाश कतार के दूसरे सिरे के मकानो के ऊपर के आकाश के मुकाबले मे बहुत अधिक नजदीक जान पड़ेगा।

प्रगट रूप से आकाश की दूरी हम ५० से ६० गज तक आँकते है! किन्तु हमे ऐसी वस्तुएँ भी दिखाई देती है जिनके बारे मे हमे अच्छी तरह ज्ञात है कि वे अत्यधिक दूरी पर है, यह बात इस निष्कर्ष के लिए पर्य्याप्त है कि उनकी पृष्ठभूमि का आकाश और भी अधिक दूरी पर स्थित प्रतीत होगा। हम कह सकते है कि कुछ हद तक पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु के लिए आकाश मे उनकी निज की पृष्ठभूमि होती है। इससे

स्पष्ट है कि ये सभी घटनाएँ विशुद्ध रूप से मनोवैज्ञानिक ही होनी चाहिए तथा किसी आदर्श नियामक धरातल पृष्ठ की बात करना, जो हमारे लिए आकाशीय छत ही होगी, नितान्त असम्भव है।

रेल की लम्बी पटरी की सीध मे देखिए या किसी ऐसी चौड़ी सड़क को देखिए जिसके दोनो ओर वृक्ष लगे हो ताकि लम्बी दूरी का भान हो सके, तो इनकी लम्बाई की दिशा मे आकाश, दिक्सूचक की अन्य दिशाओ की अपेक्षा अधिक दूरीपर स्थित जान पड़ता है। किन्तु कागज के तख्ते से यदि आप क्षितिज रेखातक भू-दृश्य को ओट मे ले ले, तब तुरन्त वही आकाश निकट प्रतीत होने लग जाता है।

इसके प्रतिरूप के फलस्वरूप हम इसी प्रकार अपनी निगाह ऊर्ध्व दिशा की ओर डाल सकते है, तब आकाश अधिक ऊँचा प्रतीत होगा। यह उस वक्त विशेष प्रभावकारी होती है जब हम एक ऊची मीनार के पेदे से देखते है या और भी बेहतर होगा यदि किसी बडे रेडियो स्टेशन के पतले और ऊँचे खम्भो के पेदे के निकट से देखे। तब ऊपर का आकाश झुका हुआ प्रतीत होता है, यहाँ तक कि यह गुम्बज की शक्ल अख्तियार कर लेता है। तीन ऐसे स्तम्भो के दर्मियान समूचा आकाश ऊपर को उभरा हुआ सा प्रतीत होता है।[1] विभिन्न निरीक्षक, एक दूसरे से स्वतत्र तरीके पर, इसी प्रकार अपने लिए आकाशीय छत की आभासी शक्ल निर्धारित करते है (चित्र १०३)।



चित्र १०३—**एरियल के खंभों के ऊपर आकाश की आभासी शक्ल।**

यदि इनमे से किसी एक स्तम्भ की ओर देखते हुए आप क्षितिज से ऊर्ध्व बिन्दु तक के वृत्तचाप को दो भागों मे विभाजित करे (§१०९), तब निचला भाग बहुत बड़ा

1. H. Stncklen, Diss. Gottingen, (1919)

प्रतीत होगा बनिस्बत उस दशा के जबकि स्तम्भ की ओर पीठ करके उतनी ही दूरी से आप विभाजन का अन्दाज लगाये। निचले भाग से बनने वाला कोण अब ४५° से बड़ा, करीब-करीब ५६° के बराबर भी जान पडेगा जिसका अर्थ यह है कि आकाशीय छत एक अर्द्धगोले से भी अधिक ऊँची दीखती है।

ये प्रेक्षण कितने भी अधिक विश्वसनीय क्यो न हों, किन्तु स्मरण रखिए कि वे स्वयं अपने तई आकाशीय छत की शक्ल या क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्ड के आकार की प्रगट रूप मे वृद्धि का समाधान नही कर सकते। अत्यन्त गहरे रंग के काँच मे से भी देखने पर सूर्य ऊँची स्थिति मे सदैव छोटा दीखेगा और नीची स्थिति मे बडा दीखेगा यद्यपि भू-दृश्य इस दशा मे कत्तई नही दृष्टिगोचर होते है।

११७. सूर्य और चन्द्रमा के आभासी आकार को इंचों में प्रगट करना—उत्तर-प्रतिबिम्ब की रीति[1]

हम जानते है कि सूर्य और चाँद के आकार को हम रेखीय माप मे नही व्यक्त कर सकते। हम तो केवल वह कोण नाप सकते है जो ये आख पर बनाते है। फिर भी यह एक अद्‌भुत बात है कि बहुत से लोग दावा करते है कि ये आकाशीय पिण्ड शोरबे की प्लेट के आकार के बराबर है और कुछ थोडे से लोग इन्हे सिक्के के आकार का बताते है। हो सकता है कि यह आपको हास्यास्पद लगे, किन्तु स्मरण रखिए कि वैज्ञानिक विचारधारा वाला व्यक्ति भी यह महसूस करता है कि यह कह सकना नितान्त असम्भव होगा कि चन्द्रमा का व्यास १ मि० मीटर मालूम पडता है या १० गज, जबकि वह भली-भाँति जानता है कि ४ इच की दूरी पर १ मि० मीटर व्यास अथवा १००० गज की दूरी पर १० गज का व्यास चन्द्रमा को बिलकुल ठीक ढक लेगा। इस घटना मे भाग लेने वाले मनोवैज्ञानिक तथ्यो के बारे मे अभी तक बहुत कम जानकारी प्राप्त हो पायी है।

सभी को मालूम है कि सूर्य की ओर दृष्टि डाल कर पलक झपकाने पर उसका उत्तर-प्रतिबिम्ब प्राप्त किया जा सकता है (§८८)। बाद मे प्रत्येक वस्तु पर, जिसपर हम नज़र डालते है, यह उत्तर-प्रतिबिम्ब प्रक्षेपित होता है। निकट की दीवार पर यह अत्यन्त छोटा और तुच्छ-सा दीखता है, और दूर की चीजो पर यह बडा प्रतीत होता है (ध्यान दीजिए कि हम उस कोण का मान नही आंकते जो यह आख पर बनाता है बल्कि स्वय उस वस्तु के आकार का अनुमान लगाते है।) यह प्रभाव भली प्रकार समझ मे

1. G. ten Doesschate Nederl. Tijdschr voor Geneesk 74, 748 1930

भी आता है क्योंकि यदि कोई वस्तु दूरी पर स्थित होकर भी आँख पर उतना ही बड़ा कोण बनाये जितना बड़ा निकट की वस्तु बनाती है, तो रेखीय माप में वह वस्तु अवश्य अधिक बड़ी होगी। यह प्रतिबिम्ब स्वय सूर्य के आकार के बराबर कब दीखता है? विभिन्न प्रेक्षकों के मतानुसार ऐसा उस वक्त प्रतीत होता है जब दीवार की दूरी ५५ से लेकर ६५ गज तक होती है; यह शर्त दिन के लिए तथा रात के लिए समानरूप से लागू होती है। अत: इससे पता चलता है कि इतनी ही दूरी हम अपने और सूर्य या चन्द्रमा के बीच महसूस करते हैं। चूँकि इस दशा मे आँख पर बनने वाले कोण का मान १/१०८ रेडियन होगा, अत: इस के अनुसार प्रतिबिम्ब का व्यास १८ से २२ इंच तक होना चाहिए।

इसी प्रकार यह देखा गया है कि ६५ गज से अधिक फासले की दीवार पर भी उत्तर-प्रतिबिम्ब उतना ही बडा दीखता है जितना बड़ा ठीक उसके ऊपर के आकाश अर्थात् क्षितिज पर, जबकि ऊँचे आकाश पर प्रक्षेपित उत्तर-प्रतिबिम्ब निश्चय ही ६५ गज के फासले वाली दीवार पर बनने वाले प्रतिबिम्ब से छोटा दीखता है। इससे एक बार फिर यह बात प्रदर्शित होती है कि हमारे लिए ऊपर के आकाश की दूरी क्षितिज के मुकाबले मे कम दीखती है और अधोऽनुमान के सिद्धान्त के लिए सीमान्तक दूरी लगभग ६५ गज होती है (देखिए §११४)।

११७ अ. दृश्य-स्थल

अपने पहले के बनाये चित्रों की पुन माप करने पर वॉगनकोंनिश[1] इस नतीजे पर पहुँचा कि एक क्षेत्र के लिए, जिसे समष्टि रूप से हम एक नजर मे देख पाते है, उसके कोणीय विस्तार को उसके एक लाक्षणिक विशिष्टता के रूप मे निर्धारित करना उपयोगी होगा —इसे ही दृश्य–स्थल कहते है। भू-दृश्य की सामान्य दृष्टि-अनुभूति से यह घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। अशो मे नाप करे तो मैदानों मे इसका विस्तार बढ जाता है और पहाडो मे यह घट जाता है, रात्रि मे यह अधिक विस्तृत होता है और दिन मे कम। यह क्षेत्र जितना ही अधिक सकुचित होता है, हम कागज पर उसे चित्रित करते समय उसमे सूर्य और चन्द्रमा को उतना ही अधिक छोटे आकार का बनाते है; किन्तु कोणीय माप मे व्यक्त करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वे हमे अधिक बड़े दिखलाई पड़ते हैं।

1. Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1935)

अध्याय १०

इन्द्रधनुष, प्रभामण्डल तथा कांतिचक्र[1]

इन्द्रधनुष

निम्नलिखित सरल बातें इन्द्रधनुष के अध्ययन की भूमिका समझी जा सकती है। पानी की अकेली एक बूंद मे जिस क्रिया को सम्पन्न होते हुए हम देखते है वही वर्षा की लाखो बूंदो मे दृष्टिगोचर होती है और फलस्वरूप चमकता हुआ रंगीन वृत्तचाप बनता है।

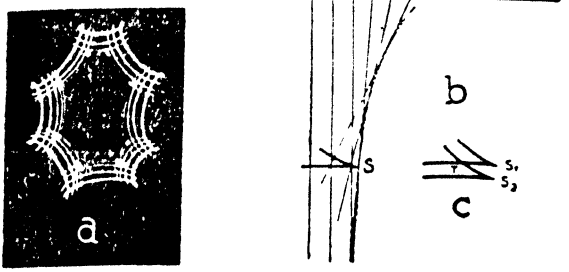
११८. वर्षा की बूँदों में व्यतिकरण की घटना[2]

अनेक व्यक्ति जिन्हे घरके बाहर भी चश्मा लगाना पडता है, इस बात की शिकायत करते है कि वर्षा की बूंदे प्रतिबिम्ब को विकृत कर देती है जिससे उसे पहचानना मुश्किल हो जाता है। कदाचित् उन्हे तसल्ली मिलेगी यदि उनका ध्यान हम उन्हीं वर्षा-बूंदों मे दृष्टिगोचर होनेवाली शानदार व्यतिकरण[3] की घटना की ओर आकृष्ट करे। उन्हे बस इतना ही करना होगा कि वे किसी दूर के प्रकाश-स्रोत जैसे सडक के लैम्प को देखे। अब पानी की बूंद जो पुतली के ठीक सामने पड़ती है, विचित्र ढग से विकृत हो जाती है—यह प्रकाश के धब्बे सरीखी दीखती है जिसमे असाधारण रूप से दांते से कटे रहते है तथा जिसके हाशिये पर अत्यन्त सुन्दर विवर्त्तन धारियाँ दीखती है जिनमें रंग भी दृष्टिगोचर होते है, (चित्र १०४, a)।

इस सम्बन्ध मे ध्यान देने योग्य एक बात यह है कि चश्मे को इधर-उधर थोड़ा हटाएँ तो भी प्रकाश का धब्बा उसी स्थिति पर बना रहता है। दूसरी बात यह है कि प्रकाश के धब्बे की सामान्य शक्ल तथा इधर-उधर निकले हुए उसके हाशिये का, प्रथम दृष्टि मे, बूंद की आकृति से किसी भी तरह का सम्बन्ध नहीं जान पड़ता। इसकी व्याख्या

1. Rainbow, halo and corona
2. Larmor, Proc. Cambr. Philos. Soc. 7, 131, 1891
3. Interference Phenomenon

सरल ही है। आँख को एक छोटी दूरबीन समझिए जो दूर के प्रकाश-स्रोत का प्रतिबिम्ब बना रही है, और पानी की बूंद को प्रिज्मों का समूह मानिए जो दूरबीन के अभिदृश्य लेन्स के आगे रखा है। तब यह स्पष्ट है कि प्रत्येक नन्हा प्रिज्म किरणों के एक समूह को बगल की ओर वर्त्तित करता है, यह क्रिया अभिदृश्य लेन्स पर प्रिज्म की स्थिति



चित्र १०४—चश्मे के लेन्स पर पड़ी हुई वर्षा की बूंद से प्रकाश का विवर्तन (a) व्यतिकरण आकृति (b) प्रकाश किरणों का मार्ग; बिन्दुरेखा रश्मिस्पर्शी वक्र है; मोटी रेखा तरंग का धरातल है निशिताग्र S पर है। (c) दो क्रमागत तरंगाग्र, दोनों ही T बिन्दु से गुजरते हैं।

द्वारा प्रभावित नहीं होती (बशर्ते यह अभिदृश्य लेन्स पर, दूरबीन के प्रवेशमुख के अन्दर अन्दर पड़ता हो।) किन्तु प्रकाश के धब्बे की शक्ल प्रिज्म के वर्त्तन कोण तथा हर एक प्रिज्म के अनुस्थापन[1] पर अवश्य निर्भर करती है। पानी की बूंद जो ऊर्ध्व दिशा में खिच उठी होती है, दरअसल प्रकाश की क्षैतिज लकीर-सी बनाती है।

आइए, अब विवर्त्तन-धारियों[2] की बात करें! इन धारियों का अस्तित्व ही नहीं होता यदि पानी की बूंद लेन्स की सही आकृति धारण किये होती, ताकि प्रकाशस्रोत का प्रतिबिम्ब ठीक एक बिन्दु पर बनता। क्योंकि उस दशा में प्रकाश तरंगाग्र के प्रत्येक भाग, चूंकि प्रकाशस्रोत से वे एक साथ ही चले थे, प्रतिबिम्ब-स्थल पर बिना किसी पारस्परिक कला-अन्तर[3] के पहुँचेंगे। किन्तु बूंद की सतह की वक्रता अनियमित होती है, अतः उससे वर्त्तित होने पर किरणें एक फोकस पर नहीं मिलतीं, बल्कि वे रश्मि-

1. Orientation 2. Diffraction fringes 3. Phase-difference

स्पर्शी वक्र[1] के धरातल पर एक-दूसरे से मिलती हैं (चित्र १०४, b)। ऐसी दशा में सदैव ही हम पाते हैं कि रश्मि-स्पर्शी के निकट के किसी भी बिन्दु से दो भिन्न किरणें गुजरती हैं जो विभिन्न लम्बाइयों के प्रकाशपथ को पार किये हुए होती हैं, अतः इनके बीच व्यतिकरण होता है। त रग की सतह का रेखाचित्र खीचने पर हम एक उत्क्रमण बिन्दु[2] प्राप्त करते हैं जहाँ निशिताग्र[3] स्थित होता है। अतः प्रत्येक क्षण पर एक बिन्दु T से सदैव ही दो तरगाग्र एक निश्चित कला-अन्तर पर गुजरेंगे (चित्र १०४, c)।

निश्चित बिन्दु से नापी गयी अन्धकारवाली धारियो की दूरी इस सूत्र से प्राप्त होती है, $दू=\sqrt[3]{(2m+1)^2}$ जिसमे m के मान 1, 3, 5.... हैं। अतः ये दूरियाँ उसी अनुपात मे होती हैं जिस अनुपात मे २.१; ३.७ : ५ ०; ६.१ आदि हैं।

११९. इन्द्रधनुष का निर्माण कैसे होता है ?

मेरा हृदय उछल-उठता है, जब मैं करता हूँ दर्शन सुरधनु का आकाश पर।

—वर्ड्सवर्थ

ग्रीष्म ऋतु की सन्ध्या है और उमस बहुत ही अधिक है। पश्चिमी क्षितिज पर काले बादल छाये हैं, तूफ़ान की तैय्यारी हो रही है। बादलों का एक काला मेहराब-सा तेज़ी के साथ ऊपर उठ रहा है और इसके पीछे दूरी पर स्थित आकाश साफ़ होता नज़र आ रहा है—सामने के किनारे पर हलके रग के अलका[4] बादलो का हाशिया है जिसपर पतली आड़ी धारियाँ दिखाई देती हैं। यह समूचे आकाश पर छा जाता है और फिर हमारे सिर के ऊपर से भयोत्पादक तरीके से गरज की एकाध गडगड़ाहट उत्पन्न करता हुआ गुजरता है। तब अकस्मात् ही मूसलाधार वर्षा होने लग जाती है—अब पहले की अपेक्षा ठण्डक हो जाती है। सूरज जो आसमान मे नीचे उतर चुका है, पुनः चमकने लगता है। और इस तूफ़ान में, जो पूर्व दिशा की ओर बढ़ रहा है, रग-विरगी आभा के इन्द्रधनुष की चौड़ी मेहराब प्रगट होती है।

जब कभी इन्द्रधनुष दीख पड़ता है, सदैव ही पानी की बूंदो पर प्रकाश की क्रीडा के फलस्वरूप इसका निर्माण होता है। बहुधा ये बूंदें वर्षा-जल की बूंदें होती हैं, कभी-कभी कुहासे की नन्ही बारीक बूंदें भी। इनमे से सबसे नन्ही बूंदो मे, जिनसे बादल बनते हैं, इन्द्रधनुष कभी नही देखे जा सकते। अत. यदि कभी आप किसीको यह कहते हुए सुने कि गिरते हुए तुषार मे या स्वच्छ आकाश में उसने इन्द्रधनुष देखा है तो निश्चय

1. Caustic 2. Point of reversal 3. Cusp 4. Cirrus

ही समझ जाइए कि तुषार आधा गलकर पानी बन चुका रहा होगा या फिर पानी की झीनी फुआर पड़ी होगी जो कभी-कभी बिना बादलों के ही उत्पन्न हो जाती है। इस तरह कुछ और दिलचस्प प्रेक्षण स्वयं करने का प्रयत्न करिए! पानी की ये बूंदें जिनमें इन्द्रधनुष का निर्माण होता है, आम तौर पर हमसे आध मील से लेकर डेढ़ मील की दूरी से अधिक फासले पर नहीं होती हैं (प्लेट IX a)। एक अवसर पर मैंने इन्द्रधनुष देखा जो मेरी आंख से २० गज की दूरी पर स्थित जंगल की मटमैली पृष्ठभूमि के सामने स्पष्ट उभरा था, अतः स्वयं इन्द्रधनुष तो और भी नजदीक रहा होगा। एक ऐसे दृष्टान्त का भी पता है जबकि ३ गज के फासले के जंगल के सामने इन्द्रधनुष दिखलाई पड़ा था।'

इंग्लैण्ड के एक प्राचीन अन्धविश्वास के अनुसार प्रत्येक इन्द्रधनुष के पेंदे पर स्वर्ण से भरा कलश मौजूद होता है। इन दिनों भी कुछ ऐसे लोग हैं जिनका ख्याल है कि वे आसानी से इन्द्रधनुष के इस पेंदे तक पहुँच सकते हैं, या वहाँ तक सायकिल पर जा सकते हैं तथा उनका कहना है कि उस स्थल पर एक अद्भुत टिमटिमाती हुई रोशनी देखी जा सकती है। यह बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिए कि इन्द्रधनुष एक वास्तविक चीज की तरह किसी एक निश्चित स्थिति पर मौजूद नहीं होता, एक विशेष दिशा से आते हुए प्रकाश के अतिरिक्त यह और कुछ भी नहीं है।

आर्थोक्रोमैटिक या पैन्क्रोमैटिक फिल्म पर पीले रंग के फिल्टर[2] काँच की सहायता से $\frac{1}{50}$ सेकण्ड के प्रकाशदर्शन और F/16 के डायफ्राम पर इन्द्रधनुष का फोटोग्राफ़ प्राप्त करने का प्रयत्न करिए।

१२०. इन्द्रधनुष का विवरण

"रुबेन्स का इन्द्रधनुष ..मटमैले नीलेरंग का था, जो इन्द्रधनुष की ओर से प्रकाशित दृश्य में आकाश के मुकाबले में अधिक गहरे रंग का दीखता था। रुबेन्स को प्रकाश-विज्ञान की अनभिज्ञता का दोष नहीं देना चाहिए बल्कि इस बात का कि उसने कभी भी इन्द्रधनुष का ध्यानपूर्वक प्रेक्षण नहीं किया था।"[1]

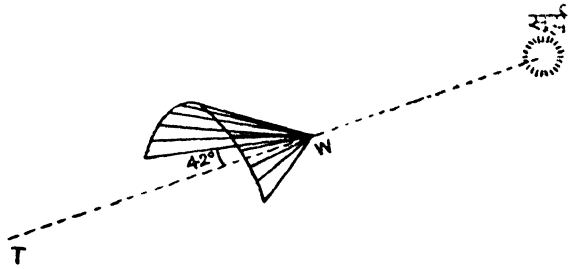
रस्किन 'दि ईगल्स नेस्ट'

इन्द्रधनुष एक वृत्त का भाग होता है, इसे देखने पर पहली बात जो ध्यान में आती है वह यह है कि अनुमान लगाये कि इसका केन्द्र कहाँ पर स्थित है, अर्थात् वह दिशा मालूम करे जिस ओर इस वृत्त-खण्ड का केन्द्र स्थित है। तुरन्त हमें पता चलता

1. Nat. 87, 314, 1913. 2. Filter

3. किन्तु इन्द्रधनुषवाले भू-दृश्य में छायाओं की दिशा इन्द्रधनुष के केन्द्र की दिशा में नहीं पड़ती है।

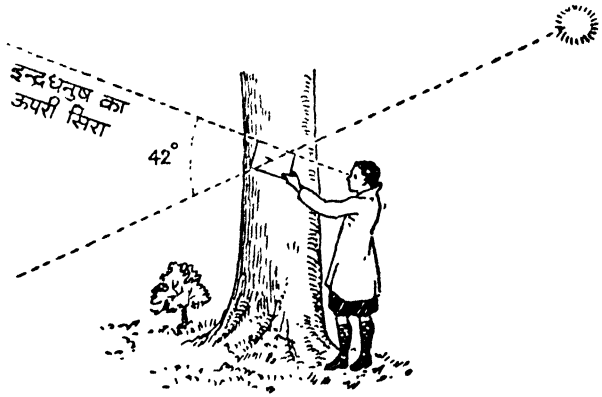
है कि यह केन्द्रबिन्दु क्षितिज के नीचे स्थित है और सहज ही हम मालूम कर सकते हैं कि सूर्य से प्रेक्षक की आँख तक खीची गयी रेखा को यदि बढ़ाये (पृथ्वी को भेदते हुए) तो यह उस केन्द्रबिन्दु की ओर इङ्गित करेगी, अर्थात् यह **प्रति-सूर्य बिन्दु**[1] होगा। यह रेखा ही वह अक्ष है जिससे इन्द्रधनुष का वृत्त एक पहिये की तरह जुड़ा है (चित्र १०५)।



चित्र १०५—**सूर्य की अपेक्षा से वह दिशा जिधर हमें इन्द्रधनुष दिखाई देता है।**

इन्द्रधनुष से आँख तक आनेवाली किरणें एक शंकु की सतह बनाती हैं; इनमें से प्रत्येक किरण अक्ष के साथ ४२° का कोण (शंकु के शीर्ष-कोण का आधा) बनाती है।

सूर्य आकाश में जितना ही नीचे उतरता है, उतना ही प्रति सूर्य-बिन्दु, अतः पूरा इन्द्रधनुष ऊपर को उठता जाता है और तदनुसार वृत्त की परिधि का भी उत्तरोत्तर



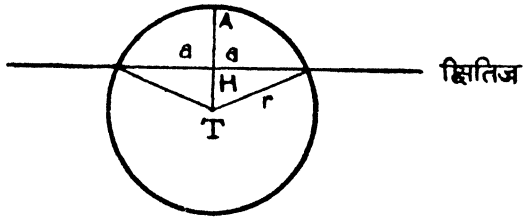
चित्र १०६—**इन्द्रधनुष से प्रति-सूर्यबिन्दु तक की कोणीय दूरी नापना**

1. Antisolar point

अधिक भाग क्षितिज के ऊपर प्रगट होता है, यहाँ तक कि सूर्य के डूबने के क्षण यह अर्द्धवृत्त बन जाता है। इसके प्रतिकूल सूर्य की ऊँचाई जब ४२° से अधिक होती है तो यह क्षितिज के नीचे पूर्णतया विलुप्त हो जाता है; इसी कारण ससार के इस भाग मे (हालैण्ड मे) ग्रीष्म ऋतु मे दोपहर के लगभग किसी ने भी कभी इन्द्रधनुष नही देखा।

शीर्ष के अर्द्धकोण को नापने के लिए पिन के सहारे एक कार्ड को पेड़ के तने से लगाइए और इसे घुमाकर ऐसी स्थिति मे रखिए कि इसका एक हाशिया ठीक इन्द्रधनुष के सिरे की ओर इङ्गित करे। तब पिन की छाया सूर्य को निरीक्षक से मिलानेवाली रेखा की दिशा बतलाती है अत. **प्रति-सूर्यबिन्दु** से इन्द्रधनुष की कोणीय दूरी तुरन्त पढ़ी जा सकती है (चित्र १०६)।

§२३५ मे बतलायी गयी विधियों मे से भी किसी एक का उपयोग क्षितिज से इन्द्रधनुष के ऊपरी सिरे की कोणीय ऊँचाई h नापने के लिए किया जा सकता है (चित्र १०७)। तथा इसके चाप के दोनो छोर के दर्मियान के कोण 2α को भी नाप सकते



चित्र १०७—a, h, H, r **सभी चाप है, जिनकी नाप अंशों में की जाती है।**

है, साथ ही साथ प्रयोग के समय को भी अङ्कित कर लेते है। बाद मे गणना द्वारा सूर्य की ऊचाई भी मालूम कर लेते है जिससे प्रति-सूर्य बिन्दु T के लिए क्षितिज से नीचे के कोण H का भी मान मालूम हो जाता है। इन से वाञ्छित कोणीय त्रिज्या r के लिए तीन मान प्राप्त होते है जिनका औसत मान हम ले सकते है, जैसा निम्नलिखित मे दिया गया है—

$$r = H + h$$

$$\cos r = \cos \alpha \cos H$$

$$\tan r = \frac{1 - \cos \alpha . \cos h}{\cos \alpha . \sin h}$$

सच पूछिए तो इन्द्रधनुष को वृत्त चाप की शक्ल मे नहीं, बल्कि पूर्ण वृत्त की शक्ल का दीखना चाहिए। हम क्षितिज के नीचे इसे नही देख पाते है क्योंकि क्षितिज के नीचे उतराती हुई वर्षा की बूंदे हमे दिखलाई नही देती। फिजिका[1] में बतलाया गया था कि वायुयान मे इन्द्रधनुष का पूर्ण-वृत्त देखा जा सकता है, जिसके केन्द्र पर वायुयान की छाया मौजूद होती है। दरअसल इस शानदार दृश्य का अवलोकन किया जा चुका है।

प्रमुख इन्द्रधनुष के गिर्द गौण इन्द्रधनुष का पाया जाना कुछ लोगो के ख्याल में एक अपवादस्वरूप घटना है। किन्तु वास्तविकता यह है कि गौण इन्द्रधनुष करीब-करीब सदैव ही दृष्टिगोचर होता है, यद्यपि स्वभावतः प्रमुख इन्द्रधनुष की तुलना मे यह अत्यन्त मन्द प्रकाश का दीखता है। यह प्रमुख इन्द्रधनुष का समकेन्द्रीय होता है, अतः इसका भी केन्द्र प्रति-सूर्य-बिन्दु पर ही स्थित होता है, किन्तु इससे आनेवाली किरणे सूर्य और नेत्र की अक्षरेखा के साथ ५१° का कोण बनाती है।

'इन्द्रधनुष के सात रगो' का अस्तित्व केवल काल्पनिक जगत् मे ही है; यह भाषा का एक ढंग है जो बहुत दिनों से प्रचलित चला आ रहा है, क्योंकि हम बहुत कम ही चीजो को उनके वास्तविक रूप मे देख पाते है! वास्तव मे इन्द्रधनुष के रग क्रमशः एक-दूसरे मे सविलीन होते जाते है यद्यपि हमारी आँखे अनजाने ही उन्हे समूहों में पृथक् करने का प्रयत्न करती है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि विभिन्न इन्द्रधनुषो मे भारी अन्तर पाया जाता है, बल्कि स्वय वही इन्द्रधनुष जिसे आप देख रहे है, प्रेक्षण के दौरान मे बदल सकता है—इसका ऊपरी भाग निचले भाग से भिन्न हो जाता है। पहली बात तो यह है कि जब कोणीय माप मे रग की समूची पट्टी की केवल चौड़ाई नापते है तो बहुत अधिक अन्तर प्राप्त होता है (देखिए परिशिष्ट § २३५)। इसके अतिरिक्त, रगो का क्रम सदैव ही लाल, नारगी, पीला, हरा, नीला, और बैगनी होता है, किन्तु विभिन्न रगो की आपेक्षिक चौड़ाइयों तथा उनकी चमक मे, हर सम्भव तरीके के अन्तर पाये जाते है। मेरा अनुभव है कि विभिन्न प्रेक्षक एक ही इन्द्रधनुष का विवरण सदैव एक ही तरह से नही प्रस्तुत करते। अतः इन्द्रधनुषो के अन्तर के बारे में विश्वसनीय जानकारी हासिल करने के लिए या तो एक ही प्रेक्षक के प्रेक्षणो की तुलना की जानी चाहिए या फिर पहले से इस बात का इतमीनान प्राप्त कर लेना चाहिए कि दो प्रेक्षकों की प्रेक्षण-अनुभूतियो मे सामान्य रूप से परस्पर सामञ्जस्य पाया जाता हो।

1. Physica

इन्द्रधनुष के रंगों के पक्षपात-रहित विवरण हमारा ध्यान इस महत्त्वपूर्ण बात की ओर आकृष्ट करते हैं कि प्राय: इन्द्रधनुष के भीतरी हाशिये पर बैंगनी के आगे कई अतिरिक्त धनुष भी होते हैं। सामान्यत: वे सबसे अधिक स्पष्ट वहाँ दीखते हैं जहाँ इन्द्रधनुष की चमक सबसे अधिक होती है अर्थात् उसके उच्चतम विन्दु के निकट। इनके रंग आम तौर पर एक के बाद दूसरे, गुलाबी और हरे रंग के होते हैं। सच तो यह है इन्हें गलत नाम दिया गया है क्योंकि यद्यपि इनका प्रकाश मन्द होता है फिर भी ये इन्द्रधनुष के ही भाग हैं जिस तरह उसकी 'सामान्य' रंगों की पट्टियाँ उसके भाग हैं। ये अतिरिक्त धनुष अक्सर अपनी चमक तथा चौड़ाई के लिहाज से शीघ्रता के साथ बदल जाते हैं जो इस बात का सूचक है कि पानी की बूंदों के आकार में तब्दीली हुई है (§१२३)।

गौण इन्द्रधनुष में रंगों का क्रम प्रमुख इन्द्रधनुष के रंगक्रम का उलटा होता है; अत: एक धनुष की लाल पट्टी दूसरे की लाल पट्टी के सामने पड़ती है। गौण इन्द्रधनुष बहुत कम ही इतना चमकीला होता है कि इसके 'अतिरिक्त धनुष' दृष्टिगोचर हो सकें; ये बैंगनी पट्टी के आगे पड़ते हैं अत: गौण इन्द्रधनुष के बाहरी हाशिये से परे ये स्थित होते हैं।'

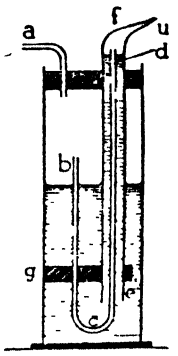
१२१. आँख के निकट का इन्द्रधनुष

जब हम फौआरे या झरने के ऊपर उतराती हुए पानी की बारीक फुआर पर सूर्य की किरणों को पड़ते हुए देखते हैं तो हमें स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि पानी की बूंदों के समूह से किस प्रकार इन्द्रधनुष का निर्माण होता है। स्टीमर के पार्श्व के सहारे जहाँ लहरें स्टीमर के अग्रभाग से टकराकर फेन के रूप में ऊपर उठती है, कभी-कभी इन्द्रधनुष दिखाई देते हैं जो काफ़ी देर तक स्टीमर के साथ ही लगे रहते हैं; नन्ही बूंदों के बादल के घने पड़ने पर कभी ये इन्द्रधनुष चटकीले दीखते हैं तो कभी इनके विरल होने पर इन्द्रधनुष का प्रकाश मन्द हो जाता है। इस घटना को देख सकने का उत्तम अवसर आपको विशेषतया उस समय प्राप्त हो सकता है जब स्टीमर की पथ-दिशा सूर्य की ओर जा रही हो।

ये कुछ सरल रीतियाँ हैं जिनकी मदद से बगीचे के अन्दर हम वर्षा की बौछार पैदा कर सकते हैं जो इन्द्रधनुष का निर्माण कर सकती है—(क) पानी फेंकने की किमिच

1. Observed by Brewster in 1828

की नली, (ख) टिन्डल का उपकरण[1] जिसमे दाब से उत्पन्न की गयी पानी की धार धातु की एक गोल प्लेट पर टकराकर नन्ही बूंदों के रूप मे बिखर जाती है; या (ग) अन्तोलिक का फुआर उत्पादक[2]; इसमे फुआर उत्पन्न करने के लिए केवल a पर मुँह लगाकर जोर से फूंक मारनी होती है (चित्र १०८)। अन्तोलिक के फुआर-उत्पादक मे छोटी नली bcd को चौड़ी नली ef के अन्दर दो-चार मिलीमीटर ऊपर-नीचे खिसकाकर बूंदो के आकार पर नियत्रण रखा जा सकता है, ऐसा करने के लिए कार्क की छिद्रमय चकरी को थोड़ा ऊपर-नीचे खिसकाना होगा। सिरे u के सूराख का आकार भी इस प्रयोग मे महत्त्व रखता है। उपकरण को खोले बिना ही चौडे मुह की नली a द्वारा भीतर पानी डाला जा सकता है। इस छोटे उपकरण द्वारा किये गये मेरे निज के प्रयोग अत्यन्त सन्तोषजनक रहे है।



चित्र १०८—**प्रयोगशाला में इन्द्रधनुष का निर्माण करने के लिए फुहार-उत्पादक।**

काँच के घेरे के अन्दर उगनेवाले पौदो पर पानी छिडकने के लिए प्रयुक्त होनेवाले फुआर-उत्पादक से निकलनेवाली नन्ही बूंदे आकार मे इतनी बारीक होती है कि उनमे यथार्थ इन्द्रधनुष तो देखा नही जा सकता, केवल सफ़ेद रग का, धुन्ध का धनुष मिलता है जिसके हाशिये नीले और पीले रग के होते है (देखिए § १२८)। केवल यत्र-तत्र आकस्मिक तौर पर बड़े आकार की बूंदों के एकाध समूह मिल जाते हैं तो एक क्षण के लिए सामान्य किस्म का इन्द्रधनुष दृष्टिगोचर हो जाता है।

इन्द्रधनुष के अवलोकन के लिए सदैव ही प्रति-सूर्य-बिन्दु की दिशा से ४२° के कोण पर देखिए और बेहतर होगा कि सामने की पृष्ठभूमि गहरे मटमैले रंग की हो।

प्रेक्षण के लिए इस किस्म के प्रयोग उत्तम सामग्री का काम देते है। हमारी क्षितिज-रेखा के नीचे भी जब पानी की बूंदों की पर्य्याप्त संख्या मौजूद होती है तो इन्द्रधनुष प्राय: पूर्णवृत्त के रूप मे देखे जा सकते है। यदि हम चले तो इन्द्रधनुष भी हमारे साथ-साथ चलता है; यह कोई यथार्थ चीज़ नहीं है जो किसी निश्चित स्थान पर दिखाई

1. Phil Mag. 17, 61, 1883. 2. Antolic's vaporiser

देती हो, बल्कि यह एक निश्चित दिशा में दृष्टिगोचर होता है; हम कह सकते हैं कि इसका आचरण इस तरह का है मानो यह अनन्त दूरी पर स्थित हो अत. यह हमारे साथ-साथ उसी भाँति चलता है जिस भाँति चन्द्रमा। यदि बूँदों के बादल के अत्यन्त निकट खड़े हों जैसे, उदाहरण के लिए, जब [illegible] हैं, तो दो इन्द्रधनुष देखे जा सकते हैं जो एक-दूसरे को काटते हैं। ऐसा कैसे होता है? अपनी आँखें बारी-बारी से बन्द करिए; [illegible] आँख अलग-से अपना निज का इन्द्रधनुष देखती है (यही निष्कर्ष इस बात से भी प्राप्त होता है कि इन्द्रधनुष हमारे साथ-साथ चलता है।) गौण इन्द्रधनुष तथा अतिरिक्त धनुष अक्सर शानदार रूप में देखे जा सकते हैं। पानी की धार की दिशा यदि बदल दें, या फुआर के अन्य स्थलों में इन्द्रधनुष का अवलोकन करें तो इन्द्रधनुष के रंगों के आपेक्षिक चटकीलेपन में अन्तर आ जाता है; इसका कारण यह है कि बूँदों का औसत आकार अब भिन्न हो गया है।

१२२. डेकार्ट का इन्द्रधनुष-सिद्धान्त[1]

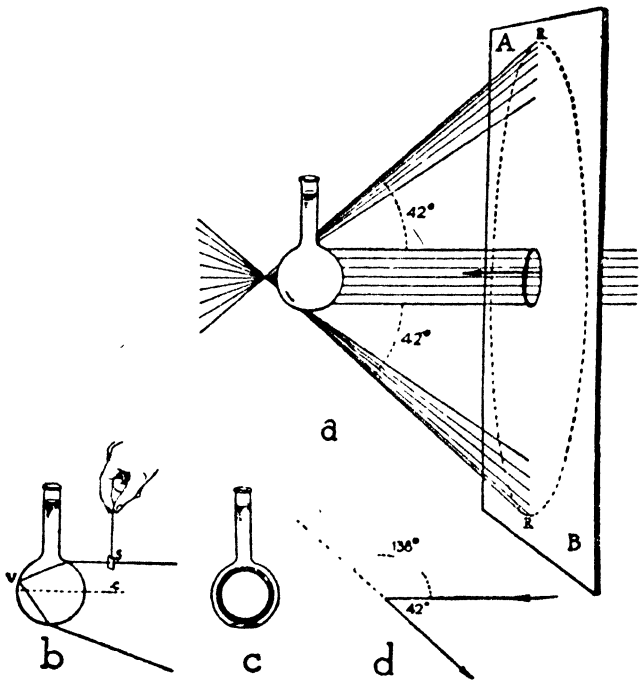
पानी की बूँद के अन्दर प्रकाशपथ की जाँच करने के लिए हम एक फ्लास्क को पानी से भर कर धूप में रखते हैं (चित्र १०९, a)। अब पर्दे पर जिसमें एक गोल सूराख (फ्लास्क से तनिक बड़ा) कटा है, एक हलकी रोशनी का इन्द्रधनुष R प्रगट होगा। यह पूर्णवृत्त की शक्ल का होता है, इसकी कोणीय दूरी ४२° होती है तथा यथार्थ इन्द्रधनुष की भाँति ही इसका लाल रंग बाहरी हाशिये की ओर होता है।

काँच के गिलास की सहायता से भी यह प्रयोग इतनी ही सफलतापूर्वक किया जा सकता है, अवश्य गिलास की शक्ल बहुत कुछ बेलनाकार होनी चाहिए। समय सुबह या शाम का होना चाहिए जबकि आकाश में सूर्य नीचे ही रहता है। पर्दे पर प्राप्त प्रतिबिम्ब वृत्ताकार नहीं होगा, बल्कि इसमें समानान्तर घाटियाँ दिखाई देंगी।

फ्लास्क के सामने, धागे में लटकता हुआ एक नन्हाँ-सा पर्दा S पर रखिए, तो इन्द्रधनुष के निचले भाग में आप एक छाया देखेंगे (चित्र १०९,b)। यदि फ्लास्क पर v के आसपास अपनी गीली उँगली का धब्बा लगा दें तो इन्द्रधनुष के निचले भाग में तत्सम्बन्धी स्थल पर आपको मटमैले रंग का धब्बा मिलेगा। अत. स्पष्ट है कि इन्द्रधनुष का निर्माण उस वक्त होता है जब केन्द्रीय रेखा से SC की दूरी पर किरणें

1. Descartes Theory of the Rainbow

पानी की बूंद पर आपतित होकर उसकी पिछली सतह के बिन्दु v से परावर्त्तित होती है। यदि एक छल्ला ले जिसकी मोटाई कुछेक मिलीमीटर हो तथा उसका व्यास फ्लास्क के व्यास का ० ८६ हो और इसे आपतित किरणो के पथ मे इस तरह रखे कि आपतित किरण पुज की केन्द्रीय रेखा छल्ले के केन्द्र से गुजरे तो इस दशा मे इन्द्रधनुप पूर्णतया विलुप्त हो जाता है (चित्र १०९, c)।

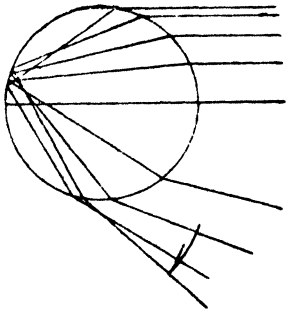


चित्र १०९—पानी से भरे फ्लास्क द्वारा इन्द्रधनुष का निर्माण करना।

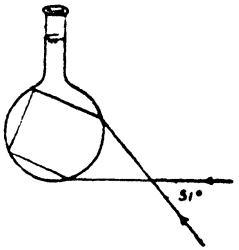
चित्र ११० मे परावर्त्तन[1] तथा वर्त्तन[2] के सामान्य नियमों के आधार पर प्राप्त किया गया किरणों का सही मार्ग दिखलाया गया है। इससे यह देखा जा सकता है कि पानी की बूंद पर आपतित होनेवाली किरणे किस प्रकार अपने आपतन बिन्दु की स्थिति के अनुसार विभिन्न दिशाओं मे बूंद से बाहर निकलती हैं। उनमें से एक किरण अन्य

1. Reflection 2. Refraction

किरणों की अपेक्षा सबसे कम विचलित होती है, अर्थात् इसका विचलन कोण १३८° है--अतः अक्षरेखा के साथ यह १८०°–१३८°=४२° का कोण बनाती है। बाहर निकलने वाली किरणें विभिन्न दिशाओं में वितरित होती हैं--इनमें से केवल अल्पतम विचलन प्राप्त करनेवाली किरणें ही परस्पर समानान्तर दिशा में निकलती हैं, अतः आँखों में ये ही किरणें अधिकतम 'घनत्व' के साथ प्रवेश करती हैं।



चित्र ११०—पानी की बूंद के भीतर प्रकाश किरण का मार्ग, जिससे इन्द्रधनुष बनता है मोटी रेखा तरंगाग्र इंगित करती है।

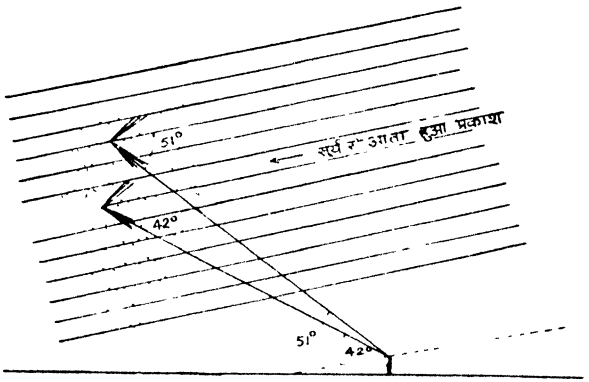


चित्र १११—गौण इन्द्रधनुष की उत्पत्ति।

पूर्णतया अँधेरे कमरे में पर्दे पर अक्षरेखा के साथ ५१° के कोण बनानेवाली दिशा में गौण इन्द्रधनुष भी देखा जा सकता है या जब किरण अपनी आपतन दिशा से १८०°+ ५१°=२३१° के कोण पर विचलित होती है (चित्र १११)। प्रमुख इन्द्रधनुष के लिए किये गये प्रयोगों की भाँति ही प्रयोग करके यह सिद्ध कर सकते हैं कि गौण इन्द्रधनुष दो बार परावर्त्तित होनेवाली किरणों द्वारा बनते हैं। इनके रंगों का क्रम प्रमुख इन्द्रधनुष के रंगों के क्रम का उलटा होता है, ठीक जैसा कि यथार्थ में इन्द्रधनुषों में पाया जाता है।

अब कल्पना कीजिए कि बादल की बूंदों में से प्रत्येक ऊपर बतायी गयी विधि के अनुसार ४२° के शंकु में प्रकाश की प्रचुर मात्रा परावर्त्तित करती है तथा उससे कुछ कम ही प्रकाश वह ५१° के शंकु में परावर्त्तित करती है। वे सभी बूंदें जो सूर्य से आने वाली आपतित किरणों की दिशा से ४२° की कोणीय दूरी पर हैं ऐसी स्थिति में होती हैं कि वे अपने प्रमुख इन्द्रधनुष का प्रकाश हमारी आँख में भेज सकें, जबकि आपाती सूर्य-

किरण के साथ ५१° के कोण बनानेवाली बूंदो से दो बार परावर्त्तित होनेवाली किरणें हम तक पहुँचती हैं। अस्तु, इस प्रकार प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषों का निर्माण होता है (चित्र ११२)।



चित्र ११२—**वर्षा की बूंदों के बादल पर गिरने वाली सूर्य किरणें प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषों का निर्माण करती हैं।**

१२३. इन्द्रधनुप का विवर्त्तन सिद्धान्त

डेकार्ट के सिद्धान्त मे केवल उन्ही किरणों का विचार किया गया था, जो अल्पतम विचलन प्राप्त करती है—मानों अकेली ये ही किरणे मौजूद हों। किन्तु वास्तविकता यह है कि इससे अधिक विचलनवाली अनेक किरणें भी मौजूद होती है जो एक **रश्मि-स्पर्शी** वक्र द्वारा पूर्णतया अन्वालोपित[1] होती है। और ठीक ये ही वे शर्त्तें है जिनके अनुसार **व्यतिकरण** उत्पन्न होता है जैसा कि चश्मे के लेन्स पर पड़ी पानी की बूंद के निकट स्थित **रश्मि-स्पर्शी** वक्र के लिए दिखाया जा चुका है (§११८)।

और विशेषतया नन्ही बूंदों का जब विचार करते है तो **प्रकाश-किरणों** की व्याख्या पूरी नहीं पड़ती, बल्कि इस तरह के किरणस्पर्शी वक्र के निकट जहाँ **निशिताग्र**[2] प्रगट होता वहाँ **तरंगाग्र** की व्याख्या करनी चाहिए (चित्र ११०)।

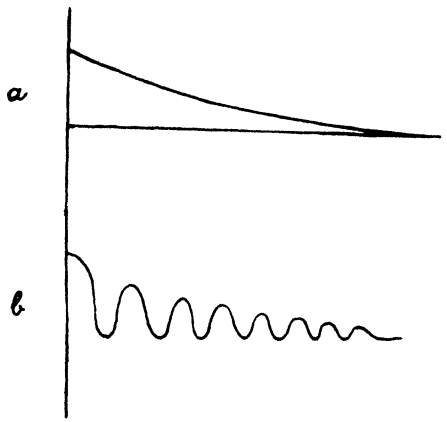
हाइजिन्स के सिद्धान्त के अनुसार तरंगाग्र के बिन्दु विकिरण के स्रोतबिन्दु माने जाते हैं, अत: अब समस्या यह है कि इसकी जाँच करे कि तरंगाग्र के प्रत्येक बिन्दु से आँख

1. Enveloped 2. Cusp

तक आने वाले कम्पन परस्पर एक-दूसरे के साथ व्यतिकरण किस प्रकार करते हैं। इस समस्या का अध्ययन एयरी ने किया और इसे स्टोक्स, मोबियस तथा पेर्नतेर ने पूरा करके अनुप्रयुक्त किया—इस अध्ययन से सुविख्यात इन्द्रधनुप-अनुकल[1] प्राप्त होता है—

$$A = c\int_{0}^{\infty} \cos \frac{\pi}{2} (u^3 - zu)\, du$$

इसमें A उस प्रकाश-कम्पन का आयाम[2] है जो हमारी आँख मे प्रवेश करता है, तथा यह अल्पतम विचलनवाली किरण की दिशा के साथ बननेवाले कोण Z का फलन[3] है। इस अनुकल का मान प्राप्त करने के लिए इसे श्रेणी के रूप मे विकसित करना होता है तब Z की दिशा मे दीखनेवाले प्रकाश की तीव्रता का मान A^2 के बराबर मिलता है।



चित्र ११३—**पानी की बूंद म से होकर आनेवाली किरण शलाका में प्रकाश दीप्ति का वितरण। (a) डी कार्टी के सरल सिद्धान्त के अनुसार। (b) विवर्तन सिद्धान्त के अनुसार।**

चित्र ११३ मे दिखाया गया है कि किसी एक रग के लिए बड़े आकार की बूंदो के लिए प्राप्त प्रकाश-वितरण (a), बूंद के छोटे होने की दशा मे विवर्त्तन द्वारा किस प्रकार बदल जाता है (b)। यह घटना प्रधानतः अल्पतम विचलन (Z=०) वाली किरणो द्वारा अभी भी निर्धारित होती है, किन्तु इसके अतिरिक्त अनेक लघु शीर्ष भी इसमे मौजूद होते हैं। अब विभिन्न रगो के प्रकाश के लिए इस तरह की वक्ररेखाएँ उनके तरग-दैर्घ्य के हिसाब से अलग-अलग स्थितियों पर खीचिए। विचलन कोण के किसी दिये हुए मान Z के

1. Rainbow-integral 2. Amplitude 3. Function

लिए इस प्रकार हमे विभिन्न रगो के मिश्रण का प्रकाश मिलता है, अतः इन्द्रधनुष के रग कभी भी यथार्थरूप से सपृक्त वर्ण के नही हो सकते। चूँकि प्रत्येक रग का प्रथम तथा उच्चतम शीर्ष ही इस घटना मे महत्त्वपूर्ण योग देता है और तरग-दैर्घ्य के बढ़ने के साथ ये शीर्ष भी खिसकते जाते है, अतः इन्द्रधनुष मे रगो का क्रम मोटे तौर पर हम उसी प्रकार का पाते है जैसा कि प्रारम्भिक-सिद्धान्त से हमे प्राप्त होता है। विवर्त्तन के कारण रूपान्तर यह होता है कि बूँदों के आकार के अनुसार रगो मे थोड़ा अन्तर आ जाता है और इन्द्रधनुष के अन्दर की ओर अतिरिक्त धनुष प्रगट हो जाते है। अन्ततः यह ध्यान मे रखना चाहिए कि सूर्य केवल एक बिन्दु नही है, अत सूर्य की किरणे एक-दूसरे के बिल्कुल ठीक समानान्तर नही होती (§१)। इस कारण पूरे आधे डिग्री के कोण का फैलाव ये प्राप्त करती है, फलस्वरूप इन्द्रधनुष के विभिन्न रगो की सीमाएँ एक-दूसरे मे थोड़ी बहुत अभिलोपित हो जाती है। इन्द्रधनुष को देखकर विवर्त्तन के सिद्धान्त की मदद से हम तुरन्त ही उन बूँदो के आकार का पता लगा सकते है जिनके कारण वह इन्द्रधनुष बनता है।

मुख्य लक्षण निम्नलिखित है—

व्यास	
१—२ मिलीमीटर	अत्यन्त चमकीला बैंगनी रग तथा चटकीला हरा रग, इन्द्रधनुष का लाल रग शुद्ध होता है किन्तु नीला रग नगण्य मात्रा मे ही पाया जाता है। अतिरिक्त धनुष कई होते है (मिसाल के तौरपर ५), इनका रग एक के बाद दूसरा गुलाबी-बैंगनी तथा हरा होता है जो अविरत-रूप से प्रमुख-इन्द्रधनुष मे समाते हुए जान पडते है।
०.५० मिलीमीटर	इस दशा मे लाल रग अत्यन्त फीका रहता है। अतिरिक्त धनुषों की सख्या कम होती है, इस बार भी बैंगनी-गुलाबी तथा हरे रग एक के बाद दूसरे आते है।
०.२०—०.३० मिलीमीटर	अब लाल रग तो नही दीखता, किन्तु शेष भाग मे धनुष चौडा और सुस्पष्ट रहता है। अतिरिक्त धनुष क्रमशः अधिक पीले होते जाते है। यदि अतिरिक्त धनुषो के दर्मियान खाली जगह पड जाय तो इसका अर्थ है कि बूँदो का व्यास ०.२० मिलीमीटर होगा। यदि प्रमुख इन्द्रधनुष तथा प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच

जगह खाली पड़ती है तो बूंदों का व्यास ०.२० मि० मी० से कम होगा।

०.०८—०.१० मिलीमीटर इन्द्रधनुष अधिक चौड़ा तथा अधिक पीला होता है, केवल बैंगनी रग चटकीला होता है। प्रथम अतिरिक्त धनुष तथा प्रमुख इन्द्रधनुष के बीच की खाली जगह विशेष चौड़ी होती है, तथा इस अतिरिक्त धनुष मे धवल रग की आभा स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

.०६ मिलीमीटर प्रमुख इन्द्रधनुष मे एक सुस्पष्ट सफ़ेद पट्टी मौजूद रहती है।

०.०५ मिलीमीटर से कम धुन्ध-धनुष (देखिए § १२८)।

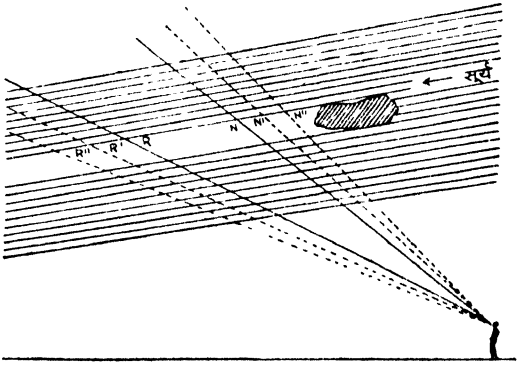
१२४. इन्द्रधनुष के इर्द-गिर्द का आकाश[1]

एक सतर्क प्रेक्षक देख सकता है कि प्रमुख और गौण इन्द्रधनुषो के बीच का आकाश बाहर के आकाश के मुकाबले मे मद प्रकाश का दीखता है। अवश्य यह सही है कि पृष्ठभूमि मे विभिन्न चमकीलेपन के बादल मौजूद होते है, फिर भी यह प्रभाव साधारणतया स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। (प्लेट IX a)।

व्याख्या इस प्रकार है कि अल्पतम विचलन की किरणो के भेजने के अतिरिक्त प्रत्येक बूंद अन्य दिशाओ मे भी किरणो को परावर्त्तित करती है जो आपाती दिशा से अधिक मात्रा मे विचलित होती हैं। चित्र ११४ मे ये बिन्दु रेखाओं द्वारा प्रदर्शित की गयी हैं। ध्यान दीजिए कि गौण इन्द्रधनुष मे इन किरणों का विचलन प्रमुख इन्द्रधनुष की किरणो के विचलन की दिशा की उल्टी ओर होता है। अत प्रेक्षक को प्रमुख इन्द्रधनुष के भीतर के आकाश के इस भाग से सूर्य से हलका प्रकाश आता हुआ दिखाई देगा जो एक बार का परावर्त्तन प्राप्त करनेवाली उन किरणो से उत्पन्न होता है जिनका विचलन १३८° से अधिक होता है और इस कारण वे अक्ष के साथ ४२° से कम का कोण बनाती हैं; और तब गौण इन्द्रधनुष के बाहर वाले आकाश के भाग से भी हलका सूर्य-प्रकाश मिलता है जो दो बार परावर्त्तित हुई उन किरणो से उत्पन्न होता है जिनका विचलन २३१° से अधिक होता है, अत ये अक्षरेखा के साथ ५१° से बड़ा कोण बनाती हैं। कभी-कभी प्रमुख और गौण इन्द्रधनुषो के दर्मियान के धुंधली रोशनी वाले भाग मे प्रकाश की त्रिज्यीय लकीरे दिखलाई पड़ती हैं जिनमे किसी प्रकार का रग नही होता।[2] ये उषा-

1. Nat. **109**, 309, 1922. 2. S. Thompsn. Nat, **18**, 441, 1878

गोधूलि किरणों (§१९१) तथा गतिशील पानी पर की किरणों (§२१७) के सदृश हीं होती है। इस घटना का समाधान आसानी के साथ किया जा सकता है, यदि हम कल्पना करे कि सूर्य और वर्षा की बूंदो के दर्मियान कही पर एक छोटा बादल उतरा रहा है (चित्र ११४)। इस दशा मे बादल की छाया मे पड़ने वाली बूंदे प्रेक्षक की ओर कुछ भी



चित्र ११४—सूर्य और वर्षा की बौछार के दर्मियान के बादल के टुकड़े आकाश में त्रिज्यीय धारियों का निर्माण करते हैं।

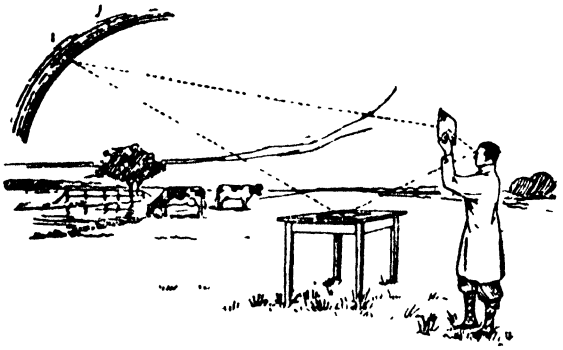
प्रकाश नही भेज पाती। प्रेक्षक को दिखाई देने वाले इन्द्रधनुष का निर्माण उसकी दृष्टि-रेखा मे पडने वाली तमाम बूंदो से आये हुए प्रकाश से होता है अत. इस दशा मे इन्द्र-धनुष R बूंदो के प्रकाश से वञ्चित रह जाता है; इसी प्रकार गौण इन्द्रधनुष N बूंदों के प्रकाश से वञ्चित रहता है जबकि विस्तृत प्रकाश वाले भाग मे R', R'', ...तथा N', N''... सरीखी बूंदो से आने वाला प्रकाश अनुपस्थित रहता है। अत: इस कारण उसकी आँख, सूर्य तथा उस बादल से गुजरने वाले धरातल मे घटना की सभी बातें हलकी पड़ जाती है; किरणपथ सरीखी छाया बनती है जो आगे बढ़ाने पर ठीक सूर्य के सामने वाले बिन्दु अर्थात् इन्द्रधनुष के केन्द्र से गुजरती है।

१२५. इन्द्रधनुष में प्रकाश का ध्रुवण[1]

काँच के एक टुकड़े मे प्रतिबिम्बित होने वाले इन्द्रधनुष को देखने का प्रयास अत्यन्त मनोरजक होता है—इसके लिए पारे की कलई वाला दर्पण नही लेना चाहिए जो इस

1. F. Rinne Naturwiss, **14**, 1283, 1936

उद्देश्य के लिए अनुपयुक्त होगा, बल्कि साधारण काँच का टुकड़ा लेना चाहिए जिसकी पीठ पर कालिख लगी हो या उसके साथ काले रंग का कागज़ लगा हो। इसे आँख के निकट इस तरह रखना चाहिए ताकि इसमें तिरछी दिशा से देख सके, अभिलम्ब से करीब ६०° के कोण पर। काँच को या तो क्षैतिज तल में रख सकते हैं या ऊर्ध्व तल में, जैसा चित्र ११५ में दिखाया गया है। इन्द्रधनुष के ऊपरी सिरे का अवलोकन करें, तो



चित्र ११५—**इन्द्रधनुष में प्रकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण किस तरह करना चाहिए।**

हम देखेंगे कि काँच को क्षैतिज स्थिति में रखने पर धनुष का प्रतिबिम्ब अत्यन्त स्पष्ट और चमकीला बनता है जबकि काँच को ऊर्ध्व तल में खड़ा करने पर प्रतिबिम्ब इतना हलका बनता है कि वह करीब-करीब अदृष्टिगोचर ही रहता है। इससे पता चलता है कि इन्द्रधनुष के प्रकाश के गुण गमन दिशा के समकोण की विभिन्न दिशाओं में विभिन्न होते हैं, अर्थात् यह ध्रुवित[1] प्रकाश होता है।

इस प्रेक्षण के लिए एक इससे भी सरल तरीका लभ्य है; इस तरीके में एक 'निकल'[2] प्रिज्म में से इन्द्रधनुष का प्रेक्षण करते हैं—यह प्रिज्म एक छोटा-सा उपकरण होता है जिसकी सहायता से हम तुरन्त मालूम कर सकते हैं कि अमुक प्रकाश ध्रुवित है अथवा अध्रुवित। 'निकल' प्रिज्म को उसके अक्ष के गिर्द घुमाते हैं तो उसकी एक स्थिति में इन्द्रधनुष अत्यन्त चमकीला दीखता है और एक अन्य स्थिति में अत्यन्त मन्द प्रकाश का। हम कल्पना कर सकते हैं कि सम्मिश्र प्रकाश, दो प्रकाश-कम्पनों से मिलकर बना है,

1. Polarised 2. Nicol

इनमें से एक का कम्पन किसी निश्चित दिशा i मे होता है तो दूसरे का दिशा j में कम्पन होता है जो दिशा i के समकोण पडती है। हमे i तथा j दिशाओं की प्रकाश तीव्रताओ के अनुपात का मान २१ : १ मिलता है, अर्थात् ध्रुवण की मात्रा बहुत हद तक पूर्ण है। गौण इन्द्रधनुष मे ध्रुवण इतना अधिक प्रबल नही होता यद्यपि इस दशा मे भी ध्रुवण सुस्पष्ट रहता है, अनुपात ८ : १ मिलती है। ये दोनो ही निष्कर्ष सैद्धान्तिक विवेचन के अनुरूप है।

१२६. इन्द्रधनुष पर तडित्[1] का प्रभाव

जे० डब्ल्यू० लेन ने एक चित्ताकर्षक प्रेक्षण प्राप्त किया था। बादल के गरजने पर हर बार उसने देखा कि इन्द्रधनुष मे रगों की सीमाएँ अभिलोपित हो जाती थी। यह परिवर्त्तन अतिरिक्त धनुषो मे विशेष रूप से स्पष्ट था—बैंगनी हाशिये और प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच का फासला पूर्णतया विलुप्त हो गया और पीले प्रकाश की दीप्ति बढ गयी। ऐसा प्रतीत होता था मानो समूचा इन्द्रधनुष स्पन्दन कर रहा हो। §१२३ मे दी गयी सारणी के अनुसार ये परिवर्त्तन इस बात का सकेत देते है कि बूंदो के आकार मे वृद्धि हुई होगी।

यह प्रकाशीय प्रभाव ठीक तडित् कौध के क्षण नही उत्पन्न हुआ, बल्कि कई सेकण्ड उपरान्त, गरज की आवाज के साथ उत्पन्न हुआ। हम कल्पना कर सकते है कि वायु के कम्पन के कारण बूंदे एक दूसरे मे मिल जाना चाहती है, किन्तु यह प्रवृत्ति इतनी नगण्य-सी होती है कि इस कारण उत्पन्न होनेवाले प्रभाव का दरअसल बोधगम्य हो सकना असम्भाव्य प्रतीत होता है। यह भी सम्भव है कि विद्युत् विसर्जन बूंदों के तलीय खिचाव मे ऐसी तब्दीली पैदा कर देता है कि वे एक दूसरे के साथ आसानी से मिल जाते है, किन्तु उस दशा मे यह एक सयोग मात्र होगा कि इस तब्दीली मे जितना समय लगता है वह तडित् कौध और गर्जन की ध्वनि के बीच के समय अन्तर के ही बराबर हो जाय।

१२७. लाल इन्द्रधनुष

सूर्यास्त के ठीक पहले के पाँच या दस मिनट के दौरान मे लाल के अतिरिक्त इन्द्रधनुष के अन्य सभी रग हलके पड़ जाते है और अन्त मे बस सम्पूर्ण लाल रग का धनुष रह जाता है। कभी-कभी तो यह आश्चर्यजनक रूप से चमकीला होता है और सूर्यास्त के बाद भी लगभग १० मिनटतक दिखाई देता रहता है; उस वक्त तक स्वभावत:

1. Lightning

इसका निचला भाग छिप जाता है, अतः ऐसा प्रतीत होता है कि क्षितिज से कुछ ऊँचाई पर इस इन्द्रधनुष का प्रारम्भ होता है। प्रकृति यहाँ हमे सूर्य के प्रकाश के स्पेक्ट्रम का दिग्दर्शन करा रही है और इस बात का प्रदर्शन कर रही है कि सूर्यास्त के दौरान इसकी सरचना मे किस प्रकार का परिवर्त्तन होता है। यह परिवर्त्तन लघु प्रकाश-तरगो के परिक्षेपण[1] के कारण उत्पन्न होता है (§१७१)।

१२८. कुहरा धनुष या श्वेत इन्द्रधनुष[2]

बूँदें जब अत्यन्त छोटी होती है तो इन्द्रधनुष का स्वरूप बिलकुल ही भिन्न होता है। इसका हम भलीभाँति अवलोकन कर सकते है यदि सूर्य की ओर पीठ करके हम पहाड़ी पर खड़े हो जबकि सामने और हमारे नीचे कुहरा छाया हो। तब धनुष का स्वरूप एक सफ़ेद पट्टी-जैसा होता है; इसकी चौड़ाई साधारण इन्द्रधनुष की चौड़ाई की दूनी होती है तथा इसके बाहरी हाशिये का रंग नारङ्गी और भीतरी का आसमानी सरीखा होता है। भीतर की ओर एक या कभी दो भी अतिरिक्त धनुष देखे जा सकते है जिनके बीच कुछ जगह छूटी रहती है—अद्भुत बात यह है कि उनके अन्दर रंगों का क्रम सामान्य प्रमुख इन्द्रधनुष के लिहाज से उलटा होता है (पहले हरा और तब लाल)।

ये विशिष्टताएँ आश्चर्यजनक रूप से ०.०२५ मिलीमीटर या उससे कम की त्रिज्या वाली बूँदो के लिए प्राप्त सैद्धान्तिक गणनाफलों के अनुरूप उतरती है (§ १२३)। अत्यन्त छोटे आकार की उन बूँदो के लिए अब इन्द्रधनुष की त्रिज्या ४२° नही रह पाती, बल्कि यह कम होने लगती है और चूँकि बूँद के आकार के छोटे होने का अभिप्राय यह है कि यह प्रकाश के तरंग-दैर्ध्य के मान के सन्निकट पहुँचती है, अतः यह प्रभाव नीली किरणों की अपेक्षा लाल किरणों के लिए अधिक सुस्पष्ट होता है। अतः अतिरिक्त धनुष मे लाल रग के लिए व्यास नीले की अपेक्षा अधिक छोटा होगा, इसलिए यह भीतर की ओर स्थित होगा।

जो लोग इतने भाग्यशाली हैं कि इस सुन्दर घटना के अवलोकन का उन्हें अवसर मिल सकता है, उन्हे धनुष के व्यास २θ (कोणीय माप अंशों मे) के मान प्राप्त करने के लिए कुछ मानक्रियाएँ करनी चाहिए (देखिए § २३५)। इनमे प्रमुख इन्द्रधनुष तथा प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच के मन्द प्रकाश वाले छल्ले की नाप सर्वाधिक शुद्धता के साथ प्राप्त की जा सकती है; इस प्रकार से प्राप्त किये गये

1. Scattering 2. Phil. Mag., **29**, 456, 1890

मान से बूंदों का व्यास (मिलीमीटरो में) निम्नलिखित सूत्र

$$a = \frac{0{\cdot}31}{(41^\circ 44' - \theta)^{\frac{3}{2}}}$$

की सहायता से प्राप्त किया जा सकता है—

(अथवा विकल्पतः हम प्रमुख इन्द्रधनुष के नीचे और नारङ्गी रंग के हाशिये के बीच का औसत मान ले सकते है, किन्तु तब उपर्युक्त सूत्र के अश के लिए 0·31 को बदलकर 0·18 लेना पड़ेगा।)

आश्चर्य्य की बात है कि कुहरा-धनुष ऐसे समय भी देखा गया है जब कि ताप बहुत ही कम था (0° फा०), जिससे सिद्ध होता है कि वायुमण्डल मे पानी की बूँद बहुत ही अधिक मात्रा मे अतिशीतलन प्राप्त कर सकती है।[1] कुहरा-धनुष ऐसे समय पर भी देखा जा सकता है जब कि कुहरा इतना हलका था कि धनुष देखने वाले प्रेक्षक ने यह बतलाया कि कुहरा था ही नहीं।

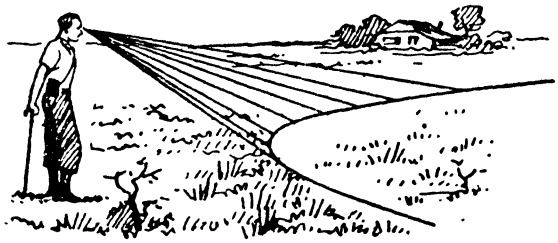
कुहरा-धनुष उस वक्त करीब-करीब सदैव ही प्रगट होता है जबकि हमारे पीछे से आने वाली सर्चलाइट का चकाचौध उत्पन्न करने वाला प्रकाश-पुञ्ज सामने के धुन्ध को भेदता है। सड़क के साधारण लैम्प भी अक्सर इस धनुष का निर्माण करते हैं, अवश्य ये धनुष हलकी दीप्ति के होते हैं और केवल अन्धेरी पृष्ठभूमि पर ही देखे जा सकते हैं। एक बार टिन्डल ने प्रकाशस्रोत के लिए मोमबत्ती का उपयोग करके इस तरह के धनुष का अवलोकन किया था। यदि धुन्ध के पीछे अँधेरी भूमि हो तो कुछ अवसरों पर कुहरा-धनुष सम्पूर्ण वृत्त के रूप मे देखा जा सकता है—स्पष्ट है कि हमारी आँख और पैरों के निकट की भूमि के दर्मियान की दो-चार गजो की दूरी इस घटना को उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त होती है।[2] कुछ अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर दुहरे कुहरा-धनुष भी देखे गये है।[3] § १६५ तथा § १२१ की भी तुलना कीजिए।

१२९. ओस-धनुष या क्षैतिज इन्द्रधनुष

शरद काल की सुबह को, हीदर झाड़ी पर लगे लाखों जालों पर, जो अन्यथा दिखाई नही पड़ते, ओस की नन्ही-नन्ही बूंदे बिखर जाती हैं तो सूर्य्य की किरणों से वे प्रकाशित हो उठते है। प्रकाश की इस लुका-छिपी मे हम अपने सामने एक इन्द्र-

1. Ch. F. Brooks, M. W. R. **53**, 49, 1925. G.C. Simpson (**38**, 291, 1912). mentions the appearance of a fog-bow at a temperature of —29°C. 2. Phil. Mag., **17**, 148, 1883. 3. Onweders, etc. **52**, 54, 1931

धनुष उभरा हुआ देख सकते है जो वृत्त की शक्ल का नहीं बल्कि एक खुले मुँह के अतिपरिवलय[1] की शक्ल का होता है (चित्र ११६)।



चित्र ११६—ओस-धनुष।

इसकी व्याख्या सरल ही है—सूर्य्य और आँख को मिलाने वाली अक्ष-रेखा के साथ ४२° का कोण बनाने वाली सभी दिशाओं से प्रकाश हमारी आँख में पहुँचता है। सूर्य्य जब तक नीचे रहता है, तब तक इस तरह बनने वाला शंकु भूमि की सतह को अतिपरिवलय के वक्र पर काटता है। दिन के चढ़ने पर यह वक्र दीर्घवृत्त बन जाता है, यद्यपि इस शक्ल का धनुष दुर्लभ अवसरों पर ही देखा जा सका है। आप प्रयोग में सहायता लेने के लिए किसी से कह सकते है कि वह वक्रमार्ग को भूमि पर चिह्नित करके उसकी माप करे, और तब सूर्य्य की ऊँचाई (प्रेक्षण के समय की मदद से मालूम करके) की सहायता से इस बात का सत्यापन कर ले कि यह वक्र वास्तव मे एक अतिपरिवलय है, जो ऐसे शकु से प्राप्त किया गया है जिसका शीर्षकोण ४२° है।[2] इस बात पर ध्यान दीजिए कि किस तरह आँख से दूरी बढ़ने पर रगीन पट्टी की चौड़ाई बढती जाती है। केवल एक ही ऐसे दृष्टान्त का पता है जब कि ओस मे कुहरा-धनुष के साथ अतिरिक्त धनुष भी देखे गये थे।[3]

ओस-धनुष निम्नलिखित परिस्थितियों मे भी देखा गया है—(क) तालाब पर जो कारण्ड घास[4] से ढका हो; घास के लॉन पर, (ख) ऐसे तालाब पर जिसकी सतह पर चिकनाई फैली हो ताकि उस पर ओस की बूँदे नीचे के पानी से मिले बिना पड़ी रह सके; मिसाल के लिए फैक्टरी के कोयले के जर्रों से भरे धुएँ के कारण सतह

1. Hyperbola 2. A. E. Heath, Nat. **97**, 6, 1916
3. W. J. Humphreys. Journ. Frankl. Inst, **20**, 661, 1929
4. Duck-weed

इस प्रकार की बन सकती है। एक दशा में बूंदों का आकार ०·१ मिलीमीटर से लेकर ०.५ मिलीमीटर तक था और प्रति वर्ग सेण्टीमीटर २० बूंदे मौजूद थीं जबकि एक सुस्पष्ट ओस धनुष देखा गया।[1] (ग) झील या समुद्र पर लड़के सुबह के वक्त जब कि वायु तो ठण्डी हो चुकी होती है, किन्तु पानी अब भी गर्म बना रहता है, अतः पानी की सतह के ऊपर हलका धुन्ध छाया रहता है। ऐसी दशा मे सम्पूर्ण धनुष सदैव ही दृष्टिगोचर नहीं होता, केवल इसके दोनो छोर दिखाई देते हैं। (घ) बर्फ जमी हुई सतह पर जो प्रकाश्यतः ओस की उपयुक्त आकार की बूंदों द्वारा ढकी जा सकती है। ऐसा कैसे सम्भव होता है?[2]

इस प्रेक्षण का एक महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक पहलू भी है। इन्द्रधनुष हमें वृत्ताकार और ओस-धनुष अतिपरिवलयाकार क्यों दीखते हैं जब कि दोनों ही दशाओं मे प्रकाश किरणें एक ही दिशा से हमारी आँख मे पहुँचती हैं? यह एक प्रश्न है प्रेक्षण और आकांक्षा के सम्मिश्रण का। जब हम ओस-धनुष देखते हैं तो हम इस विचार से प्रभावित होते हैं कि यह प्रकाशीय घटना क्षैतिज तल मे फैली हुई है, और अनजाने ही हम अपने से पूछ बैठते हैं कि घास पर पड़ने वाले प्रकाश के वक्र की शक्ल क्या होनी चाहिए ताकि घटना हमें इसी स्वरूप मे दिखाई दे? अवश्य ही उत्तर होगा एक दीर्घ वृत्त या अतिपरिवलय। किन्तु इसके प्रतिकूल यदि हम पूछे 'ओस-धनुष हम क्योंकर देख पाते हैं?' तब हमारा उत्तर प्रेक्षण और उसकी व्याख्या दोनों पर आश्रित होगा। यदि हम केवल इस प्रकाशीय घटना को ही देखते और इसकी उत्पत्ति के बारे मे हमें कुछ भी पता न होता तो हमे केवल एक वृत्ताकार शक्ल का ही भान होता' (स्टोक्स)। पिण्डदर्शन[3] के आधार पर पृथक् बूंदो तथा उनके समूह की दूरी का अनुमान लगाने से हमे निचश्य ही इस बात का पता लगाने मे सहायता मिलेगी कि ओस-धनुष क्षैतिज तल मे स्थित है (देखिए § १५२)।

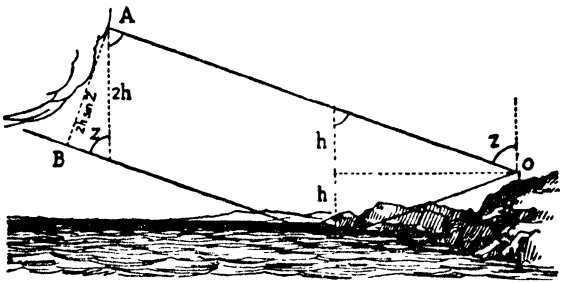
प्रतिबिम्बित ओस धनुष के लिए देखिए § १३१।

१३०. प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष

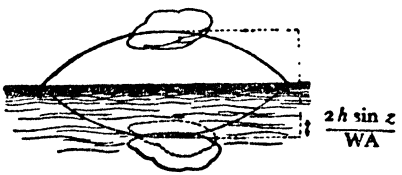
यदि हमें एक इन्द्रधनुष बादल मे विन्दु A की दिशा मे दिखाई दे रहा है, और तब हम शान्त, स्थिर पानी मे भू-दृश्य के प्रतिबिम्ब का अवलोकन करे तो हम इन्द्र-

1. Nat. **43**, 416, 1891. 2. Clerk Maxwell, Papers II. 160
3. Stereoscopic vision

धनुष को बिन्दु B की दिशा में देखेंगे; अतः प्रतिबिम्बित बादल पर, बनिस्बत उस दशा के जब कि बादल को हम सीधे ही देखते हैं, इन्द्रधनुष की स्थिति [illegible] है (देखिए चित्र ११७)।



चित्र ११७ क—**प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष।**



ख—

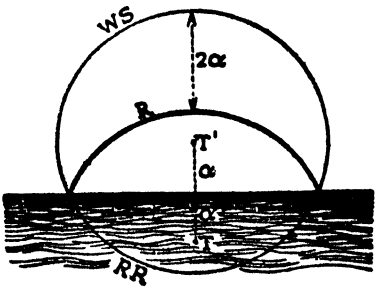
इसका कारण, जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, यह है कि इन्द्रधनुष का अस्तित्व बादल के धरातल मे किसी यथार्थ वस्तु की तरह नही है, बल्कि एक तरह से वह अनन्त दूरी पर स्थित है। अतः सच पूछा जाय तो स्थानान्तर बादल का होता है, जबकि इन्द्रधनुष का प्रतिबिम्बन क्षितिज के लिहाज़ से पूर्णतया सममित[1] है। बादल के स्थानान्तर का हम अधिक आसानी से अवलोकन कर सकते है यदि हम पानी से कुछ ऊँचाई h पर मौजद हों। इस दशा मे तब हम उसके स्थानान्तर का कोणीय मान मालूम करके उसकी दूरी OA के मान की भी गणना कर सकते है, क्योंकि—

$$\text{कोणीय स्थानान्तर} = \frac{2\ h \sin z}{OA}$$

फिर, एक नितान्त भिन्न प्रभाव उस वक्त उत्पन्न होता है जब सूर्य्य की किरणें इन्द्रधनुष का निर्माण करने के पहले ही परावर्त्तित हो लेती है। तब प्रति-सूर्य्य-बिन्दु

1. Symmetrical

T के प्रतिबिम्ब T′ केन्द्र के गिर्द स्थानान्तरित चाप WS प्रगट होगा (चित्र ११८)। यह चाप विस्तार में अर्द्ध वृत्त से अधिक होता है। दोनों चापों के सिरों के बीच की दूरी बिन्दु T और T′ के बीच की दूरी के बराबर होती है, अर्थात् क्षितिज के ऊपर सूर्य्य की कोणीय ऊँचाई ∝ की दो गुनी। अनेक दशाओं में स्थानान्तरित चाप का एक भाग ही दृष्टिगोचर होता है—उदाहरण के लिए, केवल उसका सिरा, या केवल उसके दोनों छोर। अतः जब आप कोई असाधारण इन्द्रधनुष देखें तो सबसे पहले आपको इस तरह के प्रतिबिम्बन की सम्भावना की बात सोचनी चाहिए। तदुपरान्त उन अवस्थाओं पर विचार कीजिए जब पास-पड़ोस में बड़े जलाशय मौजूद हों और तब चाप की अपूर्णता की व्याख्या इन जलाशयों की स्थिति के आधार पर कीजिए। प्रतिबिम्बन से उत्पन्न हुए दोनों धनुष एक दूसरे के पूरक होते हैं ताकि दोनों मिलकर सम्पूर्ण वृत्त बना सकें (चित्र ११८)।



चित्र ११८—R=**इन्द्रधनुष**। RR=**प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष**। WS=**सूर्य के प्रतिबिम्बन से बना हुआ इन्द्रधनुष**।

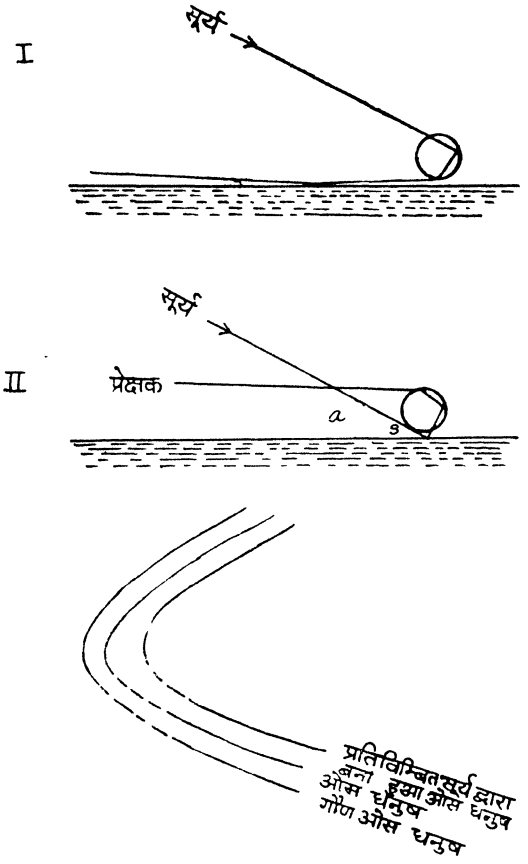
१३१. प्रतिबिम्बित ओस-धनुष[1]

ओस-धनुष भी पानी में प्रतिबिम्बित हो सकते हैं और तब सतह पर तैरती हुई नन्ही बूँदों द्वारा निर्मित मनोहर रंगों का अतिपरिवलय दुहरे रूप में दिखाई पड़ता है। इन दोनों धनुषों में कम प्रकाश का धनुष प्रतिबिम्बन द्वारा बनता है, यह बात अत्यन्त स्पष्ट हो जाती है यदि हम ओसधनुष का अवलोकन बर्फ जमी हुई सतह पर करें; तब द्वितीय धनुष विलुप्त हो जाता है।

इस दशा में भी दोनों धनुषों के बीच की कोणीय दूरी सूर्य की कोणीय ऊँचाई की दो गुनी होती है। किन्तु चूँकि इस बार बूँदें स्वयं पानी की सतह पर ही स्थित हैं, अतः सीधे ही यह ज्ञात करना सम्भव नहीं हो पाता है कि किरणों का परावर्त्तन उनके बूँदों में से गुजरने के बाद हुआ है कि पहले। दोनों ही दशाओं में हमें अतिपरिवलय

1. W. J. Humphreys. Journ. Frankl. Instit. 207, 661, 1929

मिलेंगे (देखिए चित्र ११९, दोनों ही चित्रों में परावर्त्तित किरण कोण ४२°–α पर ऊपर की ओर उठती है)।



चित्र ११९—**प्रतिबिम्बित ओस-धनुषों का निर्माण।**

I **ओस धनुष प्रतिबिम्बित होता है।**

II **प्रतिबिम्बित सूर्य ओस-धनुष का निर्माण करता है।**

तथापि सूर्य्य जब पर्याप्त ऊँचाई पर स्थित होता है (२१° से ४२° तक) तब विवेचन के लिए दो तत्त्व प्राप्त होते हैं—

(क) प्रतिबिम्बित धनुष का सिरे के निकट का भाग अनुपस्थित रहता है। कारण यह है कि किरणें जब मार्ग II का अनुसरण करती हैं, तो आपाती किरण पुंज का कुछ भाग परावर्त्तित होने के पहले ही स्वयं बूँदों के कारण छिप जाता है, तब इसके बाद किरण बूँद में प्रवेश करती है। यदि किरणपथ I के अनुसार हो तब यह लाक्षणिक विशिष्टता नहीं उत्पन्न हो पाती।

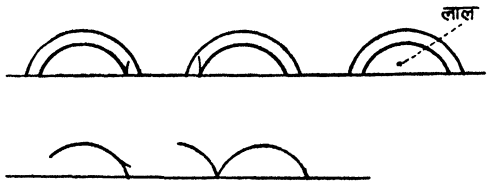
(ख) यदि दोनों धनुषों के दो निकटवर्त्ती बिन्दुओं का 'निकल' प्रिज्म द्वारा अवलोकन किया जाय तो यह पाया जाता है कि दोनों के प्रकाशकम्पन की दिशाओं में बहुत अधिक अन्तर होता है और आम तौर पर वे क्षैतिज नहीं होते हैं। यह प्रदर्शित कर सकते हैं कि ऐसा केवल तभी हो सकता है जब वर्त्तन के पूर्व ही परावर्त्तन हो जाय।

अब यह प्रश्न शेष रहता है—किरणों के लिए सामान्यतः पहले ही परावर्त्तित हो जाने की सम्भावना अधिक क्यों होती है? उत्तर केवल यह है कि किरणपथ I की दशा में बाहर निकलने वाली किरणें पानी की सतह पर अत्यन्त तिरछी दिशा में गिरती हैं और इस कारण निकटवर्त्ती बूँदों की आड़ में वे छिप जाती हैं।

आकाश में सूर्य्य जब नीचे होता है, तब प्रकाश की किरणें पहले बूँद में प्रवेश कर जाती हैं और तब वे परावर्त्तित होती हैं; इस बार भी धनुष का ऊपरी भाग छिप जाता है, किन्तु ध्रुवण की मात्रा भिन्न होती है। इस दशा का अभी तक सूक्ष्म अध्ययन नहीं किया गया है।

१३२. असामान्य इन्द्रधनुष की घटना[1]

यहाँ हम इन्द्रधनुष की विलक्षण शक्लों की कुछ आकृतियाँ दे रहे हैं जो अंशतः पानी पर होने वाले परावर्त्तन के कारण उत्पन्न होती हैं। किन्तु मेरे विचार से तो इनकी



चित्र १२०—असामान्य इन्द्र-धनुष की घटनाएँ

1. Onweders, etc. **21**, 54, 1900, **24**, 160, 1903, **29**, 110, 1908, Hemel en Dampkring. **27**, 359, 1929

कोई सन्तोषजनक व्याख्या अभी तक नहीं मिल सकी है। इस तरह की घटनाओं के लिए अपनी आँखे खुली रखने के लिए यह एक और कारण है ! असामान्य धनुषों के लिए लाल और बैंगनी हाशियों की पारस्परिक स्थितियों पर विशेष ध्यान दीजिए।

१३३. चन्द्र-इन्द्रधनुष

सूर्य्य की ही तरह चन्द्रमा द्वारा भी इन्द्रधनुष बनते हैं, यद्यपि जैसा कि स्वाभाविक है, चन्द्र-इन्द्रधनुष अत्यन्त क्षीण प्रकाश के होते हैं। यही कारण है कि वस्तुतः ये केवल पूर्ण चन्द्र के समय देखे जा सकते हैं और इनमे विरले ही रंगीन होते हैं—ठीक उसी प्रकार, जैसे क्षीण प्रकाश से आलोकित वस्तुएँ रात को आम तौर पर रंगहीन प्रतीत होती हैं (§ ७७)।

इस सम्बन्ध में प्रभामण्डल को देखकर भ्रम में मत पड़ जाइए कि यही चन्द्र-धनुष है। इन्द्रधनुष तो चन्द्रमा के सामने के रुख, आकाश मे केवल दूसरी ओर दिखलाई देता है। यदि निकट ही कोई चमकीला तारा स्थित हो, तो चन्द्र-इन्द्रधनुष की त्रिज्या का मान अत्यन्त यथार्थता के साथ नापा जा सकता है।

प्रभामण्डल[1]

१३४. प्रभामण्डल की घटना का सामान्य वर्णन[2]

वसन्त ऋतु के सुहावने खुले मौसम के चन्द दिनों के बाद बैरोमीटर का दाब कम हो जाता है और दक्षिण की वायु बहना आरम्भ करती है। पश्चिम की ओर से ऊँचाई पर पंख जैसे और मुलायम बादल प्रकट होते हैं, आकाश धीरे-धीरे दूधिया रग धारण कर लेता है जो अलका-स्तार[3] बादलों के झीने पर्दे के कारण पोलकी[4] रत्न की तरह चमकता है। सूरज, ऐसा प्रतीत होता है, मानों धुँधले काँच के पीछे से चमक रहा हो; इसकी सीमा-रेखाएँ स्पष्ट नजर नही आतीं, बल्कि अपने परिपार्श्व मे मिल-सी जाती हैं। कुछ अजीब-सी अनिश्चित रोशनी भू-दृश्य पर पड़ती है—और मै 'महसूस' करता हूँ कि अवश्य सूर्य्य के गिर्द कोई प्रभामण्डल मौजूद है।

और आम तौर पर मेरा यह ख्याल सही उतरता है।

सूर्य्य को चारों ओर से घेरे हुए एक चमकीला छल्ला देखा जा सकता है जिसकी त्रिज्या २२° से कुछ अधिक ही होती है; इसे देखने का सबसे बढ़िया तरीका है कि मकान

1. Haloes 2. Die Haloerscheinungen (Hamburg. 1929)
3. Cirro-stratus 4. Opalescent

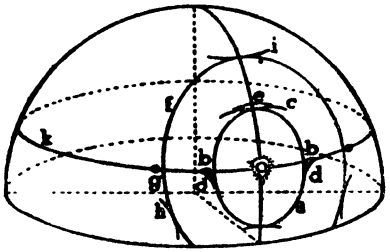
की छाया मे खड़े हो जायँ, या धूप मे चकाचौंध से बचने के लिए सूर्य्य को हाथ की ओट मे ले ले (§ १६०) । यह एक अनुपम दृश्य होता है ! पहले-पहल देखने वाले को छल्ला बहुत ही बड़ा प्रतीत होता है—यद्यपि यह 'लघु प्रभामण्डल' है; प्रभामण्डल सम्बन्धी अन्य घटनाएँ तो और भी बड़े पैमाने पर घटती हैं । अपनी भुजा को सूर्य्य की सीध मे तान कर हाथ की उँगलियों को एक दूसरे से अलग फैलाइए; आप देखेंगे कि अँगूठे और कनिष्ठ उँगली के सिरों के बीच की दूरी सूर्य्य के गिर्द मौजूद प्रभामण्डल की त्रिज्या के लगभग बराबर है (देखिए § २३५) ।

चन्द्रमा के गिर्द भी आप इसी तरह का छल्ला देख सकते हैं । मेरा तात्पर्य कोरोना से नहीं है जिसका व्यास दो-चार डिग्री ही होता है और जो भीतर की ओर लाल और बाहरी हाशिये पर नीले रग का होता है; बल्कि उसी प्रकार के बड़े छल्ले से है जैसा कि सूर्य्य के प्रभामण्डल के लिए अभी बतलाया जा चुका है । केवल एक बार एक प्रेक्षक को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था कि डूबते हुए सूर्य्य के गिर्द एक छल्ला, और उगते हुए पूर्णचन्द्र के गिर्द भी एक छल्ला एक ही साथ वह देख सका था ।

आम तौर पर जैसी उम्मीद की जाती है उसकी अपेक्षा कही अधिक बार ये छल्ले देखे जा सकते हैं । निश्चित तौर पर एक अभ्यस्त प्रेक्षक, यदि सारे दिन प्रेक्षण करता रहे तो दुनिया के इस भाग मे औसत रूप से हर चार दिन मे एक बार प्रभामण्डल देखने मे समर्थ होगा और अप्रैल तथा मई के महीने मे तो हर दो दिन मे वह इसे एक बार देख सकता है; सर्वाधिक सतर्क प्रेक्षक तो वर्ष भर मे २०० दिन प्रभामण्डल देख सकते हैं ! अतः क्या यह अविश्वसनीय नही जान पड़ता कि अब भी कितने लोग ऐसे मिलते है जिन्होंने सूर्य्य के गिर्द प्रभामण्डल पर कभी गौर ही नहीं किया है ?

लघु आकार के प्रभामण्डल के अतिरिक्त और दूसरे भी प्रकाश-धनुष तथा धब्बों के रूप मे केन्द्रित प्रकाश मिलते हैं जिनमे से प्रत्येक को अलग-अलग नाम दिये गये हैं—इन सबको मिलाकर 'प्रभामण्डल की घटना' के नाम से पुकारा जाता है । इनमे से जो सर्वाधिक प्रमुख हैं वे चित्र १२१ मे दिखलाये गये हैं, मानो ये एक काल्पनिक आकाशीय ग्लोब पर अकित किये गये हों । अब हम बारी बारी से इन पर विचार करेंगे । किन्तु इस बात को ध्यान मे रखना होगा कि इनमे से केवल कुछ थोड़े ही एक साथ देखे जा सकते हैं । इनमे अनेक जिनका प्रेक्षण किया गया है, सूर्य्य के कारण बने थे; चन्द्रमा से सम्बन्ध रखने वाले प्रभामण्डल क्षीण प्रकाश के होते हैं, और इनके रंग तो एक तरह से अगोचर ही रहते हैं (देखिए §§ ७७, १३३) ।

सामान्यतः इनका निर्माण या अलका मेघ के झीने आवरण में होता है और बिरले ही दशाओं मे अलका-पुञ्ज या उच्च-पुञ्ज मेघ मे; ये तड़ित-अलका बादलों में देखे जा सकते हैं किन्तु अधिक मौकों पर नहीं। प्रभामण्डल उत्पन्न करने वाले सभी वादल बर्फ के नन्हे क्रिस्टलों से बने होते हैं और इन क्रिस्टलों के आकार की नियमितता ही इस प्रकाशीय घटना की सुन्दर सममिति के लिए उत्तरदायी है। बर्फ वाले अनेक और बहुत से बादलों मे प्रभामण्डल की घटना बिलकुल ही नही प्रदर्शित होती, इसका कारण यह है कि नन्हें तुषार कण, तथा बर्फ के क्रिस्टलो के गोलाकार समूह के आकार उस शक्ल से भिन्न होते हैं जो प्रिज्म की भाँति प्रकाश का वर्त्तन करने के लिए आवश्यक है, और फिर यह भी कि अत्यन्त छोटे आकार के क्रिस्टल की दशा में विवर्तन के कारण आभा-मण्डल की घटना का अभिलोप हो जाता है।



चित्र १२१—**प्रभामण्डल की कतिपय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाओं का रेखाचित्र।**

प्रभामण्डल ही फोटोग्राफी वैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है; कोणों की सूक्ष्म नाप के लिए तथा प्रकाशदीप्ति ज्ञात करने के लिए भी इसका उपयोग होता है। किन्तु इन कामों के लिए फोटोग्राफी की प्लेट को केमरे के अक्ष के समकोण रखना चाहिए तथा प्लेट और अभिदृश्य लेन्स के बीच की दूरी सही-सही मालूम रहनी चाहिए तथा चौड़े मुह वाले अभिदृश्य लेन्स को काम मे लाना होगा,साथ में नारङ्गी वर्ण का फिल्टर तथा पैन्क्रोमैटिक फिल्म का उपयोग करना होगा। सूर्य्य के लिए प्रकाशदर्शन का समय, १२ लेन्स के लिए, .०१ सेकण्ड होगा। चन्द्रमा के लिए ६ लेन्स को काम में लाइए और प्रकाशदर्शन का समय १० सेकण्ड रखिए। क्षितिज के कुछ भाग को, या कम से कम किसी एक वृक्ष को अपने फोटो के अन्दर अवश्य सम्मिलित कीजिए।

१३५. २२° वाले प्रभामण्डल का लघु छल्ला

(चित्र १२१ a; प्लेट IX b)

प्रभामण्डल की समस्त घटनाओं में इसी की बहुलता सबसे अधिक होती है; छल्ला, पूर्ण वृत्त की शक्ल का होता है केवल उस दशा को छोड़ कर, जबकि अलका-

स्तार मेघ आकाश में असमान रूप से बिखरे रहते हैं; सामान्यतः सबसे अधिक चमक इसके सिरे या पेंदे पर रहती है या दाहिनी या बायी ओर; बीच के भागों की चमक अपेक्षाकृत कम ही होती है। भीतरी किनारा सुस्पष्ट होता है और लाल रग का; फिर आता है पीला रंग, हरा और श्वेत जो नीले रग पर समाप्त होता है। §२३५ में बतलायी गयी किसी एक विधि से लघु छल्ले की त्रिज्या नापी जा सकती है, (अधिक वाञ्छनीय होगा कि त्रिज्या की नाप, सूर्य से लेकर छल्ले के भीतरी, लाल रग के, हाशिये तक की जाय)। श्रेष्ठतम नाप से त्रिज्या का मान २१° ५०′ प्राप्त होता है।

कुछ रातों को चन्द्रमा के गिर्द के प्रभामण्डल की त्रिज्या की नाप अत्यन्त यथार्थता के साथ की जा सकती है बशर्ते प्रेक्षक किसी निश्चित तारे को ऐसी स्थिति मे देख सके कि वह प्रभामण्डल के भीतरी हाशिये पर प्रभामण्डल के सबसे अधिक चमकीले स्थल पर पड़े। उस दशा मे प्रेक्षक को उस तारे का नाम भर ज्ञात कर लेना होगा (आवश्यकता पड़ने पर नक्षत्र-मानचित्र की सहायता से इसे पहचाना जा सकता है;) और प्रेक्षण का समय अङ्कित कर लेना होगा। इसके उपरान्त कोई भी खगोलशास्त्री गणना करके मालूम कर सकता है कि इस क्षण दोनों आकाशीय पिण्ड एक दूसरे से कितनी दूरी पर थे (देखिए चित्र १२५)।

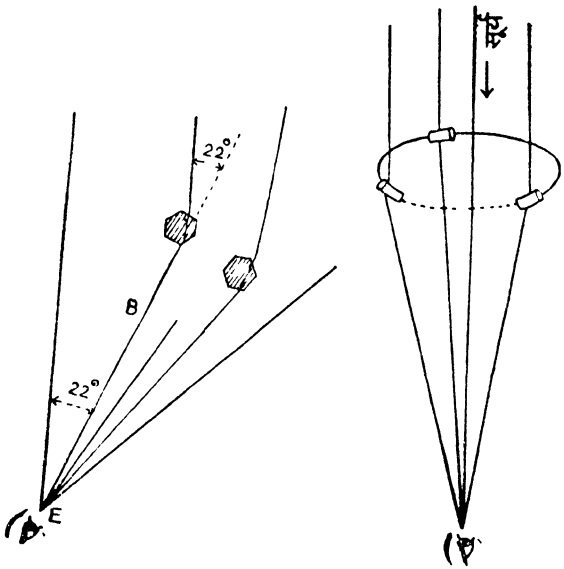
इस बात पर गौर कीजिए कि प्रभामण्डल के भीतर का आकाश बाहर के आकाश की तुलना मे मन्द प्रकाश का दीखता है; यदि ऐसा नही है तो उसका कारण यह होता है कि प्रभामण्डल एक ऐसे विसृत प्रकाश के ऊपर आरोपित रहता है जिसकी प्रदीप्ति सूर्य से बाहर की ओर क्रमशः घटती जाती है। यह घटना हमें बहुत कुछ अंशों में इन्द्रधनुष के सम्बन्ध में प्रेक्षित की जानेवाली घटना का (जहाँ कि दोनों धनुषों के दर्मियान का आकाश मन्दप्रकाश का होता है) स्मरण दिलाती है और यह भी वैसे ही कारणों से उत्पन्न होती है।

लघु प्रभामण्डल बर्फ के नन्हे क्रिस्टलों युक्त बादल द्वारा सूर्यप्रकाश के वर्त्तित होने से बनता है—हम जानते हैं कि इन क्रिस्टलो की शक्ल प्रायः षटपहल प्रिज्म की होती है। प्रत्येक दिशा मे जिधर हम देखते हैं, इस शक्ल के असख्य प्रिज्म हर सम्भव दिशा मे अनुस्थापित होकर उतराते रहते हैं (चित्र १२२)। इस किस्म का षटपहल प्रिज्म प्रकाश को इस तरह वर्त्तित करता है मानो इसका वर्त्तन कोर ६०° कोण का हो; आपाती किरणों के लिहाज़ से अपनी स्थिति के अनुसार यह उन्हें कम या अधिक मात्रा मे विचलित करेगा, किन्तु क्रिस्टल के अन्दर यदि किरणपथ सममित है तब

विचलन का मान अल्पतम D होगा जो इस सुविख्यात सूर्य से प्राप्त होता है[1] —

$$n=\frac{\sin\frac{1}{2}(A+D)}{\sin\frac{1}{2}A}$$

यहाँ n प्रिज्म के पदार्थ का वर्त्तनाङ्क है तथा A इसके वर्त्तनकोर का कोण है।



चित्र १२२—**किस प्रकार लघु या २२° के प्रभामण्डल की उत्पत्ति होती है।**

कोण A के मान ६०° तथा वर्त्तनाङ्क के मान १.३१ (पानी का वर्त्तनाङ्क) से हमें D=22° प्राप्त होता है, जो ठीक लघु प्रभामण्डल की त्रिज्या के मान के बराबर है।

वास्तव मे यह सहज ही देखा जा सकता है (जैसा कि इन्द्रधनुष के लिए) कि किरणें OB जो अल्पतम विचलन प्राप्त करती है, प्रभामण्डल को सबसे अधिक प्रकाश प्रदान करेगी, क्योंकि इस स्थिति मे प्रिज्म के घुमाने पर वर्त्तित किरणों की दिशा मे केवल बहुत ही थोड़ा अन्तर पड़ता है। अतः ऐसे क्रिस्टलों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत अधिक होगी जो आँखों मे बनिस्बत अन्य दिशाओं के इस खास

१. यह सूत्र भौतिक विज्ञान की किसी भी पाठ्य पुस्तक में प्रिज्म के अल्पतम वियलन के प्रकरण में मिल सकता है।

दिशा के निकट ही दिशाओं में प्रकाश भेज रहे हैं। हमारी गणना पीली किरणों के लिए की गयी थी; लाल किरणों के लिए अल्पतम विचलन का कोण कुछ कम ही होता है, नीली किरणों के लिए अल्पतम विचलन का कोण कुछ अधिक होता है। इस कारण से ही प्रभामण्डल का भीतरी हाशिया लाल रंग का और बाहरी नीले रंग का होता है। किन्तु चूँकि किरणें EC भी जिनका विचलन अल्पतम विचलन से थोड़ा अधिक होता है, कुछ प्रकाश प्रभामण्डल मे पहुँचाती हैं अतः हरे और नीले प्रकाश की अल्पतम विचलनवाली किरणों के साथ कुछ हदतक पीला और लाल प्रकाश भी मिला रहता है, अतः ये पीतवर्ण का प्रदर्शन करती हैं। थोड़ा प्रकाश अब भी प्रभामण्डल के बाहर हर तरफ़ दिखलाई देगा किन्तु अन्दर नहीं—जैसा कि अभी बतलाया जा चुका है; अतः अन्दर के सुस्पष्ट हाशिये और साथ-साथ बाहर के धुधले अस्पष्ट हाशिये, दोनों का समाधान हो जाता है। किन्तु जब कभी क्रिस्टल बिना तरतीब, हर किसी सम्भव दिशा में वितरित नहीं हुए रहते हैं, बल्कि कुछ **विशेष वरीयता की स्थितियाँ** अख्तियार करते हैं तब लघु प्रभामण्डल के बाहर की उद्दीप्ति मे कुछ भिन्नता आ जाती है और प्रकाश के कतिपय धब्बे तथा वृत्तचाप प्रकट होते हैं जिनकी अब हम व्याख्या करने जा रहे हैं।

तो आइए, पहले कम से कम इसी प्रश्न पर विचार करें कि क्या यहाँ भी **विवर्त्तन का सिद्धान्त** कार्य करता है जिस तरह वह इन्द्रधनुष के निर्माण में भाग लेता है।[1] सिद्धान्ततः उसे भाग लेना चाहिए; बर्फ के क्रिस्टल मे से प्रकाश की एक पतली शलाका गुजरती है जिसकी चौड़ाई h है (चित्र १२२), अतः यह क्रिस्टल प्रकाश का विवर्त्तन उसी भाँति करता है जिस भाँति एक झिरी जिसकी चौड़ाई h हो। अत्यन्त छोटे आकार के क्रिस्टल एक श्वेत प्रभामण्डल उत्पन्न करेंगे जिसका हाशिया लाल रग का होगा, ठीक उसी प्रकार जैसे पानी की नन्ही बूँदें कुहरा-धनुष का निर्माण करती हैं (§१२८)। फिर, इसकी आशा की जा सकती है कि लघु छल्ले के बगल में अतिरिक्त छल्ले भी प्रकट होंगे (§१२३), और वास्तव में कतिपय अवसरों पर इन्हें देखा भी जा चुका है; किन्तु गणना से पता चलता है कि इन्द्रधनुष वाले अतिरिक्त छल्लों की तुलना में इन्हें अधिक मन्द प्रकाश का होना चाहिए तथा ये मुख्य छल्ले के बाहर तथा भीतर दोनों ओर स्थित होंगे। भीतर वाले अतिरिक्त छल्ले अधिक

1. Visser, Proc. Acad, Amsterdam, Summary in Hemel en Dampkring, 15,17 1917 and 16, 35, 1918

आसानी से देखे जा सकते हैं क्योंकि ये मन्द प्रकाश की पृष्ठभूमि पर प्रकट होते है। अब तक के प्राप्त प्रेक्षणों से इस बात का आभास मिलता है कि लघु प्रभामण्डल की चौड़ाई और रग मे अन्तर हो सकता है, किन्तु इस सिलसिले मे आवश्यक है कि और अधिक प्रेक्षण प्राप्त किये जायँ। रगो की जाँच करने का प्रायः सबसे बढ़िया तरीका यह है कि कालिख लगे काँच मे से देखे और इस प्रकार प्रत्येक रग की पट्टी की अलग-अलग चौड़ाई का अन्दाज़ लगाये और फिर सबकी मिली हुई चौड़ाई का। इन्हे आप अपनी स्वतत्र राय के अनुसार नाम दे सकते है! क्या कोई भी दो प्रेक्षक एक ही प्रभामण्डल के रगों को सदैव एक-सा नाम दे सकते है? लाल और नारङ्गी रंग की पहचान मे अक्सर लोग भ्रम मे पड़ जाते है, इसी प्रकार नीले और बैंगनी रगों के दर्मियान भी लोग धोखा खा जाते है; ध्यान दीजिए कि प्रभामण्डल की घटना मे पीला रग कितने दुर्लभ अवसरो पर प्राप्त होता है!

वर्त्तन के सरल सिद्धान्त के अनुसार लघु छल्ले मे मोटे तौर पर नीला रंग नहीं होना चाहिए और बैंगनी रंग तो कत्तई नही मिलना चाहिए और यही बात ऊपर वाले स्पर्शकीय चाप तथा कृत्रिम सूर्यों के बारे मे भी लागू होनी चाहिए (§१३६)। किन्तु निरीक्षण से पता चलता है कि कभी-कभी इनमे नीला विशेष रूप से प्रबल होता है, विशेषतया ऊपर के स्पर्शकीय चाप तथा कृत्रिम सूर्यों में, और इनका वर्ण सदैव ही चटकीला होता है। विवर्त्तन का सिद्धान्त बतलाता है कि नीले और बैंगनी रंग कैसे प्रकट होते है, बशर्ते क्रिस्टल सही आकार के मौजूद हों; और यह सिद्धान्त इसका भी समाधान करता है कि क्यों स्पर्शकीय चाप और कृत्रिम सूर्य, लघु छल्ले की अपेक्षा अधिक चटकीले रंग प्रदर्शित करते है। अन्त मे विवर्त्तन का सिद्धान्त इस बात का भी स्पष्टीकरण करता है कि क्यों कभी तो रंग लघु छल्ले में खूब चटकीले उभरते है और अन्य अवसरों पर बृहत् छल्ले मे; लघु छल्लोंके रग अधिक चटकीले उस वक्त होते है, जब कि प्रिज्म के वर्त्तन करनेवाले फलक चौड़े होते है जैसा कि **प्लेट की शक्ल** वाले क्रिस्टल मे होता है; किन्तु यदि ये फलक सँकरे होते है, जैसे **स्तम्भ की शक्ल वाले** क्रिस्टल मे होता है, तब लघु **छल्ला** पीलापन लिये हुए होता है और बृहत् छल्ला चटकीले रग प्रदर्शित करता है।

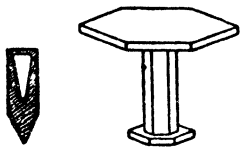
लघु छल्ले का प्रकाश ध्रुवित होता है। इन्द्रधनुष के प्रतिकूल, इस दशा में, प्रकाश के कम्पन छल्ले की समानान्तर दिशा की अपेक्षा, उसकी समकोण दिशा में, अधिक प्रबल होते है। यह बात ठीक समझ में भी आ जाती है, क्योंकि यहाँ परावर्त्तन तो कत्तई नहीं होता, केवल दो बार वर्त्तन होता है। फिर भी यह प्रभाव उतना स्पष्ट

नहीं होता जितना इन्द्रधनुष में। प्रचलित जनश्रुति के अनुसार लघु छल्ला वर्षा की पूर्व सूचना का द्योतक है, और जब वे कहते हैं कि 'प्रभामण्डल जितना ही अधिक बड़ा होगा उतनी ही जल्दी वर्षा होगी' तो उनका तात्पर्य होता है कि **लघु छल्ला न कि कोरोना,** वर्षा की पूर्व सूचना देता है। और वास्तविकता यह है कि अलका-स्तार मेघ प्रायः अल्प दाववाले प्रदेश के अग्रगामी होते हैं।

१३६. उप-सूर्य[1] या लघु प्रभामण्डल के कृत्रिम सूर्य (चित्र १२१, ख)

ये कृत्रिम सूर्य लघु छल्ले पर मौजूद सकेन्द्रित प्रकाश के दो धब्बे होते हैं जो सूर्य की ही ऊँचाई पर स्थित होते हैं। प्रायः ऐसा होता है कि इन दोनों में से केवल एक ही ठीक तौर पर देखा जा सकता है, और कभी-कभी लघु छल्ला तो अदृश्य रहता है जबकि दोनों कृत्रिम सूर्य स्पष्ट दिखलाई देते हैं। आम तौर पर कृत्रिम सूर्यों की चमक अत्यधिक होती है, ये भीतर की ओर स्पष्ट रूप से ललछवें रंग के होते हैं, फिर पीला रंग आता है जो आगे क्रमशः नीलामिश्रित श्वेत रंग मे परिणत हो जाता है।

सूक्ष्म निरीक्षण करने पर पता चलता है कि दरअसल ये कृत्रिम सूर्य लघु छल्ले के बाहर कुछ फासले पर स्थित होते हैं और सूर्य की ऊँचाई के अधिक होने पर यह दूरी और भी अधिक हो जाती है; और सूर्य जब बहुत ऊँचा होता है तो यह अन्तर कई अंशों का हो सकता है।



चित्र १२३—**बर्फ के क्रिस्टल जो कृत्रिम सूर्य्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं।**

कृत्रिम सूर्य उस वक्त दीखते हैं जब बर्फ के षटपहल प्रिज्मों की एक बड़ी सख्या ऊर्ध्व दिशा की खड़ी स्थिति मे होती है। यह शर्त नन्हे बर्फ-स्तम्भों के लिए सही उतरती है जो एक सिरे पर खोखले होते हैं, या 'छतरी की शक्ल' वाले धीरे-धीरे नीचे गिरते हुए क्रिस्टलों के लिए भी (चित्र १२३)[2]। इन प्रिज्मो मे से होकर गुजरने पर किरणे अब अल्पतम विचलन के मार्ग पर नही चलती, क्योकि वे अक्ष के समकोण

1 Parhelia

2 इस अन्तिम दृष्टांत के विरोध में कहा गया है कि ये छतरियाँ उलट जायँगी क्योकि षटपहल सिरा भारी होता है, किन्तु डान्जोन (Danjon) ने वस्तुतः उन्हें सीधी स्थिति में नीचे उतराते हुए देखा है (L' Astronomie 68, 420, 1954)। विसेर (Visser) ने उपसूर्य के लिए एक अन्य व्याख्या दी है।

धरातल मे नही स्थित होती। सूर्य की ऊँचाई h हो तो इस दशा मे 'आपेक्षिक अल्पतम विचलन' इस शर्त्त द्वारा निर्धारित होता है—

$$\frac{\sin \frac{1}{2}(A+D')}{\sin \frac{1}{2}A} = \sqrt{\frac{n^2-\sin^2 h}{1-\sin^2 h}}$$

अत: प्रकाश का आचरण इस प्रकार होता है मानो तिर्यक् किरणों के लिए वर्तनाङ्क के मान मे वृद्धि हो गयी हो (देखिए §१३५)। इस समीकरण से हम निम्न-लिखित सारणी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं—

सूर्य की ऊँचाई	कृत्रिम सूर्य से लघु छल्ले की दूरी
०°	०°
१०°	०° २०′
२०°	१° १४′
३०°	२° ५९′
४०°	५° ४८′
५०°	१०° ३६′

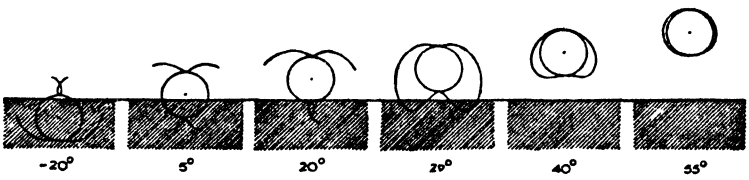
प्रेक्षण-फल के साथ ये मान बहुत अच्छी तरह मेल खाते हैं। सूर्य की ४०° से अधिक ऊँचाई के लिए दुर्भाग्यवश मुश्किल से ही कोई माप लभ्य है क्योंकि इस दशा मे यह घटना बहुत कुछ अस्पष्ट हो जाती है; इस कमी को दूर करने का प्रयत्न कीजिए।

१३७: लघु प्रभामण्डल के स्पर्शकीय क्षैतिज चाप (चित्र १२१, c)

ये चाप, जो लघु प्रभामण्डल के सिरे और पेदे पर चमक की वृद्धि के रूप मे प्रकट होते हैं, अनुकूल परिस्थितियों मे अपेक्षाकृत प्रकाश के बहुत बड़े वक्र—'परिवृत्त प्रभा-मण्डल'—के भाग के रूप मे देखे जा सकते हैं। प्रभामण्डल ही यह अति विचित्र घटना उस वक्त उत्पन्न होती है जब षटपहल प्रिज्मों के अक्ष क्षैतिज तल मे होते हैं और ये प्रिज्म अपनी स्थिति के गिर्द हलका दोलन करते हैं—ऐसी परिस्थितियाँ तब उत्पन्न होती हैं जब क्रिस्टल प्लेट की शक्ल के बजाय स्तम्भ की शक्ल के होते हैं।

परिवृत प्रभामण्डल की आकृति बहुत कुछ सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करती है (चित्र १२४)। जब सूर्य अधिक ऊँचाई पर नही होता तब हम केवल इतना देख

पाते हैं कि ऊपर का स्पर्शकीय धनुष दोनों छोर पर नीचे की ओर झुका हुआ होता है, और अधिक ऊँचाई के लिए यह करीब-करीब दीर्घवृत्त की शक्ल का दीखता है। क्षितिज के नीचे पड़नेवाले वक्र की शक्ल गणना द्वारा प्राप्त की गयी है और कभी-कभी ये पहाड़ पर से देखे भी जा सके हैं, जबकि हम दृष्टि नीचे की ओर डाल सकते



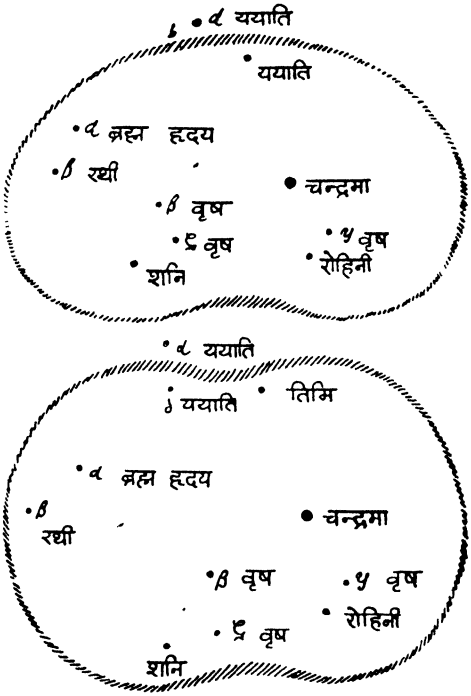
चित्र १२४—**सूर्य्य की बढ़ती हुई विभिन्न ऊँचाइयों के लिए परिवृत्त प्रभामण्डल के विभिन्न स्वरूप।**

हैं। (अनुमान किया जाता है कि इन्हें देख सकने की उतनी ही सम्भावना ऊँची मीनार या वायुयान से भी हो सकती है।)

१३८. लघु प्रभामण्डल के तिरछे स्पर्शकीय चाप या 'लाउट्ज के तिरछे चाप' (चित्र १२१, d)[1]

छोटे आकार के ये चाप अद्भुत होते हैं जो कृत्रिम सूर्य से नीचे की ओर झुके होते हैं और लघु प्रभामण्डल को स्पर्श करते हैं—यह एक अत्यन्त दुष्प्राप्य घटना है। इन्हे देख सकना केवल तभी सम्भव है जब सूर्य ऊँचाई पर स्थित हो, अतः तब कृत्रिम सूर्य लघु प्रभामण्डल से कुछ दूरी पर होते हैं। ये नन्हें चाप उस वक्त उत्पन्न होते हैं जब बर्फ के नन्हे ऊर्ध्व प्रिज्म जिनसे कृत्रिम सूर्य उत्पन्न होते हैं, ऊर्ध्व अक्ष के गिर्द हलका दोलन करते हैं। प्रायः तो केवल इतना भर दीखता है कि कृत्रिम सूर्य १° या २° तक खिच उठा हो; लघुचाप क्षैतिज तल के साथ करीब ६०° के कोण पर झुका होता है। केवल एक बार चाप पर्य्याप्त रूप से स्पष्ट तथा लम्बा दीखा था। अतः इस घटना की सम्भावित झलक पाने के लिए सदैव ही यह आवश्यक होता है कि कृत्रिम सूर्य का सावधानी के साथ प्रेक्षण किया जाय।

1. Visser, Diss. Utrecht, 1936



चित्र १२५—**चन्द्रमा के निकट तारे की स्थिति के लिहाज से परिवृत्त प्रभामण्डल।** (After Veenhuizen, Onweders ect. 35, 119, 1914. By kind permission of the Royal Dutch Meteorological Institute,)

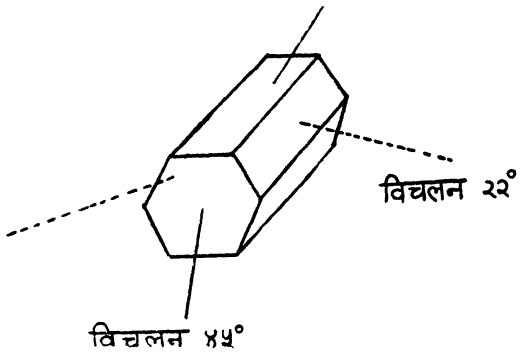
१३९. पैरी का चाप (चित्र १२१, e)

अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर ही यह दिखलाई देता है! थोड़ा ही झुका हुआ छोटा-सा यह चाप, ठीक लघु प्रभामण्डल के ऊपर स्थित होता है। इसकी उत्पत्ति उस दशा मे होती है जब षटपहल प्रिज्मों की प्रवृत्ति न केवल अपने अक्ष को क्षैतिज तल में रख कर उतराने की होती है बल्कि उनके एक फलक की सतह भी क्षैतिज तल में रहती है।

१४०. बृहत् छल्ला या ४६° कोण का प्रभामण्डल (चित्र १२१, f)

सूर्य से यह, लघु प्रभामण्डल की अपेक्षा, पूरे दो गुने फासले पर स्थित होता है और उसी प्रकार के रंग इसमें भी होते हैं, किन्तु इसकी चमक कम होती है तथा यह और

भी कम अवसरों पर दृष्टिगोचर होता है। भीतरी हाशिये की त्रिज्या मालूम करने के लिए सही माप की आवश्यकता होती है। इस प्रभामण्डल की उत्पत्ति भी उसी प्रकार होती है जिस प्रकार २२° कोण वाले प्रभामण्डल (लघु छल्ले) की; केवल इस बार वर्त्तन करनेवाले प्रिज्म के कोर ९०° वाले होते हैं जो हर सम्भव तरीके से अनु-



चित्र १२६—**बर्फ के षटपहल प्रिज्म म प्रकाश-किरण का अल्पतम विचलन २२° तथा ४६° का हो सकता है।**

स्थापित रहते हैं। जैसा चित्र १२६ से प्रकट है, बर्फ के एक ही किस्म के क्रिस्टल लघु तथा वृहत् दोनों प्रकार के प्रभामण्डल का निर्माण कर सकते हैं।

१४१. बृहत् प्रभामण्डल के कृत्रिम सूर्य (चित्र १२१, g)

ये बहुत ही कम अवसरों पर देखे जा सके है—और यह आश्चर्य की भी बात नही, क्योंकि इनके निर्माण के लिए प्रिज्मों की एक बड़ी संख्या के ९०° वाले वर्त्तन कोर को ऊर्ध्व स्थिति मे होना पड़ेगा। बर्फ के क्रिस्टलों की आम शक्ल को ध्यान मे रखते हुए यह बात कल्पनातीत प्रतीत होती है कि प्रिज्म ऐसी स्थिति कभी धारण भी कर सकते हैं।

१४२. बृहत् प्रभामण्डल के निचले स्पर्शकीय चाप (चित्र १२१, h)

ये भी दुर्लभ ही है! ये बर्फ के क्रिस्टलों के एक विशेष प्रकार के अनुस्थापन के कारण उत्पन्न होते है—इस स्थिति मे क्रिस्टल का अक्ष तथा एक पार्श्वफलक, दोनों ही क्षैतिज होते है तथा प्रकाश का वर्त्तन उन दो फलकों द्वारा होता है जो एक-दूसरे के

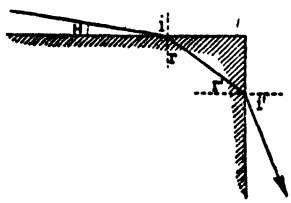
समकोण होते हैं। सूर्य जब बहुत ही अधिक ऊँचाई पर होता है तो चाप सीधे हो गये दीखते हैं, जहाँ तक कि अन्त मे वे सूर्य की ओर अवतल भी हो जाते हैं।

१४३. बृहत् प्रभामण्डल का ऊपरी स्पर्शकीय चाप (चित्र १२१, i)

यह चाप केवल तभी उत्पन्न होता है जब ९०° वाले प्रिज्म अपने वर्त्तनकोर क्षैतिज तल में रखे हुए उतराते हैं तथा अपनी स्थिति के गिर्द घूमते हैं, या कम्पन करते हैं। अब इनमे से वे प्रिज्म जो अल्पतम विचलन करने के लिए अनुकूल स्थितियों में होते हैं, विचाराधीन स्पर्शकीय चाप उत्पन्न करते हैं। प्रायः एक ऐसा चाप दिखलाई देता है जो बहुत अधिक इस चाप के सदृश होता है, किन्तु वास्तव मे इसकी उत्पत्ति का कारण और ही है—यह ऊपर वाला यथार्थ स्पर्शकीय चाप नही है, बल्कि यह ब्रैवेस का परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप है।

१४४. परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु[1] चाप (चित्र १२१, j)

प्रभामण्डल की एक सुन्दरतम घटना ! अक्सर ही दीखनेवाला विविध चटकीले रंगों से सुशोभित यह चाप क्षितिज के समानान्तर होता है तथा इन्द्रधनुष के सभी रंग इसमे प्रदर्शित होते हैं। बृहत् प्रभामण्डल के ऊपरी स्पर्शकीय चाप की उपस्थिति की सामान्यतः जहाँ हम आशा करते हैं, वहाँ से कुछ अंश ऊपर यह स्थित होता है।



चित्र १२७—९०° वाले बर्फ के प्रिज्म से प्रकाश-किरण का वर्त्तन।

इस घटना के समाधान के लिए हमें प्लेट या छतरी की शक्ल के क्रिस्टलों की कल्पना करनी होगी जो अपने अक्ष को ऊर्ध्व दिशा में रखे हुए स्थिर-समतुलन की दशा में उतराते रहते है (चित्र १२७)। तब ९०° के कोण वाले प्रिज्म से सूर्य की किरण-शलाका वर्त्तित होगी, किन्तु सामान्यतः यह अल्पतम विचलन का वर्त्तन नहीं होगा। चित्र १२७ से स्पष्ट है कि—

$$\sin i' = n \sin r' = n \cos r = n\sqrt{1-\frac{\sin^2 i}{n^2}} = \sqrt{n^2-\sin^2 i}$$

इससे सहज ही हम देखते हैं कि विचलन का कोण $i'+i-९०°$ है। सूर्य की कोणीय ऊँचाई $H=१०°$ के लिए यह विचलन कोण करीब ५०° आता है; फिर $H=$

1. Circum zenithal

२०° के लिए यह घटकर ४६° हो जाता है जो अल्पतम मान है; तथा H=३०° के लिए यह फिर बढ़कर ४९.५° हो जाता है। H=३२° सूत्र से i'=१०° प्राप्त होता है तथा परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप विलुप्त हो जाता है। व्यावहारिक तौर पर यह केवल सूर्य की १५° और २५° के बीच की ऊँचाइयों के लिए दिखाई देता है। इसका अर्थ हुआ कि सूर्य जब आकाश मे नीचे स्थित हो तभी परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप को ऊपरी बृहत् छल्ले के स्पर्शकीय चाप (जिसका विचलन कोण ४६° होता है) से पृथक् पहचाना जा सकता है।

जाँच की एक उत्तम कसौटी यह है कि वास्तविक परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप करीब-करीब सदैव ही कृत्रिमसूर्य के साथ प्रगट होते हैं, इनकी उत्पत्ति से यह बात समझ में भी आती है। बेर्सोन के अनुसार बादल, जो कृत्रिम सूर्य प्रदर्शित करता है और बाद मे ४६° की ऊँचाई तक उठ जाता है, तब परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप प्रदर्शित करेगा।

यह रोचक होगा कि अपेक्षाकृत अधिक सौर ऊँचाई (लगभग ३०° के निकट) पर परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु चाप की तलाश की जाय। सिद्धान्त के अनुसार तो वृत्त के आधे भाग से अधिक को हम कभी देख ही नहीं सकते; किन्तु व्यवहार मे दृष्टिगोचर होनेवाला भाग घटकर वृत्त का एक तिहाई ही रह जाता है, फिर भी कहा जाता है कि एक बार सम्पूर्ण वृत्तचाप भी देखा जा सका था (कर्न का प्रभामण्डल)[1]।

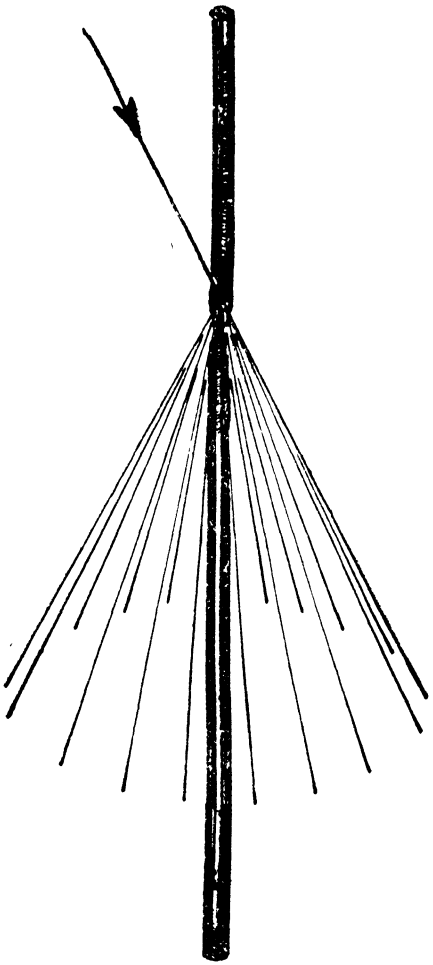
यदि स्पर्शकीय तथा परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप दोनों ही साथ-साथ दीख रहे हों तब इन दोनों के बीच कुछेक अंश के अन्तर की खाली जगह अवश्य दिखलाई देनी चाहिए। और वास्तव में इसका उल्लेख प्राप्त है कि एक बार एक चौड़ा चाप देखा गया था जो लम्बाई के एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक अन्धकारमय पेटी द्वारा दो भागों में विभाजित था; तथा यह अचानक ही प्रगट हुआ और थोड़ी ही देर बाद विलुप्त हो गया।[2] किन्तु इस ढंग के प्रेक्षण निस्सन्देह दुर्लभ ही रहते हैं क्योंकि यह घटना तभी सभाव्य हो सकती है जब क्षैतिज तल में उतराती हुई प्लेटों का झुण्ड तथा अनियमित दिशाओं में अवस्थित प्लेटों के झुण्ड एक साथ आकाश में मौजूद हों।

१४५. क्षैतिज वृत्त या सौर परिवृत्त (चित्र १२१, k)

यह एक वृत्त है जो क्षैतिज तल के समानान्तर उसी ऊँचाई पर अवस्थित होता है जिस ऊँचाई पर सूर्य रहता है। यद्यपि कुछ अवसरों पर पूरे ३६०° के दायरे में इस

1. Observations by Lambert in 1838 after Pernter-Exner. p. 300; M. W. R., 50, 132, 1922 2. M. W. R, 506, 1920

वृत्त का अवलोकन किया जा सकता है, किन्तु अक्सर सूर्य के निकट, जहाँ आकाश अवश्य ही अधिक चमकीला होता है, इस वृत्त को देख पाना मुश्किल होता है। इस वृत्त का **रंगहीन** होना स्पष्ट रूप से यह बतलाता है कि इसकी उत्पत्ति परावर्त्तन के कारण होती है, वर्त्तन के कारण नहीं; इस दशा मे ऊर्ध्व अक्ष की स्थिति मे उतराने वाले बर्फ के प्रिज्मों के पार्श्वफलक ही परावर्त्तन करनेवाले तल होते है।



चित्र १२७ क—**बेलनाकार सतह से परावर्त्तन द्वारा प्रकाश के शंकु का निर्माण।**

इसी प्रकार की प्रकाश की पेटी उस वक्त देखी जा सकती है जब किसी प्रकाश-स्रोत को हम खिड़की के काँच मे से देखते है जिसे किसी तेल लगे कपड़े से एक ही दिशा में पोंछा गया हो या जब प्रकाशस्रोत को ऐसे काँच द्वारा परावर्त्तित होते देखते है जिसकी सतह समानान्तर धारियों के रूप मे उभरी हो। प्रकाश की पेटी सदैव ही सतह की उभार-रेखा की समकोण दिशा मे होती है।

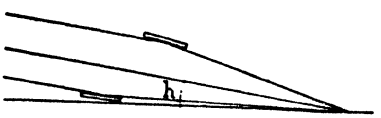
यह इस सामान्य प्रकाशीय नियम का एक उत्तम उदाहरण नियम है कि बेलन से परावर्त्तित होने पर किरणें

एक शंकु आकार का तल बनाती हैं जिसका अक्ष यह बेलन होता है[1] (चित्र १२७ क)।

१४६. प्रकाश-स्तम्भ या सूर्य-स्तम्भ[2]

उगते हुए या अस्त होते हुए सूर्य के ऊपर, ऊर्ध्व दिशा में स्थित प्रकाश-स्तम्भ या प्रकाश का गुच्छा-सा अक्सर ही देखा जा सकता है और सबसे बढ़िया तो यह उस वक्त दीखता है जब सूर्य किसी मकान के पीछे छिपा रहता है ताकि आँखों को चकाचौंध न लगे। प्रकाश का यह स्तम्भ स्वयं रगहीन होता है, किन्तु जब सूर्य नीचे स्थित होता है और इस कारण यह पीला, नारङ्गी या लाल वर्ण धारण कर लेता है, तब प्रकाश-स्तम्भ भी स्वभावतः उसी रंग की झलक अख्त्यार कर लेता है। सामान्यतः यह केवल ५° तक ऊँचा होता है, और बहुत कम अवसरों पर इसकी ऊँचाई १५° या इससे अधिक पहुँचती है। सूर्य जब आकाश में ऊँचाई पर स्थित होता है तब ये प्रकाश-स्तम्भ अत्यन्त दुर्लभ मौकों पर ही दिखलाई देते हैं, किन्तु इसके प्रतिकूल, सूर्य जब कि सचमुच क्षितिज के नीचे स्थित होता है, तो ये प्रायः ही बहुत अच्छी तरह देखे जा सकते हैं। सूर्य के **नीचे** प्रकाशस्तम्भ केवल यदा-कदा ही बनते हैं; और सूर्य के ऊपर बनने वाले स्तम्भों की अपेक्षा ये छोटे होते हैं।

बर्फ की परतों के एक ऐसे बादल की कल्पना कीजिए जिसमें सभी परतें पूर्णतया क्षैतिज हों तथा अत्यन्त धीरे-धीरे नीचे को उतर रही हों। इन्हीं परिस्थितियों मे ये सूर्य की आपाती किरणों को परावर्त्तित करती हैं, किन्तु ये परावर्त्तित किरणें हमारी आँखों में पहुँच नहीं पायेंगी। किन्तु मान लीजिए कि ये परतें अपनी क्षैतिज स्थिति से एक छोटे से कोण △ पर दिक्सूचक की सभी दिशाओं की ओर **थोड़ी झुकी हैं**, अतः अब परावर्त्तित किरणें हर प्रकार के लघु विचलन प्राप्त करेंगी। और यदि परतों का झुकाव $\frac{h}{2}$ (h=सूर्य की कोणीय ऊँचाई) से



चित्र १२८—**सूर्य्य के ऊपर और नीचे बनने वाले प्रकाश-स्तम्भ की सरलतम व्याख्या।**

1. W. Maier explains on this principle most of the halo phenomena (zeitschr. f. Meteor 4, 111 1950)
2. K. Stuchtey. Ann. d. Phys. 59, 33, 1919. Cb references to § 14.

कम रहता है तो सूर्य के नीचे प्रकाशस्तम्भ का निर्माण करीब-करीब उसी प्रकार होगा जिस प्रकार तरगों वाले पानी की सतह पर प्रकाशस्तम्भ के धब्बों का निर्माण होता है (§१४)। जब परतों का झुकाव h से अधिक हो जाता है तब हम न केवल सूर्य के नीचे स्तम्भ देखते है बल्कि इसके ऊपर भी एक हलकी रोशनी का स्तम्भ दिखलाई देता है।

किन्तु यह विवरण दो बातों मे प्रेक्षण के प्रतिकूल बैठता है। पहली बात यह कि सूर्य के नीचेवाला प्रकाशस्तम्भ ऊपरवाले स्तम्भ की अपेक्षा हमेशा अधिक चमकीला होना चाहिए; दूसरे यह कि सूर्य जब काफी ऊँचाई पर हो तब सूर्य के ऊपर का स्तम्भ तो कभी भी नहीं दीखना चाहिए क्योंकि क्षैतिज स्थिति के गिर्द बर्फ की परतों का दोलन अपेक्षाकृत थोड़ा ही होता है (देखिए § १४८)। किन्तु इन दोनों मे से कोई भी बात सच नही उतरती।

प्रकाशस्तम्भ की उत्पत्ति का कारण **बारम्बार होनेवाला परावर्त्तन** बतलाया गया है, किन्तु तब उस दशा मे प्रकाशमात्रा हलकी होनी चाहिए तथा जैसा साधारणतः प्रतीत होता है उससे कही अधिक चौड़ा यह स्तम्भ होता, जैसा कि गणित द्वारा निष्कष प्राप्त भी किया जा सकता है। एक अन्य कारण यह बतलाया जाता था कि इसकी उत्पत्ति **पृथ्वी की वक्रता** के कारण होती है, लेकिन इसका एक परिणाम यह होगा कि किसी एक दिशा मे प्रेक्षक को स्पष्ट रूप से विभिन्न झुकाव की परते दीखनी चाहिए। और अन्त मे यह समझा जाता था यह क्षैतिज अक्ष के गिर्द तेज़ी से घूमती हुई बर्फ की परतों के कारण उत्पन्न होता है जो इसीलिए खाली जगह मे हर सम्भव तरीके की अनुस्थापित स्थिति धारण कर लेगी। यह अन्तिम परिकल्पना वास्तव मे सर्वाधिक सम्भाव्य प्रतीत होती है यद्यपि इस पर आधारित गणना अभी तक कभी भी पूरी नहीं की जा सकी है।

प्रकाशस्तम्भ कितनी सरल घटना प्रतीत होता था। कौन भला सोच सकता था इनके समाधान के प्रयत्न मे इतनी सारी कठिनाइयो का सामना करना पड़ेगा?

१४७. क्रॉस[1] (प्लेट IX, b)

जब एक ऊर्ध्वस्तम्भ तथा क्षैतिज वृत्त का एक भाग साथ-साथ प्रगट होते है तब आकाश मे हमे एक क्रॉस दिखलाई पड़ता है। यह कहना अनावश्यक ही होगा कि अन्धविश्वास ने इस घटना को अत्यधिक महत्त्व दिया है!

1. Crosses

१४ जुलाई, सन् १८६५ को आल्प्स पर्वतारोही ह्विम्पर तथा उसके साथी, मैटर-हार्न की चोटी पर सबसे पहले पहुँचे, किन्तु वापस आते समय उसके चार साथियों के पैर फिसल गये और वे सिर के बल एक खड्डे में गिर गये। शाम के करीब ह्विम्पर ने आकाश में प्रकाश का एक भयोत्पादक वृत्त देखा जिसमे तीन क्रास थे; 'प्रकाश की यह प्रेतस्वरूप आकृति स्थिर तथा गतिहीन थी; यह एक अजीब तथा भयावह दृश्य था जो मुझे अनोखा लगा और इस मौक़े पर अवर्णनीय रूप से प्रभावोत्पादक भी प्रतीत होता था।'

१४८. अधोवर्ती सूर्य

इसे केवल किसी पर्वत या वायुयान से ही देख सकते हैं। यह थोड़ा-बहुत आयताकार रंगहीन प्रतिबिम्बत होता है, इस दशा मे सूर्य पानी की सतह मे नहीं, बल्कि बादल में प्रतिबिम्बित होता है! यह बादल दरअसल बर्फ की परतों का बना होता है जो अत्यन्त स्थिर भाव से उतराता हुआ प्रतीत होता है, तभी तो प्रतिबिम्ब अपेक्षाकृत इतना अधिक स्पष्ट बन पाता है! अनुकूल परिस्थितियों मे यह आयताकार बिम्ब एक दीर्घ वृत्तीय विवर्त्तन-वलय से परिवेशित होता है जिसकी त्रिज्या ०.५° से लेकर १° तक होती है। प्रगटतः बर्फ के क्रिस्टल पर्दे मे बने विवर्त्तनकारी छिद्र सरीखे काम करते हैं। चूँकि उनका प्रेक्षण हम विषमतलीय स्थिति से करते है, अतः ऊर्ध्व धरातल में इनका प्रक्षेपित व्यास छोटा हो जाता है अत. विवर्त्तन बिम्ब अधिक चौड़ा हो जाता है[1] (देखिए § १६२)।

१४९. दुहरा सूर्य

कभी-कभी सूर्य के ठीक ऊपर प्रकाश का एक धब्बा हम देखते है और केवल अत्यन्त दुर्लभ अवसरो पर इसके नीचे भी यह धब्बा दिखलाई पड़ता है। सूर्य और उसके इस धुँधले प्रतिबिम्ब के बीच की दूरी आमतौर पर १° या २° से अधिक नहीं होती। कुछेक अपवाद स्वरूप दशाओं मे सूर्य-मडलक के ऊपर इस तरह के दो या तीन प्रतिबिम्ब भी देखे गये हैं। सम्भवतः यह घटना केवल इस कारण उत्पन्न होती है कि बादलों के असमान वितरण के फलस्वरूप प्रकाशस्तम्भ की चमक स्थानीय रूप से जगह-जगह बढ़ जाती है।

1. Ch-F. Squire. Journ. Opt. Soc. Amer. **42**, 782, 1952 & 43, 318. 1953

१५०. अत्यन्त ही दुर्लभ तथा संदेहास्पद प्रभामण्डल की घटना

विभिन्न आकृतियों के प्रभामण्डल के बाद जिनका विवरण अभी दिया जा चुका है, हम निम्नलिखित सूची इस उद्देश्य से दे रहे हैं कि पाठक को इसका आभास मिल सके कि इन अत्यधिक दुर्लभ घटनाओं में जो सर्वाधिक अप्रत्याशित अवसरों पर आश्चर्यजनक स्पष्टता के साथ प्रगट होती हैं, कितनी अधिक विलक्षणताएं निहित हैं।[1]

सूर्य के गिर्द छल्ले के रूप में जिनका विस्तार ६°—७°, ९°, ११½°, १५°, १६½° १८°—२०°, २४½°, २६°, २७½°, ३३°, ३४° तक होता है। इन हलके प्रकाश की चमक वाले वृत्तों का अवलोकन करते समय सदैव सूर्य को ओट में रखने की सावधानी बरतिए! ये छल्ले शंकु के आकार वाले बर्फ के क्रिस्टलों में होनेवाले वर्त्तन से बनते हैं, जबकि ये क्रिस्टल बेतरतीब दिशाओं में अवस्थित होते हैं। इसी कारण इस तरह के कई छल्ले एक साथ ही बनते हैं।

सूर्य के गिर्द ९०° त्रिज्या का एक श्वेत प्रकाश का वृत्त। कभी-कभी ऊपरी स्पर्शकीय चाप सहित। अत्यन्त ही अस्पष्ट। सूर्य के गिर्द १२०° त्रिज्या का एक श्वेत प्रकाश का वृत्त।

प्रति सूर्य, जो कि क्षैतिज वृत्त पर सूर्य के ठीक सामने स्थित होता है—सामान्यतः यह रंगहीन और कुछ-कुछ धुँधला-सा होता है। कृत्रिम सूर्य, ९०° के वृत्त पर सूर्य से ३३° तथा १९° की कोणीय दूरियों पर।

क्षैतिज वृत्त पर सूर्य से १२०° की कोणीय दूरी पर और ४०° (?) ८४°—१००° (?), १३४° (?), १४२° (?) तथा १६५° (?) पर भी प्रतिसूर्य सरीखे प्रकाश-धब्बे मिलते हैं।

क्षितिज के नीचे का कृत्रिम सूर्य, जो वायुयान, या किसी पर्वत से, साधारण कृत्रिम सूर्य के प्रतिबिम्ब के रूप में दिखलाई पड़ता है।

कृत्रिम सूर्य तथा प्रतिसूर्य के ऊपर के प्रकाश-स्तम्भ। कृत्रिम सूर्य के भी कृत्रिम सूर्य (एक गौण प्रभामण्डल की घटना)। कृत्रिम सूर्य जो उस बिन्दु पर स्थित होते हैं जहाँ लघु वृत्त तथा ऊर्ध्व प्रकाश स्तम्भ क्षितिज से मिलते हैं।

1. Numerous interesting observations in the periodical *Hemel en Dampkring* and in the publication of the Royal Dutch Meteorological Institute *Onweders en Optische Verschijnselen.*

कृत्रिम सूर्य की स्थिति पर लघु वृत्त के स्पर्शकीय चाप। ११½° और २४½° के वृत्त के ऊपरी स्पर्शकीय चाप। सूर्य से गुजरने वाले तिर्यक् चाप तथा प्रति-सूर्य से गुजरने वाले तिर्यक् चाप जो प्रायः श्वेत होते हैं, किन्तु एक बार ये रंगीन प्रकाश के भी देखे गये थे। सूर्य के सामने, दूसरी ओर के चाप, अर्थात् प्रतिसूर्य के गिर्द के वृत्त जिनकी कोणीय त्रिज्याएँ ३३°, ३५° तथा ३८° की होती हैं। असाधारण परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु वाले चाप जो विभिन्न ऊंचाइयों या पर दीखते हैं।

सूर्य के गिर्द एक दीर्घवृत्त, जिसके दीर्घ अक्ष का विस्तार ऊर्ध्व दिशा में १०° होता है और क्षैतिज दिशा में लघु अक्ष का विस्तार ८° होता है।

प्रतिसूर्य के गिर्द बूगेर का प्रभामण्डल जिसकी कोणीय त्रिज्या ३५°—३८° होती है। इसे कुहरा-धनुष से पृथक् करके पहचानना कठिन होता है, किन्तु बूगेर का प्रभामण्डल पूर्णतया रंगविहीन होता है, इस पर अतिरिक्त धनुष चाप नहीं होते हैं और आम तौर पर प्रभामण्डल की अन्य घटनाएँ भी इसके साथ-साथ प्रगट होती हैं।

१५१. तिर्यक् और प्रभामण्डल की घटनाएँ

कभी-कभी प्रकाश के ऐसे स्तम्भ देखे गये हैं जो ऊर्ध्व दिशा मे स्थित नही थे बल्कि ऊर्ध्व तल से २०° तक झुके हुए थे!

पानी की लहरदार सतह पर दीखने वाले प्रकाश के स्तम्भ सरीखे तिरछे धब्बों की उत्पत्ति का कारण नन्ही तरंगों की प्रमुखता प्राप्त करनेवाली दिशा बतलायी गयी थी; यहाँ पर भी स्पष्ट है कि हम कल्पना कर सकते हैं कि बर्फ के क्रिस्टल क्षैतिज तल में नहीं उतराते हैं बल्कि कतिपय वायु-धाराओं के प्रभाव से वे तिरछे होकर उतराते है, ऐसा ठीक-ठीक कैसे होता है, इसका समाधान करना कुछ अधिक सरल नहीं प्रतीत होता है।

परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु चाप झुकी स्थिति मे देखा गया है। ठीक सूर्य के ऊपर यह सबसे अधिक ऊँचा होता है तथा दोनों पार्श्व में यह क्षितिज की ओर झुका रहता है। क्षैतिज वृत्त तो सूर्य से १°—२° नीचे की स्थिति से गुजरता हुआ देखा गया है! लघुवृत्त का कृत्रिम सूर्य एक बार अपनी सही स्थिति से ४०° अधिक ऊँचाई पर देखा गया था; यह घटना तो विशेष रूप से स्पष्ट देखी गयी थी क्योंकि सूर्य अस्त होने वाला ही था।

इस सम्बन्ध में भी और अभी प्रेक्षण प्राप्त करने की आवश्यकता है और प्रेक्षण की व्यक्तिगत त्रुटियों को दूर करने के लिए भी विशेष सावधानी बरतनी चाहिए; अतः साहुल का उपयोग कीजिए। फोटो लेते समय केमरे के सामने कुछ फासले पर साहुल को लटकाइए ताकि यह फोटोग्राफी की प्लेट पर (कुछ धुंधला ही) दीखे।

१५२. प्रभामण्डल की घटना के विकास-क्रम की दशा

नौसिखुए प्रेक्षक सदैव ही प्राकृतिक घटनाओं की नियमितता के प्रति अतिशयोक्ति से काम लेते हैं; वे बर्फ के क्रिस्टलो की आकृति पूर्णतया सममित बतलाते हैं, इन्द्रधनुष मे सात रंग वे गिन लेते हैं तथा आकाशीय तड़ित् को टेढ़ी-मेढ़ी वक्ररेखा के रूप मे वे देख पाते हैं! इसी प्रकार प्रभामण्डल की घटनाओं के बारे में भी लोगों की प्रवृत्ति उन्हे वास्तव से अधिक पूर्ण बतलाने की होती है। फिर भी लघुवृत्त की आधी परिधि के देखने में और उसके सम्पूर्ण भाग को देखने में विशाल अन्तर है। प्राकृतिक घटनाओं की 'अपूर्णता' भी निश्चित नियमो के अधीन होती है और इस दृष्टि से इस अपूर्णता को केवल एक और 'नियमितता' ही मान सकते हैं।

इसी कारण यह आवश्यक है कि प्रभामण्डल की प्रत्येक घटना के विकास-क्रम की दशा का अध्ययन करने मे उसकी प्रकाश-तीव्रता के साथ-साथ दृष्टिगोचर होने वाले भाग के विस्तार का भी तखमीना लगाया जाय। इन प्रेक्षणों का औसत मान लेने पर बादलों के वितरण की ऊलजलूल अनियमितताओं के प्रभाव का भी बहुत कुछ निराकरण किया जा सकता है। आम तौर पर यह पाया जाता है कि वे ही भाग जिनकी प्रकाश-तीव्रता अधिकतम होती है, सर्वाधिक बहुलता के साथ प्रगट होते हैं। विशेष अधिक चमक वाली आभा ही औसत रूप से विशेष विस्तार भी प्राप्त करती है। बादलों की मध्यम रूप से हलकी मोटाई का स्तर प्रभामण्डल के निर्माण के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होता है, अत्यन्त पतले स्तर मे क्रिस्टलों की संख्या बहुत ही कम होती है, तथा बहुत मोटे स्तर पर्य्याप्त प्रकाश को अपने मे से गुजरने नहीं देते हैं, या फिर उन्हे हर किसी दिशा मे बिखेर देते हैं।

एक बहुत ही दिलचस्प बात यह है कि लघु वृत्त का शीर्ष भाग, औसत रूप से निचले भाग की अपेक्षा तीन गुने बार अधिक दिखलाई पडता है। इसके कारण के लिए बतलाया गया है कि निचले भाग के लिए बादलों के स्तरों मे से गुजरने वाला किरण-पथ बहुत अधिक लम्बा होता है, यद्यपि यह बात जितनी हितकर साबित हो सकती है उतनी ही अहितकर भी।

१५२. क. वायुयान-जनित बादलों में प्रभामण्डल की घटनाएँ

कई बार प्रभामण्डल की घटनाएँ उन कृत्रिम अलका बादलों में देखी गयी हैं जो कभी-कभी वायुयान के गुजरने पर उनके पीछे बन जाते हैं। विशेषतया कृत्रिम सूर्य तो अकसर चमकीले बनते हैं। किन्तु लघुवृत्त, क्षैतिज वृत्त, परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु चाप

तथा उप-सूर्य भी देखे गये हैं। इन तमाम प्रेक्षणों से यह स्पष्ट है कि इन बादलों में बर्फ के क्रिस्टल ऊर्ध्व अनुस्थापन[1] की विशेष प्रवृत्ति प्रदर्शित करते हैं।

इन अलका बादलों में तोप के गोले की विस्फोट तरंगे वृत्तीय तरंगिकाओं की शक्ल में प्रसारित होती देखी गयी हैं। किन्तु वास्तव मे एक विलक्षण दृष्टान्त तो वह है जिसमें ये मटमैली तरङ्गे केवल क्षैतिज वृत्त के सहारे प्रसारित होती देखी गयीं।[2] बरबस हमे यह मानना पड़ता है कि तरङ्ग के गमन के समय बर्फ के क्रिस्टल अपनी ऊर्ध्व अनुस्थापन की स्थिति से घूम जाते हैं।

१५३. आँख के निकट प्रभामंडल की घटना

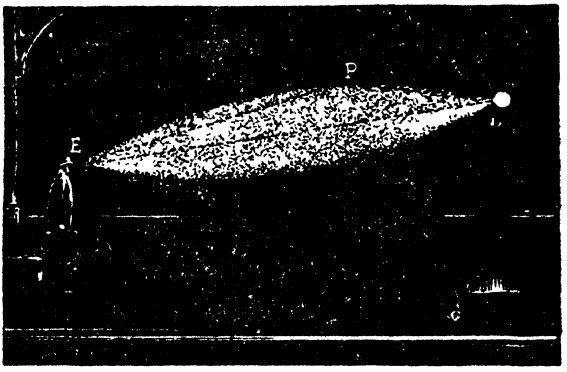
मँकरी सड़क से गुजरते हुए एक प्रेक्षक ने चन्द्रमा के गिर्द एक प्रभामण्डल देखा, किन्तु उसने विशेष बात यह देखी कि इस प्रभामण्डल का एक भाग एक मटमैली दीवार पर प्रक्षेपित हो रहा था, जो आकाश पर प्रक्षेपित होनवाले शेष भागों के साथ मिलकर पूरी आकृति बनाता था। हाथ से चन्द्रमा को ओट दे देने पर भी उसे प्रभामण्डल दीखता रहा था, अतः यह स्वयं आँखों के अन्दर निर्मित होनेवाली घटना नही हो सकती थी; बल्कि जाहिर है कि आँख और दीवार के दर्मियान, भूमि से कुछ ही गज की ऊँचाई पर बर्फ के क्रिस्टल उतरा रहे थे।

अत्यधिक ठंड वाली शाम को (१७° फ़ा०) रेलवे स्टेशन पर रेलगाडी के इंजिन की भाप मे एक सुन्दर प्रभामण्डल की घटना देखी जा सकी थी। एक लैम्प के निकट जहाँ हर किसी दिशा मे भाप की फुहारे निकल रही थी, सिगार की शक्ल की रोशनी की सतह दिखाई दी थी जिसका एक सिरा आँख के पास था और दूसरा सिरा लैम्प के पास (चित्र १२९); इस सतह पर पड़ने वाले सभी नन्हे-नन्हे क्रिस्टल प्रकाशित हो उठे थे, किन्तु भीतर की जगह मे बिलकुल अन्धकार था। इस सतह के स्पर्शकीय शंकु का शीर्ष कोण लगभग ४४° का था। उससे सहज ही स्पष्ट है कि सिगार की शक्ल की यह सतह उन सभी बिन्दुओं P का बिन्दुपथ है जो इस प्रकार चलते हैं कि रेखा EP तथा PL द्वारा क्रमशः L तथा E पर बननेवाले कोणों का योग २२° हो।

इस प्रेक्षण का एक महत्त्वपूर्ण अग त्रिविमितीय प्रकृति है। ऐसा केवल इसलिए सम्भव हो पाता है कि प्रकाशस्रोत इतने निकट स्थित होता है और दोनों आँखें एक ही साथ पृथक्-पृथक् प्रकाश-बिन्दुओं का अवलोकन करके पिण्डदर्शन के सिद्धान्त द्वारा उनकी दूरियो का अन्दाज़ लगा लेती हैं।

1. Vertical orientation 2. Archenhold, Nat **154**, 433, 1944.

उसी सन्ध्या को, स्टेशन के एक अपेक्षाकृत अधिक शान्त कक्ष मे यह देखा गया कि वहाँ लैम्पों द्वारा प्रकाश के 'क्रास' का निर्माण हो रहा था। यह घटना एक दम नयी नही है। रूस और कनाडा मे जाड़े की ऋतु मे दूर के लैम्पों के ऊपर प्रकाश के स्तम्भ अक्सर देखे जा सकते है जो वायु मे उतराते हुए बर्फ़ के क्रिस्टलो से बने धुन्ध की उपस्थिति प्रमाणित करते है।



चित्र १२९—**एक लघु आभामण्डल (आँख के अत्यन्त निकट प्रेक्षित)**

लघु प्रभामण्डल, कृत्रिम सूर्य, ऊपरी स्पर्शकीय चाप और बृहत् प्रभामण्डल, कुछ अवसरो पर तेज़ी से चक्कर खाती हुई तुषार-राशि मे देखे गये है।

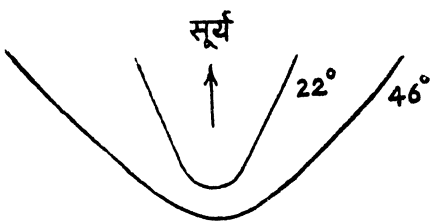
यह विचित्र बात है कि इन परिस्थितियो मे कृत्रिम सूर्य अकसर करीब-करीब बिलकुल ऊर्ध्व प्रकाश-स्तम्भ की शक्ल मे देखे गये है जो इन्द्रधनुष के रगो मे विभूषित थे तथा कभी-कभी १५° की ऊचाई तक पहुँचते थे। एक विशेष अवसर पर अधोसूर्य देखा गया था जो २२° वाले पूर्णवृत्त से परिवेष्टित था; सूर्य केवल ११° की ऊँचाई पर था और इस घटना का कुछ अश दूरस्थ पर्वतों की पृष्ठभूमि के सन्मुख देखा गया था।[1]

१५४. धरती पर प्रभामण्डल की घटना

हम ओसधनुष के रूप में, इन्द्रधनुष को क्षैतिज तल पर प्रक्षेपित हुआ देख चुके हैं; उसी प्रकार ताज़ा गिरे हुए बर्फ़ पर हम कभी-कभी लघु तथा बृहद्वृत्त, अति परिवलय के चाप के रूप मे देख सकते है (चित्र १३०), विशेषतया उस वक्त जबकि ताप असामान्य

1 Gabler Zeitschr f. Meteor, 8, 127, 1954

रूप से कम (१५° फा० या उससे भी कम) हो; और पाला-तुषार गिरने पर तो और भी अधिक बहुलता के साथ ये देखे जा सकते हैं।[1] इसका प्रेक्षण करने के लिए सूर्योदय के आध घण्टे या अधिक-से-अधिक एक घण्टे बाद, या सूर्यास्त के घण्टे आध घण्टे पहले इसे देखने का प्रयत्न करना चाहिए। दीप्ति पथ-रेखा नन्हे-नन्हे पृथक् क्रिस्टलों से बनी होती है जो अत्यन्त आश्चर्यजनक रंगों से जगमगाते रहते हैं; ये रंग अधिकांश लाल तथा भूरे-स्वर्णिम होते हैं, किन्तु प्रकाश्य रूप से ये रग हलके ही रहते हैं। जब हम चलते हैं तो प्रकाश की यह घटना भी साथ-साथ चलती है।



चित्र १३०—**लघु और बृहद् वृत्त जो ताजे गिरे हुए तुषार से ढकी भूमि पर अति परवलय के रूप में प्रगट होते हैं।**

सूर्य तथा आँख से, क्रिस्टल तक खींची गयी रेखाओं के दर्मियान का कोण सामान्य तरीकों से नापा जा सकता है और तब आप देखेंगे कि प्रकाश-किरणे क्रम से २२° या ४६° के कोण पर वर्त्तित होती हैं। परिवर्द्धक लेन्स द्वारा क्रिस्टल की आकृति की जाँच कीजिए और तब उस आकृति का रेखाचित्र बनाकर कोणों को नापिए।

कान्ति-चक्र (कोरोना)

१५५. तेल के धब्बों में व्यतिकरण के रंग

वर्षा की बौछार के बाद जमीन गीली हो जाती है तो सड़क के काले ऐसफाल्ट की सतह पर हमे अक्सर रंगीन धब्बे दिखलाई पड़ते हैं; ये धब्बे कभी-कभी तो २ फ़ुट व्यास तक के होते हैं और ये रंगीन, समकेन्द्रीय वृत्तों के बने होते हैं। यद्यपि आम तौर पर ये नीले-भूरे धब्बे-से होते हैं, किन्तु विशेष दिनों पर और कुछ खास सड़कों पर ये धब्बे अत्यन्त सुन्दर भी हो सकते हैं। स्पष्टतः सड़क से गुजरने वाली मोटरकारों से गिरे हुए तेल की बूंदों से ये बनते हैं; तेल की प्रत्येक बूंद अत्यन्त पतली परत के रूप में फैल

1. Listing Ann.d. Phys 122, 161, 1864. Meyer Das Wetter 42 137, 1925

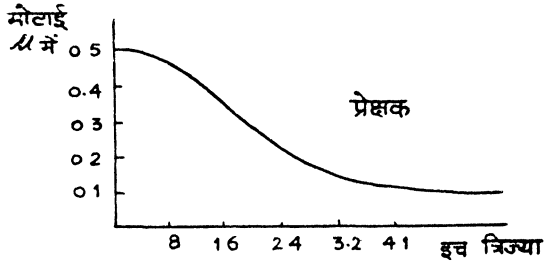
जाती है तथा इस परत की ऊपरी और निचली सतहों से परावर्त्तित होनेवाली किरणों के परस्पर मिलने से व्यतिकरण रंग उत्पन्न होते हैं—दूसरे शब्दो मे सुविख्यात 'न्यूटन के वृत्त' बनते हैं जो साबुन की झाग के बबूले मे दीखने वाले बिलक्षण मनमोहक रंगों के सदृश होते हैं। विज्ञान की साधारण पाठ्य पुस्तकों मे इनका समाधान मिल जायगा, किन्तु मै इस बात की ओर आप का ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगा कि यहाँ पर स्वयं आँखों के सामने हमे प्रकाश की तरंग-प्रकृति का प्रमाण देखने को मिलता है।

निम्नलिखित सारणी मे धब्बे के बाहरी हाशिये से लेकर क्रमशः भीतर की ओर केन्द्र तक के रग गिनाये गये हैं—परत की मोटाई μ ($\frac{१}{१०००}$ मिलीमीटर) में व्यक्त की गयी है।

I		II	
रग	परत की मोटाई μ मे	रग	परत की मोटाई μ मे
काला	०	बैंगनी	०.१९०
पीला–भूरा	०.०८०	नीला	०.२२१
बादामी–पीला	०.११५	हरा	०.२७०
लाल	०.१७०	पीला	०.३०५
—		लाल	०.३४०
III		IV	
बैंगनी	०.३८५	भूरा–नीला	०.५९५
नीला	०.४००	हरा	०.६५५
हरा	०.४५५	बादामी (गेहुआ रग)	०.६९५
पीला	०.५०५	V	
बादामी (गेहुआ रंग)	०.५२५	पीला नीला–हरा	०.८२०

अतः तेल की परते हाशिये पर सबसे अधिक पतली होती हैं और केन्द्र की ओर उनकी मोटाई बढ़ती जाती है। कभी-कभी तो केन्द्र पर भी उनकी मोटाई केवल इतनी ही बढ़ पाती है कि बस रंगों के क्रम के द्वितीय सोपान ही प्राप्त हो पाते हैं और कभी मोटाई इतनी अधिक होती है कि सारणी मे बतलाये गये तमाम रगों के बाद गुलाबी और हरे रग एक के बाद दूसरे कई बार आते हैं और वे निरन्तर हलके पीले पड़ते जाते हैं, यहाँ तक कि अन्त मे वे 'उच्चतर क्रम के श्वेत रंग' मे परिवर्त्तित हो जाते हैं और तब उस दशा मे बीच मे कोई वृत्त नही दीखते।

किसी सुडौल आकृति के धब्बे के विभिन्न रंगों के वृत्तों के व्यास को नापिए और तब तेल की परत की अनुप्रस्थ[1] काट का रेखाचित्र पैमाने के अनुसार बनाइए। यदि आप दस मिनट बाद इस क्रिया को दुहराएँ तो आप पायेंगे कि तेल का यह नन्हाँ-सा स्तूप अब पिचक कर और फैल गया है। किसी एक निश्चित रग के वृत्त का निरीक्षण इस दृष्टि



चित्र १३१—**भीगे ऐसफाल्ट पर पानी की बूंद की अनुच्छेद माप (व्यतिकरण रंगों द्वारा निर्धारित)।**

से कीजिए कि समय के हिसाब से इसकी आकृति कैसे बदलती है; तब आप देखेंगे कि यह वृत्त पहले तो फैलता है, फिर सिकुड़ता है। ऐसा क्यों? और अन्त मे बस आप एक भूरा धब्बा देखते हैं जिसकी उत्पत्ति के कारण का आपको कभी भी पता नही चलता, यदि आपने इसके निर्माण की इन क्रियाओ का प्रेक्षण न किया होता। सबसे बढ़िया तरीका तो यह है कि खड़े होकर किसी एक धब्बे का अवलोकन करे और इसके हर एक परिवर्त्तन का नाप करे। इसके लिए कुछ अधिक धैर्य्य की आवश्यकता नही होगी, कदाचित् आध घटे से अधिक समय न लगेगा। धब्बे को सायकिल वालों तथा पैदल चलने वालों से बचाइए और इस बात के लिए प्रार्थना कीजिए कि इसके जीवन-काल तक कोई मोटरकार इस पर से न गुजर जाय!

तेल के धब्बे को तिरछी दिशा से देखिए तो रगों की स्थितियाँ बदल जाती हैं मानो तेल की परत अब पतली हो गयी है। क्योंकि यदि आप इसे और अधिक तिरछी दिशा से देखें तो ये रंगीन वृत्त सिकुड़े हुए प्रतीत होते हैं। इस प्रकार किसी एक स्थल के रंग, बाहरी, बारीक परतवाले वृत्त के रग मे तबदील हो जाते हैं। व्यतिकरण करने

1. Transverse

वाली दोनों किरणों के कला-अन्तर[1] की गणना करके इस बात की व्याख्या करने का प्रयास कीजिए।

तेल की परत को एक छोटा बालक उगली से थपथपाता है तो रग बदलने लगते है, किन्तु फिर तेजी के साथ ये अपनी पूर्वावस्था पुनः प्राप्त कर लेते है; इस बार वृत्त कुछ छोटे हो जाते है क्योंकि उंगली के साथ तेल का कुछ अश अब वहाँ से हट गया है।

कभी-कभी सुडौल आकृति के दुहरे धब्बे भी दीखते है जो स्पष्टतः एक ही धब्बे के भाग होते है। इसमे रहस्य की कोई बात नही है, ये एक सामान्य धब्बे के भाग है जिस पर से मोटर कार का पहिया गुजर चुका होता है।

हमे तो उस वक्त तक पूर्ण सन्तोष नही प्राप्त होगा जब तक हम स्वयं रंगीन वृत्त नही बना लेते। तालाब के पानी पर मिट्टी के तेल या तारपीन की एक बूंद को डाल देने पर अवर्णनीय सुन्दर रग उत्पन्न होते है। किन्तु इस प्रयोग के लिए यदि हम मोटर-कार मे काम आने वाले **तेल (मोबिल आयल)** का उपयोग करे तो हमे एक आश्चर्य-जनक बात प्राप्त होगी। यह तेल पतली परत के रूप में फैलता नही है, और हमे रग आदि कुछ भी नहीं दिखाई पड़ते। पानी की सतह की भाँति ही भीगी सड़क का भी हाल होता है। तो क्या सड़क पर बनने वाले रगीन धब्बे मोटर के तेल के कारण न उत्पन्न होकर सम्भवतः पेट्रोल के कारण बनते है? लेकिन इसमे भी हमे निराश ही होना पड़ता है, क्योंकि पेट्रोल तो केवल भूरे सफ़ेद रंग का धब्बा पैदा करता है जो स्पष्तः अत्यन्त ही पतली परत का होता है और रगीन शानदार वृत्तों से इसका कोई सादृश्य नही होता। अधिक बारीकी से निरीक्षण करने पर पता चलता है कि केवल **इस्तेमाल किया हुआ, आक्सीकृत** तेल ही जो मोटर के इंजिन से नीचे टपकता रहता है, गीली सतह पर परत के रूप में फैलने की सामर्थ्य रखता है।[2] तेल का आक्सीकरण जितना अधिक परिपूर्ण होगा, उतनी ही पतली परत उससे तैय्यार होगी।

तेल के अधिकांश धब्बों मे त्रिज्यीय पट्टियाँ-सी दीखती है। प्रत्येक रंगीन वृत्त बाद के वृत्त मे मिलता है तो एक तरह की धारियाँ वहाँ बन जाती है, और सबसे बाहर का श्वेत-भूरा वृत्त भी इसी प्रकार धारियों के रूप में समाप्त होता है। गीली सडक पर पेट्रोल उडेल कर हम देख सकते है कि इससे बनने वाला धब्बा किस प्रकार फैलता तथा किस प्रकार हर दिशा मे इसकी शाखाएँ बन जाती हैं जो त्रिज्यीय पट्टियों और धारियों का निर्माण करती है। गन्दे पानी पर तैरती हुई रंगीन परत में भी यही

1. Phase-difference 2. K. B. Blodget. J. O S A, 24, 313,1934

घटना प्रायः देखी जा सकती है। सम्भव है कि इस दशा मे जटिल आणविक बल कार्य कर रहे हों।

जहाँ कही भी पतली परते बनती है, वहीं व्यतिकरण के रंग मौजूद होते है; उदाहरण के लिए केरासन या तारशेल की पतली सतहे जो पानी पर तैरती रहती है; एक ही रंग वाली रेखा निश्चित मोटाई की दिशा इङ्गित करती है और इन रेखाओं की विकृति तथा विरूपण उस द्रव की तमाम धाराओं और भँवर आदि का पता हमे देते है। रेलगाड़ी के इजिनो की चिमनी की ताँबे की दागवाली सतह पर कभी-कभी मनमोहक रंग देखे जा सकते है। क्या ऐसा इस कारण होता है कि ताँबा गर्म होने के बाद आक्सीकृत हो गया है? या कि इस कारण कि वायुमण्डल तथा प्रज्वलन की गैसों मे से सल्फ़ाइड की कोई एक तह-सी चिमनी पर जम जाती है?

१५६. खिड़की के बर्फ जमे हुए काँच पर शानदार रंगों की छटा

एक बार मैने निम्नलिखित विचित्र घटना का प्रेक्षण किया था। जाड़े की अत्यन्त ठण्डी रात थी (ताप १४° फा०), और रेलगाड़ी के जिस कम्पार्टमेण्ट मे मै बैठा था वहाँ मेरे सहयात्रियों की श्वास से निकलने वाली भाप पानी बनकर खिड़की पर बर्फ के रूप मे जमने लगी थी। अचानक ही मैने देखा कि रास्ते मे लगा प्रत्येक लैम्प जिसके सामने से होकर हम गुजरते थे, अद्भुत रगो का प्रदर्शन करता था; जमी हुई बर्फ की पतली तह का रग आसमानी नीला था और अन्य भागो का हरा या लाल। लगभग एकवर्ग सेण्टीमीटर के क्षेत्र तक ये रग करीब-करीब एक से ही बने रहते और ये सभी रग केवल खिडकी से गुजरने वाले प्रकाश में दीखते थे, उससे परावर्त्तित होने वाले प्रकाश मे नही। ये रंग इतने कमनीय तथा सपृक्त थे कि तुरन्त इस बात का आभास हो सका कि यह एक अत्यन्त ही विलक्षण घटना थी! यह घटना कुछ ही मिनटों तक रही थी, तब तक बर्फ की तह कई मिलीमीटर मोटी हो गयी तथा रग विलुप्त हो गये।

अब इसके बाद मुझे पता चला है कि इस प्रकार की घटना का विवरण दिया जा चुका है[1] तथा उन चन्द मिनटों मे मेरे प्रेक्षण के लिए जितना सम्भव था उससे कही अधिक विस्तार का समावेश उस विवरण मे दिया गया है। मैने यह भी पाया कि ५° से० ग्रेड (१४° फ़ा०) से नीचे के ताप पर, घर से बाहर काँच के टुकड़े को थोड़ी

1. Observed by Ch. F. Brooks, M. W. R. **53**, 49, 1925 and by Schlottmann Met. Zs. **10**, 156. 1893

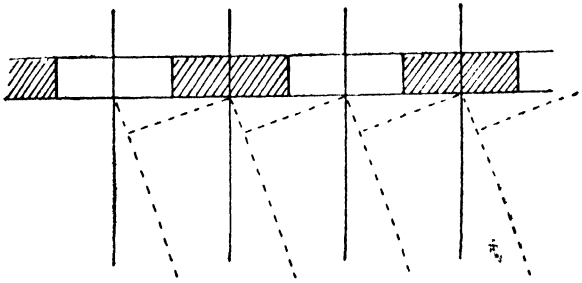
देर तक छोड़ दे ताकि इसका ताप भी उतना ही हो जाय जितना बाहर की हवा का और तब कुछ दूरी पर खड़े होकर इस काँच पर फूँक मारे तो उक्त प्रेक्षण को, इस किसी बार चाहे उतनी बार, पुनरावृत्ति कर सकते हैं। यदि खिड़की के अत्यन्त ठण्डे काँच पर अपनी श्वास आप छोड़े तो ऐसा जान पड़ता है कि आप की श्वास की भाप पहले एक छोटे अर्द्ध गोले की शक्ल के बर्फ के टुकड़ों के रूप मे जमती है (क); फिर लगभग आधे मिनट बाद इस तह मे नन्हीं दरारे-सी फट जाती हैं और बर्फ के जर्रे नन्हे-नन्हे समूहों मे एकत्र हो जाते हैं (ख); यहाँ तक कि अन्त में ये लम्बी सुइयों की शक्ल धारण कर लेते हैं जिनके दर्मियान पारदर्शी बर्फ देखी जा सकती है। इनमें से केवल दशा (ख) मे ही रंग प्रगट होते हैं और यही कारण है कि इनका जीवनकाल इतना थोडा होता है। एक और लाक्षणिक विशिष्टता यह है कि प्रेक्षित लैम्प या प्रकाश-स्रोत स्वय रंगीन जान पडता है। और जबकि आप श्वास छोड़ रहे हों, यह क्रमशः नीललोहित, नीला, हरा, पीला...आदि रग प्रदर्शित करता है, अर्थात् न्यूटन के व्यतिकरण के सभी रंग। प्रकाश-स्रोत के गिर्द लगभग १° त्रिज्या का एक चमकीला कान्ति वृत्त प्रगट होता है जिसमे पूरक रंग प्रदर्शित होते हैं—कदाचित् इसकी त्रिज्या धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। यह सर्वाधिक स्पष्ट उस वक्त दीखता है जब एक क्षण के लिए श्वास छोड़ने की क्रिया को रोक कर आप प्लेट को आँख के अत्यन्त निकट रखते हैं। दिन के समय कदाचित् हिमाच्छादित चमकीली छत को गुलाबी रंग का आप देख सकेंगे और इर्द-गिर्द का अदीप्त भू-दृश्य हरा दीखेगा। विस्तृत क्षेत्र, जैसे चमकीला आकाश, अवश्य ही अपना रग नही बदलता क्योकि जिस किसी ओर हम दृष्टि डालते है हम रंगीन 'प्रकाश-स्रोत' को देखते हैं जिस पर इर्द-गिर्द के क्षेत्र का विस्तृत अनुपूरक रंग अध्यारोपित रहता है। यदि काँच की प्लेट को तिरछी करे तो रंग बदल जाते हैं मानों प्लेट की तह मोटी हो गयी हो।

प्रकाश्यतः हमे मानना होगा कि प्लेट पर उपस्थित तह बर्फ और वायु के सम्मिश्रण से बनी है[1]। प्रकाशस्रोत से आनेवाली किरणों मे से कुछ वायु मे से गुजरती है और कुछ बर्फ मे से; इन दोनों किरण-समूहो मे कला-अन्तर[2] मौजूद होता है। अतः कुछ विशेष तरग-दैर्घ्य वाले प्रकाश तरगों का शमन हो जाता है और प्रकाशस्रोत रंगीन वर्ण का दीखने लगता है (चित्र १३१ क)। किन्तु सम्मिश्रण के बिन्दु-स्थलों के

1. This explanation reduces the phenomenon to a case of "colours of mixed plates" as described by Wood in his Physical Optics

2. Phase-diffrence

हाशियों पर प्रकाश का विवर्त्तन भी होता है, अतः इस प्रकार उत्पन्न होने वाला पथान्तर[1] प्रथम क्रिया में उत्पन्न हुए कला-अन्तर की ठीक ठीक क्षतिपूर्त्ति कर देता है। अतः सीधे आने वाली किरणों का जो रंग विलुप्त होता है वही तिर्यक् किरणों में पुनः प्रगट होता है। आकार की कोटि के लिए हमे मानना होगा कि तह की मोटाई १ μ होती है तथा कण एक दूसरे से ०.१ मिलीमीटर की औसत दूरी पर स्थित है।



चित्र १३१ क—**हलकी बर्फ की तहवाली काँच की प्लेट में से देखने पर रंग की उत्पत्ति।**

अब आप समझ सकते है कि प्लेट को आँख से कुछ फासले पर रखने पर क्यों इसका प्रत्येक भाग एक यथार्थ, निश्चित रग प्रदर्शित करता है—किन्तु ऐसा केवल तभी होता है जब प्रकाशस्रोत से इसे एक भलीभाँति निर्धारित कोणीय दूरी पर रखें। यह भी एक रोचक बात है कि अत्यधिक चमक वाले प्रकाश-स्रोत एक हलके विषम[2] कान्ति-चक्र से परिवेष्टित दीखते है बशर्त्ते काँच की प्लेट को आप आँख के निकट रखे।

आप जबकि प्रेक्षण कर रहे होते है और उस पर विचार कर रहे होते है, उतनी देर में सम्भवतः बर्फ की तह का वाष्पीभवन (ऊर्ध्वपातन[3]) हो जाता है। अब आप जितनी बार चाहे, प्रयोग को दुहरा सकते हैं, किन्तु काँच को पहले ही पोंछ कर साफ़ करने का प्रयत्न मत कीजिए। यह अनावश्यक कार्य होगा और नवीन संघनन की क्रिया में यह बाधक होगा।

कुछ कम ठण्डे ताप पर काँच की प्लेट पर जमनेवाली भाप सुपरिचित विवर्त्तन कान्तिचक्र प्रदर्शित कर सकती है, यद्यपि अक्सर रंगों का क्रम विषम होता है, जैसा उस वक्त देखा जा सकता है जबकि संघनित जल-बूंदें बड़े आकार की होती हैं (§१६२)।

1. Path-difference 2. Aonmalous 3. Sublimation

१५७. लौहमिश्रित पानी में व्यतिकरण के रंग

हीद झाड़ीवाले मैदानों मे जहाँ की मिट्टी लौहमिश्रित रहती है, खाइयों के भूरे रंग के पानी की सतह कभी-कभी एक पतली उद्दीप्त परत से ढकी होती है—इसके फीके रग मोती के सीप के रंग सदृश होते हैं। पानी में मौजूद लौह-आक्साइड के कलिल[1] विलयन के कारण ये उत्पन्न होते हैं जिसमे लौह-ऑक्साइड के कण छोटी-छोटी समान्तर प्लेटों के रूप मे अपने को सजा लेते हैं जिनके बीच लगभग $\frac{1}{2}\mu$ की दूरी होती है और इस तरह की परतदार झिल्ली बहुत कुछ 'लिपमैन की रंगीन फोटोग्राफ़ी' की पद्धति के अनुसार काम करती है।

१५८. प्रकाश का विवर्त्तन

रात का समय है। कुछ फासले पर अन्धकार को चीरती हुई घरघराहट के साथ एक मोटरकार हमारी ओर आ रही है और इसकी 'हेडलाइट' के लैम्प चौड़ी सड़क पर चकाचौध उत्पन्न करनेवाला तेज़ प्रकाश फेकते हैं। एक सायकिल सवार इस तेज रोशनी के सामने से गुजरता है ताकि एक क्षण के लिए हम उसकी छाया मे आ जाते हैं। और तभी अचानक सायकिल सवार की काली सिल्युएत[2] एक अद्भुत मनोहर प्रकाश से चारों ओर से मण्डित दीखती है; यह प्रकाश इस आकृति के हाशियो से विकिरित होता हुआ जान पड़ता है। वृक्षों तथा पैदल चलनेवाले व्यक्तियों के गिर्द भी यही प्रभाव देखा जा सकता है। यह वस्तुतः 'विवर्त्तन प्रभाव' है। 'विवर्त्तन' नाम उस प्रभाव को दिया गया जिसके अनुसार किसी अपारदर्शी पर्दे के हाशिये पर प्रकाश किरण मुड़ती है और इस तरह ज्यामितीय प्रकाश-सिद्धान्त से जहाँ छाया होनी चाहिए उस प्रदेश मे तरंगाग्र का कुछ भाग प्रवेश कर जाता है। यदि विचलन कोण कम ही हो तो इस तरह मुड़ने वाला प्रकाश पर्याप्त तीव्र होता है, किन्तु विचलन कोण का मान बढ़ने पर विवर्त्तित-प्रकाश तेजी के साथ घटता है; इसी कारण जब सायकिल सवार काफ़ी फासले पर होता है और मोटरकार उससे आगे बहुत अधिक दूरी पर होती है तो प्रकाश का प्रभाव इतना अधिक सुन्दर होता है।

इसी प्रकार की घटना अधिक बड़े पैमाने पर पर्वतीय देशों में उस वक्त देखी जा सकती है जब वायु स्वच्छ हो और आप किसी पहाड़ी की साया में खड़े होकर उसके वृक्ष-आच्छादित ऊपरी भाग को प्रातःकालीन आकाश की पृष्ठभूमि के सम्मुख एक काली

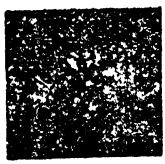
1. Colloidal 2. Silhouette

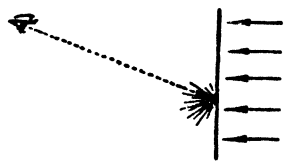
रेखाकृति की शक्ल मे देखते है। सूर्य जब उगने को होता है तो वे वृक्ष जो आकाश के उस भाग के सामने पड़ते है जहाँ प्रकाश अधिकतम होता है, एक चमकीले रजत-श्वेत प्रदीप्ति से परिवेष्टित हो जाते है।[1]

कहा जाता है कि हमारे देश में भटकटैया[2] झाड़ियाँ सूर्य की पृष्ठभूमि पर देखी जाने पर इसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती है।

१५९. नन्ही खरोंचों द्वारा प्रकाश का विवर्त्तन

रेलगाड़ी की खिड़की में से यदि आप सूर्य को देखें तो आपको काँच पर हजारों बारीक खरोंचे दिखलाई देगी जो सूर्य के गिर्द समकेन्द्रीय वृत्तों में अवस्थित होती हैं। काँच के जिस किसी भी भाग से हम देखें, इन खरोंचों की आकृति सदैव एक-सी ही रहती है जिससे हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि काँच की **तमाम सतह** पर **हर दिशा** मे खरोंचें





चित्र १३२—**खिड़की के काँच पर बनी हुई खरोंच द्वारा प्रकाश का विवर्तन।**

पड़ी हुई है, यद्यपि हम केवल उन्ही को देख पाते है जो प्रकाशकिरणों के आपतन धरातल के समकोण पड़ते है (देखिए § २७)। क्योंकि प्रत्येक खरोंच, प्रकाश का विस्तरण अपनी समकोण दिशा मे करती है, अतः केवल इस धरातल मे स्थित प्रेक्षक को ही यह दृष्टिगोचर हो पाती है।

जहाँ तक इतनी बारीक खरोंचों का सम्बन्ध है, हम परावर्त्तन या वर्त्तन का उल्लेख नहीं कर सकते; और अच्छा यही होगा कि इस दशा मे प्रकाश-किरणों के विचलन को हम विवर्त्तन माने। यदि आप इनमे से किसी एक खरोंच का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करे तो आप देखेगे कि कुछ विशिष्ट दिशाओ मे यह अत्यधिक शानदार रंगों का हर सम्भव क्रमों मे प्रदर्शन करता है। यदि आप एक 'निकल' का उपयोग करे तो आप पायेगे

1. This phenomenon, superficially observed by Folie, was at that time a matter of much discussion. It can be found in Rep. Brit Ass. 42, 45, 1872, later in Nat. 47, 364, 2. Furze

कि आपतन तथा प्रेक्षण की दिशाएँ तिरछी रखने पर प्रेक्षित प्रकाश अत्यधिक मात्रा में ध्रुवित होता है। ये सभी घटनाएँ अत्यन्त जटिल होती हैं और सैद्धान्तिक भौतिकी द्वारा केवल आंशिक रूप से ही इनका समाधान हो पाता है।[1]

१६०. कान्तिचक्र (कोरोना)

श्वेतरंग के हलके रुई के गाले-जैसे बादल चन्द्रमा के सामने से आहिस्ते-आहिस्ते गुजरते हैं। हमारे नेत्र आकाश के इस प्रकाशित भाग की ओर अनायास ही आकृष्ट हो जाते हैं जो रात्रि के भू-दृश्य का केन्द्र-सा जान पड़ता है। हर बार, जब कोई छोटा बादल का टुकड़ा सामने आता है, तो हलकी रोशनी से चमकने वाले चन्द्रमा के गिर्द रंग-बिरंगे प्रकाश के वृत्त हमें दिखलाई पड़ते हैं--इनके व्यास चन्द्रमा के व्यास से कुछ ही गुने बड़े होते हैं।

आइए, इन रङ्गों के क्रम की हम ध्यानपूर्वक जाँच करें। चन्द्रमा के निकटतम नीले रङ्ग का हाशिया होता है जो बाहर की ओर पीत-श्वेत वर्ण धारण कर लेता है और फिर यह रङ्ग भी बाहरी हाशिये पर भूरे रंग में परिणत हो जाता है। यह **आभामण्डल**[2] (आरियोल) ही कान्तिचक्र का सरलतम रूप और यही रूप सर्वाधिक अवसरों पर दृष्टि-गोचर होता है। यह उस वक्त वास्तव में चित्ताकर्षक दीखता है जब यह अन्य बृहत्तर और मनोहर रंगों के वृत्तों से परिवेष्टित होता है। निम्नलिखित सारणी से देखा जा सकता है कि ये क्रम करीब-करीब ठीक न्यूटन के व्यतिकरण वृत्तों के रंगक्रम सरीखे ही हैं, अन्तर केवल इतना है कि ऋतुवैज्ञानिकों ने विभिन्न 'कोटियों' की सीमाओं को भौतिक शास्त्रियों से तनिक भिन्न प्रणाली पर निर्धारित किया है; वह इस प्रकार कि प्रत्येक कोटि का रंगसमुदाय लाल रंग के वृत्त पर खत्म हो। अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर आभामण्डल के बाहर तीन रंग-समुदाय देखे गये हैं (चार रंगीन वृत्तों का कान्तिचक्र)।

I प्रभामण्डल या (नीलापन लिये हुए)--श्वेत-(पीलापन लिये हुए)
--भूरामिश्रित लाल।

II नीला-हरा-(पीला)-लाल।

III नीला-हरा-लाल।

IV नीला-हरा-लाल।

करीब-करीब निश्चित रूप से यह प्रतीत होता है कि रंगों के क्रम में कभी-कभी परिवर्त्तन होता है। उपर्युक्त सारणी में कोष्ठक में दिये गये रंग कभी तो उपस्थित हो

1. Rayleigh, Phil. Mag. **14**, 350, 1907, Papers v, 410. 2. Aureole

जाते हैं, कभी अनुपस्थित। कान्तिचक्र के रंगों के इस परिवर्त्तन की जाँच करते समय चन्द्रमा की कला को भी ध्यान मे रखना चाहिए, क्योंकि इसकी वजह से विवर्त्तन का प्रारूप कभी अधिक धुँधला, कभी कम धुँधला हो जाता है।

कांतिचक्र की त्रिज्या नापने का सबसे बढिया तरीक़ा है कि लाल रंग के वृत्त से, जहाँ रंग-समुदाय की प्रत्येक कोटि समाप्त होती है, माप आरम्भ की जाय क्योंकि यही रंग सर्वाधिक चटकीला होता है और तब कांतिचक्र के आकार की तुलना चन्द्रमा के व्यास (३२′) से करनी चाहिए। कातिचक्र का आकार पर्य्याप्त मात्रा मे बदलता रहता है; उदाहरण के लिए आभामण्डल के भरे होशिये के वृत्त की त्रिज्या कभी-कभी केवल १° भर हो सकती है जबकि अन्य अवसरो पर यह ५° तक होती है। इस त्रिज्या की न्यूनतम माप, जिसका प्रेक्षण किया जा सका है, १०′ तथा महत्तम मान १३° था।

सूर्य के गिर्द कान्तिचक्र बहुतायत से देखे जा सकते हैं या कम-से-कम उतनी बार तो अवश्य ही, जितनी बार चन्द्रमा के गिर्द वे दिखलाई देते है। किन्तु सूर्य के गिर्द बनने वाले कान्तिचक्र पर हमारा ध्यान उतनी बहुतायत से नहीं जा पाता, क्योकि स्वभावतः उसकी चकाचौंध पैदा करनेवाली रोशनी की ओर देखने से हम बचना चाहते है। फिर भी सूर्य की तीव्र प्रदीप्ति के कारण उस आकाशीय पिण्ड के गिर्द बनने वाले कान्तिचक्र प्रायः सर्वोत्तम होते है।

निम्नलिखित सुझावों को बरतने से प्रेक्षण मे विशेष सुविधा हो सकती है—

(क) स्थिर शान्त पानी मे सूर्य के प्रतिबिम्ब का प्रेक्षण कीजिए; इसी रीति से न्यूटन ने सूर्य के गिर्द बनने वाले कान्तिचक्र का सुविख्यात प्रेक्षण प्राप्त किया था।

(ख) काले रंग के पालिश किये हुए संगमर्मर पत्थर का उपयोग एक साधारण दर्पण की तरह कीजिए, या सधान (वेल्ड) करनेवाले मिस्त्री के उपयोग मे आनेवाले काले रंग के चश्मे को काम मे लाइए अथवा काँच के साधारण टुकड़े के पीछे काली वार्निश लगाकर उसे ही दर्पण की तरह इस्तेमाल कीजिए। इन प्लेटों को आँख के निकट रखना चाहिए ताकि एक विस्तृत दृष्टिक्षेत्र का सर्वेक्षण कर सकें।

(ग) संगमर्मर के पहिया या संधान करनेवाले मिस्त्री के चश्मे को लीजिए जो इतना पारदर्शी हो कि आप बिना चकाचौध का अनुभव किये ही सूर्य का प्रेक्षण उसमें से कर सके।

(घ) इस बात का ध्यान रखिए कि सूर्य छत के हाशिये की आड़ में छिप जाय।

(ङ) कुछ गजों के फासले पर रखे हुए वाटिका ग्लोब में इस तरह प्रेक्षण कीजिए कि सूर्य का प्रतिबिम्ब आपके सिर के कारण विलुप्त हो जाय।

आभामण्डल लगभग हर किस्म के बादलों में हलका-हलका दृष्टिगोचर होता है। उच्च-पुञ्ज या स्तार-पुञ्ज मेघ मे यह विशेष चटकीला होता है और तब प्रायः द्वितीय रंगीन वृत्त का भी हलका आभास मिलता है। सर्वाधिक सुन्दर कान्तिचक्र जिनके रंग मनमोहक रूप से विशुद्ध होते है, उच्चपुञ्ज बादलों मे मिलते है; ये अलका-पुञ्ज मेघ मे भी मिलते है। कभी-कभी छोटे आकार के, मन्द प्रकाशवाले कान्तिचक्र शुक्र, बृहस्पति तथा अधिक चमकीले सितारो के गिर्द भी दिखलाई देते है।

१६१. कान्तिचक्र की घटना का समाधान[1]

बादलों मे दीखने वाले कान्तिचक्र का निर्माण बादल मे मौजूद पानी की बूंदों द्वारा प्रकाश के विवर्त्तन के कारण होता है। बूंदे जितनी छोटी होंगी, कान्तिचक्र उतने ही बड़े होगे। उन बादलो मे जिनमे बूंदे सब की सब एक ही आकार की हों, कान्तिचक्र पूर्णरूप से विकसित होते है और उनके रंग विशुद्ध होते है; किन्तु उन बादलों में जिनमें हर आकार की बूंदे परस्पर मिली-जुली रहती है, विभिन्न आकारों के कान्तिचक्र एक साथ ही बनते है और वे एक-दूसरे के ऊपर पड़ते है। यही कारण है कि शुद्ध रूप से विकसित कान्तिचक्र की घटना केवल विशिष्ट जाति के बादलों मे ही पायी जाती है जहाँ जलवाष्प के संघनन के लिए परिस्थितियाँ पर्याप्त रूप से समान होती है। इसी कारण रगों के क्रम के सूक्ष्म अन्तर विभिन्न आकार की बूंदों की सख्या, बादलो की मोटाई आदि पर निर्भर करते है।

सैद्धान्तिक विवेचन की सामान्य तर्क प्रणाली इस प्रकार है—

(क) एक ही आकार की बूंदों वाले, सामान्य रूप से घने बादल द्वारा विवर्त्तन यथार्थतः वैसा ही होता है जैसा अकेली एक बूंद द्वारा होनेवाला विवर्त्तन; बादल की दशा मे विवर्त्तित प्रकाश की केवल तीव्रता अधिक होती है।

(ख) बूंद द्वारा उत्पन्न विवर्त्तन ठीक वैसा ही होता है जैसा पर्दे मे बने एक नन्हें छिद्र द्वारा होनेवाला विवर्त्तन (बेबिनेट का सिद्धान्त)।

(ग) छिद्र द्वारा उत्पन्न होनेवाले विवर्त्तन की गणना करने के लिए छिद्र को हम कम्पनों का उद्गमस्थान मानते है (हाइजिन्स का सिद्धान्त), और तब

1. G. C. Simpson, Quart. Journ. **38**, 291, 1912; Ch. F. Brooks, M. W. R, **53**, 49, 1925; Kohler, Met. Zs, **40**, 257, 1923

हम ज्ञात करते हैं कि छिद्र के सभी भागों से तरंगें किस प्रकार नेत्र में प्रवेश करती हैं, तथा परस्पर व्यतिकरण करती हैं।

कान्तिचक्र तथा वृत्ताकार छिद्र के विवर्त्तन-प्रतिबिम्ब के बीच के सादृश्य का प्रेक्षण करना एक बिल्कुल आसान बात है। खिड़की के सामने जिस पर धूप पड़ रही हो, एक कार्डबोर्ड का पर्दा लटकाइए जिसके बीच मे एक छिद्र बना हो; किन्तु छिद्र को चाँदी के वर्क से ढका होना चाहिए जो कार्डबोर्ड पर चिपकाया गया हो। चाँदी के वर्क मे सुई से नन्हा सूराख कीजिए और तब लगभग १ गज की दूरी से सूर्य की दिशा मे इस चमकीले प्रकाशबिन्दु को देखिए जबकि अपनी आँखों के सामने उसी प्रकार का एक और चाँदी का वर्क रखा हो, और इसमे भी सुई की नोक से छिद्र बना हो। ये सूराख बारीक से बारीक सुई द्वारा बने होने चाहिए और सूराख करते समय उँगलियों के दर्मियान सुई को इधर-उधर फिराते रहना चाहिए; स्वय ये सूराख व्यास मे ०.५ मि० मीटर से अधिक नही होने चाहिए। यह नन्हा सूराख जिसका अवलोकन आप कर रहे हैं, फैलकर एक मंडलक-जैसा प्रतीत होगा जो एक छोटे पैमाने का आभामण्डल (आरिएल) है; और इस मंडलक के गिर्द आप वृत्तों के समुदाय देखेंगे जो कान्तिचक्र के भिन्न क्रमागत कोटियों के तुल्य हैं। आँख के सामने का छिद्र जितना ही अधिक बारीक होगा, विवर्त्तन प्रतिरूप उतना ही अधिक बड़ा होगा।

क्रमागत महत्तम तथा निम्नतम प्रदीप्तियों की हर माने में तुलना एक आयताकार झिरी पर होनेवाले विवर्त्तन से की जा सकती है, केवल इस दशा में इनके दर्मियान की दूरियाँ भिन्न होती हैं। आभामण्डल के सबसे बाहरी हाशिये के लाल रंग तथा प्रथम कोटि के लाल रंग, क्रमशः कोणीय दूरियों $\delta = \frac{0.00070}{2}$ तथा $\frac{0.00127}{2}$ पर पड़ते हैं, (2=सूराख का व्यास मिलीमीटर में, तथा δ=कोणीय दूरी जो केन्द्र से नापी गयी है)।

अतः कान्तिचक्र से हम गणना कर सकते हैं कि बादल की बूँदें कितनी बड़ी हैं। यदि चन्द्रमा के गिर्द आभामण्डल की त्रिज्या स्वयं चन्द्रमा के व्यास की चार गुनी है अर्थात् $\frac{४}{१०८}$ रेडियन, तब बादल ऐसी बूँदों के बने होंगे जिनके व्यास $\frac{१०८}{४} \times ०.०००७० = ०.०१९$ मिलीमीटर हैं। यह गणना पूर्णतया सही नही है क्योंकि सूर्य या चन्द्रमा केवल बिन्दुमात्र नहीं हैं, बल्कि उनकी त्रिज्या १६′ है। अतः सबसे बाहर के हाशिये का मान स्पष्टतः विशेष अधिक प्राप्त होता है और इसी कारण प्रायः

प्रेक्षित कोण δ के मान मे से इस $\frac{1}{6}$ को हम घटाने के वाद ही इसे उपर्युक्त सूत्र में प्रयुक्त करते है; किन्तु यह अत्यन्त संदेहात्मक है कि ऐसा करना उचित भी है या नहीं। परिणाम-स्वरूप आप पायेगे कि बादल की बूँदों का आकार ०.१ से लेकर ०.२ मिलीमीटर तक प्राप्त होता है। यह सम्भाव्य है कि समान मोटाई की **बर्फ़-सूचियों** वाले बादलों से भी कान्तिचक्र का निर्माण हो सके—ये **बर्फ-सूचियाँ** प्रकाश का विवर्त्तन उसी भाँति करती है जिस भाँति एक झिरी; क्योकि पूर्ण विकास पाये हुए तथा सर्वोत्तम रंगों वाले कान्तिचक्र यदा-कदा पतले, ऊँचे अलका मेघों में देखे जाते है और ये बादल बर्फ-सूचियो से बने होते है।

फिर तो बर्फ-सूचियों की मोटाई की गणना उतनी ही आसानी से की जा सकती है जितनी आसानी से पानी की बूँदों के आकार की। ऊपर बताये गये कान्तिचक्र में जिसके भूरे हाशिये की त्रिज्या चन्द्रमा के व्यास की चार गुनी है, बर्फ-सूचियों की मोटाई $\frac{०.०६२}{४}$ = ०.०१५ मिलीमीटर प्राप्त होती है।

कान्तिचक्र के प्रेक्षण के समय यह कह सकना अत्यन्त कठिन होता है कि इसका निर्माण पानी की बूँदों से हुआ है या बर्फ-सूचियों से। बर्फ-सूचियों से बनने वाले कान्ति-चक्र में क्रमागत अदीप्तियों[1] के दर्मियान की दूरियाँ ठीक एक दूसरे के बराबर होती हैं और यह दूरी केन्द्र और प्रथम अदीप्ति के बीच की दूरी के बराबर होती है जबकि पानी की बूँद वाले कान्तिचक्र मे आभामण्डल की त्रिज्या क्रमागत कोटियो की चौड़ाई से २० प्रतिशत अधिक बड़ी होती है। फिर बर्फ की सूचियों के लिए क्रमागत कोटियों की प्रकाशतीव्रता पानी की बूँदो वाले कान्तिचक्र की तुलना मे अधिक धीरे-धीरे घटती है। किन्तु इन अन्तरों का प्रेक्षण कर सकना सरल नही है। सर्वोत्तम नापजोख कभी तो कान्तिचक्रों के निर्माण की पहली विधि को इङ्गित करती है तो कभी दूसरी विधि को, किन्तु दोनो ही दशाओं मे, बादलों की किस्म के विचार से जैसी आशा की जानी चाहिए उसीके अनुकूल वे पाये जाते है। वायुयानों द्वारा सीधे ही प्राप्त किये गये प्रेक्षणों से ज्ञात होता है कि इनमे ४५ प्रतिशत दशाओ मे कान्तिचक्र का निर्माण पानी की नन्हीं बूँदों से होता है और ५५ प्रतिशत बर्फ-सूचियों से।[2]

भौतिकज्ञ के लिए, एक सुन्दर कान्तिचक्र की उपस्थिति बादलों मे केवल पानी की बूँदों अथवा बर्फ-सूचियो की अत्यधिक समानता की ही द्योतक नहीं है। इसे देखकर

1. Dark Minima 2. Visser. Proc. Acad. Amsterdam 52, 1943

वह इस निष्कर्ष पर भी पहुँचता है कि संभवतः बादल का निर्माण अभी हाल में ही हुआ है--मानो यह एक 'अल्पवयस्क बादल' है। क्योंकि बूँदों के समूह की निरन्तर प्रवृत्ति असमान आकार धारण कर लेने की होती है; जो बूंदे तनिक छोटे आकार की होती हैं वे सबसे अधिक तेजी के साथ वाष्प बन जाती हैं जबकि बड़े आकार की बूंदें नन्हीं बूंदों को मानों हड़प करके अपना आकार अत्यन्त शीघ्रता के साथ बढ़ा लेती हैं।

जब अलका-पुञ्ज या उच्च-पुञ्ज (रुई के गाले सदृश) बादल चन्द्रमा के सामने से गुजरते हैं तो कभी-कभी बहुत अच्छी तरह हम यह देख सकते हैं कि हर बार जब कोई नया बादल चन्द्रमा की ओर सरकता है तो किस प्रकार एक असममित कान्तिचक्र हाशिये की ओर फैला हुआ बनता है (चित्र १३३)। स्पष्ट है कि इन बादलो मे बाहरी हिस्से की बूंदें भीतरी हिस्सों की बूंदों की अपेक्षा छोटे आकार की हैं। वास्तव में यह बिलकुल साफ़ जाहिर है कि इन बाहरी हिस्सों की बूंदों का वाष्पीकरण आरम्भ हो चुका होता है।



चित्र १३३—एक छोटे आकार के बादल के हाशिये के निकट असममित कान्तिचक्र (कोरोना)।

यद्यपि ये सभी कान्तिचक्र जिनका अभीतक वर्णन किया गया है, बादलों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु ऐसा भी होता है कि छोटे आकार के, किन्तु मनमोहक रंगों से विभूषित कान्तिचक्र पूर्णतः निरभ्र नीले आकाश मे देखे गये हैं। शिकागो के निकट यर्केज वेधशाला पर एक ग्रीष्मऋतु मे मैंने सूर्य के गिर्द कान्तिचक्र का बार-बार अवलोकन किया। चन्द्रमा के गिर्द भी ये देखे गये हैं—किन्तु सावधान रहिए कि आँख में होनेवाली विवर्त्तन-घटना से आप धोखा न खा जायँ (§ १६३)! ऐसा प्रतीत होता है कि वायुमण्डल की शान्त अवस्थाओं, और विशेषतया उत्क्रमण[1] के दौरान में, वायु में मौजूद धूलिकण अत्यन्त धीरे-धीरे नीचे को तिरते रहते हैं; अतः जो कण वायु मे उतराते रह जाते हैं उनके आकार में कुछ अधिक अन्तर नहीं होता और वे कान्तिचक्र का निर्माण कराते हैं।[2]

1. Inversion
2. Penndorf and Strank Zeitschr angew Meteor. 60, 233, 1943

१६२. खिड़की के काँच पर कान्तिचक्र

जाड़े की ऋतु मे यदि हम भलीभाँति प्रकाशित जलपानगृह के बगल से जाते हुए गुजरे तो हम प्राय. देख सकते है कि लैम्प रंगीन वृत्तों से परिवेष्टित होते है जो खिड़की पर मौजूद नमी के कारण उत्पन्न होते है। खिड़की के काँच के कुछ भागों पर ये वृत्त, अन्य भागों की अपेक्षा बड़े आकार के दीखते है। प्रायः हम केवल 'आभामण्डल' देख पाते है,किन्तु कभी-कभी रगीन वृत्त आश्चर्य्यजनक रूप से सुन्दर दीखते है; ऐसा लगता है कि कुछ खास किस्म के काँच अन्य काँच की अपेक्षा सदैव ही अधिक अच्छे कान्तिचक्र प्रदर्शित करते है। इस घटना की व्याख्या इस प्रकार है—खिड़की के काँच पर मौजूद पानी की नन्हीं बूँदों द्वारा प्रकाश के विवर्त्तन के कारण ये कान्तिचक्र बनते है, और इन बूँदो के आकार मे जितनी अधिक समानता होगी, कान्तिचक्र उतने ही अधिक मनोहर बनेगे। यह असम्भाव्य नहीं कि कुछ खास किस्म के काँच पर बूँदे अन्य किस्म के काँच की अपेक्षा अधिक समरूप से घनीभूत होती हैं।

ये कान्तिचक्र बादलों के कान्तिचक्र के साथ प्रबल सादृश्य रखते हैं, किन्तु इनके निर्माण की विधि भी तो एक-सी ही है। एक दशा मे विवर्त्तन करनेवाली बूँदें काँच पर स्थित होती है और दूसरी दशा मे वे वायु मे ऊँचाई पर बादलो के जर्रों के रूप में उतराती रहती है। फिर भी खिड़की के काँच पर बने कान्तिचक्र तथा हवा मे बनने वाले कान्तिचक्र मे अन्तर है; वह यह कि प्रथम दशा मे प्रकाश-स्रोत एक प्रदीप्त आभामण्डल की जगह अन्धकारमय क्षेत्र से परिवेष्टित होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी उत्पत्ति बूँदों की सममित सजावट के कारण होती है जो एक दूसरे से समान दूरी पर बनती है, जबकि बादल मे बूँदों का वितरण अनियमित होता है।[1] अतः खिड़की के काँच पर कान्तिचक्र के निर्माण की क्रिया अपेक्षाकृत अधिक जटिल है। भीतर वाले एक या दो वृत्त पृथक्-पृथक् नन्ही बूंदो द्वारा होनेवाले व्यतिकरण से उत्पन्न होते है, जो प्रकाश के अनुकूल[2] स्रोत सरीखे काम करते है और ये एक दूसरे से लगभग बराबर दूरी पर स्थित होते है; किन्तु बाहरी वृत्तो का निर्माण प्रत्येक अलग-अलग बूँदों द्वारा होता है और इनकी त्रिज्या इन बूँदों के करीब-करीब समान आकार द्वारा निर्धारित होती है।

1. Donle, Ann. d. Phys. **34**, 814, 1888. K. Exner, Sitzungsber, Akad. Wien **76**, 522, 1877; **98**, 1130, 1889
Prins. Hemel en Dampkring **38** 244, 1940—Reesinckand devries Physica J. 603, 1940 2. Coherent

यदि हम खिड़की में से तिरछी दिशा की ओर देखें, तो हम देख सकते हैं कि कान्ति-चक्र की शक्ल पहले दीर्घवृत्तीय हो जाती है, फिर परिवलय आकृति की, यहाँ तक कि अन्त मे वह अति परिवलय की शक्ल की भी हो जाती है। यदि परिस्थितियाँ वैसी ही होती जैसी ओस-धनुष की दशा मे, तब इससे हम यह समझते कि 'खिड़की के काँच पर चित्रित होनेवाले कान्तिचक्र दीर्घवृत्तीय आदि होते हैं,किन्तु मेरी आँखों से देखे जाने पर वे आँख और लैम्प को मिलाने वाली अक्ष-रेखा के गिर्द पूर्णतया शंकु आकार की सतह पर स्थित होते हैं और वे वृत्त के रूप मे प्रक्षेपित होते हैं। किन्तु यहाँ परिस्थितियाँ भिन्न हैं। प्रक्षेपित होने की दशा मे कान्तिचक्र वास्तव में दीर्घवृत्तीय हो गये हैं; वे क्षैतिज दिशा मे और भी अधिक फैल गये हैं, स्पष्टतः इसका कारण यह है कि उस दिशा में देखे जाने पर प्रत्येक बूँद सामने की ओर पिचक जाती है, अर्थात् दीर्घवृत्तीय हो जाती है। साथ ही साथ इससे यह भी सिद्ध होता है कि विवर्त्तन करने वाले जर्रे गोलीय नही हैं बल्कि ये अर्द्धगोलीय अथवा गोलीय-खण्ड हैं, क्योंकि उस दिशा में जिधर की ओर बूँदों का प्रक्षेपण सबसे अधिक छोटा पड़ता है, कान्तिचक्र सबसे अधिक चौड़े होंगे।

धुँधले काँच की खिड़कियों पर सूर्य के प्रतिबिम्ब के गिर्द भी कान्तिचक्र देखे जा सकते हैं; ठीक बात तो यह है कि यह घटना आकाश में नहीं देखी जा सकती; किन्तु वास्तविक कान्तिचक्र से यह केवल थोड़ी ही भिन्न है।

काँच के एक छोटे से टुकड़े पर लाइकोपोडियम चूर्ण की एक बारीक तह छिड़किए (यह एक चूर्ण है जिसका उपयोग औषधिविक्रेता दवा की गोलियों पर छिड़कने के लिए करते हैं।)। कम-से-कम १० गज़ की दूरी पर रखे विद्युत् लैम्प को इस काँच मे से देखिए। आप इसे शानदार कान्तिचक्र से परिवेष्टित देखेंगे। अकेला यही चूर्ण इस घटना को उत्पन्न कर सकता है क्योंकि लाइकोपोडियम के जर्रे सबके सब करीब-करीब एक ही आकार के होने के कारण समान रूप से आचरण करते हैं जबकि अनियमित आकार के पदार्थ से उत्पन्न होनेवाले छोटे, बड़े, कान्तिचक्र एक दूसरे से मिलकर अस्पष्ट बन जाते हैं। यदि काँच को आप तिरछे रखें तो कान्तिचक्र के प्रक्षेपण में कोई परिवर्त्तन नहीं होता और इस लिहाज़ से खिड़की के धुँधले काँच से बननेवाले कान्तिचक्र से ये भिन्न होते हैं। प्रकाश-स्रोत के गिर्द का क्षेत्र, इस दशा में, प्रदीप्त होता है, अन्धकारमय नहीं; लाइकोपोडियम चूर्ण के जर्रों के दर्मियान की अनियमित दूरियों से ऐसी ही आशा भी की जाती है।

यदि खिड़की के काँच पर एक या दो फुट की दूरी से आप अपनी श्वास छोड़ें और तब इस तरह बननेवाले कान्तिचक्र की परीक्षा करें और उन्हें नापें तो आप देखेंगे कि

घनीभूत आर्द्रता ज्यो-ज्यो वाष्प बनती जाती है त्यों-त्यों कान्तिचक्रों का आकार बढ़ता नही है; इससे यह प्रदर्शित होता है कि बूँदे कम उत्तल हो जाती है किन्तु उनकी परिधि मे कमी नही होती।

खिड़की के काँच पर प्राय: ऐसे कान्तिचक्र देखे जाते है जिनमे रंगों का क्रम नितान्त असामान्य होता है। प्रकाश-स्रोत की ओर से आरम्भ करे, तो क्रम इस प्रकार मिलते है, मन्द दीप्ति–पीतहरा–लाल–पीला–हरा–गाढ़ा नीललोहित–बादामी–श्वेत। ऐसा उस वक्त होता है जब बूँदे कुछ थोडी बड़ी ही रहती है; इस दशा मे वे अपारदर्शी मंडलक सरीखा आचरण नही करती, बल्कि उनमे से गुजरने वाली किरणे भी व्यतिकरण नमूने के निर्माण मे भाग लेती है। अवश्य, इस प्रकार के कान्तिचक्र परावर्त्तित प्रकाश मे नही दिखाई देते।

न्यून ताप पर ऐसी काँच की खिड़कियों पर जिसपर पाला जम गया होता है, कभी-कभी हम लगभग ८° त्रिज्या का कान्तिचक्र देखते है···जो सम्भवत: एक प्रभामण्डल है! क्योकि इसका भीतरी हाशिया लाल रग का होता है और बाहरी नीले रग का। प्रगटत: बर्फ के क्रिस्टल नन्हें प्रिज्म सरीखे काम करते है जैसा § १३५ मे, किन्तु इस दशा मे वर्त्तनकोर का कोण छोटा होता है।

जाड़े के दिनों मे स्वयं अपनी श्वास से हवा मे बनने वाले कान्तिचक्र का अवलोकन करिए; इस बादामी हाशिये की त्रिज्या ७° से लेकर ९° तक होती है। सूर्य-रश्मियों की पतली शलाका मे आभामण्डल (आरिएल) के गिर्द उसे परिवेष्टित करनेवाले प्रथम रगीन वृत्त को भी आप देखने मे समर्थ हो सकते है।

प्याले की गर्म चाय के ऊपर भी आश्चर्यजनक कान्तिचक्र देखे जा सकते है। चाय का ताप ४०°–६५° सेण्टीग्रेड अवश्य होना चाहिए; सूर्य कम ही ऊँचाई पर रहना चाहिए, ताकि द्रव के ऊपर के नन्हे वाष्पबादल सूर्यप्रकाश की आपाती दिशा से तनिक तिरछी ओर से देखे जा सके। कुछ फासले से वाष्प की प्रत्यक फुत्कार विलक्षण रंग प्रदर्शित करती है, विशेषतया नीललोहित या हरा रंग। कभी-कभी यह अधिक सुविधाजनक होता है कि आँख वाष्प के निकट रखी जाय ताकि रगों का सभ्रम न उत्पन्न होने पाये।

लाइकोपोडियम चूर्ण से बने कान्तिचक्र की त्रिज्या नापिए और तब इसके जरों की लम्बाई-चौड़ाई हिसाब लगाकर मालूम करिए और फिर सूक्ष्मदर्शी की सहायता से अपने परिणाम की जाँच कीजिए।

१६३. प्रकाश का कान्तिचक्र जो आँख में ही उत्पन्न होता है[1]

रात को आर्कलैम्प तथा अन्य चमकीले प्रकाश-स्रोतों के गिर्द मैं हलके प्रकाश का वृत्त देख सकता हूँ जो अन्धेरी, काली पृष्ठभूमि पर प्रबल विपर्यास प्रदर्शित करता है, और यदि आसमान साफ हुआ तो चन्द्रमा के गिर्द भी यह वृत्त दीखता है, तथा चकाचौध के प्रकाश वाले सूर्य के गिर्द भी, जबकि पेड़ों के झुरमुट में से यह झाँकता है। इस प्रकाश-वृत्त का व्यास लगभग ६° होता है। भीतर की ओर यह नीले रंग का और बाहर की ओर लाल रग का होता है अतः इसकी उत्पत्ति का कारण विवर्त्तन होगा, न कि वर्त्तन। वादलों में वनने वाले कान्तिचक्र के साथ इसका प्रबल सादृश्य जान पड़ता है, किन्तु इनके बीच निश्चय ही अन्तर है। यदि मैं ऐसी जगह खडा होता हूँ जहाँ से चन्द्रमा मकान के कोने के पीछे छिप भर जाता है, तो 'बादल वाला कान्तिचक्र' अब भी दिखलाई देता रहता है, जबकि 'आँख में बनने वाला कान्तिचक्र' प्रकाश-स्रोत को ओट मे लेते ही, पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि इस कान्तिचक्र का स्वय **आँख में** ही निर्माण होता है (एन्टोप्टिक)।[2]

क्या ये आँख मे मौजूद नन्ही कणिकाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं जो प्रकाश का विवर्तन उसी प्रकार करते हैं जिस प्रकार लाइकोपोडियम चूर्ण या बादलों मे मौजूद पानी की बूँदे करती हैं? कुछ प्रेक्षको के लिए तो दरअसल बात ऐसी ही है।

किन्तु अनेक प्रेक्षकों को अपेक्षाकृत छोटे कान्तिचक्र दिखलाई पड़ते हैं जिनके प्रथम दीप्त वृत्त की त्रिज्या केवल १.५° होती है। ये कोर्निया के कोशों के, तथा लेन्स को आच्छादित करनेवाली झिल्ली के नाभि-कणोंद्वारा होनेवाले विवर्त्तन द्वारा उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक पृथक नाभिकण से उत्पन्न होनेवाला विवर्त्तन विशेष महत्त्व नहीं रखता, वल्कि खास महत्त्व तो इन तमाम नाभिकणों के परस्पर सहयोग का है; ये नाभिकण एक दूसरे से करीब-करीब समान दूरी (लगभग ०.०३ मिलीमीटर) पर स्थित होते हैं। अन्य प्रेक्षक थोड़े कुछ बड़े आकार के कान्तिचक्र का विवरण देते हैं जो अधिक प्रबल तथा स्पष्ट हो जाते हैं बशर्त्ते (सावधानी के साथ) आँख को आस्मिक[3] अम्ल की वाष्प से स्पर्श कराएँ। इन परिस्थितियों में कोर्निया के कोष नन्ही-नन्ही ढेरियों के रूप मे उभर आते हैं जो आकार मे पर्य्याप्त मात्रा मे एक समान होते हैं ताकि विवर्तन द्वारा वे कान्तिचक्र का निर्माण कर सके। इस तरह के एक कान्तिचक्र के लिए एक प्रेक्षक

1. A Gullstrand in Helmholtz, Physiologische Optik, 3rd edi
2. Entoptic 3. Osmic acid

ने निम्नलिखित नाप दिये है : आभामण्डल (आरिएल) के लाल हाशिये की त्रिज्या= १° २३'; नीले-हरे वृत्त की, ३° ४६'; तथा लाल वृत्त की, ४° २२' होती है।

आँख मे बनने वाले (एन्टोप्टिक) कान्तिचक्र की एक तीसरी किस्म वह है जिसे मै स्वयं देखता हूँ और यही किस्म सर्वाधिक दृष्टिसुलभ है। कभी-कभी लगातार हफ्तों तक इस कान्तिचक्र के कुछ विशेष **वृत्तखण्ड** असाधारण रूप से स्पष्ट दीखते रहते है; इससे साबित होता है कि बादलों वाले कान्तिचक्र से बिल्कुल भिन्न व्याख्या इसके लिए देनी होगी क्योकि यह समझ पाना कठिन है कि नन्हे कणो से विवर्त्तन द्वारा यह घटना कैसे उत्पन्न हो सकती है। कागज का एक टुकड़ा लीजिए जिसमे २ मिलीमीटर व्यास का एक सूराख बना हो, और इसे आँख की पुतली के सामने पहले ठीक बीचोबीच केन्द्र पर रखिए और तब धीरे-धीरे इसे पुतली के हाशियों की ओर खिसकाते जाइए, यहाँ तक कि अन्तमे कान्तिचक्र के केवल दो खण्ड ही बच जायँ अर्थात् प्रकाशस्रोत के बायें के तथा उसके दाहिने के खण्ड; अवश्य कागज के सूराख को पुतली के निचले भाग के सामने रखना होगा। यदि सूराख को पुतली के दाहिनी या बायी ओर रखे तो कान्तिचक्र के वे ही भाग पुतली के नीचे तथा ऊपर दिखलाई दे सकते है। इससे हम यह निष्कर्ष प्राप्त करते है कि विचाराधीन कान्तिचक्र सम्भवतः नेत्र के क्रिस्टलीय लेन्स के त्रिज्यीय शिराओं द्वारा होने वाले विवर्त्तन के कारण उत्पन्न होते है, क्योंकि इस व्याख्या से प्रयोग की सभी बातों का समाधान हो जाता है। नेत्र मे बननेवाले कान्तिचक्र की प्रथम दो किस्म के कान्तिचक्रों के मुकाबले में इस तीसरे किस्म की पहचान करने के लिए, छिद्र का उपयोग एक विश्वसनीय तरीका है। क्योंकि यदि विवर्त्तन के लिए केन्द्र का काम शिराएँ न करतीं, बल्कि कण करते, तब उस दशा मे पुतली के सामने ओट देने से कान्तिचक्र केवल धूमिल पड़ जाते और सो भी परिधि के सम्पूर्ण भाग पर प्रदीप्ति समान रूप से घट जाती।

कुछ ऐसे अवसर आते है जब मेरे लिए कान्तिचक्र करीब-करीब अदृश्य-सा बन जाता है सिवाय उस दशा मे जबकि मै ऊपर की ओर या बगल की ओर दृष्टि फिराता हूँ या जबकि मै अत्यन्त थका हुआ होता हूँ। **अन्य अवसरों पर मै इसे लगातार देख सकता हूँ।**

इस तरह की अनुभूतियाँ इस बात का अधिक यथार्थता के साथ निर्णय करने में हमारी सहायता करती है कि आँख के किस भाग मे कान्तिचक्र का निर्माण होता है। रात्रि में ज्यों ही मै सड़क के लैम्प पर दृष्टि डालता हूँ त्यों ही कान्तिचक्र दृष्टिगोचर होता है किन्तु कुछ ही सेकण्डों मे यह विलुप्त हो जाता है। मैने देखा है कि इस घटना

का सम्बन्ध आँख की पुतली के सिकुड़ने से है जबकि अन्धेरे के प्रति समानुयोजित हो चुकने बाद अचानक आँख को तेज प्रकाश का सामना करना पड़ता है। यही कारण है कि अर्द्धरात्रि मे जागने के उपरान्त अचानक जब हम जलती हुई मोमबत्ती या लैम्प पर दृष्टि डालते हैं तो हमे इसके गिर्द चमकीला कान्तिचक्र दिखलाई पड़ता है।[1] ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवतः कान्तिचक्र का निर्माण क्रिस्टलीय लेन्स के एकदम बाहरी हाशिये पर होना है और इसीलिए जब पुतली सिकुड़ती है तो कान्तिचक्र तुरन्त विलुप्त हो जाता है।

आँख की शिराओं या कणों द्वारा उत्पन्न होनेवाली इन विवर्त्तन घटनाओं के लिए विवर्त्तन कोण, तथा विवर्त्तन उत्पन्न करनेवाले कणों के आकार के पारस्परिक सम्बन्ध सामान्य के मुकाबले में अधिक जटिल होते हैं।

आँख मे बनने वाले कान्तिचक्र की परीक्षा और नापजोख सोडियम लैम्प के प्रकाश मे करिए जो सड़को के किनारे अक्सर लगे रहते हैं।

१६४. हरा तथा नीला सूर्य[2]

एक प्रेक्षक का कहना है कि इंजिन की चिमनी से निकलनेवाली भाप में से होकर उसकी दृष्टि जब सूर्य पर पड़ी तो भाप के तीन फुआरों तक सूर्य चटकीले हरे रंग का प्रतीत हुआ यद्यपि बाद की फुआरों का कोई विशेष असर उस पर नहीं पड़ा। एक स्थानीय रेलगाड़ी के रवाना होते समय मैंने भी इसी तरह का प्रभाव देखा था। यह इंजिन (जो काफी पुरानी चाल का था) भाप के बादल छोड़ता था जो बार-बार ऊपर उठकर आकाश की अल्प ऊँचाई पर स्थित सूर्य के प्रकाश को एक क्षण के लिए मन्द बना देते थे। इस तरह का एक बादल जब धीरे-धीरे हलका पड़कर विलुप्त हुआ तो एक क्षण ऐसा भी आया कि सूर्य पुनः दिखलाई दे सका; इसका रंग कभी हलका हरा, कभी हलका नीला होता और कभी-कभी तो ऐसे हलके हरे रंग का [illegible] नीले रंग में परिणत हो जाता या फिर हलके नीले रंग से हलके हरे रंग में यह बदल जाता। एक सेकण्ड से कम समय के अन्दर प्रकाश इतना तेज़ हो गया तथा बादल का आवरण इतना झीना कि अब कुछ भी स्पष्ट नहीं दिखलाई दे सका।

1. Cf. a similar observation by Descartes in Goethe's Theory of Colours

2. Nat, **37**, 440, 1888, Quart. Journ. **61**, 177, 1935,

इस तरह घटनाएं उस वक्त घटती हैं जब कि भाप में मौजूद पानी की बूंदें अत्यन्त छोटे आकार की, 1 μ और 5 μ के दर्मियान की होती हैं। इस दशा मे प्रकाश पर वे किस प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती हैं इस बात की सही व्याख्या यह मानकर नहीं की जा सकती कि पानी की बूंदों की जगह नन्हे सूराख या अपारदर्शी मण्डलक ले जो प्रकाश का विवर्त्तन करते हों। बूंदों से विवर्त्तित होनेवाले प्रकाश, उसकी सतह से परावर्त्तित होनेवाले प्रकाश, तथा उसमे से गुजरकर सीधे आनेवाली रोशनी के सम्मिलित प्रभाव की जाँच करने पर इस घटना की क्रियाविधि मोटे तौर पर समझी जा सकती है।[1]

वाष्प की अनुपस्थिति मे भी सूर्य और चन्द्रमा के हरे, हलके नीले, तथा आसमानी नीले रंग बार-बार देखे गये हैं जो घण्टो तक वैसे ही बने रहे थे। ये रंग सर्वाधिक स्पष्ट क्राकातोआ के सुविख्यात ज्वालामुखी उद्गार (१८८३) के बाद के बरसो मे देखे गये थे।[2] हम जानते हैं कि उस वक्त ज्वालामुखी के अत्यन्त बारीक धूलिकणो की एक बृहत् राशि वायुमण्डल के उच्चतम स्तरों मे फिक गयी थी और इन धूलिकणों को नीचे आकर एकत्र होने में बरसों लगे थे तथा इस बीच संसार के एक विशाल क्षेत्र मे ये फैल गये थे और इस प्रकार सर्वत्र अत्यन्त शानदार सूर्योदय तथा सूर्यास्त के दृश्य इन्होंने उपस्थित किये थे। हम कल्पना कर सकते हैं कि किन्हीं दिनों धूल के इन बादलों मे सब एक ही आकार के नन्हे-नन्हे कण मौजूद रहे होंगे जो सूर्य के आश्चर्यजनक रंगों का समाधान कर सकते हैं। रेत के तूफ़ान में सूर्य का रंग नीला देखा गया है।

२६–२८ सितम्बर १९५१ के नीले वर्ण के सूर्य ने समस्त पश्चिमी तथा मध्य यूरोप मे विशेष उत्सुकता जगायी है।[3] चन्द्रमा भी, और यहाँ तक कि तारे भी, नीले रंग के हो गये थे। सूर्य का विकिरण मद्धिम पड़ गया था, क्षितिज के निकट सूर्य पीला नही, बल्कि आश्वेत था। शीघ्र ही यह दिखलाया जा सका कि इस घटना की उत्पत्ति तैलीय कणों के बृहत्काय बादलों के कारण हुई थी—ये कण ०.५ से बड़े न थे और कदाचित् इनमें कालिख के जर्रे भी मिले हुए थे जो कनाडा के एलबर्टा स्टेट के वनों की आग से निकलकर आकाश मे ऊँचे चढ़े थे। ये ५–७ किलोमीटर की ऊँचाई पर उतराते

1. R Meche, Ann. der Phys. **61**, 471, 1920; **62**, 623, 1920—Van de Hulst, Light Scattering (1957),

2. Kiessling Met, Zs, **1**,117, 1884, Nat, 1883,

3. W. Gelbke, Zeitschr, f, Meteor **5**, 82, 1951—P. Wellmann, Zeitschr, f, Astroph, 28, 310, 1951,

—Wilson, Monthly Not, R, Asir, Soc, 111, 478, 1951,

हुए ४ दिनों उपरान्त यूरोप पहुँच गये थे। वायुयान से देखने पर पता चला कि ये बादल १३ किलोमीटर तक की ऊँचाई पर भी पहुँचे थे।

इसी किस्म की घटनाओ मे हम एक असाधारण कान्तिचक्र को भी सम्मिलित कर सकते है जिसका प्रेक्षण एक बार कुहरे मे किया गया था'—एक चटकीले पीत-हरे वर्ण का आभामण्डल (आरिएल) लाल रग के एक चौड़े वृत्त से परिवेशित था जो स्वयं भी नीले वृत्त से घिरा था तथा उसमे हरे वृत्त भी मौजूद थे। निश्चय ही इसका समाधान कुहरे मे स्थित बूँदों के क्षुद्र आकार द्वारा किया जा सकता है।

इन घटनाओं की दुर्लभता जनसाधारण मे प्रचलित इस वाक्यांश मे परिलक्षित होती है कि "एक बार जबकि चन्द्रमा नीला था।"

१६५. प्रकाशमण्डल[2] (प्लेट I, मुखपृष्ठ)

यदि हम किसी पहाड़ी की चोटी पर उस वक्त मौजूद हों जबकि सूर्य आकाश में नीचे ही स्थित हो तो कभी-कभी हम स्वय अपनी ही छाया कुहरे की सतह पर पड़ती हुई देखते है; इस दशा मे छाया का सिर एक प्रकाशमण्डल से परिवेष्टित पाया जायगा जिसमे वे ही चटकीले रंग पाये जाते है जो सूर्य और चन्द्रमा के गिर्द बननेवाले कान्तिचक्र में दीखते है। एक अवसर पर इस तरह का एक प्रकाशमण्डल देखा गया था जिसके गिर्द पाँच वृत्त मौजूद थे। किन्तु यह स्मरण रखिए कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपनी छाया तथा आसपास के अन्य व्यक्तियों की भी छाया देख पाता है बशर्ते ये लोग उसके काफी नजदीक हों तथा कुहरा काफ़ी फासले पर हो; किन्तु **प्रकाशमण्डल तो केवल अपनी ही छाया के सिर के गिर्द देखा जा सकता है !** अत्यन्त विशिष्ट परि-स्थितियों में सड़क के लैम्प की रोशनी प्रकाशमण्डल उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त सिद्ध हुई थी, किन्तु इसके लिए पृष्ठभूमि को अत्यन्त गहरे मटमैले रंग का होना जरूरी था।

बादलों की हमवार तह के ऊपर वायुयान में उड़ते समय करीब-करीब सदैव ही वायुयान की छाया को रंगीन वृत्तों से परिवेष्टित देखा जा सकता है (चित्र १३३ क)। ये वृत्त बादल मे स्थित जलबूंदों के आकार के अनुसार ही छोटे या बड़े होते हैं। प्रकाश-मण्डल के लिहाज़ से वायुयान की छाया की स्थिति को देखकर प्रेक्षक तुरन्त जान सकता है कि वह वायुयान के सिरे के निकट है या उसकी पूंछ के निकट; क्योंकि प्रकाशमण्डल

1. H. Kohler, Met. Zs. **46**, 164, 1929
2. The Glory

का केन्द्र ठीक सूर्य-नेत्र रेखा पर पड़ता है। अक्सर प्रकाशमण्डल अपेक्षाकृत बहुत बड़े कुहरा-धनुष से घिरा होता है जो करीब-करीब सफ़ेद रग का होता है (§ १२८)।



चित्र १३३ क—**बादलों पर वायुयान की छाया के गिर्द प्रकाशमंडल।**

कुछ काल तक तो इसका समाधान अनिश्चित-सा ही रहा। कान्तिचक्र से तुलना करने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि जलबूँदों का बादल सूर्य के प्रकाश को किसी-न-किसी प्रकार पीछे की ओर परिक्षेपित करता है और तब ये वापस आने वाली किरणे अन्य बूँदों द्वारा विवर्त्तित हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे कान्तिचक्र मे सूर्य से सीधे ही आनेवाली किरणों का विवर्त्तन होता है। किन्तु अब यह प्रमाणित हो चुका है कि पीछे की ओर होनेवाले परिक्षेपण के फलस्वरूप ही प्रकाश-मण्डल का निर्माण हो जाता है[1]।

प्रकाशमण्डल की त्रिज्या प्रायः बदलती रहती है; स्पष्ट है कि कुहरे के कुछ हिस्सों मे बूँदें अन्य भागों की अपेक्षा बड़े आकार की होती होंगी। कुहरा जब अभी-अभी बना हो तो प्रकाशमण्डल का आकार बहुत बड़ा होता है और इसमे मौजूद पानी की बूँदों का आकार, गणना के अनुसार ६μ से अधिक नहीं होता। प्रकाशमण्डल अक्सर कुहरा-धनुष द्वारा परिवेष्टित होता है, और यदि आँख से कुहरे की दूरी ५० गज़ से अधिक हो तब तो सदैव ही यह कुहराधनुष दिखलाई पड़ता है। यह विलक्षण बात है कि कुहरा-धनुष प्रकाशमण्डल की तुलना मे हमसे बहुत अधिक दूर मालूम पड़ता है—अवश्य ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रभाव के कारण ही प्रतीत होता है।

इन दोनों घटनाओ का एक साथ उत्पन्न होना विश्वसनीय तरीके पर यह प्रगट करता है कि प्रकाशमण्डल का निर्माण पानी की नन्हीं बूँदों के कारण होता है, बर्फ के क्रिस्टलो के कारण नही (स्मरण रखिए कि कान्तिचक्र का निर्माण दोनों ही कारणों से हो सकता है!)। यह दिलचस्प बात है कि इन दशाओं में तापक्रम शून्य से कुछ डिग्री कम ही था, फलस्वरूप ये बूँदे बहुत कम शीतलीकृत[2] अवस्था में थी। केवल अपवादस्वरूप ही बर्फ के बादलो से बने हुए प्रकाशमण्डल देखे जा सके है।

1. B. Ray Proc Ind. Assoc. 8, 23, 1923—Van de Hulst, Journ. Opt. Soc. Amer. **37**, 16, 1947 and Light Scattering (1957)—Naik and Noshi, Journ. Opt. Soc. Amer, **45**, 733, 1954, 2. Under-cooled

और उस दशा में ये प्रकाश के चमकीले श्वेत धब्बे सरीखे दिखाई पड़ते है जो ऊपर अभी बतायी गयी घटना से पूर्णतया भिन्न होते हैं।

यद्यपि प्रथम दृष्टि में प्रकाशमण्डल कान्तिचक्र के मानिन्द जान पड़ता है, फिर भी कतिपय लाक्षणिक अन्तर देखे जा सकते है। प्रथम अदीप्तवृत्त कुछ-कुछ अधिक धुँधला होता है, और इसकी त्रिज्या अपेक्षाकृत छोटी होती है; बाहरी वृत्त अपेक्षाकृत अधिक चटकीले होते है। किन्तु सबसे प्रमुख विशेषता है इसका **प्रबल ध्रुवण**; वायुयान की करीब-करीब प्रत्येक उड़ान के अवसर पर एक साधारण पोलरायड की मदद से इसका प्रेक्षण किया जा सकता है—हम देखते है कि त्रिज्यीय कम्पन प्रमुखता प्राप्त किये होते हैं। यह प्रेक्षण थियरी से प्राप्त निष्कर्ष की आश्चर्य्यजनक रूप से सम्पुष्टि करता है।

ऐसी ही है तू, जैसे कि जब,

वह लकड़हारा पश्चिमवर्त्ती मुड़ता हुआ हरी घाटी के ऊपर
शिशिर उषा मे, जहाँ मेषमर्दित लीकों की भूलभुलैयों पर
दृश्यहीन हिमकुहर एक जगर-मगर धुध के ताने-बाने बुनता है,
निहारता है पूर्ण अपने सम्मुख, पगचापहीन सरकती हुई,
एक विम्ब छवि को जिसका शीश है आभा परिवेष्टित;
विमुग्ध ग्रामीण इसके शुभ्रवर्णों की पूजा करता है,

और जानता नहीं कि जिसका वह अनुगमन करता है, वह छाया उसीसे रचितहै।

—एस. टी. कोलरिज ('एक भाव-वस्तु के प्रति स्थिरता' से)।

१६६. उद्दीप्त बादल (प्लेट X)

उन लोगों को जो आकाश का अध्ययन करने के अभ्यस्त नही हैं, यह जानकर आश्चर्य्य होगा कि बादल प्रायः अत्यन्त शानदार और विशुद्ध रंगों का प्रदर्शन कर सकते है जैसे हरा, बैंगनी-लाल, नीला...। सन्ध्या या उषा काल की घटनाओ से इन रंगों का कोई भी सम्बन्ध नही है क्योंकि आकाश में सूर्य चाहे ऊंचाई पर स्थित हो या नीचे हो, दोनों ही दशाओं मे ये रंग प्रगट होते हैं। बादलों पर ये अनियमित रूप से रंगीन हाशिये, धब्बों और धारियों की शक्ल में वितरित रहते हैं। कुछ प्रेक्षको का दावा है कि इन रंगों में धातु जैसी चमक होती है—इस कथन से उनका अभिप्राय क्या है? ऐसे मनोहर बादलों को देखकर परम आह्लाद की अनुभूति होती है जिसका वर्णन करना कठिन है, किन्तु यह निश्चय ही बहुत कुछ हद तक रंगों की विशुद्धता,

उनके मृदु सम्मिश्रण तथा उनके विकीर्ण प्रकाश के कारण उत्पन्न होती है। इस अनुपम दृश्य से हम अपनी आँखे हटा नहीं पाते।

इस तरह के **उद्दीप्त बादल** वर्ष के हर मौसम मे प्रगट होते है, किन्तु शरद ऋतु में विशेष रूप से। ये सूर्य के निकट प्रगट होते हैं, और सूर्य से २° की दूरी के अन्दर ये अधिकांश चकाचौध उत्पन्न करनेवाले धवल प्रकाश के होते हैं। यदि गहरे रंग का काँच काम मे लायें तो ये सर्वाधिक बहुतायत से ३° से १०° की दूरी तक देखे जाते है और केवल कोरी आँखों से ये १०° से २०° की दूरी तक देखे जा सकते है; नीललोहित तथा लाल रग ही सबसे अधिक बहुलता से प्रगट होते हैं जो दूरी बढ़ने के साथ फीके पड़ते जाते है। कुछ इक्के-दुक्के प्रेक्षकों ने और भी अधिक दूरी पर (५०° की दूरी तक) उद्दीप्त बादल देखे है, यहाँ तक कि प्रति-सूर्य के बिन्दु के आसपास भी (ब्रुक्स)[1]। इनके प्रकाश की तीव्रता प्रायः इतनी प्रचण्ड होती है कि अनेक प्रेक्षकों के लिए यह असह्य सिद्ध होती है। इनके प्रेक्षण के लिए सदैव किसी मकान या पेड़ के साये मे खड़े होना चाहिए या फिर आँख की रक्षा के लिए § १६० मे बतायी गयी कोई विधि काम मे लानी चाहिए।

आँखों की सुरक्षा के किसी साधन का सहारा लिये बिना ही उद्दीप्त बादलों की ओर देर तक देखते रहने के बाद मैंने अक्सर यह पाया कि नील-लोहित और लाल रंग मेरी आँखों के सामने नाचते रहे थे—ये वे ही रंग है जो प्रकाश की इन सभी प्रचण्ड अनुभूतियों के उत्तर-प्रतिबिम्ब स्वरूप रह जाते हैं (§ ९०)। और, जैसा कि तथ्य है, ये ही उद्दीप्त बादलों के सर्वाधिक प्रमुख रंग है। अतः एक तरह से आश्चर्यचकित होकर मैंने सोचा कि कही ऐसा तो नही है कि यह समूची घटना आँखों की श्रान्ति का नतीजा हो। किन्तु निश्चय ही ऐसी बात है नहीं, क्योंकि दो विभिन्न प्रेक्षकों को एक से ही रंग दिखाई देते है, और ऊपर बताये गये किसी भी तरीके से प्रकाश के मार्ग मे व्यवधान उपस्थित करने पर भी ये रग दिखाई देते रह जाते है, और अन्त में अपेक्षाकृत हलकी चमक के बादलो मे भी उद्दीपन प्रायः दिखलाई पड़ता है।

यदि आकाश मे बादल के टुकड़े यत्र-तत्र बिखरे हों तो बादलो मे रंग की झलक करीब-करीब सदैव ही देखी जा सकती है। पुञ्ज-मेघ[2], पुञ्ज-जलद[3], तथा पुञ्जस्तारीय बादलों मे रंगीन हाशिये दीखते है, किन्तु इन पर हम कम अवसरों पर ही ध्यान दे पाते है क्योकि इर्द-गिर्द प्रकाश की चमक इतनी अधिक होती है। यदि काले काँच के बने

1. Brooks loc, cit. 2. Cumuli. 3. Cumulonimli

दर्पण या इसी तरह के अन्य किसी उपकरण में देखें तो ये मनोरम रंगों का प्रदर्शन करते हैं। उदाहरण के लिए किसी ऐसे पुञ्ज-मेघ का अवलोकन करिए जो अब विघटित ही होने वाला हो और सूर्य के सामने से गुजर रहा हो! तथापि अभी यह वास्तविक उद्दीपन नही है; इन बादलों के रगों का विचार कान्तिचक्र के भाग के रूप में करना चाहिए जो इतनी फीकी ज्योति के इसलिए होते हैं कि उनका निर्माण करने वाली बूँदों के आकार में बहुत अधिक विभिन्नता होती है।

वास्तविक उद्दीप्त बादल अलका-पुञ्ज तथा उच्च-पुञ्ज जाति के कुछ विशेष बादल होते हैं--खास तौर से ऐसे बादल जो तेज़ी के साथ तूफान के पूर्व या बाद अपना रूप परिवर्त्तन करते होते हैं (विशेषतया पुञ्ज-मेघ जो पार्श्वों में उभरे से रहते हैं)। रंगों का वितरण, धारियों, पहियों या 'आँखों' की शक्ल में होता है। प्रथम दृष्टि मे यह वितरण-क्रम अत्यन्त बेतरतीब जान पड़ता है, किन्तु कुछ देर उपरान्त एक तरह की क्रमबद्धता इनमे हम देख पाते हैं। प्रगटतः यह क्रम बादल की संरचना पर निर्भर करता है; कुछ धारियों का रग एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक-सा रहता है अथवा हाशिया नीललोहित–लाल रग का होता है।

उद्दीपन के रगों का समाधान अक्सर उन्हे कान्तिचक्र के टुकड़े मानकर किया गया है कि बादल के प्रत्येक भाग में तमाम बूँदों का आकार बहुत ही अधिक एक समान होता है, किन्तु एक भाग मे स्थित बूँदे दूसरे भाग की बूँदों से आकार मे भिन्न होती है। किन्तु इस दृष्टि-बिन्दु से यह समझ पाना कठिन होता है कि सूर्य से ३०° से अधिक ऊँचाई पर भी उद्दीपन कैसे दिखलाई दे पाते है--स्वयं अपने अनुभव से मैं जानता हूँ कि ऐसी घटना वास्तव में देखी गयी है। इन दशाओं के लिए हमें अत्यन्त क्षुद्र आकार (2μ) के कणों की या नन्हें परतदार पंख जैसे बर्फ़क्रिस्टलों की कल्पना करनी होगी जो एक प्रकार की विवर्त्तन-ग्रेटिंग[1] का निर्माण करते हैं--एक सर्वथा नवीन समाधान अभी हाल मे विश्वसनीय तर्क के साथ प्रस्तुत किया गया है।[2] उद्दीपन की अद्भुत, तेज चमक का समाधान इस बात को मान कर किया जा सकता है कि बादल बर्फ की नन्ही, पतली प्लेटों से बने होंगे।

नन्ही-नन्ही ऐसी प्लेटों के समुदाय पर विचार कीजिए जो वायु की धाराओं के कारण चक्कर कर रही है। इनका वर्त्तनांक n है तथा मोटाई p है। केवल एक विशेष स्थिति में ही ये सूर्य के प्रकाश को परावर्त्तित करके हमारी आँख में भेज सकेगी।

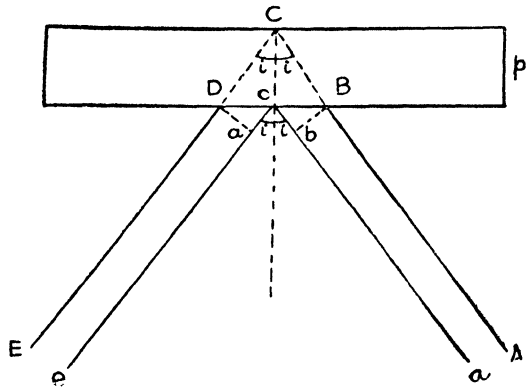
1. Diffraction grating 2. H. Dessens, Ann Geophys. 5, 264, 1949

किरणशलाका प्लेट के सामनेवाली सतह तथा पीछे वाली सतह दोनों से परावर्त्तित होती है अतः साबुन के बुलबुले की ही भाँति यहाँ भी व्यतिकरण की घटना उत्पन्न होगी। चित्र १३३ ख से सहज ही देखा जा सकता है कि दोनों किरणों के दर्मियान प्रकाशीय पथान्तर का मान=n BCD—bcd $= 2\left(\frac{np}{\cos r} - p \tan r \sin i\right)$

$$= \frac{2np}{\cos r}\left(1 - \frac{\sin i \sin r}{n}\right)$$

$$= \frac{2np}{\cos r}(1 - \sin^2 r)$$

$$= 2np \cos r$$



चित्र १३३ ख—**(ऊपर C के नीचे i i की जगह r r तथा बायीं तरफ D a की जगह D d समझिए)**

चूँकि अधिकतर उद्दीप्त बादल सूर्यके निकट देखे जाते हैं अतः कोण i का मान लगभग ७०°—८०° होता है और पथान्तर लगभग २p के बराबर। इस व्यतिकरण से उत्पन्न होने वाले रंग अधिक सपृक्त नही होते, प्रकाश्यतः इसका कारण यह है कि पथान्तर तरग दैर्ध्य के ४ या ५ गुने के बराबर होता है; अतः प्लेट की मोटाई अवश्य १ या २ माइक्रॉन (माइक्रान=.००० ४ से० मी०) के बराबर होगी। बादल पर रंगों का वितरण इन प्लेटों की मोटाई पर निर्भर करता है जो बादलके भिन्न भागो मे भिन्न होती है। उद्दीपन दुर्लभ अवसरों पर ही देखे जाते हैं अतःहम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्लेटो की मोटाई एकसम दुर्लभ अवसरों पर ही हो पातीहै। उद्दीप्त बादल वर्फ की क्रिस्टल-प्लेटों से बने होते हैं—इस बात की सम्पुष्टि उन अनेक

दृष्टान्तों से हो जाती है जब–५०° सेन्टीग्रेड ताप पर और ४—११ किलोमीटर की ऊँचाई वाले बादलों में ये उद्दीपन देखे गये हैं।

उद्दीप्त बादलों का प्रकाश **ध्रुवित नहीं होता।**

उद्दीप्त बादल चन्द्रमा के गिर्द भी देखे गये हैं यद्यपि उतनी बार नहीं जितनी बार सूर्य के गिर्द; फिर ये अपेक्षाकृत फीके रंगके होते है। स्पष्ट है कि इसका कारण उनकी अत्यन्त हलकी चमक है।

केवल अकेले एक बार आकाश में विज्ञापन लिखने वाले वायुयान से बने कृत्रिम बादल मे उद्दीपन देखा गया था।

१६७. मोती के सीप[1] वाले बादल

ये अत्यन्त दुर्लभ और अद्भुत किस्म के उद्दीप्त बादल होते हैं जो सामान्य बादलों की तुलना में कहीं बड़े पैमाने पर प्रगट होते हैं; बादलों की पूरी की पूरी पट्टी मछली के शरीर की परतों (चोइयों) की तरह चमकती है और कभी-कभी विशुद्ध वर्ण और मनोरम रंगों से परिपूर्ण दीखती है। सूर्यास्त से पहले सूर्य से १०° से लेकर २०° तक की दूरी पर ये बादल विशेषरूप से सुन्दर प्रतीत होते है। इनकी प्रमुख विशेषता यह है कि सूर्य के अस्त होने के बाद भी करीब दो घण्टे तक ये दृष्टिगोचर होते रहते हैं—यह बात उनकी अत्यधिक ऊँचाई की सूचक है।[2] हाल में अधिक सूक्ष्म तरीकों से इस ऊँचाई का मान १६ मील प्राप्त किया गया है जबकि सामान्य ढंग के बादल कभी भी आठ मील से अधिक ऊँचाई पर नहीं होते। मोती के सीप वाले बादल जब दीप्तिहीन होने लगते हैं तो पर्य्याप्त तेजी के साथ, लगभग अचानक ही, करीब चार मिनटके दौरान मे ये प्रकाशहीन हो जाते हैं—ठीक इतना ही समय सूर्य के गोले को क्षितिज से नीचे डूबने मे लगता है। अतः बहुत सम्भव यह प्रतीत होता है कि इनकी दीप्ति सन्ध्या के धुधलके के कारण नही, बल्कि सीधे सूर्य के कारण उत्पन्न होती है।

रगों का वितरण-क्रम लगभग पूर्णतया बादलों की किस्म पर निर्भर करता है। कभी-कभी ये बादल धारीदार, लहरदार या अलकामेघ-जैसे होते है; कभी-कभी

1. Mother-of-pearl
2. Their height follows the time their illumination lasts; accurate computations in Mohn, Met. Zs. **10**, 82, 1893, also is Jesse. Met. Zs., **3**, 1886, ete. Stormer Geofysiske Publikasjoner g., No. 4, 1931. Beitrage Zur Geophys. 32, 63, 1931 Nat. **145**, 221, 1940 Weather **3**, 13, 1948, H, Wehner, Meteor, Rundschau **4**, 180, 1951

बादलों की समूची पट्टी करीब-करीब एक ही रग की होती है जिसके हाशिये पर स्पेक्ट्रम के रग प्रकट होते है या फिर अनिज दिशा की आड़ी आयताकार पॅक्तियों की शक्ल में ये दीखते है जिनके बीचसे हम आकाश की पृष्ठभूमि पोलकी रत्न सरीखे दूधिया रंग की देख सकते है। ये रंग कभी तो स्थिर बने रहते है, कभी वे धीरे-धीरे बदलते जाते है। सूर्य से जब बादलों की दूरी ४०° से अधिक हो जाती है तो ये रंग विलुप्त हो जाते है। सारा दृश्य अवर्णनीय रूप से मनोरम तथा शानदार होता है।

यदि इन बादलों का 'निकल' द्वारा प्रेक्षण करें तो 'निकल' को घुमाने पर रंग बदलते हुए दीखते है। एक अवसर पर इन मोती के सीप वाले बादलो मे एक प्रभामण्डल देखा गया था जो इस बात का सूचक है कि सम्भवतः इनमे बर्फ–क्रिस्टल मौजूद है (§१३४)। अधिकांश इनका निर्माण ठीक निम्नदाब[1] के गुजर जाने के बाद होता है जब कि आकाश अत्यन्त निर्मल हो जाता है। आस्लो मे आमतौर पर ये जाड़े की ऋतु मे दिखाई देते है जबकि उत्तर या पूर्व दिशा में एक अत्यन्त निम्नदाब मौजूद होता है या जबकि अटलाण्टिक महासागर पर तूफ़ान चलता होता है और उष्ण, सूखी वायु-धारा बहती होती है; क्योंकि ऐसे मोक़ों पर आकाश बहुत ही निर्मल होता है अतः आकाश के उच्चतम स्तर भी देखे जा सकते है।

१९ मई १९१० के दिन, जब कि हेली धूमकेतु की पूंछ में से पृथ्वी गुजरी थी, मोती के सीप वाले बादलों का अलौकिक रूप से मनोरम निर्माण देखा गया था। लगता है मानों इन दोनों घटनाओं के बीच परस्पर कोई सम्बन्ध मौजूद है।[2]

परा–अलका तथा रात्रि के दीप्तिमान् बादलों के लिए देखिए §§ १९८, १९९

हेलीगेन्शीन[3]

१६८. ओस से ढकी घास[4] पर हेलीगेन्शीन (प्लेटXI)

तड़के सुबह को जबकि सूर्य अभी आकाश में नीचे ही रहता है और ओस वाली घास पर लम्बी साया डालता है, हम अपने सिर की छाया के ऊपर और उसके निकट एक अद्भुत् रगहीन आभामण्डल (आरिएल) देखते है। नही, यह कोई प्रकाशीय भ्रम नही है और न ही विपर्यास की कोई घटना; क्योंकि जब वही साया बजरी वाली

1. Depression
2. Slocum, J. R. A. S., Can, **28**, 145, 1934, with a beautiful photo
3. Heiligenschein
4. Quart. Journ, 39, 157. 1913, E, Macy, Met. Zs, **39**, 229, 1922

सड़क पर पड़ती है तो फिर इस दशा में हमें प्रकाश का यह आभामण्डल दिखलाई नहीं पड़ता।

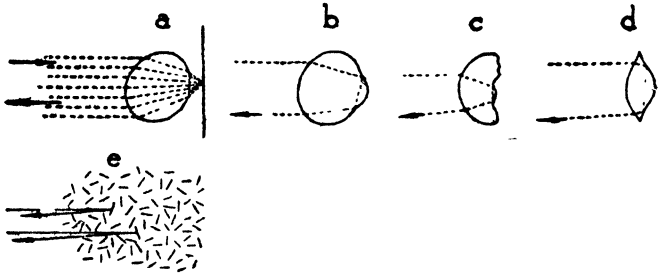
यह घटना सर्वोत्तम उस वक्त होती है जब छाया की लम्बाई कम-से-कम १५ गज़ हो तथा वह छोटे क़द की घास या तिनपतिया पौदों पर पड़ती हो जो घनी ओस के कारण भूरा सफ़ेद रंग धारण किये हुए हों। इन परिस्थितियों में हेलिगेन्शीन बहुत स्पष्ट दीखता है। दोपहर को पानी की बौछार के बाद, या रात को विद्युत् लैम्प के तेज़ प्रकाश में यह उतना स्पष्ट नहीं बन पाता। यदि इस घटना के बारे में किसी किस्म का संशय हो तो वास्तविकता की जाँच का सबसे बढ़िया तरीक़ा इस प्रकार है—(i) घास के समूचे मैदान का सर्वेक्षण करिए और देखिए कि आप की छाया के निकट प्रकाश की मात्रा कैसे बढ़ती है; (ii) दो चार क़दम चलिए; आप देखेंगे कि प्रकाश की झलक आपके साथ-साथ चलती है तथा वे स्थल जहाँ घास विशेषरूप से प्रकाशित नहीं थी, छाया के निकट आते ही प्रकाशित हो उठते हैं; (iii) अपनी छाया की तुलना अन्य लोगों की छाया से करिए; आप देखेंगे कि हेलिगेन्शीन केवल आप के ही सिर के गिर्द दिखाई देता है। इससे संभवतः आप दार्शनिक विचारों में खो जायँगे। जब सोलहवीं शताब्दी के सुविख्यात इटैलियन कलाकार बेन्वेन्यूतो चेलिनी[1] ने यह बात देखी तो उसने सोचा कि प्रकाश की यह झलक स्वयं उसकी विशेष प्रतिभा का सूचक है!

इस अद्भुत घटना का समाधान क्या हो सकता है? इसके लिए ओस की बूंदें निश्चय ही अनिवार्य हैं क्योंकि एक बार जब ओस का वाष्पीकरण हो चुकता है तो हेलिगेन्शीन करीब-करीब विलुप्त ही हो जाता है; घास पर पानी की बूँदे छिड़क देने पर पुनः इसे उत्पन्न किया जा सकता है। सफ़ेद चादर या सफ़ेद कागज के तख्ते पर छिड़की गयी पानी की बूँदों के निकट जब हमारे सिर की छाया पहुँचती है, तो वे स्पष्ट रूप से प्रकाश से जगमगाती हैं।

काँच का गोल पेंदे का फ्लास्क लेकर उसे पानी से भरिए और सूर्य की किरणों के मार्ग में उसे रखिए; यह फ्लास्क अब एक बड़े पैमाने पर पानी की बूँद जैसा काम करता है। इसके पीछे कागज का तख्ता रखिए जो घास की ऐसी पत्ती का स्थान लेता है जिस पर ओस की बूँद पड़ी हो। यदि फ्लास्क का हम आपाती किरणों से थोड़ी ही हटी हुई दिशा से प्रेक्षण करें, तो यह अत्यधिक मात्रा मे प्रकाशित दीखता है बशर्ते कागज इससे थोड़ी ही दूरी पर, करीब-करीब इसके फोकस बिन्दु पर, रखा गया हो।

1. Benvenuto Cellini

इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ओस की प्रत्येक बूँद, जिस पत्ती पर वह स्थित होती है, उसपर सूर्य का प्रतिबिम्ब बनाती है; तब इस प्रतिबिम्ब से करीब-करीब आपाती किरणों की दिशा मे ही, अर्थात् सूर्य की ओर, किरणे उत्सर्जित होती हैं (चित्र १३४ a)। इससे यह बात समझ में आ जाती है कि क्यों बूँदे अपने



चित्र १३४—**ओस से ढकी घास पर हेलिगेन्शीन।**

अन्दर से प्रकाश उत्सर्जित करती हुई जान पड़ती ह, उसी प्रकार जैसे बिल्ली की आँखों से प्रकाश निकलता हुआ जान पड़ता है। यह इस बात की भी उत्तम व्याख्या है कि क्यों घास से प्रतिसूर्य बिन्दु की दिशा में इतना अधिक प्रकाश आता हुआ दीखता है तथा क्यों इस दिशा से हट कर जब हम देखते हैं तो प्रकाश की तीव्रता तेजी के साथ घट जाती है। किन्तु यह प्रकाश हरे वर्ण का क्यों नहीं होता ?

अवश्य ही अन्य बाते भी इस घटना मे भाग लेती हैं। यदि हम फ्लास्क का पुनः प्रेक्षण करें तो हम देखेगे कि इसके सामने के भाग तथा पीछे के भाग दोनों से ही प्रकाश का परावर्त्तन होता है। साधारण-सी गणना करने पर पता चलता है कि फ्लास्क के पृष्ठभाग से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश की दीप्ति घास की पत्ती से पुनः उत्सर्जित होनेवाले प्रकाश की लगभग आधी होती है तथा सामने के भाग से परावर्त्तित होनेवाले प्रकाश की तुलना में करीब आठवाँ हिस्सा।

किन्तु फ्लास्क की गर्दन तथा उसके चिपटे पेदे से अत्यधिक चमक का प्रकाश आता है; यह प्रकाश पूर्ण परावर्त्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। और हमारी ओस की बूँदों के लिए सम्भवतः यह सर्वाधिक महत्त्व की बात है, क्योंकि बूँदे अनियमित रूप से विकृत हुई शक्ल की होती हैं (चित्र १३४, b, c, d) विशेषतया रोएँदार, सफ़ेद रूई जैसी सतह वाले पौदों पर। अतः विभिन्न बिन्दुओं से पूर्ण परावर्त्तित होकर आनेवाली किरणें उतनी ही उज्ज्वल तथा प्रचण्ड तीव्रता की होती हैं जितनी कि वे उस वक्त होती हैं जब

कि वे सूर्य से चलकर बूँदों तक पहुँचती हैं। द्वितीय समूह की ये परावर्त्तित किरणें आपाती दिशा में परावर्त्तित होने के लिए कोई निश्चित प्रवृत्ति नहीं दिखलातीं। किन्तु निम्न-लिखित विलक्षण प्रेक्षण प्राप्त किया गया है--घास की केवल वे ही पत्तियाँ प्रकाश का पुनः उत्सर्जन करती हैं जिनपर सूर्य की किरणें वास्तव में गिरती हैं, और स्वभावतः, सूर्य की दिशा में अन्य पत्तियों के कारण इनके लिए प्रकाश की कोई रुकावट मौजूद नहीं होती, जबकि अन्य बहुत-सी दिशाओं के लिए पत्तियों के सामने कोई स्पष्ट खुला मार्ग नहीं होता (चित्र १३४, c)। यही कारण है कि प्रेक्षक जब आपाती दिशा में देखता है तो उसे सदैव ही अधिक प्रकाश दिखाई पड़ता है। इस अद्भुत रूप से सरल सिद्धान्त (सीलिगर तथा रिशाज़[1] द्वारा प्रवर्त्तित) का उपयोग तो ज्योतिर्विज्ञान में, शनि के वलय मे प्रकाश के वितरण की व्याख्या के लिए किया जा चुका है; हम जानते हैं कि शनि के वलय पत्थर के नन्हें टुकड़ों से बने हैं।

अभी बताये गये प्रकाशीय प्रभावों को मिले-जुले लेने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ये हेलिगेन्शीन के प्रकाश की उज्ज्वलता तथा उसकी दिशा की व्याख्या पर्याप्त रूप से प्रस्तुत करते हैं।

१६९. बिना ओसवाली सतहों पर हेलिगेन्शीन

इस घटना का प्रेक्षण करना अत्यन्त कठिन है; और §१६८ में बतलायी गयी विधियाँ इस कार्य्य के लिए विशेष उपयोगी होंगी। हेलिगेन्शीन कटी फसलवाले ठूँठदार खेत पर, नन्ही घास पर, और यहाँ तक कि खुरदरी मिट्टी पर भी देखा गया है; जब सूर्य अधिक ऊँचाई पर नहीं था, तो उस वक्त बढ़िया कटी हुई घास के लॉन पर जिसकी घास की पत्तियाँ सीधी तथा बराबर ऊँचाई की थीं, मैंने स्पष्ट और निश्चित तौर पर इसे देखा है और उससे अधिक स्पष्टता के साथ मैंने इसे 'मोलिना कोयरुला'[2] घास के गुच्छे पर देखा है।

यदि प्रेक्षक लॉन से कुछ फासले पर खड़ा हुआ है, मान लीजिए सौ डेढ़ सौ गज़ की दूरी पर, तो उसकी छाया इतनी धुँधली होती है कि वह एक तरह से पहचानी भी नहीं जा सकती (देखिए §२) और बस स्वयं हेलिगेन्शीन ही लगभग २° व्यास के एक धब्बे की शक्ल मे (चन्द्रमा के व्यास के लगभग चार गुने आकार का) विशेष तौरपर दिखलाई पड़ता है जो हमारी दिशा में थोड़ा बहुत चिपटा होकर खिचा रहता है।[3]

इसकी व्याख्या वैसी ही है जैसी ओसवाली घास की हेलिगेन्शीन के लिए विन्टर-

1. Seelinger and Richarz 2. Molinia coerulea 3. Nat. **90**, 621, 1913

फील्ड की व्याख्या (देखिए §१६८)। इसे हम निम्नलिखित ढंग पर व्यक्त कर सकते हैं--अधिकांश ठूँठों पर, सामने की कतारों के बीच की खाली जगह में से होकर सूर्य की रोशनी पड़ती है; सूर्य-रश्मियों की दिशा मे प्रेक्षण करने पर इस प्रकार प्रकाशित सभी छोटी सतहे देखी जा सकती है; यदि और तिरछी दिशा से देखे तो साये मे पड़नेवाली घास की अनेक पत्तियाँ दिखाई देंगी, अतः औसत चमक कम हो जाती है।

अक्सर श्वेत रंग के शेनोपोडियम[1] पर सुस्पष्ट हेलिगेन्शीन देखा जा सकता है। इस पौदे की सतह पर नन्हे-नन्हे, गोल आकार के कोष मौजूद होते है जो निश्चय ही ओस की बूँदों सदृश काम करते है और इस पौदे की कुछ किस्मों पर ये कोष विशेषरूप से सुस्पष्ट उभार पाये हुए होते है।[2]

१७०. गुब्बारे की छाया के गिर्द हेलिगेन्शीन

गुब्बारे मे उड़ते समय, इससे लटकने वाली टोकरी की छाया को गौर से देखिए जो नीचे के देहाती क्षेत्र पर पड़ती है। लगभग सदैव ही इस छाया के गिर्द प्रकाश का एक आभामण्डल (आरिएल) मौजूद रहता है। और यह प्रेक्षक के भ्रम से उत्पन्न होनेवाली कोई विपर्यास की घटना नही है; ऐसा इस बात से सिद्ध होता है कि यह आभामण्डल ओस से ढके खेतों और घास के मैदानो पर और भी सुस्पष्ट दीखता है, तथा अनाज के खेतों पर यह प्रकाश के ऊर्ध्व स्तम्भ का रूप धारण कर लेता है जो अनाज के पौदों की डण्डियों की समानान्तर दिशा मे अवस्थित होता है। यह हेलिगेन्शीन का एक विशेष मनोरम रूप है, क्योंकि धरती से गुब्बारे की अत्यधिक दूरी के कारण हम धरती की सभी चीजों को ऐसी दिशा से देखते है जो सूर्य की आपाती किरणों के साथ अत्यन्त छोटा कोण बनाती है। यदि छाया बादलों की पेटी पर से गुजरती है तो इस बात की सम्भावना उत्पन्न होती है कि रंगीन प्रकाश-वृत्तोंवाली शानदार छाया की घटना दीख पड़े (§§१२८, १६५)।

डाक्टर ह्विप्पल (हार्वर्ड वेधशाला) मुझे लिखते है कि उन्होंने अकसर हर प्रकार की भूमि पर इस घटना का अवलोकन वायुयान से किया है; शरत ऋतु के रंग-बिरंगे फूलपत्तियों से ढके वनों पर यह घटना विशेषरूप से सुन्दर दीखती है। चमकीले धब्बे की चौड़ाई २° के करीब होती है। मरुभूमि पर भी यह दिखलाई देती है, ओस से ढके खेतों पर यह अधिक चमकीली होती है, पानी की सतहों पर हम केवल सामान्य गहरे रंग की छाया देखते हैं।[3]

1. Chenopodium 2. V. Lommel, Ann. d. Phyd. 1874, Jubelband10
3. See also Butler, Journ. Opt. Soc. Amer. **45**, 328, 1955

अध्याय ११

आकाश का प्रकाश तथा उसका वर्ण

१७१. धुएँ द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण[1]

प्रकाश के परिक्षेपण के अध्ययन का आरम्भ हम एक ऐसी नहर के किनारे टहलने से करेंगे जिसमे किश्तियों का आना-जाना बहुतायत से होता है। गुजरनेवाली अनेक किश्तियों मे तेल या पेट्रोल के इंजिन लगे होते है जो बारीक धुआँ फेकते है; यह धुआँ मटमैले आकाश की पृष्ठभूमि पर नीले रंग का दीखता है। किन्तु यदि इस धुएँ को खुले आकाश की प्रकाशित पृष्ठभूमि पर देखे तो यह बिलकुल ही नीला नही प्रतीत होता बल्कि यह पीले रंग का दीखता है। स्पष्ट है कि धुएँ के लिए नीलापन उस तरह का विशिष्ट गुण नहीं है जैसा नीले काँच के लिए नीलेपन का गुण, बल्कि धुएँ का रग इस बात पर निर्भर करता है कि उस पर प्रकाश किस तरह पड़ रहा है और ऊपर दिये गये दोनों दृष्टान्तों मे धुएँ के प्रकाशित होने के तरीक़े भिन्न है। व्याख्या इस प्रकार है—

मटमैली पृष्ठभूमि के सामने धुआँ सूर्य की उन समस्त किरणों द्वारा प्रकाशित होता है जो पीछे की दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं से उसपर तिरछी गिरती है। ये किरणें धुएँ द्वारा हर दिशा में परिक्षेपित होती है, इन परिक्षेपित किरणों मे कुछ किरणें हमारी आँख मे प्रवेश करती है तो धुआँ हमे दृष्टिगोचर होता है। जिन जर्रों से धुएँ का निर्माण हुआ रहता है, वे लाल या पीले प्रकाश की अपेक्षा नीले प्रकाश का परिक्षेपण अधिक मात्रा में करते है; इसलिए धुआँ हमें नीला दिखलाई देता है। इसके प्रतिकूल प्रकाशित पृष्ठभूमि के सामने धुआँ हमे उस प्रकाश के कारण दीखता है जो उसे पार करके हमारी ओर आता है और तब यह पीला प्रतीत होता है क्योंकि आपतित श्वेत प्रकाश का नीला रंग इधर-उधर सभी दिशाओं मे परिक्षेपित हो जाता है, बहुत थोड़ा अंश ही आँख मे पहुँच पाता है अतः केवल पीला और लाल बच जाता है जो धुएँ को पार करके आगे आता है और धुआँ यही रंग धारण कर लेता है।

1. Scattering

'कई वर्ष पहले की बात है, कुछ इसी तरह की चीज किलार्नी[1] में मैंने देखी थी जबकि वायुरहित दिनों मे छोटे मकानों की छत से धुएँ का स्तम्भ ऊपर उठता था। प्रत्येक स्तम्भ का निचला भाग देवदार वृक्षों की मटमैली पृष्ठभूमि के सामने पड़ता था और ऊपरी भाग बादलों की चमकीली पृष्ठभूमि के सामने। स्तम्भ का निचला भाग नीला दीखता था क्योंकि यह मुख्यतः परिक्षेपित प्रकाश की सहायता से देखा जाता था, और ऊपरी भाग लाल वर्ण का था क्योंकि यह उसमे से पार आनेवाले प्रकाश द्वारा देखा जाता था।' (जे. टिन्डल[2])।

परिक्षेपित प्रकाश में नीले तथा पार आने वाले प्रकाश में लाल रंग की यही घटना अत्यन्त स्पष्टरूप से डिजल इजिन से विसर्जित धुएँ में उस वक्त देखी जा सकती है जब रेलगाड़ी को रवाना करने के लिए इंजिन को तेजी से चलाते है और डिजेल बस, तथा डिजल मोटर लारी मे भी यह घटना देखी जा सकती है। या 'फिर, सूखी पत्तियो के सुलगने से उत्पन्न होनेवाले धुएँ, पतझड़ के मौसिम मे झाड़ झंखाड़ के ढेर के जलने से पैदा होनेवाले धुएँ, या स्वयं अपने घर की चिमनी के धुएँ मे, जबकि हम लकड़ी जलाते है, यह घटना देखने को मिलती है।

इन सभी दशाओं मे धुआँ कोलतार सरीखे द्रव की असाधारण रूपसे नन्हीं बूँदों से बना होता है जबकि साधारण पत्थर के कोयले के धुएँ मे कालिख के अधिक बड़े टुकड़ मौजूद होते हैं। और प्रकाश के तरंगदैर्ध्य λ (लगभग ०.०००६ मि० मी०) की तुलना मे आँका गया परिक्षेपण करनेवाले जर्रों का आकार ही धुएँ का रंग निर्धारित करता है। यदि जर्रे प्रकाश के तरंग-दैर्ध्य के एक दशमांश या दो दशमांश से छोटे ही होते है तब परिक्षेपण $\frac{1}{\lambda^4}$ का समानुपाती होता है और स्पेक्ट्रम के बैंगनी रंग की ओर के प्रकाश के लिए परिक्षेपण की मात्रा तेजी से बढ़ती है, इतने छोटे जर्रों से होनेवाले परिक्षेपण से, चाहे वे किसी भी पदार्थ के क्यो न बने हों, सदैव ही सुन्दर नीला-बैंगनी प्रकाश मिलता है। किन्तु बड़े आकार के जर्रों के लिए प्रकाश के बैंगनी रंग की ओर परिक्षेपण की मात्रा की वृद्धि थोड़ी ही हो पाती है, क्योंकि इस दशा मे परिक्षेपण $\frac{1}{\lambda^2}$ का समानुपाती होता है। जर्रों का आकार जब बहुत बड़ा होता है तब प्रकाश के तरंगदैर्ध्य पर परिक्षेपण की निर्भरता उल्लेखनीय नही हो पाती और इस दशा मे परिक्षेपित प्रकाश भी श्वेत ही रहता है। 'बहुत बड़े' आकार से अभिप्राय है कि प्रकाश के तरंगदैर्ध्य की तुलना में बहुत बड़ा, उदाहरण के लिए ०.०1 मिलीमीटर के आकार के ज़र्रे!

1. Kilarney 2. J. Tyndall

इससे यह बात समझी जा सकती है कि क्यों सिगार या सिगरेट का धुआँ तुरन्त ही हवा में फेके जाने पर नीला दीखता है, किन्तु कुछ देर तक मुँह मे उसे रख कर धुआँ बाहर निकाले तो यह सफ़ेद रंग का हो जाता है। बाद वाली दशा मे धुएँ के जर्रे पानी की परत से घिर जाते हैं अतः अपेक्षाकृत ये बहुत बड़े आकार के बन जाते हैं।

वाष्प-इंजिन की भाप नेपटीवाल्व के बहिर्द्वार (एक्जास्ट छिद्र) के निकट तो नीलापन लिये रहती है किन्तु और ऊपर जाने पर सफ़ेद हो जाती है, क्योकि ऊपर जाने पर वाष्प का और अधिक सघनन[1] हो जाता है अतः उसमे स्थित बूँदों का आकार बढ़ जाता है। इंजिन के धुएँ और भाप के रंग के अन्तर का, आपतित प्रकाश, तथा उनमें से गुजर कर आनेवाले प्रकाश, दोनों ही मे ध्यानपूर्वक अवलोकन करिए और इस बात की सावधानी बरतिए कि इन दोनों के बीच आप कभी धोका न खाएँ!

अभी तक हमने केवल अपेक्षाकृत हलके धुएँ के बादलों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण पर विचार किया है; किन्तु अत्यन्त घने धुएँ में यह घटना जटिल हो जाती है, क्योंकि तब प्रकाश का एक जर्रे से दूसरे जर्रे तक बारम्बार परिक्षेपण होता है। सूखी पत्तियो की ढेरी की आग से उठते हुए धुएँ का प्रेक्षण कीजिए, तो आप देखेंगे कि धुएँ के स्तम्भ के हाशिये तो मनोरम नीले रंग के होते हैं जिस प्रकार लकड़ी से उठनेवाले सभी धुएँ होते हैं, किन्तु केन्द्र के निकट की ओर के भाग जहाँ धुआँ सबसे अधिक घना होता है, करीब-करीब सफ़ेद रंग के ही होते हैं। सरलता से यह सिद्ध कर सकते हैं कि जो प्रकाश काफ़ी मोटी तहों से परिक्षेपित होकर हमारी आँखों मे पहुँचता है वह सदैव ही श्वेत रंग का होगा चाहे उसके प्रत्येक जर्रे से परिक्षेपित होनेवाला प्रकाश कितना ही अधिक नीला क्यों न हो, क्योंकि धुएँ के बादल पर गिरनेवाला समस्त प्रकाश अन्त में उससे बाहर निकलेगा ही, बशर्ते क्रिया केवल परिक्षेपण की हो रही हो, अवशोषण की नहीं (§१७६)।

हमारी चिमनी का धुआँ तथा फैक्टरी से निकलनेवाला धुआँ आपतित प्रकाश मे आमतौर पर काला दीखता है, धुएँ का स्तम्भ चाहे कितना ही मोटा तथा अपारदर्शी क्यों न हो—इससे प्रगट होता है कि कालिख के टुकड़े प्रकाश का न केवल परिक्षेपण करते हैं बल्कि उसका प्रबल अवशोषण भी करते हैं। इस किस्म के धुएँ की पतली तहों में से देखने पर आकाश बादामी रग का प्रतीत होता है, फिर भी परिक्षेपण के प्रकाश में इस धुएँ का जो रंग दीखता है उसे मुश्किल से ही नीलापन लिये हुए कहा जा

1. Condensation

सकता है। अत: आकाश का यह वादामी रंग, धुएँ के जर्रों द्वारा अन्य रंगों के अवशोषण के कारण उत्पन्न हुआ समझना चाहिए। यह व्याख्या इस बात के अनुरूप ही है कि कार्बन द्वारा प्रकाश का अवशोषण स्पेक्ट्रम के लाल रंग से बैंगनी रंग की ओर तेज़ी से बढ़ता जाता है; जब किसी आग लगे हुए मकान से उठते हुए धुएँ मे से होकर हम सूर्य को देखते है तो उसका रंग रक्तिम वर्ण का दीखता है जो इसी विशिष्टता का प्रदर्शन करता है।

१७३. नीला आकाश[1]

मेघ-दलों के ऊपर है व्योम सतत नीलवर्णी—एच. ड्राख़मान्[2]।

नि.सीम सौन्दर्य के साथ नीला आकाश पृथ्वी को परिवेष्टित किये हुए है। लगता है मानो यह नीलापन अथाह है, जैसे स्वयं इसकी गहराई घनीभूत हो गयी हो। इसके रंग की किस्मे अपरिमित है, और यह रंग दिन प्रति दिन तथा आकाश के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक बदलता रहता है।

इस आश्चर्य्यजनक नीले वर्ण का कारण क्या हो सकता है? स्वयं वायुमण्डल से उत्सर्जित होनेवाले प्रकाश के कारण यह उत्पन्न नही हो सकता क्योंकि तब तो रात्रि के समय भी यह चमक पैदा करता। न ही इस कारण कि इसके पीछे नीले प्रकाश का कोई स्रोत मौजूद है क्योकि रात को हम उस अँधेरी पृष्ठभूमि के सौन्दर्य्य का अवलोकन करते है जिसके सम्मुख वायुमण्डल हमे दृष्टिगोचर होता है। अत: इस घटना का कारण तो स्वय वायुमण्डल मे ही निहित होना चाहिए। फिर भी यह सामान्य रंग–अवशोषण की क्रिया नहीं है, क्योंकि सूर्य तथा चन्द्रमा किसी भी माने में नीले नही दीखते बल्कि कुछ-कुछ पीले ही ये दिखाई देते है। अत: निस्सन्देह यह अत्यन्त बारीक जर्रों वाले धुएँ-जैसी ही घटना है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि आकाश का प्रकाश सूर्य का परिक्षेपित प्रकाश मात्र है! हम जानते है कि स्पेक्ट्रम के बैंगनी सिरे के ज्यों-ज्यों निकट हम पहुँचते है त्यों-त्यों नन्हे जर्रों द्वारा होने वाला परिक्षेपण भी बढ़ता जाता है। दरअसल आकाश का रंग अधिकाश बैंगनी प्रकाश से (जिसके लिए हमारी आँख

1. The famous Swiss geologist, A. Heim, has written a splendid book called Luftfarben (Zurisch, 1912), in which he describes in popular and enthusiastic way the colours of the sky and the twilight phenomena. The coloured reproduction of water-colours are superb 2. H. Drachman

अधिक सवेदी नही है) निर्मित होता है, और इसमें काफ़ी मात्रा नीले रग की होती है और थोड़ी मात्रा हरे रंग की तथा अत्यल्प मात्रा पीले और लाल की; इन सभी रंगों का योग आकाशीय नीला रग प्रदान करता है।

तो अब पदार्थ के वे जर्रे कौन से है जो वायुमण्डल मे प्रकाश का परिक्षेपण करते हैं ? ग्रीष्म ऋतु में, एक लम्बी अवधि के सूखे के उपरान्त, हवा, रेत और मिट्टी के असंख्य जर्रों से भर जाती है जो हवा मे उतराते है और जिनके कारण दूर के भू-दृश्य हमे धुधले दीखते है; ऐसे ही अवसरों पर आकाश का नीलापन हलका पड़ जाता है और वह कुछ सफेदी लिये हुए प्रतीत होता है। किन्तु पानी की कुछ भारी बौछारों के उपरान्त जबकि वर्षा के कारण गर्द धुल जाती है, वायु स्वच्छ और पारदर्शी बन जाती है और तब आकाश का रग गहरा और सपृक्त नीला हो जाता है। जब कभी ऊँचे अलकामेघ प्रगट होते है जिनके कारण वायु बर्फ के क्रिस्टलो से भर जाती है, तो यह मनोरम नीला रंग विलुप्त हो जाता है तथा वह अपेक्षाकृत अधिक श्वेत वर्ण मे परिणत हो जाता है। अत. न तो वास्तव मे धूल के कण और न ही पानी और बर्फ के नन्हे जर्रे, आकाशीय महराबदार छत के नीले रग का परिक्षेपण करते है। एक मात्र सम्भावना यह है कि स्वय हवा के अणु परिक्षेपण-केन्द्र सरीखे काम करते है—अवश्य यह प्रभाव हलका ही होता है,फिर भी इतना प्रबल तो होता ही है कि हवा की कई मील मोटी तहों की चमक मे उल्लेखनीय वृद्धि हो जाती है और यह वृद्धि बैगनी तथा नीली किरणों के लिए निश्चय ही विशेष अधिक होती है ($\frac{1}{\lambda^4}$ का नियम)।

सूर्य की रोशनी, जो हमे अब दीखती है, नीले और बैगनी प्रकाश से वञ्चित होती है जिसे हवा मे परिक्षेपित कर दिया होता है। इसीलिए सूर्य हलका पीला वर्ण धारण कर लेता है जो उस वक्त और भी प्रमुख हो उठता है जब सूर्य आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित होता है, तब इसकी किरणों को वायु मे अपेक्षाकृत लम्बा मार्ग तय करना पड़ता है। सूर्य का यह पीतवर्ण क्रमशः नारगी वर्ण और फिर लाल रग मे परिणत हो जाता है—यह लाल रंग अस्त होते हुए सूर्य की एक प्रमुख विशिष्टता है।

प्रकाश के तरगदैर्ध्य के ०.१ भाग से भी छोटे कणों द्वारा परिक्षेपण का रैले का प्रख्यात सूत्र निम्नलिखित समीकरण द्वारा व्यक्त होता है।

$$S = \text{नियताङ्क} \times \frac{(n-1)^2}{N\lambda^4}$$

जिसमे S इकाई आयतन द्वारा होनेवाला परिक्षेपण प्रगट करता है; N प्रति इकाई आयतन जर्रों की संख्या है, तथा n वर्त्तनाङ्क है।

१७३ क. वायुजनित अनुदर्शन[1]

वायुमण्डल के अनुदर्शन का निरीक्षण करने के निमित्त दूर-स्थित वन एक उत्तम मटमैली पृष्ठभूमि का काम देता है और जितनी ही अधिक इसकी दूरी होती है उतना ही अधिक धुँधला तथा नीला यह प्रतीत होता है। हमारे और वन के बीच हवा की मोटी तह सूर्य की किरणों द्वारा बगल से प्रकाशित होती है, तो उससे परिक्षेपित होने वाला प्रकाश उस पृष्ठभूमि पर उसी प्रकार छा जाता है जैसे किसी झीने पर्दे का प्रकाश उसके पीछे स्थित चीजों पर छा जाता है। इस प्रकार प्रकाशित भाग तथा अँधेरे वाले भागों के बीच का अन्तर बहुत कुछ अंशों में कम हो जाता है, फलस्वरूप पृष्ठभूमि की प्रदीप्ति **अधिक एकसम** दीखती है, साथ ही साथ **अधिक नीले वर्ण** की भी। इस वायु-**जनित अनुदर्शन** की मात्रा के अनुसार वृक्षों के झुरमुट की दूरी का हमारा अन्दाज़ भी अनायास ही प्रभावित होता है। एक वृक्ष जो १०० गज़ की दूरी पर हो, निकट के वृक्ष की अपेक्षा अधिक नीला वर्ण लिये हुए दीखता है। हरे रंग की घास का मैदान, दूरी के बढ़ने पर आश्चर्यजनक तेज़ी के साथ नीले-हरे वर्ण का हो जाता है और बाद में नीले रंग का। दूर की पहाड़ियाँ अक्सर मनमोहक नीले रंग की दीखती हैं, ठीक उसी प्रकार का नीलारंग जैसा सोलहवीं शताब्दी के चित्रकार वान आइक[2] तथा मेम्लिंग[3] आदि अक्सर एक बड़े पैमाने पर पृष्ठभूमि के दृश्य के चित्रण के लिए इस्तेमाल करते थे। समुद्रतट के टीले भी जो हरियाली से परिपूर्ण तरंगों की भाँति, एक के पीछे दूसरे, शृंग की श्रेणियों की शक्ल में दूर तक चले जाते हैं, मनमोहक 'नीले' क्षितिज उपस्थित करते हैं। इस वायुजनित अनुदर्शन के कारण प्रत्येक वर्ण उसी नीलेपन को धारण करके एक-दूसरे के साथ समरूप से मिल जाता है; केवल मकानों के लालरंग तथा अत्यन्त निकट के घास के मैदानों के हरे रंग प्रमुखरूप से उभरकर रंगों के इस साम्य में व्यवधान उपस्थित करते हैं। भू-दृश्यों में इसका आप स्वयं अवलोकन कीजिए।

इसके प्रतिकूल हम चमकीली पृष्ठभूमि में रंगों का परिवर्तन उनके पूरक रंगों में प्राप्त करने का प्रयत्न कर सकते हैं। पर्वतीय प्रदेशों में हिमाच्छादित पहाड़ को चुन सकते हैं; मैदानों में पुञ्ज-मेघों की पंक्तियों का अवलोकन कर सकते हैं जो

1. Aerial Perspective
2. Heim, Luftfarben (cf, §172); Vaughan Cornish, Geogr, Journ. 67, 506, 1926, from which paper especially the end of § 173 has been taken 3. Van Eyck and Memling

निकट से तो चकाचौध उत्पन्न करनेवाले श्वेत रंग के दीखते हैं, किन्तु दृश्य में अधिक दूरी पर दीखनेवाले बादल क्रमशः **पीले** पड़ते जाते हैं।

फिर भी मटमैली पृष्ठभूमि पर परिक्षेपित नीला प्रकाश चमकीले भागों के पीलेपन की तुलना में कही अधिक सुस्पष्ट दीखता है। पहली दशा में अँधेरे का स्थान प्रकाश की अल्पमात्रा ले लेती है, और दूसरी दशा मे प्रचुरमात्रा की प्रदीप्ति में केवल अल्पमात्रा का परिवर्तन हो पाता है; अतः **आपेक्षिक** अन्तर बहुत ही कम होता है (§६४)।

देश के मैदानी इलाक़ों के विस्तृत क्षितिज पर वायुजनित अनुदर्शन अपने पूर्ण गौरव के साथ विकसित होता है और आर्द्रता की मात्रा में निरन्तर परिवर्तन होते रहने के कारण वायु के अणुओं द्वारा परिक्षेपित नीले प्रकाश तथा धुँधले आकाश के प्रबलतर और अधिक भूरे प्रकाश, बारी-बारी से प्रमुखता प्राप्त करते रहते हैं।

कभी-कभी पानी की दो बौछारों के दर्मियान उच्च दाब की वायु का क्षेत्र हमारे ऊपर से गुजरता है और तब वायु अत्यन्त पारदर्शी तथा स्वच्छ हो जाती है। अग्रभूमि में छाया तथा रंग स्पष्ट उभरते हैं तथा पृष्ठभूमि के अँधेरे भाग नीललोहित–नीला वर्ण धारण कर लेते हैं।

धुन्ध वाले दिन अग्रभूमि में रंगों की विविधता उतनी नहीं हो पाती, और ये भूरे से ही प्रतीत होते हैं। बीच की भूमि के उभार अधिक स्पष्ट हो उठते हैं क्योंकि गड्ढे वाले भाग उभारवाले भागों की अपेक्षा धुन्ध की अधिक मोटी तह में से देखे जाते हैं (किन्तु §९१ देखिए) और अन्त में बहुत दूर के दृश्य अधिक अस्पष्ट हो जाते हैं।

ग्रीष्म की बढ़िया ऋतु मे, जबकि बैरोमीटर की ऊँचाई अधिक होती है, वायु में धूल के बहुत से कण मौजूद होते हैं, और तब आकाश बहुत ही चमकीला दीखता है किन्तु इसका नीलापन अधिक नहीं होता; अतः प्रकाश और छाया के बीच विपर्यास कम ही उभर पाता है और फिर यह भी बात है कि प्रेक्षक की आँखें आकाश की चमक से निरन्तर चकाचौध खाती रहती हैं।

चाँदनी रात का दृश्य सर्वोत्तम उस वक्त होता है जब हवा में धुन्ध कत्तई मौजूद नहीं होती है, क्योंकि इसकी वजह से प्रकाश मन्द पड़ जाता है, विपर्यास हलका जान पड़ता है, और दृश्य के लिए अधिक सम्भावना यह होती है कि वह एकरस भूरापन धारण कर ले।

वायुजनित अनुदर्शन के कारण ही नाविक को दूर का समुद्रतट नीले रंग का तथा वायव्य-सा दीखता है, जिसके मुकाबले में लहर अधिक गाढ़े नीले रंग की प्रतीत होती

है और दृश्य की अग्रभूमि में इनकी अधिक सुस्पष्ट शक्ल उभर आती है। दूर का प्रदेश उसे शान्ति का परिचायक, एक मायावी राज्य सा प्रतीत होता है····।

१७३. ख पर्वतीय प्रदेश में प्रकाश और वर्ण। वायुयान से दीखनेवाला भू-दृश्य

चौरस मैदानों मे रहनेवालो के लिए पर्वतीय दृश्य का आश्चर्य्यजनक आकर्षण मुख्यतः वहाँ की वायु की स्वच्छता के कारण उत्पन्न हुआ समझना चाहिए, न कि पहाड़ों की ऊँचाई के कारण। फैक्टरी या बड़े नगरो का धुआँ वहाँ मौजूद नही होता, फलस्वरूप वहाँ की हवा मे धूल के बड़े जर्रो की सख्या कम होती है, रंग अधिक सपृक्त होते है और वायु मे दृश्यों का अनुदर्शन अधिक आकर्षक होता है। भू-दृश्य के रंगविन्यास के मौलिक सौन्दर्य्य का, जो मैदानी इलाकों मे औद्योगिक विकास के प्रभाव से निरन्तर दूषित होता जा रहा है, पहाड़ों पर अभी भी पूर्ण वैभव के साथ आनन्द लिया जा सकता है। फिर अधिक ऊँचाई के कारण यहाँ वायु विशेषरूप से अधिक विरल होती है अतः इसकी परिक्षेपण-क्षमता घट जाती है। १०००० फुट से अधिक ऊँचाई पर अनुभवहीन यात्री दूरियों के आँकने मे बार-बार एकसी ही गलती करता है। अनजाने ही वह हलके परिक्षेपण का कारण यह समझ बैठता है कि सामने का दृश्य निकट ही स्थित है। पहाड़ों पर से हम देख सकते है कि सूर्य की तेज रोशनी से प्रकाशित नीचे की हवा किस प्रकार घाटी को एक आवरण की तरह ढक लेती है, जबकि नीचे घाटी के लोगों के लिए तेज रोशनी से प्रदीप्त पर्वतचोटियो के देखने में बाधा डालनेवाली कोई भी चीज मौजूद नही होती।

१३००० फुट से अधिक ऊँचाई पर आकाश नीला-काला दीखता है, सूर्य और चन्द्रमा अपना सामान्य खुशनुमा पीतवर्ण प्रदर्शित करने के बजाय प्रचण्ड श्वेत प्रकाश के दीखते है। चमकीले बर्फ से ढके मैदान चकाचौध उत्पन्न करते है और परछाइयाँ गहरे कालेरंग की और तीव्र होती हैं। इन तीव्र विपर्यासों को देख कर ही हम यह बात पूर्णरूप से महसूस कर पाते है कि चौरस प्रदेशों के दृश्यों में कितना साम्य तथा कोमलता रहती है।

वायुयान से देखने पर भी प्रकाशीय प्रभाव भिन्न होता है। कम ऊँचाई पर उड़ते समय नीचे के भू-दृश्य से आँख तक पहुँचने वाले प्रकाश को परिक्षेपण करने वाले वायु-स्तरों मे से होकर कम दूरी पार करनी होती है। जब तक हम ठोस भूमि पर होते है, दृश्यों को एक धुँधलेपन का आवरण ढके रहता है; यह आवरण इस दशा में लगभग

पूर्णतया विलुप्त हो चुका होता है और पहली बार सभी रंग अपने पूर्ण वैभव तथा सपृक्तता के साथ प्रदर्शित होते हैं। इससे यह बात समझ मे आती है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति जिसे वायुमार्ग से यात्रा करने का अवसर मिल चुका है, इन दृश्यों के प्रति आकर्षण का अनुभव करता है और अधिक ऊँचाइयों पर यह प्रभाव उत्तरोत्तर आल्पसपर्वत के प्रेक्षणों के सदृश होता जाता है।

१७३ ग. हाथ की ओट में आँख—एक बेलनाकार नली द्वारा प्रेक्षण[1]

दूरी पर ग़ौर से देखते समय हम स्वभावतः अपने हाथ से आँख के ऊपर ओट दे लेते हैं। ऐसा हम क्यों करते हैं? हाथ इधर-उधर से आनेवाले प्रकाश को आँख में प्रवेश करने से रोकता है जो आँख मे स्थित माध्यम द्वारा परिक्षेपित होकर भू-दृश्य को एक सामान्य श्वेत प्रकाश के आवरण से आच्छादित कर देता। सुरक्षा का यह साधन उस वक्त और भी कारगर होता है, जब उँगलियों को हम इस तरह मोड़ लेते हैं कि वे मोटे तौर पर एक खोखले बेलन की शक्ल धारण कर लेती हैं और तब इसके भीतर से हम देखे तो भू-दृश्य के रंग आश्चर्यजनक रूप से संशोधित हो जाते हैं। और ये प्रभाव उस दशा में और भी लाक्षणिक होते हैं जब हम कार्डबोर्ड की बनी खोखली बेलनाकार नली में से देखते हैं जिसके सिरों पर नन्हे छिद्र वाले डायफ्राम[2] बने हों, जैसा अगले अध्याय में बतलाया गया है।

पहले निकट की चीजों को देखिए। उनके सभी रग अधिक सपृक्त और समृद्ध हो जाते हैं। देवदार का वृक्ष अधिक हरा दीखता है। सूराख को, जिसमे से आप देख रहे हैं, धीरे-धीरे यदि आप चौड़ा करे तब रंग मे पीलेपन का पुट नजर आता है; चौड़ाई मे थोड़ी भी वृद्धि करे तो उसके कारण रंग मे पर्य्याप्त अन्तर आ जाता है जिससे सिद्ध होता है प्रकाश का परिक्षेपण मुख्यतः अल्पमान के कोण पर होता है। रग ज्यो-ज्यों अधिक सपृक्त होते जाते हैं त्यो-त्यों दृश्य का विपर्यास अधिक बढ़ता जाता है। इससे इस बात का समाधान हो जाता है कि क्यों आँखों पर हाथ की ओट लगाने के हम अभ्यस्त हैं।

१. इस विषय के सम्बन्ध में हाल्डेन द्वारा कुछ प्रेक्षण किये गये है जिनका भलीभाँति समाधान नहीं किया जा सका है (The Philosophy of a Biologist. Oxford 1935 p.52। खोखले बेलन में से देखने पर रंग में पीलेपन का समावेश हो जाता है, हवा और समुद्र लगभग श्वेत दीखते है; यदि आकाश पर कोई बादल गुजरता है तब नीला रंग पुनः प्रगट हो जाता है (क्यों ?)। 2. Diaphragm

अब उसी तरीके से दूर के भू-दृश्य का अवलोकन करिए। आप पायेंगे कि यह प्रकाश के आवरण से आच्छादित दीखता है जो सामान्यतः निलछौवे रंग का होता है और स्पष्टतः वायु तथा धूल के नन्हे कणों द्वारा होनेवाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है। यह दिलचस्प बात है कि जब तक हम समूचे भू-दृश्य का अवलोकन करते हैं तब तक इस आवरण की ओर हमारा ध्यान नहीं जा पाता। पहाड़ों का दूरस्थ ढाल अक्सर भूरे या बादामी रंग का दीखता है जिसपर जहाँ तहाँ हरे वन के खित्ते मौजूद दिखाई देते है; किन्तु बेलनाकार नली मे से देखने पर हम पाते है कि वास्तव मे ढाल का समस्त भाग नीला है वैसा ही जैसा कि वन, किन्तु इस दशा मे ढाल का रंग अधिक गहरा दीखता है तथा इसका नीलारग अधिक भूरापन लिये रहता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस दशा मे अनजाने ही भू-दृश्य पर से हम उस एक सार वर्ण के आवरण को हटा लेते हैं। इसी प्रकार के प्रेक्षण मैदानों म भी किये जा सकते हैं। कमरे के अन्दर से भी बेलनाकार नली में से जब भू-दृश्य को हम देखते हैं तो हम कह उठते है कि खिड़की के काँच गर्द से ढके है—इसके पूर्व हमारे ध्यान में यह बात नहीं आ पायी थी।

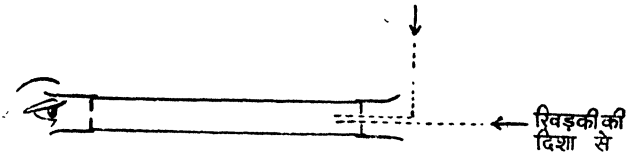
१७४. नाइग्रोमीटर की सहायता से किये गये प्रयोग[1]

'नाइग्रोमीटर'[2] एक अत्यन्त सीधे-सादे यंत्र को दिया गया विद्वत्तापूर्ण नाम है। कागज की दफ्ती की बनी हुई बेलनाकार खोखली नली लेते है जैसी ड्राइङ्ग कागज को डाक से भेजने के लिए काम में लायी जाती है। इसकी लम्बाई २० इच तथा चौड़ाई लगभग १ इंच होती है तथा दोनों सिरों पर छोटा ढक्कन लगा रहता है। एक ढक्कन मे १।४ इंच ब्यास का सूराख कटा रहता है, दूसरे में १।८ इंच ब्यास का। फिर काले कागज की टोपी बेलन के दोनों सिरों पर चढ़ा दी जाती है, बस उपकरण इस्तेमाल के लिए तैय्यार हो जाता है।

इस उपकरण मे से देखते समय दोनों मे से छोटे सूराख को आँख के सामने रखना चाहिए, तब दूसरा सूराख करीब-करीब पूर्णतः अन्धेरी पृष्ठभूमि पर प्रकाशित दिखलाई पड़ता है। कुछ फासले पर स्थित खिड़की की ओर नली का मुँह करिए, तब आप खिड़की का खुला हुआ अपेक्षाकृत अधेरा भाग स्पष्ट रूप से नीलापन लिये हुए देखेगे, जो आपके और खिड़की के दर्मियान की धूप से प्रकाशित हवा द्वारा परिक्षेपित होनेवाला प्रकाश है। खिड़की के निकट जाइए—जितना ही करीब आप जायँगे, प्रकाश का नीलापन

1. R. Wood, Phil. Mag. 1920, **39**, 423, 1920 2. Nigrometer

उतना ही कम होता जायेगा—परिक्षेपण करनेवाला वायु-स्तम्भ भी छोटा होता जाता है। छोटी दूरियों के लिए यह बेहतर होगा कि नाइग्रोमीटर को एक ऐसे बक्स की ओर



चित्र १३५—**नाइग्रोमीटर द्वारा प्रेक्षण; वायुमंडल के परिक्षेपण की नाप।**

इङ्गित करें जिसमें एक छोटा सूराख कटा हो और जिसके भीतर काला रंग पुता हो; यह एक लगभग 'कृष्ण वस्तु'[1] सरीखा काम करता है।

अब हम यह ज्ञात करेंगे कि वायु का कितना लम्बा स्तम्भ प्रकाश का उतना ही परिक्षेपण करता है जितना वायुमण्डलकी समस्त गहराई। काँच का एक टुकड़ा लीजिए जिसकी पीठ पर कालिख पुती हो (उदाहरण के लिए फोटोग्राफी की प्लेट, जो खूब काली पड़ गयी हो) और इसे सूराख के आधे भाग के सामने नली के अक्ष के साथ ४५° के कोण पर रखिए। यदि आप ऐसा कर सके, तो प्रेक्षण की दिशा इस प्रकार चुनिए कि काँच से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश आकाश के उस भाग से आये जो सूर्य से लगभग ९०° की दूरी पर हो। छिद्र के बिना ढके हुए भाग मे से हमारी खुली हुई, अपेक्षाकृत अँधेरी खिड़की दीखती रहती है। अब हमे पीछे की ओर कितनी दूर जाना होगा ताकि छिद्र के दोनों अर्द्धभाग समान तीव्रता वाले प्रकाश से प्रकाशित दीखे? मौसम जब स्वच्छ धूप का रहता है, तब अब पायेंगे कि आवश्यक दूरी करीब ३५० गज होगी; जब धूप तो रहती है किन्तु थोड़ी धुन्ध भी रहती है तो आप पायेंगे कि यह दूरी कदाचित् सिर्फ १४० गज ही होगी।

परावर्त्तन द्वारा काँच प्रकाश की प्रारम्भिक तीव्रता को घटाकर ५ प्रतिशत कर देता है। अतः सूर्य से ६०° के फासले पर आकाश द्वारा परिक्षेपण वायु के उस स्तम्भ द्वारा होने वाले परिक्षेपण के बराबर है जिसकी लम्बाई ३५०×२० गज=४ मील है (मोट तौर पर)। अब यदि वायुमण्डल को इस तरह दबा सकते कि इसकी समूची ऊँचाई के लिए इसका घनत्व उतना ही हो जाता जितना पृथ्वी की सतह के निकट, तब यह समतुल्य ऊँचाई ५.५ मील प्राप्त होती। क्योकि प्रति वर्ग सेण्टीमीटर पर

1. Black body

खड़े वायुस्तम्भ का सम्पूर्ण भार १.०३३×१०^{३} ग्राम प्राप्त होता है, तथा धरती के निकट की हवा का भार प्रति घन सेण्टीमीटर ०.००१२९३ ग्राम है अतः हमें समतुल्य ऊँचाई निम्नलिखित प्राप्त होती है—

$$\frac{१.०३३\times१०^{३}}{०.००१२९३}=८.८\times१०^{५}$$ सेन्टीमीटर=५.५ मील।

प्रकाशीय[1] रीति से प्राप्त किये गये अङ्क के साथ इसका मिलान कुछ बहुत बुरा नही है। इसे हम इस बात का प्रमाण मान सकते है कि परिक्षेपण करनेवाले कण, जिनके कारण वायुजनित परिपेक्षण उत्पन्न होता है, उसी किस्म के है जिस किस्म के वे कण है जो आकाश को नीला प्रकाश प्रदान करते है। और यह बात कि हमारा प्रयोग-फल, ४ मील, गणना से प्राप्त अङ्क ५.५ मील से थोडा कम पड़ता है, यह सिद्ध करती है कि धूलिकणों की मात्रा अधिक होने के कारण हवा की निचली तहों मे ऊपर की तहों की अपेक्षा अधिक प्रबल परिक्षेपण होता है। इसके अतिरिक्त फल प्राप्त करने की हमारी क्रिया हर दृष्टि से अत्यन्त स्थूल विधि की क्रिया है, अत. इससे तो हम अधिक-से-अधिक यही आशा कर सकते है कि बस सही कोटि का फल प्राप्त हो सकेगा।

१७५. साइनोमीटर[2] (आकाश का नीलापन नापने का यंत्र)

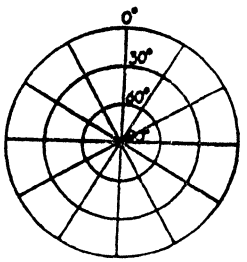
जस्ते की सफ़ेदी (जिक ह्वाइट) तथा बिस्टर[3] को प्रशन-नीला[4] या कोबाल्ट-नीला के साथ विभिन्न अनुपातो मे मिलाइए। इन मिश्रणों का रंग फीका नही पड़ने पाता है। कागज की दफ्ती की नन्ही-नन्ही पट्टियों पर इनके लेप चढ़ाकर उनपर अङ्क लिख दीजिए, बस आकाश के वर्ण की नाप के लिए पर्य्याप्त साधन प्राप्त हो गये। यात्रा करते समय अब भी इस तरीके को काम मे ले आते है, तथा विभिन्न अङ्कों की पट्टी के प्रकाश की सचरना की जाँच बाद मे वर्णविज्ञान की रीतियों द्वारा कर ली जाती है। व्यावहारिक उपयोग के लिए इस ढग के रग-माप के स्केलो का निर्माण किया जा चुका है और कुछ दिनों पूर्व तक ये बने बनाये खरीदे जा सकते थे। इसके प्रतिरूप आसानी से तैय्यार किये जा सकते है।[5]

1. Optical
2. Cyanometer
3. Bistre (पीलापन लिये हुए रक्तिम पीत रंग)
4. Prussion blue (श्यामवर्ण लिये हुए नीला रंग)
5. लिके के स्केल तथा इसके उपयोग के लिए देखिए Spangenberg, Annalin d. Hydrographic 71, 93 1943

नीलेपन के इन स्केलों का उपयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारी पीठ सूर्य की ओर हो तथा स्केल पर सूर्य की रोशनी पड़ती रहे।

१७६. आकाश पर प्रकाश का वितरण

सायनोमीटर की सहायता से, यदि यह आपके पास हो या अपने उपयोगी यंत्र नाइग्रोमीटर की सहायता से किसी धूपवाले दिन आकाश मे प्रकाश के वितरण का अध्ययन कीजिए। विशेषतया अपने गिर्द के आकाश का अध्ययन मनोयोगपूर्वक करिए। आकाश के एक भाग की दूसरे भाग से तुलना करने के लिए किसी छोटे दर्पण को काम में ले आइए (प्लेट XIII) और समान प्रदीप्ति की रेखाएँ (आइसोफोटो[1] रेखाएँ) तथा समान नीलेपन की रेखाएँ चित्र १३६ की भाँति खीचिए; सूर्य की विभिन्न ऊँचाइयों के लिए इस क्रिया को दुहराइए।



चित्र १३६—**आकाश की समान प्रदीप्ति की रेखाएँ तथा समान नीलेपन की रेखाएँ खींचने के लिए मानचित्र।**

'कुछ काल उपरान्त अभ्यस्त आँख को आइसोफोटो रेखाओं का मार्ग सहज ही दीख जाता है मानो आकाश की पृष्ठभूमि पर ये रेखाएँ नीले रग मे चित्रित कर दी गयी हों।'— सी० डोर्नो[2]।

सूर्य जब नीचे स्थित होता है तो सबसे कम प्रदीप्ति का बिन्दु सूर्य से गुजरनेवाले ऊर्ध्व वृत्त पर सूर्य से लगभग ९५° की दूरी पर पड़ता है और जब सूर्य ऊँचाई पर स्थित होता है तो यह बिन्दु इस वृत्त पर ६५° की दूरी पर पड़ता है। इस बिन्दु से ही 'अन्धकार रेखा' गुजरती है जो आकाश को दो भागों मे बाँटती है, एक प्रदीप्त भाग सूर्य के गिर्द स्थित होता है, दूसरा प्रदीप्त भाग इसके सामने पड़ता है। इन भागों की आकृति तथा आकार सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करते हैं। प्रकाश के इस वितरण को निम्नलिखित तीन घटनाओं के मिश्रित प्रभाव से उत्पन्न हुआ मान सकते हैं—

१. प्रकाश की दीप्ति सूर्य के निकट तेज़ी से बढ़ती है, यहाँ तक कि यह चकाचौध उत्पन्न करने लग जाती है; इसका रंग उत्तरोत्तर, अधिक उज्ज्वल श्वेत होता जाता है (आप को किसी इमारत के साये में खड़ा होना चाहिए, साये के हाशिये के निकट।)

1. Isophotes 2. C. Dorno

२. सूर्य से ९०° की दूरी पर आकाश का प्रकाश सबसे अधिक मन्द और सबसे अधिक नीला रहता है किन्तु

३. इसके अतिरिक्त एक और भी प्रभाव मौजूद होता है। प्रकाश-तीव्रता ऊर्ध्व बिन्दु से क्षितिज की ओर बढ़ती है और साथ-ही-साथ इसका रंग भी श्वेत मे परिणत होता जाता है। यह प्रभाव अभी ऊपर दिये गये दोनों प्रभावों के साथ मिल जाता है।

प्रथम घटना को नाइग्रोमीटर की सहायता से हम अच्छी तरह नाप सकते हैं। दृष्टिक्षेत्र के आधे भाग को ऐसे काँच से ढक देते हैं जिसके पीछे काला रंग पुता हो; यह काँच सूर्य के निकट वाले आकाश के भाग को प्रतिबिम्बित करता है, और दृष्टिक्षेत्र के शेष अर्द्ध भाग को हम सूर्य से ४०°–५०° पर स्थित आकाश की ओर इङ्गित करते हैं। नाइग्रोमीटर की दिशा इधर या उधर कुछ अंशों तक बदलकर हम आसानी से ऐसी दिशा प्राप्त कर सकते हैं कि दृष्टिक्षेत्र के दोनों अर्द्धभाग समान प्रदीप्ति के दीखें। इस प्रकार दिशा के साथ प्रदीप्ति मे परिवर्त्तन, दृष्टिक्षेत्र के उस अर्द्धभाग मे विशेष प्रमुख होते हैं जो आकाश के चमकीले भाग के परावर्त्तन से प्रकाशित होता है। इस बात से कि इस तरह का सन्तुलन सम्भव है, यह निष्कर्ष निकलता है कि सूर्य के निकट के इस बिन्दु की प्रदीप्ति सूर्य से ४५° की दूरी पर पड़ने वाले बिन्दु की प्रदीप्ति की कम-से-कम बीस गुनी अवश्य होगी। आपतित प्रकाश की दिशा के साथ अल्पकोण बनाने वाली दिशा मे होनेवाले इस प्रबल परिक्षेपण का कारण हवा मे उतराते हुए स्थूल आकार के कण हैं जो धूल के जर्रे या नन्ही बूँदे, दोनों ही हो सकते हैं। यह इस तथ्य के अनुरूप है कि सूर्य के निकट आकाश का रग कम नीला होता है, बल्कि यह अधिक श्वेत, स्वय सूर्य की तरह कुछ पीलापन लिये हुए होता है, क्योंकि बड़े आकार के कण सभी वर्णो के प्रकाश का परिक्षेपण समान मात्रा में करते हैं।

द्वितीय प्रभाव स्वयं परिक्षेपण के नियम का ही परिणाम है। प्रति-सूर्य बिन्दु के मुकाबले मे सूर्य से ९०° कोण की दिशा मे परिक्षेपण कम-से-कम दो गुना अधिक निर्बल अवश्य होता है, फिर बड़े आकार के कण इतने बड़े कोण की दिशा में मुश्किल से ही प्रकाश का परिक्षेपण कर पाते हैं। अतः जो कुछ हमें दिखलाई पड़ता है वह स्वयं वायु के अणुओं द्वारा परिक्षेपित गहरे नीले रंग का प्रकाश होता है।

तृतीय प्रभाव मुख्यतः हमारी आँख और क्षितिज के दर्मियान की हवा की तह की अत्यधिक मोटाई के कारण उत्पन्न होता है। यद्यपि हवा का प्रत्येक कण बैंगनी और नीली किरणों का विशेष अधिक परिमाण मे परिक्षेपण करता है, किन्तु परिक्षेपण करने

वाले कण से हमारी आँख तक के लम्बे मार्ग में यही रंग सबसे अधिक मात्रा में क्षीण पड़ जाते हैं। वायु की तह जब बहुत ही अधिक मोटी होती है, तब ये दोनों प्रभाव ठीक एक दूसरे को नष्ट कर देते हैं।

मान लीजिए कि हमारी आँख से x दूरी पर आयतन का एक नन्हाँ सा परिमाण sdx भाग का परिक्षेपण करता है। हमारी आँख तक पहुँचते-पहुँचते प्रकाश की यह मात्रा e^{-sx} के अनुपात में क्षीण हो जाती है। एक असीमित मोटी तह से प्राप्त होनेवाला प्रकाश इसी तरह के सभी आयतन परिमाणों dx से प्राप्त प्रकाशमात्राओं का योग होगा अर्थात् $\int_0^\infty se^{-sx}\,dx$ जो 1 के बराबर होगा। स्पष्ट है कि यह फल s से मुक्त है, अर्थात् इसमें रंग नहीं हैं। अतः क्षितिज के निकट का आकाश चमकीला और श्वेत हो जाता है और करीब-करीब सूर्य से प्रकाशित सफ़ेद पर्दे के सदृश हो जाता है।

इस बात की भी बहुत कुछ सम्भावना है कि धरती के निकट के वायुस्तरों में धूल के कण अधिक संख्या में मौजूद होते हैं जो प्रकाश के परिक्षेपण को और अधिक तीव्र तथा वर्ण को अधिक श्वेत बना देते हैं यद्यपि इस दशा में वायु स्तरों की मोटाई को असीमित नहीं मान सकते। हाल में यह पाया गया है कि ऊपर वर्णन किये गये परिक्षेपण प्रभाव आकाश के रंगों का पूर्णतः समाधान नहीं करते। वायुमण्डल मे अत्यधिक ऊँचाई पर, अल्प मात्रा में पायी जानेवाली गैस, ओज़ोन (जो आक्सीजन का एक विलक्षण रूप है) के कारण भी आकाश के रंगों पर अतिरिक्त प्रभाव पड़ता है।[1] ओजोन का रंग एक दम सच्चा नीला होता है जैसा नीले काँच का, और यह रग अवशोषण के कारण उत्पन्न होता है, परिक्षेपण की वजह से नहीं। ओज़ोन के प्रभाव का योग उस वक्त स्पष्ट होता है जब सूर्य क्षितिज के समीप पहुँचता है, यदि आकाश के रंग के निर्माण मे केवल परिक्षेपण का ही हाथ होता तब इस दशा में ऊर्ध्व बिन्दु के निकट आकाश के रंग में भूरेपन का पुट नज़र आना चाहिए, बल्कि पीलेपन का पुट भी। किन्तु यह अब भी अपना नीला वर्ण धारण किये रहता है—ऐसा ओज़ोन की उपस्थिति के कारण ही होता है।

सदैव, आकाश के सबसे कम प्रदीप्त भाग का ही रंग अधिकतम नीला होता है और यहीं पर रंग सबसे अधिक संपृक्त भी होता है। इसका अर्थ है कि कोई भी ऐसे बादल नहीं मिलते हैं जिनके अन्दर ०.०००१ मिलीमीटर से छोटे कण मौजूद हों क्योंकि

1. E. O. Hulburt, Journ, Opt. Soc. Amer. 43, 113, 1953

स्थानीय तौर पर ये प्रकाश-तीव्रता में वृद्धि कर देगे और तिसपर भी नीले वर्ण को बिना किसी तबदीली के छोड़ देगे।

रस्किन का कहना है कि नीला आकाश रंग के सम उतार-चढ़ाव का सर्वोत्तम दृष्टान्त है।[1] वह हमे परामर्श देता है कि सूर्यास्त के बाद आकाश के एक भाग का हम खिड़की के काँच द्वारा प्रतिबिम्बित अवस्था मे अध्ययन करे या फिर वृक्षों और मकानों के स्वाभाविक फ्रेम से घिरी हुई अवस्था मे उसका अध्ययन करे। इस बात की कल्पना करने का प्रयत्न कीजिए कि आप किसी चित्र का अवलोकन कर रहे है और तब रंगों के परिवर्त्तन के साम्य तथा कोमलता की सराहना आप कर सकते है। आकाश के एक भाग से दूसरे भाग की ओर अपनी आँखे तेजी के साथ फिराइए ताकि आप की आँखें समानुयोजित होने के पूर्व, आकाश के वर्ण और दीप्ति की तुलना कर सकें। या वाटिका ग्लोब (§ ११)का उपयोग कीजिए; अथवा ऐसा चश्मा काम में लाइए जिसमें बादामी रग के शीशे लगे हों या फिर लाल रग का काँच काम मे लाइए; आप अब अन्तर को और स्पष्ट देख पायेगे और अलका मेघ की संरचना की विपुल बारीकियाँ दीख पड़ेंगी।

१७७. नीले आकाश के रंग की परिवर्तनशीलता

नीले आकाश का रग प्रतिदिन वायु मे मौजूद धूल तथा जलबिन्दुओं की मात्रा के अनुपात मे बदलता रहता है; इस प्रकार की तुलना के लिए सायनोमीटर अनिवार्य रूप से आवश्यक है। नीले आकाश पर दीप्ति का वितरण सामान्यतः निम्नाङ्कित किस्मों मे से किसी एक के अनुसार होता है[2]—

(क) शुद्ध ध्रुवीय और महाद्वीपीय वायु, ऊँचे दाब का प्रदेश, और वर्ण की बौछारो के दर्मियान अस्थायी रूप से स्वच्छ हुआ आकाश;

गहरा नीला वर्ण लगभग सूर्य के निकट तक पहुँचता है, यद्यपि ज्यों-ज्यों यह सूर्य के निकट पहुँचता है त्यों-त्यों यह शनैः शनैः अधिक चमकीला और श्वेत होता जाता है।

(ख) समुद्री-उष्णकटिबन्धीय गर्दगुबार भरी हवा, धुन्ध, स्तार-मेघ, या स्तार-पुञ्ज मेघ के विलुप्त होने पर;

सूर्य के गिर्द हम एक धवल मण्डलक देखते है जो करीब १०° तक की दूरी तक लगभग एक समान रूप से चमकीला रहता है, इसके बाहर इसकी

1. Ruskin, Elements of Drawing
2. F. Volz. Ber. d. deutschen Wetter dienstes, 2, No. 13, 1954

चमक घट जाती है, विशेषतया २५° की दूरी पर, और तब इसका रंग सामान्य पृष्ठभूमि की तरह का नीला हो जाता है।

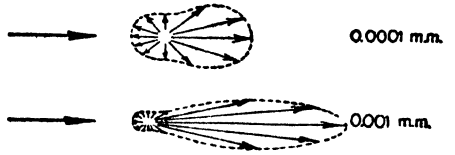
(ग) विलुप्त होता हुआ ठण्डा पाला; देर से मौजूद वायुराशियाँ; शुष्क अवस्था की एक लम्बी अवधि के उपरान्त;

सूर्य के गिर्द एक नीला-श्वेत मण्डलक प्रगट होता है, जो १५°–३०° की दूरी पर एक बादामी या पीतवर्ण का वृत्ताकार हाशिया प्रदर्शित करता है और यह हाशिया आगे जाने पर नीले आकाश के रंग में मिल जाता है। (बिशप के छल्ले के लिए देखिए § १९६)।

सूर्य की ऊँचाई जितनी कम होती है, ख और ग में वर्णित मण्डलक उतने ही अधिक बडे होते हैं। सूर्य्य की ऊँचाई जब ४५° से घटकर १०° पर आती है तो मण्डलक का आकार दो गुना हो जाता है। विशेष दशाओं मे, जब बिशप का छल्ला दृष्टिगोचर होता है तो असाधारण रूप से बड़े आकार का मण्डलक प्रगट हो सकता है।

छुट्टी के दिनों मे इटली के आकाश की तुलना आप यहाँ के आकाश के नीले रंग से कीजिए। इङ्गलैण्ड के नीले आकाश की तुलना उष्ण कटिबंध के आकाश से करिए।

दिन मे विभिन्न समयो पर आकाश के नीले रंगों की तुलना करिए। सूर्योदय या सूर्य्यास्त के समय आकाश अधिकतम नीला रहता है[1] और यह बात सहज ही समझ मे भी आती है क्योंकि ऊर्ध्व बिन्दु के निकट के बिन्दु इस वक्त सूर्य्य से तथा क्षितिज से ९०° की दूरी पर स्थित होते हैं (देखिए § १७६)।



चित्र १३७—छोटे बड़े आकार की कणिकाओं द्वारा विभिन्न दिशाओं में प्रकाश का परिक्षेपण।

नन्हें कण बैंगनी और नीले प्रकाश का विशेष मात्रा में परिक्षेपण करते हैं और यह परिक्षेपण हर दिशा में समान मात्रा में होता है।

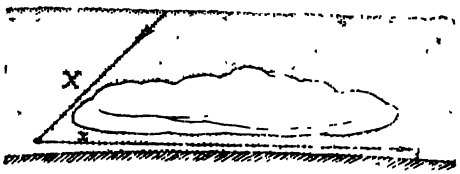
बड़े आकार के कण सभी वर्ण के प्रकाश (श्वेत प्रकाश) का परिक्षेपण समान प्रबलता के साथ करते हैं और यह परिक्षेपण अधिकांश अल्पकोण वाली दिशा में ही होता है (चित्र १३७)।

1. Phys. Rev. **26**, 497, 1908

१७८. दूर के आकाश का रंग कब नारङ्गी वर्ण का होता है और कब हरे वर्ण का ?

हम देख चुके हैं कि आकाश जब निरभ्र होता है तो क्षितिज का रंग वैसा ही होता है जैसा किसी सफ़ेद कागज का, जिसपर सूर्य का प्रकाश सीधे ही पड़ रहा हो। अतः स्पष्ट है कि सूर्यास्त के लगभग, जबकि सभी चीजे सूर्य के सुहावने नारङ्गी रंग के प्रकाश से आलोकित होती रहती हैं, वही रंग समूचे क्षितिज पर भी प्रगट होता है।

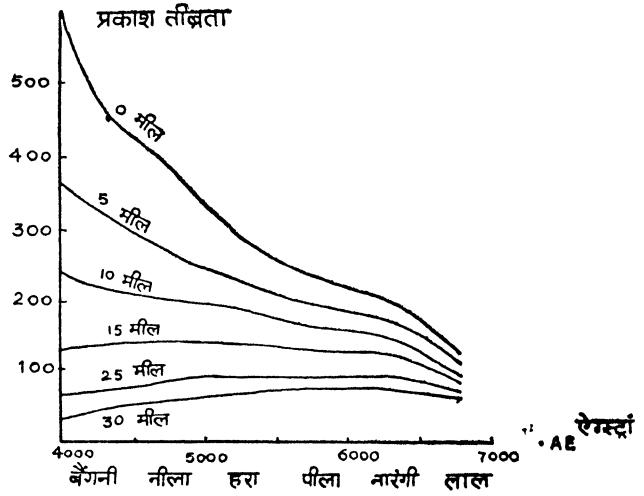
किन्तु ऐसे भी अवसर आते है जब दूरस्थ क्षितिज, सूर्य के अस्त होने के क्षण से बहुत पहले ही नारङ्गी रंग धारण कर लेता है। घने श्यामवर्ण के बादलों की पेटी सम्पूर्ण भू-दृश्य के एक सिरे से दूसरे सिरे तक छायी रहती है, और बहुत दूर क्षितिज के निकट नीचे ही केवल थोड़ा-सा खुला भाग दीखता है जहाँ से सूर्य का प्रकाश आता रहता है (चित्र १३८)। ऐसे मौकों पर आकाश के इस नन्हे से भाग का रंग आश्चर्यजनक रूपसे सुहावने नारङ्गी वर्ण का होता है जो दूरस्थ फार्म आदि के अन्धकारमय काले सिल्युएत प्रस्तुत करता है और ये सिल्युएत आकृतियाँ, भू-दृश्य के शेष भाग के अन्धकारमय होनेके कारण और भी अधिक प्रभावोत्पादक बन जाती हैं।



चित्र १३८—भू-दृश्य का एक बड़ा भाग जब घने बादलों की पेटी से ढका होता है तब कभी-कभी क्षितिज खुशनुमा नारंगी वर्ण का दिखलाई पड़ता है।

क्रिया इस प्रकार होती है; x स्थिति पर वायु के एक आयतन पर विचार कीजिए जो ऐसी सूर्यरश्मियों द्वारा प्रदीप्त हो रही है जो वायुमण्डल में X लम्बाई की दूरी तय करके आती हैं। मान लीजिए कि तय किये गये मार्ग के प्रति किलोमीटर द्वारा प्रकाश का s भिन्नांश परिक्षेपित होता है, तब x स्थिति पर प्रकाश तीव्रता e^{-sX} की समानुपाती होगी। x स्थिति के अणु हमारी आँख की दिशा में भिन्नांश s के अनुपात में आपाती प्रकाश परिक्षेपित करते हैं, अतः यदि x स्थिति पर प्रदीप्ति-तीव्रता इकाई हो, तो इसका भिन्नांश se^{-sx} हमारी आँख में पहुँचेगा। किन्तु x स्थिति पर प्रकाश-तीव्रता e^{-sX} की समानुपाती है, अतः आँख में वास्तव में प्रवेश करने वाले प्रकाश की मात्रा $se^{-sX} \times$

e^{-px} या $se^{-s(X+x)}$ समानुपाती होगी। इस पद का मान s के सामान्य मान के लिए अधिकतम होता है, किन्तु s का मान जब बहुत बड़ा या बहुत छोटा होता है तो इस पद का मान करीब-करीब शून्य हो जाता है। दूसरे शब्दों में, अधिक लम्बे तरंग-दैर्ध्य का प्रकाश जिस वायुस्तर से गुजरता है उसके द्वारा वह अधिक मात्रा में परिक्षेपित नहीं होता, इसके प्रतिकूल लघु तरंग-दैर्ध्य का प्रकाश वायुमण्डल मे से होकर लम्बा रास्ता तय करने में अत्यधिक मात्रा में क्षीण हो जाता है। चित्र १३९ की ग्राफ़ रेखाएँ यह प्रदर्शित करती हैं कि एसे वायु-प्रदेशों से जिनके लिए $X+x$ क्रमश: ०, ५, १०, १५, २५ और ३० मील है, हमारी आँख तक पहुँचनेवाले प्रकाश की संरचना कैसी होती है। महत्तम मान, अर्थात् हम तक पहुँचने वाले प्रकाश मे महत्तम तीव्रता वाला वर्ण, प्रदीप्त होने वाले वायुप्रदेश की दूरी के बढ़ने के अनुसार ही नीले से लाल रंग की ओर खिसकता चला जाता है। जब $X+x$ का मान



चित्र १३९—आँख से विभिन्न दूरियों पर स्थित वायु के एक छोटे आयतनवाले प्रकाश की संरचना।

२० मील है, तब इस महत्तम तीव्रता वाले प्रकाश का वर्ण करीब-करीब हरा रहता है, किन्तु ३० मील के लिए यह नारङ्गी रंग में परिणत हो गया है।

कुछ अवसरों पर आकाश के वर्ण मे दिखाई देने वाले मनोरम हरे रंग की उत्पत्ति का भी इससे समाधान होता है जैसे हिमपात के बाद। ग्राफ़ चित्र १३९ से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उस रंग-आभा मे हरा वर्ण अन्य वर्णों की तुलना मे थोड़ी ही अधिक प्रमुखता प्राप्त करता है, अतः यह हरा रग केवल अल्पमात्रा मे ही संतृप्त होगा; प्रेक्षण मे भी ऐसा ही पाया जाता है।

क्षितिज से आने वाले प्रकाश में हरे और पीले वर्ण के अवयव वास्तव मे सदैव ही मौजूद होते हैं, यद्यपि जब वायु बादल विहीन होती है तो निकट के कणों से आने वाले नीले प्रकाश के साथ वे मिलकर श्वेत प्रकाश उत्पन्न करते हैं। ज्योंही प्रकाशपथ के एक हिस्से पर कोई छाया पड़ती है, तो तुरन्त प्रकाशवर्ण के अलौकिक प्रभाव उत्पन्न होते हैं; और आकाश मे घिरे बादल जब कभी विभिन्न स्थलों पर फटकर उसके खुले भाग प्रदर्शित करते हैं तो रंग के तरह-तरह के शेडों का निर्माण सम्भव होता है।

१७९. सूर्यग्रहण के अवसर पर आकाश का रंग

सूर्य का आंशिक ग्रहण हमे अवसर प्रदान करता है कि हम देख सके कि चन्द्र की छाया के कारण आकाश का रंग किस प्रकार बदल जाता है तथा यह कि जिस ओर से छाया आती है उस ओर का रंग, जिधर की ओर छाया बढ़ती है उधर के रग से किस प्रकार भिन्न होता है।

सूर्य का पूर्णग्रहण, जो दुर्भाग्यवश अत्यन्त ही दुर्लभ अवसरों पर लगता है, कहीं अधिक शानदार किस्म के रगों का प्रदर्शन करता है।

आकाश के जिस ओर से छाया आती है उधर का रंग गहरा नीललोहित होता है, मानो गरज तरज वाला तूफ़ान उठने वाला हो। सर्वग्रास पर दूरस्थ आकाश गहरे नारङ्गी वर्ण का होता है क्योंकि उस स्थान के वायुमण्डल के भाग पूर्ण ग्रहण के क्षेत्र की सीमा से बाहर होने के कारण सूर्य की किरणों द्वारा अब भी प्रकाशित होते रहते हैं और इस क्षण वायुमण्डल के अप्रकाशित भाग के पार उन्हे हम सीधे ही देखते हैं (देखिए § १७८)।

१८०. नीले आकाश के प्रकाश का ध्रुवण (देखिए § १८२)

नीले आकाश से आने वाला प्रकाश काफ़ी अधिक मात्रा मे ध्रुवित होता है। यह प्रभाव विशेषतया उस वक्त स्पष्ट होता है जब कि सूर्य आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित होता है। 'निकल' की सहायता से इन प्रभावों का निरीक्षण किया जा सकता है या और भी अधिक सरल तरीका यह होगा कि काँच का टुकड़ा काम में लाये जिसके

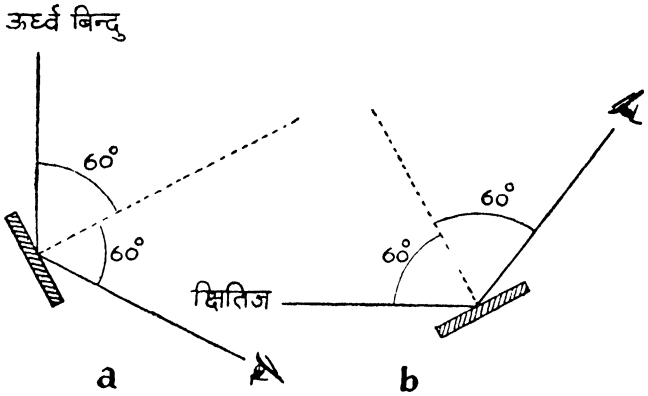
पीछे कालिख पुती हो।[1] यदि काँच पर प्रकाश की किरण अभिलम्ब के साथ लगभग ६०° का आयतनकोण (ध्रुवण कोण) बनाती हुई गिरती है, तो परावर्त्तित प्रकाश लगभग पूर्णरूप से ध्रुवित होता है और परावर्त्तित होने वाले कम्पनों की दिशा आयतन-तल के समकोण होती है।

अब हम देखेंगे कि ठीक ऊर्ध्व दिशा का आकाश काँच मे किस प्रकार प्रतिबिम्बित होता है; इस काँच को आँख की सतह से करीब ८ इच ऊपर रखना चाहिए ताकि यथासम्भव परावर्त्तन ध्रुवणकोण पर ही हो (चित्र १४०, a)। यदि आप दिक्-सूचक की सभी दिशाओं की ओर बारी-बारी से अपना रुख करे और साथ ही साथ काँच को इस प्रकार पकड़े रहे कि आपके सिर के ऊपर के आकाश के **उसी भाग** को यह सदैव प्रतिबिम्बित करता रहे तो आप देखेंगे कि परावर्त्तित प्रतिबिम्ब उस वक्त सबसे अधिक **चटकीला** होता है जब आप सूर्य्य की ओर मुँह करते हैं या जब ठीक उसकी विपरीत दिशा मे; किन्तु इन दिशाओं की समकोण दिशा मे जब आप खड़े होते है तो प्रतिविम्ब **मन्द प्रकाश** का दीखता है। इससे सिद्ध होता है कि ऊर्ध्व बिन्दु के आकाश से आने वाला प्रकाश उस धरातल के समकोण दिशा मे कम्पन करता है जिसमें सूर्य्य, ऊर्ध्व बिन्दु तथा आप की आँख स्थित होती है। जब कभी प्रकाश क्षुद्र कणो से परिक्षेपित होता है तो यह नियम व्यापक रूप से लागू होता है।

इसके वाद क्षितिज के निकट वाले आकाश के प्रतिबिम्बन की हम जाँच करेंगे, और काँच को इस तरह रखे रहेंगे कि आपतन और परावर्त्तन के कोण ध्रुवण कोण के बराबर हों (चित्र १४०, b)। हम देखते हैं कि सूर्य की ओर तथा उसके प्रतिकूल दिशा मे प्रतिबिम्ब चटकीला दीखता है और इसकी समकोण दिशा मे मन्द प्रकाश का। सूर्य की दिशा मे यह चटकीला दीखे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं, किन्तु अन्य तीन दिशाओं मे आँखों को, परावर्त्तक काँच के बिना, आकाश बहुत कुछ एक-समान प्रदीप्ति का दीखता है, अतः परावर्त्तित प्रकाश मे जो अन्तर हम देखते हैं, वह यथार्थ मे ध्रुवण की घटना है। सूर्य की प्रतिकूल दिशा के क्षितिज से हमारे पास आने वाला प्रकाश केवल अल्पमात्रा मे ध्रुवित होता है जबकि इसकी समकोण दिशा मे ध्रुवण प्रबल मात्रा में होता है और कम्पन ऊर्ध्व दिशा मे होते हैं, अर्थात् सूर्य, प्रेक्षित बिन्दु, तथा आँख से गुजरने वाले तल की समकोण दिशा में।

1. It is possible to buy polarising film a newly invented device called polaroid

प्रश्न उठता है कि क्या स्वयं प्रकृति कभी हमारे लिए इस प्रकार के परीक्षणों का आयोजन करती है। अवश्य ही शान्त पानी पर होने वाले आकाश के प्रतिबिम्बन में भी हमे मन्द प्रकाश का भाग दीखेगा। पानी की सतह को हम ऐसी दिशा से देखते हैं कि आपतन कोण ५०° से कुछ अधिक ही हो, और तब चारों दिशाओं में हम घूम जाते हैं; सूर्य जब आकाश मे थोड़ी ऊँचाई पर ही स्थित होता है तो उत्तर और दक्षिण



चित्र १४०–**आकाश के प्रकाश के ध्रुवण की जांच, (a) ऊर्ध्व बिन्दु के निकट, (b) क्षितिज के निकट।**

की ओर का पानी पूरब और पश्चिम की ओर के पानी की अपेक्षा स्पष्ट रूप से कम प्रकाशित दीखता है। मेरा निज का अनुभव यह है कि यह प्रयोग कभी-कभी ही सफल होता है, सदैव नही। आम तौर पर या तो समूचे आकाश की प्रदीप्ति पर्याप्त रूप से एक समान नही होती या फिर पानी की सतह पर्याप्त रूप से समतल नही होती।

और भी अधिक विश्वसनीय तथ्य है कि कभी-कभी छोटे बादल, जो हवा में मुश्किल से ही दृष्टिगोचर हो पाते हैं, पानी के प्रतिबिम्बन मे अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ते है क्योकि इनका प्रकाश, ध्रुवित न होने के कारण परावर्त्तन द्वारा आकाश के ध्रुवित प्रकाश की तुलना में कम मात्रा मे क्षीण हो पाता है। अवश्य यही प्रभाव और भी अधिक स्पष्ट उस वक्त होता है जब आकाश और बादल को 'निकल' के पार से देखते हैं या कालिख लगे काँच से उनका परावर्त्तन कराते हैं। अच्छा होगा यदि सूर्य जब पूरब या पच्छिम मे थोड़ी ही ऊँचाई पर हो, हम ऐसे किसी छोटे बादल को देखें

जो उत्तर या दक्षिण की ओर २०° से लेकर ४०° की ऊँचाई पर स्थित हो, जहाँ कि आकाश मे प्रकाश-ध्रुवण अधिकतम होता है। प्रकाश के कम्पन की दिशा आकाश के इस भाग को सूर्य से मिलाने वाली रेखा के समकोण होती है, अर्थात् कम्पन ऊर्ध्व धरातल मे होते हैं, अतः सामने मेज़ पर पड़े हुए काँच मे आकाश के इस स्थल से आये हुए प्रकाश को अत्यन्त क्षीण अवस्था में हम देखते हैं और तब नन्हा बादल अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ता है।

आकाश के ध्रुवण की जाँच के निमित्त उपयुक्त उपकरण सवार्त का ध्रुवणदर्शी[1] है जो एक सरल यंत्र होने के बावजूद भी अत्यन्त सुग्राही होता है। किन्तु इस ख्याल से ही कि कुछ थोड़े-से ही प्रकृति के पुजारी इतने भाग्यशाली होंगे कि उनके पास यह यत्र मौजूद हो, तथा इस कारण भी कि ये घटनाएँ ऋतुविज्ञान सम्बन्धी प्रकाश के एक पूर्णतया पृथक् क्षेत्र की चीजे हैं, हम यहाँ पर इस विषय से सम्बन्ध रखने वाले कुछ ग्रन्थ-साहित्य का उल्लेख करने तक ही अपने को सीमित रखेंगे।[2] उन व्यक्तियों के लिए जो क्रमबद्ध प्रेक्षण करने मे रुचि रखते हैं, यह एक अत्यन्त ही स्फूर्तिदायक तथा विविधतापूर्ण विषय है।

किसी 'निकल' को उसके अक्ष के गिर्द केवल घुमाकर, उसकी सहायता से आकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण आसानी से कर सकते हैं। निम्नलिखित विधि एक अत्यन्त सवेदी विधि है, किन्तु सन्ध्या के धुँधलके मे ही इसे व्यवहार में ला सकते हैं। किसी तारा को चुन लीजिए जो इतनी फीकी रोशनी देता हो कि बस वह मुश्किल से दीखता भर हो और 'निकल' मे से देखते हुए यह ज्ञात करने का प्रयत्न कीजिए कि क्या 'निकल' की कुछ विशेष स्थितियों में तारे की दृश्यता उसकी अन्य स्थितियों की तुलना मे बढ़ जाती है। यह विधि उसी सिद्धान्त पर आधारित है जो ऊपर दिये गये नन्हे बादलों के प्रेक्षण के लिए लागू होता है। तारे का प्रकाश ध्रुवित नहीं होता और पृष्ठभूमि का प्रकाश जितना अधिक मन्द होगा उतना ही अधिक स्पष्ट वह तारा प्रतीत होगा; अतः तारे की दृश्यता मे परिवर्त्तन, पृष्ठभूमि की प्रदीप्ति के परिवर्त्तन का सूचक है, फल-

1. Savart's poloriscope
2. Fr. Busch and Chr. Jensen, Tatsachen und Theorien der atmosphorischen polarisation (Hamburg, 1911); Plassmann, Ann. d. Hydr. **40**, 478, 1912.
   Jensen in Kleinschmidt, Hardbuck der Meteor. Instrumente p. 666 (Berlin, 1935)

स्वरूप ध्रुवण का सूचक भी। सूर्य की ओर की दिशा की समकोण दिशा में, तारे की दृश्यता मे करीब-करीब दीप्ति-माप-श्रेणी के १ अंक की वृद्धि हो जाती है।

यही वजह है कि दिन के समय 'निकल' (nicol) दूरस्थ वस्तुओं के लिए उनकी दृश्यता बढ़ा देता है बशर्ते इसे इस प्रकार घुमाया जाय कि आकाश से परिक्षेपित होने वाले प्रकाश को यह रोक दे।[1] दूर से सफेद रग के खम्भे, प्रकाश-गृह, समुद्र के उजले रंग के पक्षी आदि मटमैली पृष्ठभूमि की तुलना मे अधिक स्पष्ट दीखते है—अवश्य ऐसा खुली धूप वाले दिन ही होता है; धुन्ध वाले दिन भूरे आकाश से आने वाले प्रकार का ध्रुवण पर्याप्त मात्रा मे नही हो पाता। सूर्य से ९०° कोण वाली दिशा मे आम तौर से 'निकल' का प्रभाव सर्वाधिक होता है।

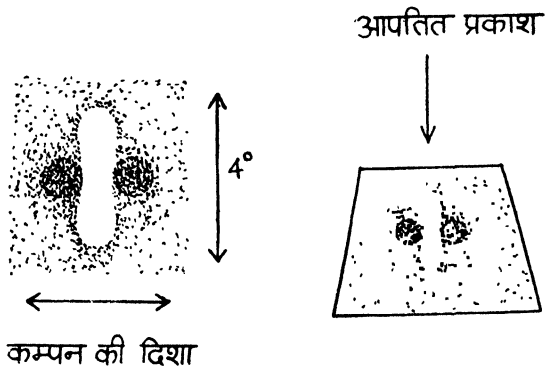
कालिख लगे काँच की सहायता से नीचे आकाश के विभिन्न बिन्दुओं के प्रकाश के ध्रुवण की जाँच कीजिए और इस प्रकार उनका एक आम सर्वेक्षण प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिए। क्या यह सम्भव होगा कि ठीक सूर्य के ऊपर की, तथा प्रति सूर्य के ऊपर की असाधारण ध्रुवण की दिशाओ मे प्रेक्षण प्राप्त कर सके ? और उस दशा मे क्या होगा जब कि नीचे आकाश के प्रकाश को वाटिका-ग्लोब द्वारा परावर्त्तित करा ले और तब ध्रुवण कोण पर कालिख लगे काँच द्वारा इसका प्रेक्षण करे ?

१८१. हेडिन्जर ब्रुश[2]

प्रयोगशाला के अनेक भौतिकीज्ञ उस वक्त आश्चर्य करते है तथा अविश्वास प्रकट करते है जब हम उन्हे बतलाते है कि केवल कोरी आँखों से, बिना किसी यंत्र की सहायता लिये, हम देख सकते है कि आकाश का प्रकाश ध्रुवित होता है ! किन्तु इसमे थोडे अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए आरम्भ हमे पूर्णतया ध्रुवित प्रकाश से करना चाहिए जो काँच की सतह से ध्रुवण-कोण पर आकाश की रोशनी को परावर्त्तित कराने पर मिलता है (§ १८०)। समान रूप से नीले रंग के आकाश के प्रतिबिम्ब को मिनट दो मिनट तक देखते रहने पर एक प्रकार का 'सगमर्मर' जैसा प्रभाव प्रकट होने लगता है। उस दिशा मे जिधर हमारी आँख देख रही है, थोड़ी ही देर बाद एक अद्‌भुत आकृति दिखलाई देती है जिसे 'हेडिन्जर

1. H. N. Russell, Science, 63, 616, 1917.
2. Haidinger's, Brush; Busch and Jensen, see note on p. 256. Helmholtz, Physiologische Optik, 3 rd. ed. part 2, p. 256. Th. Mendelssohn, Revue Fac. Sc. Istambul, 3, Fasc. 2, 1938

ब्रुश' का नाम दिया गया है, यह शक्ल चित्र १४१ में दिखायी गयी आकृति से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। यह एक पीत वर्ण का ब्रुश-जैसा होता है जिसके



चित्र १४१—**हेडिंजर ब्रुश; एक अद्भुत आकृति जो नीले आकाश में देखी जा सकती है और यह ध्रुवण की सूचक है। (प्रकाश का ब्रुश पीत वर्ण का होता है, इसके बगल के बादल नीले वर्ण के होते हैं।)**

दोनों ओर नीला धब्बा मौजूद रहता है। पीत वर्ण का ब्रुश काँच पर परावर्त्तित होन वाले प्रकाश के आपतन धरातल मे स्थित होता है; दूसरे शब्दों मे, यह पीला ब्रुश सदैव प्रकाश की कम्पन दिशा के **समकोण** पड़ता है।

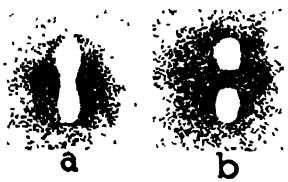
यह ब्रुश चन्द सेकण्डों मे विलुप्त हो जाता है, किन्तु यदि आप अपनी दृष्टि उसके निकट ही काँच के किसी बिन्दु पर गड़ाये रखें तो आपको ब्रुश फिर दिखलाई देगा। यह आकृति आसपास की पृष्ठभूमि पर आसानी से दृष्टिगोचर नही हो पाती, और अनुमानतः इसमे मुख्य बात यह दीखती है कि कैसे अनिवार्य रूप से अव्यवस्थित पृष्ठ-भूमि पर इस धुधली आकृति को पहचान ले। इसके लिए दिन मे कई बार चन्द मिनटों के लिए अभ्यास करना चाहिए। एक या दो दिन उपरान्त नीले आकाश की ओर देखने पर हेडिन्जर ब्रुश को काफी आसानी से पहचाना जा सकता है यद्यपि आकाश का प्रकाश केवल आंशिक रूप से ही ध्रुवित होता है। सन्ध्या के धुँधलके में यदि मैं क्षितिज की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हूँ तो इस ब्रुश को मै विशेष स्पष्ट देख पाता हूँ; सारा आकाश मानो एक जाली से घिरा जान पड़ता है; जिस ओर दृष्टि डालता हूँ उधर ही यह विशिष्ट आकृति दिखलाई पड़ती है। इस बात से बड़ी प्रसन्नता प्राप्त

होती है कि इस तरीके से, बिना किसी यंत्र की सहायता लिये, ध्रुवण की दिशा मालूम कर सकते है, और यही नही, बल्कि ध्रुवण की मात्रा का भी अन्दाज़ लगा सकते है। पीत वर्ण के ब्रुश को यदि बृहत् वृत्त के चाप की दिशा में बढ़ाएँ तो आम तौर पर यह सूर्य की ओर इगित करता है जो यह प्रगट करता है कि परिक्षेपित प्रकाश सामान्यतः उस धरातल की समकोण दिशा में कम्पन करता है जिसमे सूर्य, वायु के अणु तथा आँख स्थित होती है।

हेडिंजर ब्रुश का अवलोकन और भी अधिक स्पष्ट रूप से वाटिका-ग्लोब में होने वाले आकाश के प्रतिबिम्बन मे किया जा सकता है जबकि सूर्य का प्रतिबिम्ब प्रेक्षक के सिरे की आड़ मे आ जाता है (देखिए § ११)।

इस दशा मे सूर्य के निकट एक छोटा सा ऐसा प्रदेश भी देखा जा सकता है जिसमे पीला ब्रुश सूर्य की ओर इङ्गित नहीं करता, बल्कि इसकी समकोण दिशा में वह इङ्गित करता है। सामान्य प्रभाव तथा अतिक्रम प्रभाव वाले प्रदेशों के दर्मियान की सीमा एक छाया-जैसी दीखती है।

नेत्र-रेटिना के पीतबिन्दु के द्विवर्णिक प्रभाव[1] के कारण हेडिजर ब्रुश का निर्माण होता है। सभी प्रेक्षकों को यह अद्भुत आकृति एक-सी नही दिखलाई पड़ती, यह बात निस्सन्देह इस पीत बिन्दु की शक्ल और सरचना पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए कुछ लोगों को इस आकृति का नीला हिस्सा नही दीखता, कुछ को पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक मिला हुआ दिखलाई देता है तो अन्य लोगों को नीला भाग एक दूसरे से मिला दीखता है (चित्र १४२)।



चित्र १४२—हेडिंजर ब्रुश सदैव एक ही तरह का नहीं दीखता है। (a) यहाँ ब्रुश का पीतवर्ण अविरत एक सिरे से दूसरे सिरे तक चला गया है। (b) यहाँ नीला वर्ण अविरत है।

निम्नलिखित दोनों समभिकथन एक दूसरे के विरोधी है;

(क) प्रथम अनुभूति यह होती है कि पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक अविच्छिन्न है; अधिक देर तक देखते रहने से जब आँख में श्रान्ति आ जाती है तब प्रतिविम्ब बदल जाता है और नीला भाग अविच्छिन्न दीखता है।[2]

1. Dichroism 2. Hardinger, Ann. d. Phys. 67, 435, 1846

(ख) सदैव उस रंग का प्रदेश अविच्छिन्न दीखता है जो आँखों को मिलाने वाली रेखा के समकोण पड़ता है। अतः यदि नीले आकाश के किसी निश्चित बिन्दु को आप देखें और अपने सिर को ९०° घुमा दें तो पहले आप एक रंग को अविच्छिन्न देखेंगे और बाद में दूसरे रंग को।[1] आकृति की अस्थायी प्रकृति के कारण, इसके बारे में किसी निश्चित मत का स्थिर करना कठिन होता है।

आँख के सामने यदि हरा या नीला काँच रखें तो हेर्डिजर ब्रुश बहुत अधिक स्पष्टता से देखा जा सकता है, जबकि लाल या पीले काँच को आँख के सामने रखने पर यह विलुप्त हो जाता है।[2] यह एक दिलचस्प बात है कि क्षितिज पर यह ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति के मुकाबले में दो गुने आकार का दीखता है, उसी प्रकार जिस तरह सूर्य, चन्द्रमा और तारा-समूह क्षितिज पर अपेक्षाकृत बड़े दीखते हैं।

१८२. कुहरे और धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण

तड़के सुबह का हलका धुन्ध, जिसमे से होकर सूर्य चमकता हुआ दीखता हो, आह्लाद तथा स्फूर्तिदायक होता है और अत्यन्त नीरस दृश्य को भी काव्यजनित सौंदर्य प्रदान करता है। अधिक घना धुन्ध दूर के दृश्य के लिए रुकावट डालता है, किन्तु निकट के वृक्ष और मकानों पर इस तरह का धुँधलापन डाल देता है जैसा हम केवल दूर की वस्तुओं पर देखने के अभ्यस्त हैं; इसी के साथ निकट की इन वस्तुओं द्वारा सम्मुख होने वाले बड़े आकार के कोण से हम विशेष प्रभावित होते हैं और ये कोण अपने तई इस बात का आभास देते हैं मानों ये वस्तुएँ असाधारण रूप से ऊँची हों। इन अनुभूतियों के (जो प्रायः अवचेतन मन मे ही होती है) परस्पर मिलने के फलस्वरूप बड़ी इमारतें महलों-जैसी शानदार प्रतीत होती हैं तथा मीनारों की चोटियाँ बादलों को छूती जान पड़ती हैं।[3]

धुन्ध मे से देखने पर वस्तुओं के रंग में आम तौर पर कोई परिवर्त्तन नहीं दीखता। सूर्य की चमक यद्यपि बहुत अधिक घट जाती है, किन्तु अब भी यह उज्ज्वल रहता है और सड़क पर लगे निकट के लैम्प तथा दूर के लैम्प के रंग में कोई उल्लेखनीय अन्तर

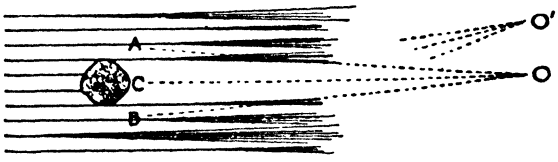
1. Brewster, Ann. d. Phys. **107**, 346, 1859. Aphascintly in agreement, A Hoffmann, Weter 34, 133, 1917
2. Stokes, Papers 5
3. Vaughan Cornish, Geogr, Journ. **67**, 506, 1926

नहीं दीखता। किन्तु कुछ अन्य उदाहरण भी है जैसे सूर्य जब क्षितिज से काफी ऊँचाई पर होता है तो कुहरे मे से वह लाल रग का दीखता है। अवश्य सब कुछ धुन्ध की बूंदों के आकार पर निर्भर करता है; बूंदे जब लगभग प्रकाश के तरंग-दैर्ध्य के बराबर छोटी होती है, तो प्रकाशस्रोत ललछवें रंग का दीखता है, अत: ये मुख्यत: नीली और बैंगनी किरणों का परिक्षेपण करती है, जबकि पीली और लाल किरणों का परिक्षेपण अपेक्षाकृत कम मात्रा मे होता है (§ १७१)।

ऐसे अवसरों पर स्वयं धुन्ध श्वेत रंग का होता है, निश्चय ही नारङ्गी वर्ण के सूर्य के मुकाबले मे तो यह अधिक ही सफ़ेद दीखता है क्योकि यह पार आनेवाली किरणों तथा परिक्षेपित किरणों, दोनों से ही प्रकाशित होता है। इस प्रकार का घना धुन्ध नीलापन लिये नहीं होता; परिक्षेपित प्रकाश संभवत: आपतित प्रकाश का ९९ प्रतिशत होता है और इस कारण समष्टि रूप से धुन्ध को सफ़ेद ही दीखना चाहिए यद्यपि आयतन का प्रत्येक नन्हा भाग नीले प्रकाश का परिक्षेपण विशेष अधिक मात्रा मे भले ही करे।

अपेक्षाकृत बड़ी बूंदे, जिनसे धुन्ध का निर्माण होता है, प्रकाश के अधिकांश को सामने की ओर, प्रारम्भिक आपाती दिशा के साथ अल्प कोण बनाने वाली दिशा में परिक्षेपित करती है (§ १७७)। इससे इस बात का स्पष्टीकरण हो जाता है कि क्यों हलका धुन्ध लगभग सूर्य की दिशा मे देखने पर अत्यधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। जंगल के अन्दर धूप में धुन्ध की बढ़िया फोटो रोशनी के खिलाफ रुख ली जाती हैं जब कि सूर्य की ओर से तनिक हटी हुई दिशा मे केमरे का मुह रखते है।

अपेक्षाकृत घने धुन्ध के बारे मे सबसे अधिक आश्चर्यजनक बात है छाया का 'ठोसपन' (चित्र १४३)। किसी वृक्ष की ओर जाने पर जिसके तने पर सूर्य की



चित्र १४३—धुन्ध में वस्तु के पीछे छायाएं कैसे बनती हैं।

रोशनी पड़ रही हो, आप AO तथा BO दिशा में ढेर-सा प्रकाश देखेंगे क्योंकि इन दिशाओं में धुन्ध की अनेक बूंदें पड़ती है जो प्रकाश का परिक्षेपण करके वायु को

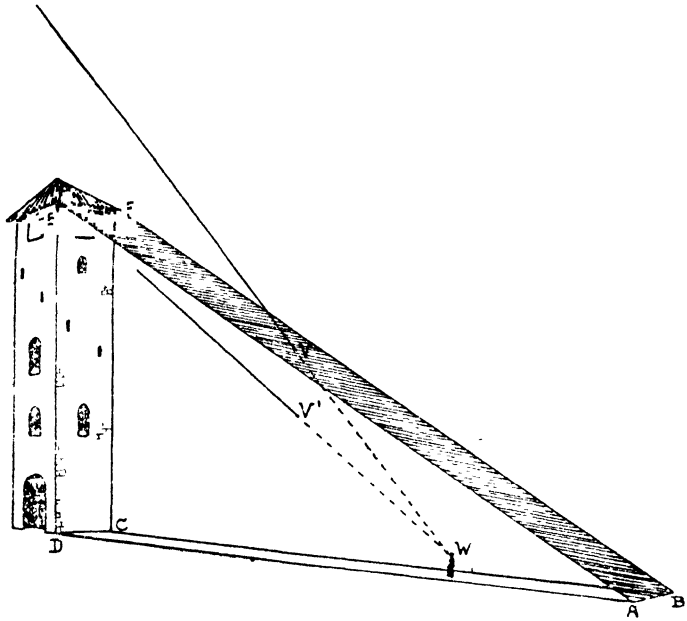
स्वयं प्रकाशित-सा कर देती है। C O दिशा मे आप को बहुत कम रोशनी दीखती है क्योंकि आप ऐसी वायु मे से देख रहे है जिस पर प्रकाश पड़ नहीं रहा है। अब यदि अपनी आँख थोड़ा एक तरफ हटाए, बिन्दु O′ तक, तब धुन्ध के प्रकाशित तथा अ-प्रकाशित भाग एक दूसरे के ऊपर पड़ते है और छाया अस्पष्ट हो जाती है; और फिर A O′ तथा B O′ दिशाओं से मुश्किल से ही प्रकाश आ पाता है क्योकि इतने बड़े कोण की दिशा में परिक्षेपण नगण्य-सा ही हो पाता है (§ १७७)।

इस प्रकार प्रत्येक शाखा के, प्रत्येक खम्भे के पीछे, उसकी छाया शून्य में लट-कती-सी रहती है, और छाया उस वक्त तक कतई नही दीखती, जब तक हम एक दम छाया के निकट उसके अन्दर तक, न पहुँच जायँ। इससे भी अधिक अद्भुत दृश्य रात को दीखता है जब कि सड़क का प्रत्येक लैम्प, हरएक मोटरकार का हेडलैम्प, धुन्ध को स्वय-प्रकाशित कर देता है, और प्रत्येक वस्तु के पीछे उसकी छाया बनाता है जो केवल पीछे की ओर से दृष्टिगोचर हो पाती है। धुन्ध के अन्दर टहलना, प्रकाशीय दृष्टि से, वास्तव मे आह्लादकारी होता है!

और भी अधिक विलक्षण बात उस वक्त देखने मे आती है जब धुन्ध वाले दिन सूर्य के रुख खड़े होकर हम सामने की किसी मीनार को देखते है या किसी खम्भे को देखते है जो सडक के लैम्प को ठीक अपने पीछे ढक लेता है। दोनों ही दशाओं में मीनार या खम्भे के ऊपर छाया हमे दिखलाई देती है। यह विचित्र घटना सहज मे ही समझ मे आ सकती है यदि इस बात पर विचार करे कि हवा की एक पट्टी ABCDEF, मीनार के पीछे आ जाती है जो सूर्य की किरणों से प्रकाशित नहीं होने पाती। इस पट्टी के केन्द्रीय धरातल मे स्थित प्रेक्षक W यदि WV दिशा मे देखे तो उसे VW दिशा से कम रोशनी मिलेगी, किन्तु दिशा V′W से अधिक रोशनी मिलेगी। अतः उसे अँधेरा छाया-मंडलक मीनार के ऊपर मौजूद दिखलाई देगा। यदि वह दाहिने या बाये हटता है, तो यह अँधेरी छाया क्रम से बाये या दाहिने को झुक जायगी। यदि वह और भी अधिक दूरी तक हट जाता है तब छाया विलुप्त हो जाती है क्योंकि बड़े कोण की दिशा में धुन्ध प्रकाश का परिक्षेपण नही कर पाता (चित्र १४३ क)।

कभी-कभी छाया के आरपार देखने पर आप उसकी धारियाँ देख सकते है; उदाहरण के लिए जब मकानों की छतों पर सूर्य की किरणे तिरछी पड़ती है और आप लगभग छाया की दिशा मे ही देखते है जो हवा मे हलकी आकृति की तरह दृष्टिगोचर होती है।

धुन्ध द्वारा पीछे की ओर होने वाले परिक्षेपण का प्रेक्षण करना विशेष कठिन होता है। धुन्ध की बूँदें अत्यन्त क्षुद्र आकार की होनी चाहिए, फिर भी धुन्ध को घना



चित्र १४३ क—**धुन्ध के समय ऊँची मीनार के सिरे पर छाया मंडलक कैसे बनता है।**

होना चाहिए, और हमारे पीछे चकाचौध उत्पन्न करने वाले तीव्र प्रकाश का स्रोत हो, तथा सामने मटमैले रंग की पृष्ठभूमि। कभी-कभी, धुन्ध वाली रात्रि में यदि खुली खिड़की के सामने हम खड़े हों और हमारे पीछे से तेज प्रकाश आ रहा हो, तो हम अपनी छाया देख सकते हैं जो धुन्ध के पर्दे पर प्रक्षेपित होती है। इस बात पर ध्यान दीजिए कि छाया जमीन पर नहीं बनती है, क्योंकि यह उस वक्त भी मौजूद रहती है जब लैम्प आपके सिर की ऊँचाई से थोड़ा नीचे स्थित होता है। अपनी आँखों को बाहर के अन्धकार के प्रति अभ्यस्त होने दीजिए तथा अपने हाथों से, बगल की रोशनी को आँख तक पहुँचने से रोकिए (चित्र १४४)। धुन्ध पर आप की बाहों

की छाया बहुत लम्बी प्रतीत होती है तथा आपके शरीर की छाया बृहत्काय और नुकीली दीखती है। छाया की तमाम धारियाँ आपके सिर की छाया की ओर एकत्र होती हैं, जो लैम्प का प्रतिबिन्दु भी है। इस बिन्दु के गिर्द आभा की चमक मौजूद होती है जो सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त होती है जब आप उधर-उधर थोड़ा हिलते हैं। यह आश्चर्यजनक चित्र 'ब्रोकेन की प्रेतछाया' के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, जो धूप में ऊँचे पर्वत शिखर के धुन्ध पर इतनी प्रभावोत्पादक दीखती है।



चित्र १४४—**ब्रोकेन की प्रेतछाया, धुन्ध के रूप में।**

इस घटना के बृहत् आकार धारण करने का कारण यह है कि छाया एक धरातल में नहीं पड़ती बल्कि दस-बीस गज़ की गहराई तक यह फैली रहती है।

सायकिल सवार को, जिसके पीछे से मोटरकार के हेडलैम्प की चकाचौंध पैदा करने वाली रोशनी आती है, कभी-कभी कुहासे पर स्वयं अपनी छाया एक बृहत् आकार की दिखलाई पड़ती है। पीछे से आती हुई दूसरी सायकिल के लैम्प की रोशनी यदि पहले सायकिल सवार के सिर पर पड़ती है, तब भी यह घटना उत्पन्न होती है।

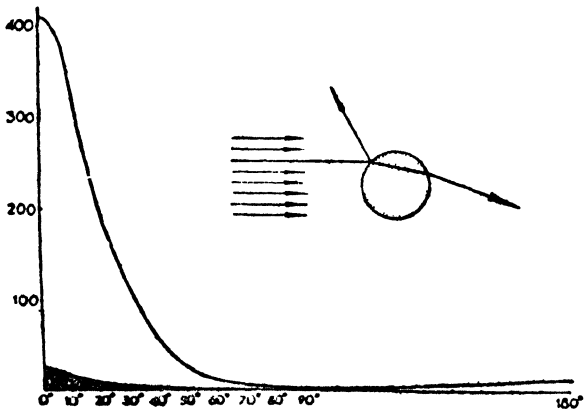
प्रकाश की चमक और उस पर बनने वाली छाया की लकीरें इस कारण उत्पन्न होती हैं कि कुहरे की बूँदों द्वारा प्रकाश के अल्पांश का पीछे की दिशा में परिक्षेपण होता है; वे तमाम प्रकाश-रश्मियाँ जो हमारी आँख की छाया **की ओर केन्द्रित** होती जान पड़ती हैं, वास्तव में **समानान्तर** होती हैं (या लगभग)। (देखिए §§ १९१, २१७)।

१८३. वर्षा और पानी की बूँदों की दृश्यता

बौछार के समय अच्छा होगा यदि इस बात का प्रेक्षण करें कि वर्षा की गिरती हुई बूंदें किस दिशा में सबसे अधिक आसानी से दिखलाई पड़ती हैं। ये बूंदें न तो चमकीले आकाश के सम्मुख दिखाई देती हैं और न जमीन के सामने, किन्तु मकानों और वृक्षों के सामने दृष्टिगोचर होती हैं। स्पष्ट है कि वे केवल तभी देखी जा सकती

है जब वे प्रकाश रश्मियों को उनके मार्ग से विचलित करके उस क्षेत्र में चमक उत्पन्न करती है जहाँ पहले अन्धकार था। अवश्य ही प्रकाश की किरणें मुख्यतः **अल्प कोण** पर विचलित होती हैं (०° से लेकर ४५° तक)। प्रकाश के दिये हुए अल्प विचलन के लिए पृष्ठभूमि का चमकीलापन जितना ही अधिक बढ़ेगा बूंदें उतनी ही अधिक स्पष्ट दीखेंगी। वर्षा के समय यदि धूप निकली हुई है तो सूर्य की दिशा के निकट की बूंदें अत्यधिक चमक के साथ जगमगाती हैं; इसका कारण यह है कि सूर्य और **आकाश** की प्रदीप्ति में अन्तर बहुत ही अधिक होता है, अतः वर्त्तन करने वाली प्रत्येक बूंद स्पष्ट दीख जाती है।

मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख इन बूंदों को आप लगभग सदैव ही मोतियों की तरह चमकती हुई देख सकते हैं, हलकी रोशनी के आकाश के सम्मुख वे बहुत कम ही मटमैली दीखती हैं। यह इस व्यापक सिद्धान्त के अनुरूप है कि आँख की सुग्राहिता प्रकाश तीव्रताओं के पारस्परिक अनुपात द्वारा निर्धारित होती है न कि उनके **अन्तर**



चित्र १४५--वर्षा की बूंदों में जगमगाहट उत्पन्न करनेवाला सूर्य का प्रकाश हर दिशा में परावर्तित तथा वर्तित होता है। चित्र में भिन्न विचलन कोणों के लिए प्रकाश-तीव्रता का वितरण दिखलाया गया है। (शेड वाला स्थल परावर्तित किरणों में जानेवाली प्रकाश मात्रा बतलाता है।)

द्वारा (§ ६४)। यदि तीव्रता मान १०० का प्रकाश बूंद पर गिरता है और परिक्षेपित होने वाले प्रकाश की तीव्रता १० हो तो ऐसे मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख यह

भली-भाँति दीखेगा जिसकी प्रदीप्ति-तीव्रता ५ हो, क्योंकि यहाँ तीव्रता का अनुपात २ : १ है। इसके प्रतिकूल उसके पार गुजरने वाले प्रकाश की तीव्रता १०० से घटकर ९० हो जाती है; इसका अर्थ है कि आकाश की पृष्ठभूमि पर देखे जाने पर बूँद के लिए तीव्रता का अनुपात केवल १० : ९ है, जो मुश्किल से ही दृष्टि की पकड़ मे आ पाती है। किन्तु यदि बूँदे हमारे निकट स्थित हों जैसे छतरी से गिरने वाली बड़े आकार की बूँदे, तो गिरते समय ये मटमैले रग की दीखती है। और मूसलाधार वर्षा मे काले बादलो के बीच के खुले आकाश की पृष्ठभूमि के सामने मटमैले रग की समानान्तर धारियाँ हमे दीखती है। इसी प्रकार की घटना का प्रेक्षण फौआरो मे तथा पौदों के सीचते समय पानी की फुआर मे भी किया जा सकता है।

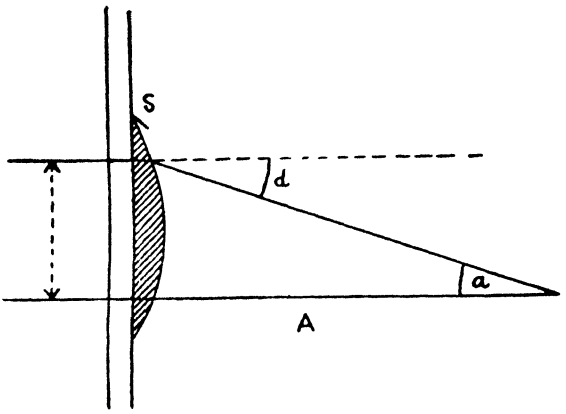
प्रकाश के सामान्य नियमो को लागू करके हम आसानी से इस बात का हिसाब लगा सकते है कि प्रकाश के प्रतिफलित वितरण मे बूँद की सतह से परावर्त्तित होने वाली किरणे कितना योग देती है और कितना योग वे किरणे देती है जो वर्त्तन के उपरान्त बूँदों मे से होकर गुजरती है (चित्र १४५)। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्त्तित होने वाली किरणें ही अपेक्षाकृत अधिक योग देती है और अवश्य ही प्रकाश को अल्प कोण पर विचलित करती है, ठीक जैसा कि प्रत्यक्ष प्रेक्षण से हमे निष्कर्ष प्राप्त हुआ था।

१८४. खिड़की के काँच पर प्रकाश का परिक्षेपण जिस पर पानी की संघनि बूँदें पड़ी हों

रेलगाडी की खिडकी मे से जिस पर पानी की बूँद घनीभूत हुई हो, देखने पर बाहर के सड़क के लैम्प चारो ओर मे चकाचौध वाली ज्योति मे परिवेष्टित दिखाई देते है। ऐसे प्रकाश के घेरे की त्रिज्या का अनुमान आसानी से लगा सकते है तथा खिड़की से आँख की दूरी A को भी मालूम कर सकते है। आप पायेगे कि परिक्षेपण उस वक्त करीब-करीब पूर्णतया रुक जाता है जब कोण $\alpha = \frac{r}{A}$ का मान ०.०५–०.१० रेडिएन अर्थात् ३°–६° तक पहुँच जाता है।

इस दशा मे ये नन्ही बूँदे पूर्ण गोले की शक्ल की नही होती, बल्कि परिमित ऊँचाई के गोल खण्ड ही ये होती है। ऐसी बूँदों के हाशिये के निकट वाले भाग से ही किरणों का विचलन अधिकतम होता है। मानो ये किरणे एक पतले प्रिज्म द्वारा मोड़ दी जाती है जिनके नन्हें शीर्षकोण का मान δ है, अतः इनमे होने वाले विचलन कोण

का मान $\alpha = (n-1)\delta$ होता है। चूंकि पानी का वर्त्तनाङ्क n१.३३ है, अतः प्रिज्म के शीर्ष कोण δ का मान १०°–२०° तक हो सकता है (चित्र १४५ क)।



चित्र १४५ क—**खिड़की के काँच पर पड़ी हुई पानी के बूँद से प्रकाश का परिक्षेपण। (ऊपर बिन्दुरेखा के नीचे d की जगह अलफा α पढ़िए और बायीं ओर बिन्दुरेखा के बगल में r रखिए)**

१८५. हवा में तैरते हुए कणों की दृश्यता[1]

जल की बूँदों की दृश्यता का उपर्युक्त विवरण बहुत कुछ अंशो मे वायु में तैरती हुई सभी चीजों के लिए लागू किया जा सकता है। धूल के बादल, सूर्य की दिशा में उससे उलटी दिशा की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से देखे जा सकते है। धूप वाले दिन क्षितिज के सहारे एक हलका धुँधलापन क्षितिज से करीब ३° की ऊँचाई तक अक्सर देखा जा सकता है जब कि हम सूर्य की ओर देखते है; लगभग आध मील से कम की दूरी पर दृश्यों के रंग साफ़ पहचाने नहीं जा पाते और दूरस्थ गिर्जाघरों की मीनारें दिखलाई नही देतीं। यदि हम सूर्य की प्रतिकूल दिशा मे देखें तो क्षितिज से लगा हुआ धुँधलापन और भी मटमैला हो जाता है। सूर्य के निकट के धुधलेपन की पेटी और उसके प्रतिकूल दिशा की मटमैली पेटी का अन्तर विशेष रूप से स्पष्ट उस वक्त देखा जा सकता है जब हम गुब्बारे मे बैठकर या पहाड़ पर चढ़ते समय इस धुन्ध के

1. Visibility

ऊपरी सिरे तक पहुँच जाते हैं। परिवर्त्तन की सीमा सूर्य से लगभग ८०° की दिशा पर मिलती है, जहाँ कि धुन्धलके के स्तर की चमक करीब-करीब आकाश की चमक के बराबर होती है।

रात्रि का जब आगमन होता है तो उगता हुआ चन्द्रमा गहरे लाल रंग का रहता है, किन्तु आश्चर्यजनक तेजी के साथ यह पीत-श्वेत रंग में परिणत हो जाता है।

यदि हलके धुन्ध के समय चिमनी के साये मे खड़े हों तो हमे सूर्य प्रकाश के एक आभामण्डल (आरिएल) द्वारा घिरा दीखता है जो कि उस वक्त तक प्रकट नहीं हो पाता जब तक कि हमारी आँख धूप की चमक की चकाचौध मे रहती है। किसी-किसी वक्त इस आभामण्डल का हाशिया लाल रंग का होता है। धूल तथा पानी की नन्ही बूदों से उत्पन्न होने वाला इसी तरह का प्रकाशीय प्रभाव कुछ हलके रूप में उस वक्त भी देखा जा सकता है जब कुहरा मौजूद नहीं होता (§ १९७)।

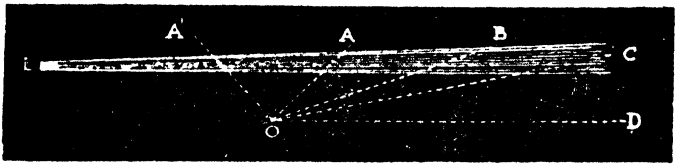
नन्हें कीड़े-पतगे जब प्रेक्षक के उसी ओर होते है जिधर सूर्य, तो वे रोशनी की चिनगारियों की तरह नाचते हुए नजर आते हैं, किन्तु सूर्य की उलटी दिशा मे वे मुश्किल से ही दिखलाई देते हैं। राई की बालो के रेशे जो हवा मे ऊँचाई पर लहराते हैं, अस्त होते हुए सूर्य की किरणों के सामने से देखने पर चित्ताकर्षक, स्वर्णिम नीललोहित रग के चमकते हैं। सूखे पत्ते, पत्थर की रोड़ियाँ, टहनियाँ, आदि जब कभी वे सूर्य के सामने से देखी जाती हैं तो सभी चमकती है जबकि प्रतिकूल दिशा मे वे कठिनाई से या बिलकुल ही नही दिखलाई देती।

ये [illegible] करते हैं कि पर्दे के हाशिये पर प्रकाश की किरणे अल्पमान के कोण पर ही विवर्त्तित होती हैं। यही बात छोटे आकार के ग्लोब द्वारा होने वाले परावर्त्तन, वर्त्तन या विवर्त्तन के लिए भी लागू होती है बशर्ते वे अत्यन्त छोटे न हों (§§ १७७, १८३)। टेढ़ी-मेढ़ी शक्ल की चीजे लगभग उसी आकार के छोटे पर्दे या ग्लोब-जैसा आचरण करती हैं।

१८६. सर्चलाइट

सर्चलाइट की किरणावलि विभिन्न दिलचस्प प्रेक्षणो के लिए सामग्री प्रदान करती है। सर्व-प्रथम हमे यह स्मरण रखना होगा कि वायु मे मौजूद धूल तथा जल की बूंदों के बिना जिन्हे यह प्रकाशित करती है, यह किरणावलि बिलकुल ही नही दृष्टिगोचर होगी। अतः किरणपुज का चमकीलापन वायु की शुद्धता का प्रमाण उपस्थित करता है।

यह कुछ विचित्र जान पड़ता है कि यह किरण-रेखा कुछ फासले पर अचानक ही खत्म हो जाती है, और ऐसा उस वक्त भी होता है जब कि आकाश अत्यन्त निर्मल होता है और कोई भी बादल मौजूद नही होता जो रुकावट के लिए पर्दे-जैसा काम करे। व्याख्या इस प्रकार है—बिन्दु O पर खड़े प्रेक्षक के पास AO, BO, CO आदि दिशाओं मे किरणपथ के प्रत्येक बिन्दु मे प्रकाश पहुँचता है। किन्तु किरण रेखा कितनी ही अधिक लम्बी क्यो न हो, उसे इस पर कोई भी बिन्दु OD दिशा के आगे नहीं दीखेगा, यह OD दिशा LC के समानान्तर है। यह दिशा ही प्रेक्षक के लिए



चित्र १४६—**सर्च लाइट से जानेवाली प्रकाश-शलाका अत्यन्त निश्चित दिशा में अचानक समाप्त होती जान पड़ती है।**

किरण-रेखा का 'अन्त' बतलाती है, अतः किरण-रेखा की दिशा आकाश मे सही-सही निर्धारित हो जाती है। किरण-रेखा के दूर के भागो से प्रेक्षक के पास प्रकाश पर्याप्त मात्रा मे पहुंचता है, इसका कारण अवश्य ही यह हो सकता है कि उसकी दृष्टि-रेखा दूर के भागो को तिरछी दिशा मे काटती है अत इस सीध मे परिक्षेपण करने वाले कणो की तह मोटी होती है, इसके प्रतिकूल, दिशा OA मे प्रकाशित वायु के अन्दर दृष्टि-रेखा-पथ की लम्बाई कम ही होती है।

जाकर किरणपुंज के निकट खडे होइए और ४५° तथा १३५° की दिशाओं मे प्रकाश-तीव्रता की तुलना कीजिए। आप पायेंगे कि A'O दिशा मे सामने की ओर का परिक्षेपण, दिशा AO के पीछे की ओर के परिक्षेपण की तुलना मे बहुत अधिक प्रबल है। फिर भी दोनो ही दशाओ मे दृष्टि-रेखा की सीध मे उपस्थित परिक्षेपण पदार्थ की मात्राएँ समान हैं, और यह हम मान ही सकते हैं कि A की दिशा मे किरण-रेखा का व्यास तथा दिशा A' मे प्राप्त व्यास मे अन्तर इतना कम है कि इसे हम नगण्य समझ सकते हैं। स्पष्ट है कि इसका कारण धूलिकणों द्वारा होने वाला असंमित परिक्षेपण है, क्योकि इन कणों का आकार काफी बड़ा होता है, अतः ये सामने की दिशा मे सबसे अधिक परिक्षेपण करते हैं (§ १७७)। इस प्रयोग के लिए अधिक

विश्वसनीय तरीका यह होगा कि किसी लाइटहाउस के निकट खड़े होकर किरणरेखा की प्रकाश-तीव्रता की तुलना इन दो दशाओं मे करें, पहले किरण जब हमारी ओर तिरछी दिशा मे आती है, और फिर जब किरण तिरछी दिशा मे हम से दूर जाती है।

इस ढग के कुछ प्रयोग एक वास्तव मे बढ़िया टार्च के किरणपुज के साथ किये जा सकते हैं बशर्ते रात का अन्धकार काफी गहरा हो। किरण-रेखा का अन्तिम छोर इतना स्पष्ट बनता है कि इसकी सहायता से अन्य लोगों के लिए विशेष तारे की स्थिति इङ्गित की जा सकती है।[1]

१८७. दृश्यता[2]

दृश्यता की नाप भूमिप्रदेश के ऐसे खुले मैदान में की जाती है जिसमे अनेक भूमि-चिह्न ऐसे लिये जा सके जो प्रेक्षक से क्रमशः बढ़ती हुई दूरियों पर स्थित हों; इस तरह के उपयुक्त भूमिचिह्न फैक्टरी की चिमनियाँ या दूरस्थ गाँवों के चर्च की मीनारें हो सकती हैं जिनकी दूरी किसी अच्छे मानचित्र से मालूम की जा सकती है। अब प्रेक्षक प्रत्येक दिन यह ज्ञात करता है कि कौन-सा चिह्न बस दिखाई भर दे रहा है, इसी चिह्न की दूरी को 'दृश्यता' का नाम दिया गया है। यदि ऐसे चिह्न-बिन्दु पर्याप्त सख्या मे उसे लभ्य नहीं हैं तो वह अपनी सामान्य अनुभूति के अनुसार 'दृश्यता' का तखमीना ०–१० माप स्केल पर प्राप्त कर सकता है। प्रकाशयतः प्रेक्षणफल कई बातो के अत्यन्त जटिल मिश्रण द्वारा निर्धारित होते हैं, विशेषतया वायु मे उपस्थित पानी की बूँदो तथा धूलिकणों द्वारा, जिनके कारण अँधेरे भागों पर एक कृत्रिम आभा फैल जाती है। मान लीजिए कि एक वस्तु प्रकाश-मात्रा A परावर्त्तित करती है, इसके सामने ही वायु प्रकाश-मात्रा B परावर्त्तित करती है तथा वस्तु के पीछे की वायु से प्रकाश-मात्रा C परावर्त्तित होती है। फिर कल्पना कीजिए कि वायु-मण्डल मे से गुजरने के उपरान्त प्रकाश मात्राओं A, B, C से क्रमशः मात्राएँ a, b, c हमारी आँख मे प्रवेश करती हैं। तब दूरस्थ वस्तु की दृश्यता $\frac{a+b}{b+c}$ द्वारा निर्धा-

1. Davis, Science, 76, 274, 1933

2. W.E. Knowles Middleton, Visibility in Meteorology (Toronto 1941); Fr, Lohle, Sichtbeobachtungen (Berlin 1941)—Both with numerous references to the extensive literature

रित होती है, और ऊपर बतायी गयी विधि के अनसार नापी जाने वाली दूरी द्वारा निर्देशित दृश्यता भी इसी भिन्नांश पर निर्भर है। इससे यह बात समझ मे आती है कि दृश्यता क्यो अकेले वायुमण्डलीय परिस्थितियों पर ही निर्भर नही करती, बल्कि कुछ हद तक यह सूर्य की स्थिति पर भी निर्भर है। सूर्य के प्रभाव को न्यूनतम बनाने के उद्देश्य से सर्वसम्मति से यह मान लिया गया है कि भूमिचिह्न या निर्देशन बिन्दु के लिए लगभग १० फुट ऊँची कोई मटमली रंग की वस्तु लेनी चाहिए जो आकाश की पृष्ठभूमि पर स्पष्ट दीखे तथा आँख पर ०.५° और ५° के दर्मियान का कोण बनाये। यह एक दिलचस्प बात है कि जब ये शर्तें पूरी होती हैं तब यह दिखाया जा सकता है कि दृश्यता, सूर्य की स्थिति या भूमिचिह्न की किस्म के प्रभाव से करीब-करीब पूर्णतया मुक्त होती है।

रात्रि मे किसी लैम्प को हम चुन सकते हैं जिसकी दूरी ज्ञात हो या फिर प्रथम माप श्रेणी के किसी तारे की उस न्यूनतम कोणीय ऊँचाई को डिग्रियों मे नाप सकते हैं जिस पर वह दीखने लग जाता है। अवश्य ये प्रयोगफल दिन में प्राप्त किये गये परिणाम से पूर्णतया मेल नहीं खाते, क्योंकि नापी जाने वाली राशि की मात्रा दोनों दशाओं मे एकदम समान नही होती।

अनगिनत प्रेक्षकों द्वारा प्रेक्षण किये गये हैं और उनके परिणाम आंकिक पद्धति से प्राप्त किये गये हैं। दृश्यता निर्धारित करने मे निस्सन्देह मुख्य तत्त्व है उस धूल की मात्रा जो हवा अपने अन्दर लिये रहती है। नगरों और फैक्टरियो से काफी फासले पर पायी जाने वाली धूल के बड़े कण अधिकतर नमक के क्रिस्टल होते हैं जो समुद्र जल की उन नन्ही बूंदों के वाष्पन से बनते हैं जो लहरो द्वारा वायु मे प्रक्षेपित हो जाती हैं। महाद्वीपों के ऊपर की वायु की धूल मे सबसे अधिक मात्रा अमोनियम सल्फेट $(NH_4)_2 SO_4$ की होती है; उद्योग-व्यवसाय मे प्रज्वलन के फलस्वरूप अमोनिया NH_3 तथा सल्फर ट्राई आक्साइड SO_3 की ढेर-सी राशियाँ वायुमण्डल मे पहुँचती हैं; ये गैसे परस्पर सयोग करके क्रिस्टलों का निर्माण करती हैं या पानी की नन्ही बूंदों मे ये घुल जाती हैं। औद्योगिक प्रान्तों मे धुएँ या कालिख के जर्रे ऊपर आते हैं और नमक के घोल की नन्ही बूंदों पर चिपक जाते हैं। यूरोप मे धूप के दिनो मे जबकि वायु-मण्डल के उच्च दाब के प्रदेश मे हम इस तरह अवस्थित होते हैं कि हमारे अगल-बगल अल्प दाब के प्रदेश हों (ऋतुचार्ट पर यह प्रदेश स्फान (वेज)[1] की शक्ल का दीखता

1. Wedge, पच्चड़

है) तब दृश्यता सर्वोत्तम होती है क्योंकि ये अल्प दाब, ताज़ी 'ध्रुवीयवायु, अपने साथ ले आते हैं जिनमे धूल के नाभिकणों की संख्या अत्यन्त ही कम होती है। मौसम की ये विशेष परिस्थितियाँ आम तौर पर थोड़ी ही अवधि के लिए बनी रह पाती हैं। इसके प्रतिकूल दृश्यता उस वक्त दूषित हो जाती है जब एक ही स्थान पर उच्च दाब एक लम्बे काल तक वैसा ही बना रहता है, फलस्वरूप धूल धीरे-धीरे करके वायु के निचले स्तरो मे उतर आती है।

समुद्रतट पर रहने वालों के लिए इन दशाओं मे दृश्यता की तुलना करना दिलचस्पी की बात होगी कि जब समुद्र से हवा भूमि की ओर बहती है और जब स्थल से समुद्र की ओर बहती है। किन्तु ऐसा सदैव ही आर्द्रता की समान दशाओं में करना चाहिए—अर्थात् जब शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर के निरीक्षण एक-से रहें। बात यह है कि थोडे फासले पर (१ किलोमीटर से कम दूरी के लिए) दृश्यता के लिए धूल के नाभि-कणो पर उपस्थित जलवाष्प का प्रभाव विशेष अधिक होता है; वायु की आर्द्रता जितनी अधिक होगी, दृश्यता उतनी ही कम होगी। यह पहलू खास तौर से उस दशा मे महत्त्वपूर्ण हो जाता है जब आर्द्रता ७० प्रतिशत से अधिक हो जाती है और धूलिकण नमक के क्रिस्टलों से निर्मित होते हैं।

स्काटलैण्ड के एक छोटे से कस्बे मे, वायु जब पर्वतों की ओर बहती थी तो उस वक्त दृश्यता छः या नौ गुनी पायी गयी बनिस्बत उस वक्त के, जब कि वायु घनी आबादी के प्रदेश से होकर आती थी। आर्द्रता का प्रभाव इस बात से स्पष्ट है कि वायु-वाष्प-मानलेखी[1] का निरीक्षण अंक जब ८° था तो दृश्यता चार गुनी थी बनिस्बत उस वक्त के जब कि निरीक्षण अङ्क २° था। इस बात का भली-भाँति चित्रण हम कर सकते हैं यदि मानचित्र पर हम उन दिशाओ मे रेखाएँ खीचे जिधर से हवा आ रही है और इनकी लम्बाइयाँ दृश्यता की दूरी के अनुपात में रखें।

आर्द्रता के विभिन्न मान के लिए ऐसी ही रेखाएँ खीचनी चाहिए। इस प्रकार वक्र रेखाओ का सेट प्राप्त हो जायगा तो विभिन्न स्रोतों से आनेवाली हवाओं की औसत पारदर्शिता बतलायेगा। हड़ताल के आरम्भ होते ही दृश्यता अचानक ही अत्यधिक बढ जाती है।

और फिर आँकड़ो से पता चलता है कि तेज हवाएँ जब चलती हैं तो दृश्यता बढ़ जाती है और गर्मी के मौसम (मार्च से अक्टूबर तक) में जाड़े की अपेक्षा दृश्यता

1. Psychrometer

अधिक अच्छी रहती है। साधारणतया प्रातः की अपेक्षा तीसरे पहर को दृश्यता अच्छी रहती है क्योंकि दिन मे वायु की ऊपर जानेवाली धाराएँ नीचे के स्तरों में उतराने वाले धूलिकणों को आकाश मे ऊँचाई पर पहुँचा देती है। वर्षा या तुषारपात के एक लम्बे काल के उपरान्त समस्त धूल नीचे बैठ जाती है और दृश्यता प्रायः अत्युत्तम हो जाती है।

यह एक मार्के की बात है कि पानी की बौछार मे से हम कुहरे की बाढ़ या बादलों की अपेक्षा बहुत अधिक दूर तक देख सकते हैं यद्यपि इन्हीं बादलों से यह पानी गिरता है। इसका कारण निम्नलिखित तर्क से स्पष्ट होगा (यद्यपि यह तर्क प्रत्यक्षतः अत्यन्त ही मोटे हिसाब पर आधारित है)—

मान लीजिए कि हवा के इकाई-आयतन मे मौजूद पानी का आयतन V है। अब इस आयतन V को व्यास d आकार की बूंदो मे विभाजित कीजिए—प्रत्येक बूंद का आयतन लगभग d^3 होगा। अतः दिये हुए आयतन मे बूंदों की संख्या होगी $\frac{V}{d^3}$ और चूंकि प्रत्येक बूंद लगभग d^2 क्षेत्रफल की सतह घेरती है; अतः इन बूंदो से घिरने वाली कुल सतह $\frac{Vd^2}{d^3}=\frac{V}{d}$ होगी। अतः बूंदें [illegible] कम उनके समूह की पारदर्शिता होगी। घने कुहरे के लिए V लगभग $१०^{-६}$ कोटि का होता है और आश्चर्य की बात है कि मूसलाधार वर्षा के लिए भी V का मान लगभग इतना ही होता है। किन्तु कुहरे की बूंदों का व्यास ०.०१ मिलीमीटर की कोटि का होता है जबकि वर्षा की बूंदों का व्यास ०.५ मिलीमीटर की कोटि का। अब एक ऐसे स्तम्भ पर विचार कीजिए जिसका सिरा एक वर्ग सेण्टीमीटर क्षेत्र का हो, और उसकी आड़ी लम्बाई l हो। प्रकाश की आधी मात्रा रोकने के लिए $\frac{Vl}{d}=-०५$ होना चाहिए, अत. कुहरे के लिए l = ५ मीटर = ५.५ गज प्राप्त होता है और वर्षा के लिए l = २५० मीटर = २८० गज प्राप्त होता है। ये निष्कर्ष सही कोटि के परिमाण के हैं। इस उदाहरण से यह बात भली-भाँति स्पष्ट होती है कि गणनाफल बहुत कुछ अंशों में इस बात पर निर्भर करता है कि वर्षा की बूंदे नन्हे आकार की हैं या बड़े आकार की। कभी-कभी ऐसा होता है कि भारी वर्षा मे जबकि जमीन पर गिरने पर बूंदें बिखर कर अत्यधिक नन्हे आकार की बूंदों में परिणत हो जाती हैं और उनमे से होकर हम भूमि के निकट ही देखते हैं तो दृश्यता में भारी ह्रास हो जाता है। यह भी हमारे तर्क के अनुरूप ही बैठता है।

१८८. सूर्य कैसे पानी 'खींचता' है ?

शरत्काल की मनोरम प्रातः की बेला है; चमकती हुई धूप वृक्षों के झुरमुट को पार करके आती है। दूर से हम देख सकते हैं कि धुन्धवाली हवा मे किरणों की शलाकाएँ कितने बढिया तरीके से एक दूसरे के समानान्तर जाती हुई प्रतीत होती हैं ! किन्तु निकट आने पर ऐसा लगता है कि वे अब परस्पर समानान्तर नही रहीं, बल्कि अकेले एक ही बिन्दु—सूर्य से विकिरित हो रही हैं।

इसी तरह की एक बड़े पैमाने की घटना से भी हम परिचित हैं। जब घने, किन्तु बिखरे हुए बादलो के पीछे सूर्य छिप जाता है और वायु मे बारीक किस्म का कुहरा भरा रहता है तो प्रायः इन सूर्य-रश्मियों के पुञ्ज बादलो के बीच के खुले भागो मे सूर्य से विकिरित होते हुए देखे जा सकते हैं जो कुहरे की नन्ही बूंदो द्वारा होनेवाले परिक्षेपण की बदौलत कुहरे मे प्रकाश की पथरेखाओ के रूप मे प्रदर्शित होते हैं। ये सभी रश्मि-शलाकाएँ वास्तव मे परस्पर समानान्तर होती हैं (इन्हे बढाने पर ये अवश्य सूर्य से गुजरती हैं, किन्तु सूर्य इतने अधिक फासले पर है कि इन किरणो को 'समानान्तर' कहना उचित ही है)। इनके अनुदर्शन[2] से हमे ऐसी अनुभूति होती है मानो ये किसी एक बिन्दु से प्रसारित होती हैं; इनके लिए विलुप्त होनेवाला बिन्दु सूर्य होता है, ठीक उसी प्रकार जैसे रेल की पटरियाँ फासले पर एक-दूसरे मे मिलती हुई जान पड़ती हैं (प्लेट XV, a)।

बादलो के इधर-उधर हटने के अनुसार इनमे से कुछ किरणे प्रबल अथवा क्षीण हो जाती हैं या अपना स्थान-परिवर्तन करती हैं, इत्यादि। कभी-कभी समूचे भू-दृश्य पर ये किरणे छा जाती हैं; या फिर यह कि सूर्य किसी अकेले बादल के टुकड़े के पीछे छिप जाता है तो उसकी काली छाया पड़ती है। पर्वतीय प्रदेशो मे इस तरह की छाया-शलाकाएँ अक्सर दिखलाई पड़ती हैं जो निम्न ऊँचाई पर स्थित सूर्य के सामने पर्वत-श्रेणियो या चोटियो के आ जाने के कारण बनती हैं।[1]

प्रकाश-किरण की शलाकाएँ चन्द्रमा से भी उत्पन्न हो सकती हैं किन्तु इनकी प्रकाश-तीव्रता इतनी क्षीण होती है कि वे केवल तभी दिखलाई पड़ती हैं जब वायु-मण्डल द्वारा होनेवाला परिक्षेपण प्रबल होता है। यह अत्यन्त दुर्लभ घटना अपशकुन की छाया-जैसी हमारे ऊपर डाल देती है।

1. 'Draws water' 2. Perspective 3. Vaughan Cornish, Scenery and the Sense of Sight (Cambridge; 1935)

ये किरण-पुञ्ज क्यों सूर्य से अल्प दूरी पर ही दिखलाई पड़ते हैं, उदाहरण के लिए बहुत ही कम अवसरों पर ये ९०° की दूरी पर दीखते हैं ? (देखिए §§ १७७, १८२, १८३)

१८९. सान्ध्य प्रकाश के रग[1]

एक साधारण व्यक्ति के लिए आदर्श सूर्यास्त का अर्थ होता है कि वह सुनहले नीललोहित रग के बादलों के आवरण-परिधान से ढका है जिसके अन्दर से गहरे खुशनुमा रग का प्रकाश दमक रहा हो। बाल-सुलभ उत्कण्ठा के साथ वह इसमे ऊँट या शेर की आकृति प्रदर्शित होती हुई देखने का प्रयत्न करता है या किसी जगमगाते हुए महल या अग्नि की लपटवाले किसी अलौकिक समुद्र को देखने की कल्पना करता है। किन्तु एक भौतिकीज्ञ तो अपने प्रेक्षण का प्रारम्भ सूर्यास्त के सरलतम रूप से करने का प्रयत्न करता है और इसके लिए वह पूर्णतया निरभ्र और चमकीले प्रकाश का आकाश चुनता है। वह अध्ययन करता है रगों के विस्तार की बारीकियो का और क्षण-क्षण बदलनेवाले रगों की कोमल आभा का तथा वह इस बात का अध्ययन करता है कि दिन का नीला आकाश रात्रि के घने अन्धकार मे किस प्रकार परिणत हो जाता है, और इन सब की अनुभूति कुछ थोडे अभ्यास के उपरान्त ही हो पाती है। ये सभी परिवर्त्तन बार-बार लगभग उसी क्रम मे घटित होते हैं; इन घटनाओ का विकास प्रकृति की एक महान् नाटचलीला है—विदा होनेवाले सूर्य की नाटचलीला !

इन प्रकाशीय घटनाओं से आविर्भूत होनेवाली अनन्त शान्ति की इस अनुभूति का कारण क्या है ? इन घटनाओं की तुलना इन्द्रधनुष से कीजिए जो प्रफुल्लता और आह्लाद की अनुभूति जगाता है। गोधूलि बेला का यह वातावरण निस्सन्देह मिश्रित रगो वाले चौड़े वृत्त चापो के कारण है जो आसमान मे दूर तक इतनी अधिक आडी स्थिति मे पडे रहते हैं कि वे करीब-करीब क्षैतिज ही जान पड़ते हैं। भू-दृश्यों की सरचना मे जहाँ कही भी क्षैतिज रेखा मौजूद होती है, वह शान्ति और विश्रान्ति का आभास कराती है।

सूर्यास्त के रगो का गम्भीर अध्ययन हमे वायुमण्डल के इन उच्चतम स्तरो की दशाओं के बारे मे सूचना देता है जो आकाश के उन प्रदेशों के मुकाबले मे जहाँ बादलों का निर्माण होता है, काफी अधिक ऊँचाई पर होते हैं; इन स्तरों के बारे मे हमारा

1. The extensive literature is condensed in P. Gruner & H. Kleinert Die Dammerungserscheinungen (Hamburg, 1917)

ज्ञान नगण्य-सा ही है, सिवाय उस जानकारी के जो उनके द्वारा होनेवाले प्रकाश के परिक्षेपण से हमे प्राप्त होती है। इस अध्ययन का प्रारम्भ करने के लिए सर्वोत्तम अवसर अक्टूबर और नवम्बर के महीने हैं। इस घटना की स्पष्टता दिन प्रतिदिन बदलती रहती है, प्रायः उनके रगों के वैभव को धूल और धुन्ध हर लेते हैं, और शहरों मे तो खासकर धुएँ द्वारा ऐसा होता है। इस कारण इन घटनाओं के अध्ययन की बार-बार पुनरावृत्ति की जानी चाहिए।

सन्ध्याकालीन सुन्दर रगों का ठीक तौर से अवलोकन करने के लिए आँखों को पूर्ण विश्राम दे लेना चाहिए। अस्त होने के पहले सूर्य पर हम चाहे कितने ही अल्प काल के लिए दृष्टि क्यों न डाले, हमारी आँखे कुछ समय के लिए इतनी अधिक चकाचौध खा जायँगी कि हम सन्तोषजनक रूप से अपना प्रेक्षण जारी नही रख सकते। यदि हम पूर्वीय आकाश का प्रेक्षण करने का इरादा रखते हों तो हमे पश्चिम के अत्यन्त चमकीले आकाश की ओर अधिक देर तक नही देखना चाहिए। हर बार यदि घर के अन्दर जाकर या पुस्तक की ओर देख लेने पर, हमारी आंखों को एक क्षण के लिए विश्राम मिल जाता है, तब हम अनुभव कर पाते हैं कि सूर्यास्त की घटना के रग कितने अधिक समृद्ध हैं तथा पहले-जैसे प्रतीत हुए थे इसकी अपेक्षा कितने अधिक विस्तार तक वे फैले हुए हैं। अतः मैं परामर्श दूंगा कि प्रेक्षण का आरम्भ इस बात से कीजिए कि पहले समष्टिरूप से सूर्यास्त की घटना के विकास का अवलोकन कीजिए और तब, इसके उपरान्त, आकाश के प्रत्येक भाग के विशिष्ट सौन्दर्य का अध्ययन कीजिए।

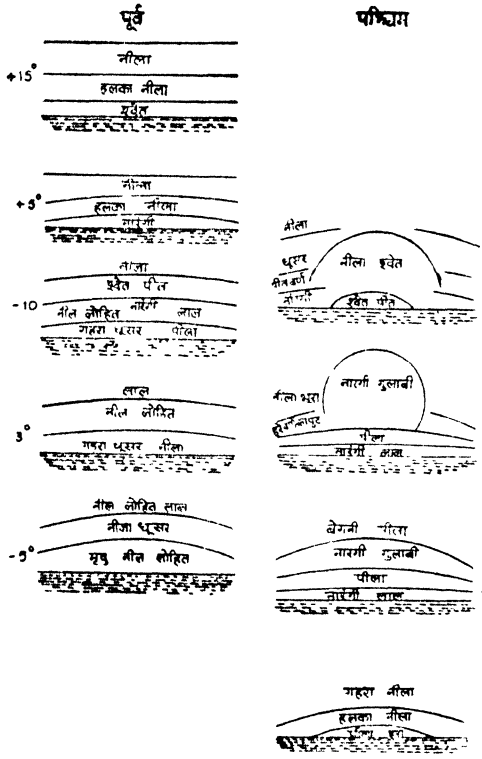
आकाश के विभिन्न भागों की परस्पर तुलना एक छोटे दर्पण की सहायता से बार-बार कीजिए जो आप की भुजा की लम्बाई की दूरी पर रखा गया हो। इस प्रकार आकाश के जिस भाग का अप अवलोकन कर रहे हैं उस पर बिलकुल ही भिन्न दिशा के आकाशीय भाग का प्रतिबिम्ब आप प्रक्षेपित कर सकते हैं।

विविध रंगोवाली इस घटना मे ये रग एक दूसरे के साथ इतने पूर्णरूप से मिल जाते हैं कि कदाचित् इनमे किसी भी आकृति को देख पाने मे आप कठिनाई महसूस करेंगे। फिर भी इसका गुर बिलकुल ही सीधा-सादा है। आकाश पर आप समान **प्रदीप्ति** या समान **रंग-आभा** की कल्पित रेखाएँ खीचिए; इनके विवरण मे इन्ही रेखाओं का बार-बार उल्लेख आया है, जैसे उदाहरण के लिए, जब हम यह कहते हैं कि सूर्यास्त की घटना का निर्माण सामान्यतः रगीन वृत्तचापों की शक्ल मे होता है।

संसार के इस भाग (हालैण्ड) के आकाश के लिए एक खुली स्वच्छ शाम के आदर्श सूर्यास्त का विवरण नीचे दिया जा रहा है (चित्र १४७)। सूर्य की ऊँचाई के लिए

दी गयी ऋणात्मक संख्या यह प्रकट करती है कि सूर्य क्षितिज से उतना ही नीचे है।

सूर्य की ऊँचाई ५°; सूर्यास्त से आध घण्टे पूर्व।



चित्र १४७—सूर्यास्त के दौरान में आकाश का रंग जब कि आसमान साफ हो। (हाशिये के अंक क्षितिज से ऊपर या नीचे सूर्य की स्थिति बतलाते हैं।)

क्षितिज के निकट आकाश का रंग खुशनुमा पीला या पीला-लाल रंग धारण कर लेता है जो दिन मे सामान्यतः दीखने वाले श्वेत-नीले रंग से पूर्णतया भिन्न होता है। सूर्य के नीचे की **क्षैतिज पट्टियाँ** पीत वर्ण की रंगीन धारियों के रूप मे हलकी-हलकी दृष्टिगोचर होती है। ('पट्टियों' से हमारा अभिप्राय केवल इतना ही है कि समान रंग-आभा की रेखाएँ क्षैतिज तल मे अवस्थित होती हैं, न कि यह कि विभिन्न रंगो के लिए सुस्पष्ट सीमाएँ मौजूद होती हैं।) इनके ऊपर सूर्य के समकेन्द्रीय एक बृहत्काय अत्यन्त चमकीला श्वेत रंग का प्रकाश का घब्बा दीखता है जिसे चमकीली ज्योति का नाम दिया गया है; प्रायः यह हलके तौर पर दीखने-वाले भूरे छल्ले से घिरा रहता है।

पूर्वीय क्षितिज के निकट यदि सफेद बादल मौजूद हुए तो ये कोमल रक्तिम वर्ण धारण कर लेते हैं और ऊपर की दिशा के आकाश में **प्रति-सान्ध्य प्रकाश** का ऊपरी भाग प्रकट होता है, जो ६° से लेकर १२° तक की ऊँचाई का एक रंगीन हाशिया होता है—यह नारंगी, पीले, हरे तथा नीले वर्णों मे रंग-परिवर्त्तन करता है।

सूर्य की ऊँचाई ०°; सूर्यास्त—किन्तु यह न सोच लीजिए कि सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ अब समाप्त हो गयी ! इसका रोचक पहलू तो अब आरम्भ हो रहा है। **पश्चिम में**—क्षितिज के सहारे रग समुदाय की क्षैतिज पट्टियाँ दीखती हैं, नीचे से ऊपर की ओर इनका रंग श्वेत-पीला, पीला तथा हरा होता है। इसके ऊपर मिलती है देदीप्यमान् उज्ज्वल चमक, श्वेत और पारदर्शी; तथा यह भूरे वृत्त से घिरी रहती है जिसकी ऊँचाई ५०° तक पहुँचती है। **पूर्व में—पृथ्वी की छाया** ऊपर लगभग उसी क्षण उठने लगती है जिस क्षण सूर्य अस्त होने लगता है। यह एक अत्यन्त चित्ताकर्षक नीले-भूरे रग का वृत्तखण्ड होता है जो नील-लोहित वर्ण के स्तर के ऊपर से धीरे-धीरे खिसकता है। आम तौर पर क्षितिज के ऊपर ६०° से आगे उसे नही देखा जा सकता। कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि सूर्य के अस्त होने से बहुत पहले से ही पृथ्वी की छाया की झलक देखने लग जाती है, किन्तु यह तो केवल धूल या कुहरे की तह होती है। पृथ्वी की छाया के ऊपर होता है अपनी पूर्ण आभा सहित प्रति-सान्ध्य प्रकाश। और भी ऊपर मिलता है पश्चिम के आकाश के प्रकाश का **दीप्तिमान् प्रतिबिम्बन** जो कि दूर तक फैली हुई विस्तृत प्रदीप्ति का प्रकाश होता है।

सूर्य की ऊंचाई −१° से −२° तक; सूर्यास्त के १० मिनट उपरान्त; पश्चिम में—क्षैतिज धारियाँ, नीचे से ऊपर की ओर अब क्रमशः भूरी, नारङ्गी रग की तथा पीली हो जाती हैं। तेज प्रकाश की चमक जिसके चारो ओर भूरे रग का घेरा रहता है अभी भी ४०° की ऊँचाई तक पहुँचता है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया ऊपर की ओर और भी ऊँचाई तक खिसकती जाती है और इसके अन्दर की सभी चीजें अब मटमैले, एक समान रग की दीखती हैं जो बहुत कुछ हरे-नीले वर्ण का होता है (एक आत्म-निष्ठ विपर्यास[1] का रंग ! देखिए § ९५)। प्रति-सान्ध्य प्रकाश[2] के गिर्द रगीन हाशिया बनने लग जाता है जिसमे नीचे से ऊपर बैंगनी, गहरा लाल, नारङ्गी, पीला, हरा, नीला रंग मौजूद होता है और इनके ऊपर होता है तेज प्रकाशवाला प्रति-बिम्बन।

सूर्य की ऊँचाई −२° से −३° तक; सूर्यास्त के १५ से २० मिनट बाद तक; पश्चिम में—अब सान्ध्य प्रकाश की घटनाओं का सबसे अधिक रोचक दृश्य आरम्भ होता है। तेज प्रकाश की चमक के सिरे पर क्षितिज से करीब २५° की ऊँचाई पर

1. Subjective contrast 2. Counter-twilight

एक गुलाबी रग का धब्बा प्रकट होता है। तेजी के साथ यह बढ़ता जाता है, किन्तु साथ ही साथ इसका काल्पनिक केन्द्र नीचे की ओर खिसकता है। अतः इसकी शक्ल एक वृत्तखण्ड की तरह हो जाती है जो उत्तरोत्तर अधिक चिपटा होता जाता है। यह **नील-लोहित** प्रकाश आश्चर्यजनक रूप से मृदु पारदर्शिता के रगों को विकिरित करता है जिसमे पूर्ण नीललोहित की अपेक्षा गुलाबी और नारङ्गी वर्ण का पुट अधिक होता है। क्षैतिज धारियों का रग और भी धुंधला हो जाता है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया अब और भी अधिक ऊँचाई पर स्थित होती है। ऊपर वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश पूर्णरूप से विकसित हो चुका होता है, और इसके भी ऊपर होता है चमकदार प्रतिबिम्बन।

सूर्य की ऊँचाई,–३° से –४° तक; सूर्यास्त के २० से ३० मिनट उपरान्त; पश्चिम में—तेज प्रकाश की चमक अब भी ५° से लेकर १०° तक की ऊँचाई पर है। नीललोहित प्रकाश का उभार और भी अधिक हो गया है। प्रकाश की अधिकतम तीव्रता क्षितिज से १५° और २०° के दर्मियान की ऊँचाई पर है, सिरे का हाशिया लगभग ४०° की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई –४° से –५° तक; सूर्यास्त के ३० से लेकर ३५ मिनट उपरान्त तक; पश्चिम में—नीललोहित प्रकाश का उभार महत्तम। पश्चिम के रुख की इमारतों पर नीललोहित प्रकाश की चमक आरोपित हो जाती है; भूमि की मिट्टी सपृक्त वर्ण की दीखती है और उसी प्रकार वृक्षों के तने भी (विशेषतया भोजपत्र के वृक्षो के तने)। शहर के बीच तग गलियो मे जहाँ से पश्चिम का क्षितिज दृष्टिगोचर नही हो सकता, इमारतो पर पडने वाले सामान्य प्रकाश से स्पष्ट पता चलता है कि नीललोहित रग का प्रकाश आसमान मे चमक रहा है। इस बात की सावधानी रखिए कि पश्चिम के आकाश पर देर तक दृष्टि न जमाये रखे और यथासम्भव अधिक से अधिक समय तक घर के भीतर रहिए, केवल प्रेक्षण के लिए ही समय-समय पर बाहर निकलिए। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया मे कभी-कभी मास के रग का हलके लाल वर्ण का हाशिया प्रकट होता है, यह निम्नतम ऊँचाई वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश है। इसके प्रकट होने का कारण यह है कि पूर्व दिशा, स्वय सूर्य के बजाय नील-लोहित रग के प्रकाश द्वारा प्रकाशित हो रही है। हमारे देश (हालैण्ड) के जलवायु मे यह बहुत ही कम अवसरों पर दिखाई देता है।[1]

1. Photographs in Ch. Combier La Meteorologic **16.** 117. 1940

प्रथम दीप्ति-श्रणी के तारे अब दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

सूर्य की ऊँचाई –५° से लेकर –६° तक; सूर्यास्त के ३५ से लेकर ४० मिनट बाद तक; पश्चिम में––तेज प्रकाश की चमक अब गायब हो चुकी होती है। नीललोहित प्रकाश हलका पड़ने लगता है, प्रकाश्यरूप से यह क्षैतिज धारियों मे समा जाता है क्योंकि ये धारियाँ अब अधिक चमकीली और नारङ्गी वर्ण की दीखती हैं। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया की सीमा-रेखा पूर्णतया विलुप्त हो चुकी होती है। यदि नीचे का प्रति-सान्ध्य प्रकाश मौजूद है तो पृथ्वी की द्वितीय हलकी छाया उस वक्त देखी जा सकती है जिस क्षण नीललोहित प्रकाश विलुप्त होता है।

सूर्य की ऊँचाई –६° से लेकर –७° तक; सूर्यास्त के ४५ से लेकर ६० मिनट बाद तक; पश्चिम में—नीललोहित प्रकाश गायब हो जाता है और नीले-श्वेत रंग की चमक बची रह जाती है जो **सान्ध्य प्रकाश की चमक** है, इसकी उँचाई १५° से लेकर २०° तक पहुँचती है। क्षैतिज धारियाँ क्रमशः नारङ्गी वर्ण की, पीली तथा कुछ-कुछ हरे रंग की हो जाती हैं। नीललोहित प्रकाश के लोप होने पर ऐसा अनुभव होता है मानो भू-दृश्य का प्रकाश तेजी के साथ घट रहा है; अक्षरो का पढ़ना मुश्किल हो जाता है, नगरों के लिए सान्ध्य-प्रकाश की बेला खत्म हो गयी।

सूर्य की ऊँचाई, –९°; पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ७° से लेकर १०° की ऊँचाई तक पहुँचती है। **पूर्व में**––नीचे वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश विलुप्त हो चुका है, अकेला एक अन्तिम प्रतिबिम्बन बचा रह जाता है।

आकाश का सबसे अधिक अन्धकार वाला भाग ऊर्ध्व बिन्दु पर थोड़ा पश्चिम की ओर हटकर स्थित होता है।

सूर्य की ऊँचाई –१२°; पश्चिम में––क्षैतिज धारियाँ बहुत अधिक फीकी पड़ गयी हैं और अब वे हलके हरे रंग की दीखती हैं। हरे-नीले वर्ण की सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ६° की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई–१५°; पचिश्म में––सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ३° से लेकर ४° तक की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई –१७°; पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक गायब हो गयी है। पाँचवीं दीप्ति श्रेणी के तारे अब दृष्टिगोचर होने लग गये हैं। काफी यथार्थता के साथ इस क्षण को निर्धारित किया जा सकता है और मौसम के लिहाज़ से तथा विभिन्न दिनों के लिए यह क्षण बदलता रहता है। आकाशीय सान्ध्य प्रकाश की बेला समाप्त हो गयी।

नील-लोहित प्रकाश पर टिप्पणी—नील-लोहित प्रकाश की तीव्रता मे विभिन्न दिनो के लिए बहुत अधिक परिवर्त्तन होता है। ऊँचाई पर हवा मे उतराते हुए बादलों की अत्यन्त झीनी परतो की उपस्थिति इस प्रकाश की तीव्रता मे बहुत अधिक वृद्धि कर सकती है, और बारिश के कई दिनो के उपरान्त मौसम के साफ होने पर इस प्रकाश का निर्माण अद्भुत रूप से सुन्दर होता है। औसत तौर पर ग्रीष्म ऋतु के आखीर मे या शरद् ऋतु मे यह प्रकाश वसन्त ऋतु या ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा अधिक तेज होता है। यह केवल थोडी ही मात्रा मे ध्रुवित होता है जबकि इर्द-गिर्द के आकाश मे प्रकाश का ध्रुवण विशेष रूप से प्रबल होता है। हेडिञ्जर ब्रुश का प्रयोग इस अन्तर को प्रदर्शित करने के लिए काफी होता है (§ १८१)।

सान्ध्य प्रकाश के दौरान मे इसका निर्माण सदैव ही उसी तरीके का नही होता है, जिस तरह की रूपरेखा का हमने वर्णन किया है। निम्नलिखित मे से किसी भी एक तरीके से इसकी उत्पत्ति हो सकती है—

(१) चमकीली ज्योति के गिर्द उसे घेरने वाले भूरे वृत्त से। (२) स्वयं चमकीली ज्योति से जो पीले वर्ण से गुलाबी और लोहित वर्ण की हो जाती है। (३) प्रति-सान्ध्य प्रकाश से जो करीब-करीब अदृश्य रूप से ऊर्ध्व बिन्दु पर फैल जाता है और पश्चिम मे पहुँच कर पुन. दृष्टिगोचर हो जाता है। (४) कोमल अलका बादलों से जो सूर्य के अस्त हो जाने के बाद उसके प्रकाश से प्रकाशित होते रहते है। (५) चमकीली ज्योति के सिरे पर बननेवाले नील-लोहित वर्ण के धब्बे से, जहाँ से ये विस्तारित होते है। इसी किस्म का वर्णन पुस्तको मे दिया गया है, किन्तु बहुत अधिक बार यह नही दिखलाई देता।

यदि हो सके, तो कभी भी सूर्योदय और सूर्यास्त का अवलोकन करना न भूलिए।

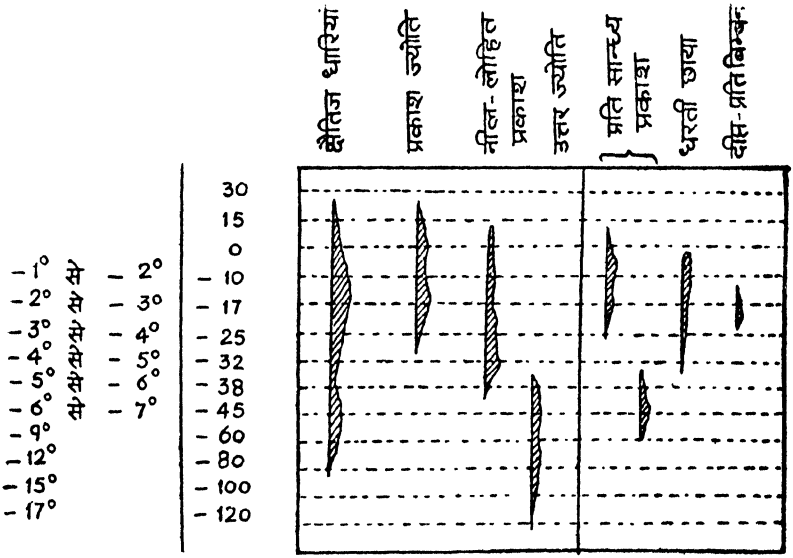
रस्किन—माडर्न पेन्टर्स।

१९०. प्रकाश की घटनाओं की माप

पृथ्वी की छाया की माप करना अत्यन्त सरल है (देखिए विधि § २३५)। एक ग्राफ तैयार कीजिए जिसमे इसकी ऊँचाई को समय के साथ प्लॉट किया गया हो। शुरू मे पृथ्वी की छाया करीब उसी दर से ऊपर चढ़ती है जिस दर से सूर्य नीचे डूबता है, बाद मे छाया की रफ्तार दो गुनी या तीन गुनी भी हो जाती है।[1] क्षितिज से

1. For a theoretical explanation of the velocity at which the earth's shadow rises, see Pernter—Exner. Moreover Fessenkov Russ. Astron. Journ. **23**, 171. 1946 and **26**, 233. 1949

ऊपर जिस ऊँचाई पर पृथ्वी की छाया विलुप्त हो जाती है, उससे हम वायु की शुद्धता का अन्दाज़ लगा सकते हैं। वायु के लेशमात्र के धुँधलेपन के प्रति यह अत्यन्त सवेदनशील होती है; वायुमण्डल मे धूल के कण जितने ही अधिक होंगे उतनी ही जल्दी छाया अदृश्य हो जायगी।



चित्र १४८—**संक्षिप्त सारिणी जो सान्ध्य प्रकाश की विभिन्न घटनाओं के विकासक्रम को प्रदर्शित करती है।**

चमकीली ज्योति और नीललोहित प्रकाश की माप करना अधिक कठिन है। यह तो वाछित है ही कि समय-समय पर आँख को विश्राम दिया जाय, इसके अतिरिक्त यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि आकाश की पृष्ठभूमि के सामने की प्रत्येक मिल्युएत निश्चय ही विपर्यास का प्रभाव उत्पन्न करती है और इस कारण इससे बचना उचित है। कितने आश्चर्य की बात है कि जिसे हम नील-लोहित प्रकाश की सीमा-रेखा समझते हैं, वह आँख के सामने रखी गयी पेन्सिल या लकड़ी के चिपटे टुकड़े के कारण अपनी स्थिति बदल देती है। सर्वोत्तम तरीका यह होगा कि उसकी ऊँचाई की तुलना भू-दृश्य के वृक्षों या मीनारों आदि से करें।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना वाञ्छनीय होगा कि आकाश की प्रदीप्ति की नाप से पता चलता है कि नील-लोहित प्रकाश की चमक इस कारण नही उत्पन्न होती है कि वहाँ **प्रदीप्ति में वृद्धि** हो गयी है, बल्कि इसलिए कि आकाश के उस भाग मे प्रदीप्ति के **ह्रास की** दर इर्द-गिर्द के भागों की तुलना मे **धीमी हो जाती** है। इस प्रकार उस भाग मे आपेक्षिक प्रदीप्ति महत्तम हो जाती है और इस कारण आँखो को ऐसी अनुभूति होती है मानों नया प्रकाश वहाँ से विकीर्ण हो रहा है। इसी प्रकार रग मे परिवर्त्तन होने का कारण यह है कि अन्य तरग-दैर्घ्यों की अपेक्षा कुछ विशेष तरग-दैर्घ्यो की प्रकाश-तीव्रता मे ह्रास की दर धीमी होती है।

नील-लोहित प्रकाश के विलुप्त हो जाने के उपरान्त **उत्तर-प्रकाश ज्योति** की गति दिलचस्प हो जाती है। इसका सबसे ऊपर वाला हाशिया वास्तव मे पृथ्वी की छाया का अन्तिम चरण है, जो ऊर्ध्व बिन्दु की स्थिति को पार करके अब पश्चिम की ओर आ गयी है। यह प्रकाश पहले तो तेजी के साथ नीचे उतरता है, फिर इसकी रफ्तार उत्तरोत्तर धीमी होती जाती है।

१९१. सान्ध्य किरणें[1]

सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ उस वक्त अलौकिक रूप से सुन्दर दीखती है जब पश्चिमी क्षितिज की आड़ में स्थित बादल अपनी छाया की धारियाँ आकाश पर एक विशाल पंखे की शक्ल में फैलाते हैं। क्षितिज के बीच उस काल्पनिक बिन्दु से जहाँ सूर्य स्थित होता है, ये धारियाँ विस्तारित होती हैं, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार 'पानी खींचती हुई' सूर्य-रश्मियाँ दीखती हैं; केवल इस बार आकाश अत्यन्त स्वच्छ होता है और अब हम देख सकते है कि विशेषतया नील-लोहित प्रकाश में ये काली धारियाँ कैसी छाया-आकृति बनाती हैं, इनका नीला-हरा वर्ण विशेष उत्तम विपर्यास उपस्थित करता है तथा यह विपर्यास और भी अधिक निखार इसलिए पाता है कि नेत्रों द्वारा उत्पन्न होनेवाला आत्मनिष्ठ वर्ण-विपर्यास[2] भी इस दशा मे मौजूद रहता है। सान्ध्य किरणों से इस बात का पता चलता है कि नील-लोहित परिक्षेपण की अनुपस्थिति मे आकाश कैसा दीखेगा, और अब पहली बार हम इस बात पर ध्यान दे पाते हैं कि नील-लोहित प्रकाश का विस्तार ठीक कितनी दूर तक है। इन्हे न केवल पश्चिम में जिधर सूर्य अस्त हो रहा है, देखा जा सकता है, बल्कि कभी-कभी पूर्वीय आकाश मे भी प्रति-सान्ध्य

1. Crepuscular rays
2. Subjective colour contrast

प्रकाश की नील-लोहित पृष्ठभूमि पर ये दिखाई देती है जहाँ ये प्रति-सूर्य बिन्दु पर जाकर एक दूसरे से मिलती है।

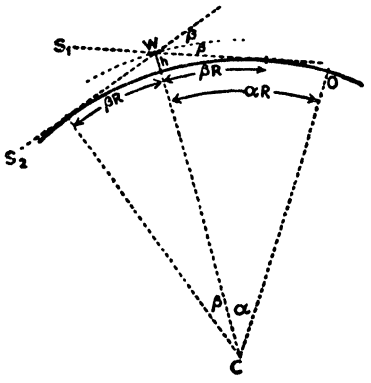
अतः जब कभी सान्ध्य किरणों का प्रेक्षण करें तो पूर्वीय आकाश को भी प्रेक्षण में शामिल कर लेना चाहिए। परिशुद्ध प्रेक्षण से पता चलता है कि पूर्व तथा पश्चिम की किरणे बिलकुल ठीक जोड़े-जोड़े में बैठती है और प्रकाश्यतः दोनों ओर की किरणें एक ही है जो दरअसल समूचे नभोमण्डल के गिर्द जाती है, किन्तु उनके सिरे ही हम भली-भाँति देख पाते है। कभी-कभी तो इन धारियों को एक सिरे से दूसरे सिरे तक, एक बड़े वृत्तचाप की शक्ल मे देखना भी सम्भव होता है जिनके सिरे एक दूसरे की ओर झुके होते है, किन्तु हम जानते है कि ये सुपरिचित धारियाँ वास्तव में परस्पर समानान्तर होती है, इनकी शक्ल प्रकाशीय दृष्टिभ्रम के कारण ही धनुषाकार दीखती है (§ १०८)।

ये सान्ध्य किरणे केवल वहाँ पर दिखलाई पड़ती है जहाँ वायु में परिक्षेपण करने वाले कण उतराते रहते हैं। 'पानी खीचनेवाली' सूर्य-रश्मियाँ हलके धुन्ध की पृष्ठभूमि पर दृष्टिगोचर होती है; नील-लोहित प्रकाश की सान्ध्य किरणें सान्ध्य आलोक उत्पन्न करनेवाले अपेक्षाकृत अत्यन्त नन्हें धूलकणों की पृष्ठभूमि पर प्रकट होती हैं। नील-लोहित प्रकाश-विहीन सान्ध्य आलोक मे सान्ध्य किरणे अनुपस्थित रहती हैं और ये हरे वर्ण के आकार की पृष्ठभूमि पर तो कभी भी प्रकट नही होतीं। इसके प्रतिकूल, नील-लोहित प्रकाश जब विलुप्त होकर क्षैतिज धारियों की शक्ल अख्तियार कर लेता है तो इसके बहुत देर बाद तक ये सान्ध्य किरणें दृष्टिगोचर होती रहती हैं; यह वास्तव में इस बात का प्रमाण है कि प्रकाश की इन घटनाओं में से प्रथम घटना सदैव ही उपस्थित रहती है जो पश्चिमीय आकाश की ज्योति मे विशेष योग देती है।

सान्ध्य किरणे अपने अन्त होनेवाले छोरों पर अधिक आसानी से देखी जा सकती है बनिस्बत इससे समकोण हटी हुई दिशा मे, उसी प्रकार जिस तरह आम तौर पर सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ पश्चिमीय तथा पूर्वीय आकाश मे बीच की दिशाओं की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट दीखती हैं। और यह भी परिक्षेपण के नियमों का ही परिणाम है (देखिए § १८२)।

हम इस बात का भी अन्दाज लगा सकते है कि छाया डालनेवाला बादल हमसे कितनी दूर है। यदि बादल पृथ्वी पर होता तो वह ठीक उसी क्षण सान्ध्य किरणें उत्पन्न करता जब सूर्य पृथ्वी के साथ स्पर्शकीय स्थिति में आता। अब यदि सान्ध्य किरणे ठीक उस क्षण दृष्टिगोचर होती है जब कि सूर्य क्षितिज से कोण α नीचे होता

है, तब हम जानते हैं कि बादल हमारी आँख से αR दूरी पर होगा (R=पृथ्वी की त्रिज्या)। किन्तु बादल यदि स्थिति W में (चित्र १४९) ऊँचाई h पर हो, तब प्रेक्षक से उसकी दूरी का मान $R(\alpha-\beta)$ तथा $R(\alpha+\beta)$ के बीच पड़ेगा जो इस बात पर निर्भर करेगा कि सूर्य S_1 और S_2 दिशाओं के बीच किस विन्दु पर स्थित है। यहाँ $\cos\beta = \frac{R}{R+h}$ या $\beta = \sqrt{\frac{2h}{R}}$ (सन्निकटतः)।



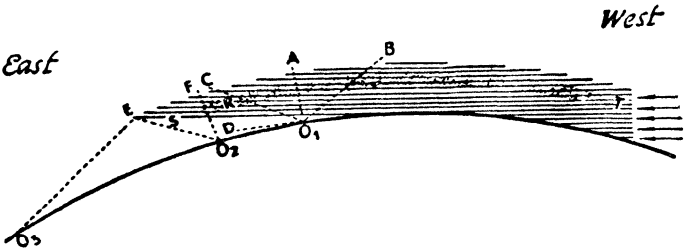
चित्र १४९—**उन बादलों की दूरी का अनुमान लगाना जिनकी वजह से सांध्य किरणें उत्पन्न होती हैं।**

अब मान लीजिए सूर्यास्त के आध घण्टे बाद एक सान्ध्य किरण देखी गयी तो इस वक्त सूर्य की स्थिति क्षितिज से $\alpha=4°$ नीचे होगी। अतः इस घटना को उत्पन्न करने वाले बादल की ऊँचाई तीन मील से अधिक नहीं हो सकती, अर्थात् कोण β का अधिकतम मान होगा $\sqrt{\frac{२+३}{४०००}} = \frac{१}{३५}$ रेडियन या २·३° (सन्निकटतः)। और β के इस मान के लिए हमें $\alpha-\beta$ तथा $\alpha+\beta$ के लिए क्रमशः मान १.७°=०.०३ रेडियन तथा ६.३°=०.११ रेडियन मिलेंगे और बादल की दूरी का मान १२० और ४५० मील के दर्मियान कुछ भी हो सकता है। इस परिणाम से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि क्यों कभी-कभी जब आकाश पूर्णतः स्वच्छ और निरभ्र प्रतीत होता है, तो भी सान्ध्य किरणें दिखलाई देती हैं।

१९२. सान्ध्य प्रकाश की घटनाओं की व्याख्या (चित्र १५०)

कल्पना कीजिए कि सूर्य जब क्षितिज के निकट है, तो उसकी किरणों के पथ का आप अनुसरण कर रहे हैं। वायुमण्डल में वे एक लम्बी दूरी तय करती हैं; वायु के अणु ज्यों-ज्यों बैंगनी, नीली तथा हरी किरणों का परिक्षेपण करते हैं त्यों-त्यों किरणों का रंग उत्तरोत्तर और भी अधिक लाल होता जाता है। इस प्रकार अस्त होता हुआ

सूर्य अपना ताम्रवर्ण धारण कर लेता है। क्षितिज के नीचे छिप जाने के उपरान्त भी सूर्य की किरणें हमारे सिर के ऊपर के वायुस्तरों को प्रकाशित करती रहती हैं। नीचे के वायुस्तर अधिक घने होते हैं, अतः वे अधिकतम मात्रा में परिक्षेपण करते हैं जबकि ऊपर के स्तर उत्तरोत्तर अधिक विरल होते जाते हैं और इस कारण परिक्षेपण भी कम



चित्र १५०—सांध्य प्रकाश के रंगों की व्याख्या।

होता जाता है। यदि हम O_1 पर खड़े होकर ऊपर की दिशा O_1A में देखें तो यहाँ हवा की तहों की गहराई अधिक न होगी और फिर अणुओं द्वारा ९०° के कोण पर परिक्षेपण भी अधिक नहीं होता है। अतः ऊर्ध्व बिन्दु के निकट आकाश अँधेरा दीखेगा। इसके प्रतिकूल O_1B तथा O_1C दिशाओं में देखने पर आँख में परिक्षेपित प्रकाश अत्यधिक मात्रा में पहुँचेगा क्योंकि हमारी दृष्टि अब प्रकाशित वायुस्तरों में लम्बी दूरी तक जाती है। B की ओर से पहुँचने वाला प्रकाश अधिक प्रबल होगा क्योंकि इस दशा में वायु के अणुओं से परिक्षेपित होनेवाले प्रकाश के अतिरिक्त वे किरणें भी आँख में पहुँचती हैं जो नन्हीं बूँदों, तथा धूल के अपेक्षाकृत बड़े आकार के जर्रों द्वारा अल्प कोण पर परिक्षेपित होती हैं। यहाँ पर हमें **क्षैतिज धारियों** की उत्पत्ति का समाधान मिलता है जिनकी दिशा वही होती है जो बड़े आकार वाले जर्रों की तहों की। साथ ही साथ इससे इस बात का भी समाधान मिलता है कि O_1C दिशा में क्यों **प्रति-सान्ध्य प्रकाश** उत्पन्न होता है और क्यों इसका रंग नीले से हरा तथा पीला होकर लाल रंग में परिवर्तित हो जाता है। क्योंकि जब हम अपनी दृष्टि थोड़ा नीचे की ओर करते हैं तो यह घने स्तरों में से होकर गुजरती है जो दूर तक फैली होती है, अतः परिक्षेपण के कारण अन्त में केवल लाल रंग का प्रकाश ही आँख तक पहुँच पाता है। और भी नीचे, O_1D दिशा में हमारी दृष्टि के सामने **पृथ्वी की छाया** पड़ती है, अतः

D की दिशा से कुछ भी प्रकाश हमारे पास नही पहुँचता सिवाय इसके कि इस दिशा मे पड़नेवाली वस्तुएँ आकाश के सभी भागो से पहुँचनेवाले विसृत मन्द प्रकाश से प्रकाशित होती है, अतः हर किस्म के विपर्यास गायब हो जाते है । कुछ समय उपरान्त हमारी स्थिति O_2 पर होगी जहाँ से अब प्रति-सान्ध्य प्रकाश का लाल हाशिया हमे दिखलाई न पड़ेगा क्योंकि अब ऐसी दिशा मे हम देख रहे है जो सूर्य-रश्मियों के साथ अधिक बड़ा कोण बनाती है, तथा अब हमारी दृष्टिरेखा वायु के प्रकाशित तथा अप्रकाशित भागों के विभाजक धरातल को छूती हुई नहीं जाती है । बिन्दु E से आने वाली किरणों द्वारा पहुँचनेवाला प्रकाश अपर्याप्त होता है जब कि F से आने वाली अधिक प्रावण्य वाली किरण नीले, पीले तथा लाल प्रकाश की समान मात्राएँ अपने साथ लाती है । इस प्रकार वायुमण्डल के प्रकाशित भाग की सीमारेखा और भी अस्पष्ट तथा धुँधली हो जाती है ।

और भी देर बाद सान्ध्यकालीन प्रकाशित स्तरों का प्रावण्य (ढलान) इतना अधिक हो जाता है कि अब पश्चिमी आकाश मे लाल रंग का लेशमात्र भी नहीं दीखता । इस क्षण हमे समझना चाहिए कि प्रेक्षक बिन्दु O_3 पर स्थित है । वायुमण्डल के प्रकाशित भाग की सीमा E जो पृथ्वी की छाया के हाशिये के रूप मे ऊँची चढ़ती हुई ऊर्ध्व बिन्दुओं को पार कर गयी थी (ऐसा करते हुए उसे हम देख नहीं पाते), पुनः पश्चिम के आकाश मे प्रगट होने लगती है क्योंकि हमारी दृष्टिरेखा एक बार फिर वायुमण्डल के प्रकाशित तथा अप्रकाशित भाग के विभाजक धरातल के साथ अल्प मान का कोण बनाती है । इसके अतिरिक्त अपेक्षाकृत बड़े आकार के जर्रों द्वारा अल्पकोण का परिक्षेपण पुनः क्रियाशील हो जाता है और दृश्य का सामान्य प्रकाश अब इतना मन्द हो चुका होता है कि इस क्षीण चमक पर भी हमारा ध्यान आकृष्ट हो जाता है । इसी कारण E, सान्ध्य प्रकाश की चमक की ऊपरी सीमा बतलाता है ।

यद्यपि सान्ध्य प्रकाश की अधिकाश घटनाओं का समाधान परिक्षेपण के आधार पर किया जा सकता है, फिर भी आधुनिक अनुसन्धानो से पता चलता है कि अन्य बाते भी इन घटनाओं पर प्रभाव डालती है । हाल मे यह दिखलाया गया है[1] कि पृथ्वी-छाया का नीला-बैंगनी रग मुख्यतः ओज़ोन द्वारा होने वाले अवशोषण के कारण है; यह गैस स्पेक्ट्रम के पीले तथा नारङ्गी वर्ण वाले भाग का हलका अवशोषण करती है;

1. J. Dubois, Comptes—Rendus Acad. Paris, **222**, 671, 1946, and **226**, 1180, 1948

सान्ध्य प्रकाश की परिस्थितियों मे किरणों का बारम्बार परिक्षेपण होता है, अतः इनकी मार्ग-रेखा की लम्बाई इतनी अधिक बढ़ जाती है कि इस अवशोषण का प्रभाव प्रगट दिखाई पड़ने लग जाता है।

अन्त मे नील-लोहित प्रकाश का समाधान करना वाकी रहता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह उन नन्हे धूलिकणों द्वारा होने वाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है, जो १५–२५ किलोमीटर की ऊँचाई पर, जहाँ से स्ट्रटोस्फियर का प्रारम्भ होता है, उतराते रहते हैं। जिस किरण-शलाका से इस स्तर को प्रकाशित होते हुए हम देखते हैं, वह इस पर उस वक्त गिरती है, जब सूर्य क्षितिज से नीचे जा चुका होता है। इस किरण-शलाका का निचला भाग गाढ़ा लाल होगा क्योंकि इस भाग की किरणे घने वायु-स्तरों मे से होकर लम्बी दूरी तय करती हैं। अतः स्तर के भाग SR से ही नील-लोहित प्रकाश का अधिकांश प्राप्त होगा। यहाँ आश्चर्यजनक बात यह है कि SR द्वारा होने वाला परिक्षेपण केवल O_2 पर ही दीखता है, O_1 पर नहीं (जहाँ से उसे पूर्वीय आकाश मे दृष्टिगोचर होना चाहिये था)। इससे हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि परिक्षेपण करने वाले कण वायु के अणुओं की तुलना मे बहुत बड़े हैं, अतः वे मुख्यतः **सामने** की दिशा मे परिक्षेपण करते हैं (देखिए §१८२)। जब कभी सन्ध्या को नील-लोहित प्रकाश को प्रगट होते हुए हम देखे तो हमे समझ लेना चाहिए कि यह इस बात का सूचक है कि धूलकणों द्वारा सामने की दिशा मे होने वाले परिक्षेपण के शकु में हम अब प्रवेश कर गये हैं।

१९३. उषा तथा सन्ध्याकाल में क्या कोई अन्तर है ?

यदि कोई अन्तर है भी तो इतना सूक्ष्म कि वास्तव में किसी लाक्षणिक अन्तर का विवरण देना सम्भव नहीं है। फिर भी एक महत्त्वपूर्ण बात यह है प्रातः आँख को पूर्ण विश्राम मिल चुका होता है और वह प्रकाश-तीव्रता को अविरत रूप से बढ़ती हुई देखती है, अतः प्रातः की आलोक-घटनाओं के प्रति यह सन्ध्या की घटनाओं की अपेक्षा अधिक सुग्राही होती है।

वायु की आर्द्रता की मात्रा अधिक होने के कारण सान्ध्य आलोक में रंगों की सम्पन्नता अधिक होती है तथा इस कारण भी कि वायु अपेक्षाकृत अधिक विक्षुब्ध होती है, तथा प्रातः की अपेक्षा सन्ध्या को हवा में धूल के कण भी अधिक मात्रा मे मौजूद होते हैं।

१९४. 'प्रभात के पूर्व अन्धकार सबसे अधिक घना होता है।'

उल्काओं के सुविख्यात प्रेक्षक डेनिंग अंग्रेजी भाषा की उस लोकोक्ति में अक्षरशः विश्वास करते हैं। दिन निकलने के ठीक पहले वह कुछ घबराहट-सा महसूस करते हैं और वे चीजे जिन्हे वे अभी तक निश्चित रूप से भलीभाँति देख पा रहे थे, अब दृष्टि से गायब होती जान पड़ती है।

प्रकाश-ज्योति की माप से अवश्य पता चलता है कि कभी-कभी प्रदीप्ति अनियमित तौर पर घटती-बढ़ती रहती है, किन्तु यह घट-बढ़ इतनी कम मात्रा में होती है तथा इतनी अधिक परिवर्त्तनशील होती है कि इसका कोई वास्तविक अर्थ नहीं लगाया जा सकता। संभवतः उषा की प्रथम ज्योति नेत्र की समानुयोजन[1]-क्षमता को उद्वेलित कर देती है यद्यपि यह ज्योति अभी तक इतनी क्षीण तथा विस्तार मे इतनी संकुचित रहती है कि आसपास की वस्तुएँ इस कद्र प्रकाशित नही हो पातीं कि वे दिखलाई पड़ सके।

१९५. उषा तथा सान्ध्यकालीन लालिमा, मौसम की पूर्वसूचना के रूप में

सन्ध्या के समय आप कहते है कि मौसम अच्छा होगा क्योंकि आकाश लाल रंग का है।

और सुबह को आप कहते है कि आज खराब मौसम होगा क्योंकि आकाश में लालिमा है। अरे पाखण्डी लोगो, आप आसमान का चेहरा तो पढ़ लेते हैं, किन्तु युग का सकेत क्या आप नही पहचान सकते ? मैथ्यू (XVI.,2–3)

यह प्राचीन तथा व्यापक नियम, जैसा कि आधुनिक आँकड़ों द्वारा प्रमाणित हो चुका है, अधिकाश दशाओं मे वास्तव मे सही उतरता है। प्रत्येक दशा का समाधान उसके निज के तरीके पर किया जा सकता है।

यदि सन्ध्या काल मे हम लालिमा देखते है तो इसका अर्थ है कि पश्चिम का आकाश स्वच्छ है। चूंकि ऋतु की दशाएँ आम तौर पर पश्चिम से पूरब को हटती हैं, अतः हम यह आशा कर सकते है कि मौसम सुहावना रहेगा। किन्तु यदि अल्पदाब का प्रवेश आने को होता है तो इसके घने बादल अपनी छाया दूर-दूर तक फेंकते है और सन्ध्याकालीन समूचा आकाश फीके पीले रग का धूमिल तथा हलकी फुआर की सूक्ष्म बूँदों से भरा दीखता है; ऐसे आकाश को तूफान और वर्षा का पूर्व-सूचक समझा जा सकता है।

1. Adaptation

क्षैतिज धारियाँ सुर्ख केवल तभी होती हैं जब हवा में धूल या पानी की नन्हीं बूंदें मौजूद होती हैं; सुबह के वक्त अधिक धूल तो होती नहीं है, अतः सुर्ख रंग अवश्य पानी के कारण होगा।

१९६. सान्ध्य प्रकाश के सामान्य क्रम में व्यवधान

सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ, ऊँचाई पर स्थित वायुस्तरों की शुद्धता आँकने के लिए अत्यन्त सूक्ष्म किस्म के साधन हैं। सन् १८८३ से १८८६ तक के असामान्यतः विविध रंगों से परिपूर्ण सूर्योदय तथा सूर्यास्त इस बात के प्रत्यक्ष परिणाम थे कि डच द्वीपसमूह के ज्वालामुखी 'क्राकातोआ' के उद्गार के दौरान ज्वालामुखी की बारीक राख कुछ ही महीनो मे समस्त संसार के वायुमण्डल में फैल गयी थी। किन्तु इसके पूर्व और इसके बाद भी छोटे पैमाने पर प्रकाशीय व्यवधान बारम्बार घटित हुए हैं जो आम तौर पर ज्वालामुखी के उद्गार से सम्बन्धित थे। उदाहरणतः १८३१ मे सिसली-के निकट पैन्टीलेरिया ज्वालामुखी, १९०२–०४ मे मोण्ट पेली, १९०७–०९ काम-चट्का मे जादुत्का तथा १९१२–१४ मे अलास्का में काटमाई। विसूवियस या एटना के प्रत्येक प्रचण्ड उद्गार के पश्चात् असामान्य सान्ध्य प्रकाश की आशा की जा सकती है, यद्यपि यहाँ (हालैण्ड) तक ज्वालामुखी की बारीक राख को पहुँचने में एक हफ्ते से भी अधिक समय आम तौर पर लग जाता है।

इस बात की सम्भावना अधिक जान पड़ती है कि सूर्य पर धब्बों तथा तेज-शृंगों[1] का बाहुल्य सान्ध्य प्रकाश की घटनाओं मे व्यवधान उपस्थित करता है क्योंकि सूर्य से विसर्जित इलेक्ट्रान, आयन तथा परमाणु हमारे वायुमण्डल मे आयनीकरण का कारण बन सकते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार महत्तम प्रभाव १९३८ तथा १९४९ में होने चाहिए।

सान्ध्य प्रकाश के व्यवधान के एक तृतीय कारण का पता उस वक्त चला जब १८, १९ मई १९१० को पृथ्वी हेली धूमकेतु की पूँछ मे से होकर गुजरी। सान्ध्य प्रकाश की यह शानदार घटना इस बात की द्योतक जान पड़ी कि धूमकेतु के धूलकण वायुमण्डल मे प्रवेश कर गये थे (§ १६७)। ठीक इसी प्रकार की प्रभावोत्पादक घटना सन् १९०८ मे देखी गयी जब उत्तर साइबीरिया के मरुस्थल प्रदेश मे विशाल-काय उल्का-प्रस्तर आ गिरा था।

1. Prominences

मुख्य प्रकाशीय घटनाएँ, जो सान्ध्य प्रकाश के व्यवधान की सूचक है, निम्नलिखित हैं—

(क) 'बिशप का छल्ला'[1]। दिन भर सूर्य एक चमकीले, नीले-श्वेत मंडलक के केन्द्र पर रहता है जिसके गिर्द लाल-भूरे रग का छल्ला मौजूद रहता है। मंडलक के सबसे अधिक चमकीले भाग की त्रिज्या लगभग १५° के कोटि की होती है। सूर्य जब बहुत ही कम ऊँचाई पर होता है तब यह बिशप का छल्ला एक तरह का त्रिभुज बन जाता है जिसका आधार क्षैतिज रहता है। चूँकि छल्ले के सामने से अलका बादल गुजरते हुए देखे जा सकते है, अतः सिद्ध होता है कि यह छल्ला वायुमण्डल मे बहुत अधिक ऊँचाई पर बनता है।

(ख) इसी प्रकार का ताम्रवर्ण का लाल छल्ला कभी-कभी प्रति-सूर्य बिन्दु पर भी देखा जा सकता है; इसकी त्रिज्या लगभग २५° होती है।

(ग) आकाश का नीला रग गँदला और सफेदी लिए हुए होता है; सूर्य जब क्षितिज के निकट होता है तो यह मटमैले लाल रंग का दीखता है क्योंकि धुन्ध की तह मे से होकर यह चमकता है। छठीं दीप्ति-श्रेणी के तारे और पाँचवीं श्रेणी के तारे भी अब दृष्टिगोचर नहीं हो पाते हैं।

(घ) असामान्य रूप से कम संख्या मे प्रभामण्डलों की उपस्थिति।

(ङ) असामान्य रूप से स्वच्छ रात्रि।

(च) असामान्य रूप से तेज, आग की लपट-जैसी नील-लोहित रोशनी।

(छ) द्वितीय नील-लोहित ज्योति। यह सान्ध्य प्रकाश के दौरान में होनेवाला परिवर्त्तन है। नील-लोहित प्रकाश-ज्योति जब मन्द पड़ जाती है और सूर्य क्षितिज से ७° या ८° नीचे पहुँच जाता है, तब एक क्षीण लाल-बैगनी ज्योति उस स्थल पर प्रगट होती है जहाँ नील-लोहित प्रकाश प्रगट हुआ था और उसी भाँति इस लाल-बैगनी ज्योति का भी विकास होता है। सूर्य जब १०° या ११° क्षितिज से नीचे पहुँचता है तो इसका अवसान हो जाता है।

(ज) परा-अलका[2] बादल (देखिए § १९८)।

(झ) रात्रि के देदीप्यमान बादल (देखिए § १९९)।

(ञ) चन्द्रमा में हरे रंग का पुट दीखता है।

साधारण कोटि के लोग भी इनमें से विशेष प्रमुख घटनाओं द्वारा प्रभावित हो जाते हैं। किन्तु सूक्ष्म बारीकियों का प्रेक्षण कर सकने के लिए विशेष अभ्यास की

1. Bishop's Ring 2. Ultra-cirrus

आवश्यकता होती है, तभी इस बात का पता लगा सकते हैं कि दो सूर्यास्तों का एक समान होना कभी भी सम्भव नहीं है और ये सूक्ष्म अन्तर प्रकाशीय घटनाओं के न्यूनतम व्यवधानों को पहचानने के लिए अत्यन्त सूक्ष्मग्राही साधन साबित होते हैं।

१९७. सूर्य के गिर्द प्रकाश की चमक[1]

यदि हम सूर्य की ओर मुँह करके इस तरह खड़े हों कि स्वयं सूर्य एक छत के हाशिये की आड़ में पड़े तो हम देखेंगे कि सूर्य के चारों ओर एक प्रकाश-ज्योति विकिरित हो रही है और ज्यों-ज्यों सूर्य से फासला बढ़ता जाता है त्यों-त्यों यह ज्योति भी क्षीण होती जाती है। कुछ गजों के फासले पर रखे हुए वाटिका-ग्लोब में भी इसे स्पष्ट देखा जा सकता है बशर्ते सूर्य के प्रतिबिम्ब को आप अपने सिर की ओट में ले लें। कुछ प्रेक्षकों का दावा है कि इसके दो भाग होते हैं—(क) एक रजतश्वेत मडलक जिसकी त्रिज्या २° से लेकर ५° तक होती है--(यह परिवर्तनशील होती है) और जो सामान्यतः तीसरे पहर को प्रगट होता है; (ख) एक बहुत बड़े आकार का प्रकाश-वृत्त जिसकी त्रिज्या निश्चय ही ३०° से लेकर ४०° तक होती है, जो शायद ही कभी अनुपस्थित रहता हो, और सन्धि बेला पर यह 'तेज़ चमक' में परिवर्त्तित हो जाता है। अन्य प्रेक्षकों के अनुसार इस चमक में पाये जाते हैं ०.२५° से लेकर २° तक की त्रिज्या का एक पीत वर्ण का श्वेत आभामण्डल, २° से लेकर ५° तक की त्रिज्या का नीला-श्वेत कान्तिचक्र, १५° से लेकर २३° तक की त्रिज्या का केन्द्रीय मडलक, १०° से लेकर ४०° तक के त्रिज्या का भीतरी मंडलक तथा २५° से लेकर ७०° तक का एक बाहरी मंडलक। इनके आकार अधिकतर सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करते हैं और ये दिन प्रति दिन बदलते रहते हैं। उदाहरण के लिए, ऐसा प्रतीत होता है कि जब सूर्य बहुत ही कम ऊँचाई पर होता है—क्षितिज से २° ऊपर--तो यह एक ऐसे आभामण्डल (आरिएल) से घिरा होता है जिससे मटमैले पीले रंग की किरणें निकलती हैं और जब क्षितिज से १° की ऊँचाई पर सूर्य पहुँचता है तो यह आभामण्डल विलुप्त हो जाता है।

सूर्य के गिर्द के प्रकाश के ज्योतिमापन के सम्बन्ध में सूक्ष्म अनुसन्धान बहुत कम ही किये गये हैं। अधिक सम्भावना इस बात की है कि जो हमें छल्ला-सा मालूम पड़ता है वह केवल प्रकाशतीव्रता के ह्रास की दर में कमी होने के कारण उत्पन्न होता है, जो अन्यथा सूर्य से दूरी के बढ़ने के साथ शनैः-शनैः घटती जाती है। यह परिक्षेपित प्रकाश निस्सन्देह

1. J. Maurer, Met. Zs. 32 and 33, 1915-16

धूल कणों, पानी की बूंदों, या बर्फ के जर्रों द्वारा सूर्य-प्रकाश के विवर्त्तन से उत्पन्न होता है—ये सभी अल्प कोण पर परिक्षेपण करते हैं (§ १८२)। छोटे, बड़े सभी आकार के कण होते हैं, अतः ये आभामण्डल तथा कान्तिचक्र एक दूसरे के ऊपर अध्यारोपित होते हैं, फलस्वरूप रंगों का मुश्किल से ही भान हो पाता है। इस प्रकाश-ज्योति की चमक में अन्तर तथा प्रकाशमात्रा के वितरण वायु की शुद्धता के परिचायक हैं, अतः यह उचित ही है कि इनका प्रेक्षण हम जारी रखें। ये तुरन्त वायुमण्डल मे होनेवाले प्रकाशीय विक्षोभ का पता देते हैं और सान्ध्य आलोक की घटनाओं से ये निकट सम्बन्ध रखते हैं।

जब कभी ज्वालामुखी की राख वायु मे उतराती होती है तो इस प्रकाशज्योति की परिधि के रूप मे एक अस्पष्ट भूरे-लाल रंग का छल्ला, **बिशप का छल्ला**, प्रगट होता है (§ १९६)।

१९८. सान्ध्य प्रकाश के अलका या परा-अलका मेघ[1]

दुर्लभ परिस्थितियों में सूर्यास्त के ठीक पहले आकाश निरभ्र प्रतीत हो सकता है और तब थोड़ी देर उपरान्त हलके बादलों की परत प्रगट होती है जो पश्चिमी आकाश में कम ऊँचाई पर नीले-भूरे रंग की दीखती है। एक अत्यन्त मार्के की बात यह है कि केवल सूर्य के अस्त होने के समय ही ये बादल दृष्टिगोचर होते हैं और सो भी जबकि इनकी ऊँचाई–३° तथा–७° हो। इससे यह सिद्ध होता है कि ये कुछ निश्चित दिशाओं से ही प्रकाशित हो पाते हैं। किन्तु यह प्रेक्षण इतनी कम बार किया जा सका है कि इसे हम कोई व्यापक महत्त्व नहीं दे सकते। परा-अलका बादल के प्रगट होने के साथ आम-तौर पर विशेष रूप से विविध रंगों वाले सूर्यास्त, तथा प्रकाशीय विक्षोभ मिलते हैं (§ १९६), अतः हम बेखटके इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ये ज्वालामुखी की राख से निर्मित होते हैं। ये इतने झीने होते हैं कि दिन मे ये दिखलाई नहीं पड़ते, बल्कि सन्ध्या के धुँधलके मे ये प्रगट होते हैं, प्रत्यक्षतः इस कारण कि अन्धेरी पृष्ठभूमि पर ये तेज रोशनी से प्रकाशित होते हैं। इस बात का यदि विचार करें कि सूर्य की ऊँचाई जब-७° थी तो क्षितिज से १०° की ऊँचाई पर ये दृष्टिगोचर थे, तो हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि इनकी ऊँचाई सात मील से विशेष अधिक नहीं हो सकती; इससे सिद्ध होता है कि ये स्ट्रैटोस्फियर[2] के सबसे नीचे के स्तर में उतराते रहते हैं।

1. M. Wolf, Meteorol. Zeitschr, 33, 517, 1916 2. Stratosphere

१९९. रात्रि के देदीप्यमान् बादल[1] (प्लेट XII)

ये अत्यन्त पतले बादल होते हैं जो अन्य सभी किस्म के बादलों के मुकाबले बहुत अधिक ऊँचाई पर स्थित होते हैं, किन्तु ये वायुमण्डल की सामान्य-परिस्थितियों में भी देखे गये हैं। आश्चर्य की बात है कि ये केवल उत्तर अक्षांश ४५° तथा ६०° के दर्मियान तथा दक्षिण में भी इन्हीं अक्षांशों के दर्मियान देखे गये हैं, विशेषतया मई के मध्य से लेकर अगस्त के मध्य तक। हमारे यहाँ (हालैण्ड) के अक्षांशों के लिए खास तौर पर जून के अन्त मे इन्हे देखने का प्रयत्न कीजिए।

सूर्य जब तक अस्त नहीं हो चुका होता है तब तक तो आकाश पूर्णतः निर्मल रहता है। सूर्यास्त के लगभग चौथाई घण्टे बाद देदीप्यमान् बादल नन्हें डैनों के रूप में, या पसलियों की तरतीब में, या धारियों की शक्ल में, प्रगट होना शुरू करते हैं; सूर्यास्त के एक घण्टे या कुछ और अधिक देर बाद ये सबसे अधिक स्पष्ट दिखलाई देते हैं। उत्तर-ज्योति (§१८९) की पृष्ठभूमि पर ये प्रकाशित दीख पड़ते हैं, जबकि सामान्य अलका बादल **मटमैले** रंग के होते हैं। अतः स्पष्ट है कि अभी भी सूर्य का प्रकाश इन पर प्रचुरता से पड़ रहा है, सो निश्चय ही ये स्ट्रैटोस्फियर मे काफ़ी ऊँचाई पर होंगे। सही बात तो यह है कि ये स्वयं प्रकाश उत्सर्जित नहीं करते। इनके नीले-श्वेत प्रकाश का अवलोकन घण्टों तक किया जा सकता है, समय ज्यों-ज्यों बीतता जाता है त्यों-त्यों इनके स्तरों की प्रकाशित सतह का क्षेत्रफल कम होता जाता है और क्षितिज से इनकी ऊँचाई भी घटती जाती है; अर्द्धरात्रि को इसकी ऊँचाई न्यूनतम होती है, और इसके बाद प्रकाश्यतः यह पहले की अपेक्षा अधिक चमकीला हो जाता है। क्षितिज पर १०° से अधिक ऊँचाई पर ये बादल बिरले ही अवसरों पर दिखलाई देते हैं; इन दशाओं मे सूर्य की ऊँचाई −१०° से −१६° तक बदलती हुई पायी गयी है। इनकी रहस्यमय रजत-श्वेत आभा, जो क्षितिज के निकट सुनहले पीत वर्ण मे परिणत हो जाती है, अत्यन्त प्रभावोत्पादक होती है। धूल के कण जिनसे ये बादल बने हैं स्पष्टतः अत्यन्त बारीक होने चाहिए क्योंकि ये मुख्यतः नीला प्रकाश परिक्षेपित करते हैं, यह इस बात से प्रगट है कि नीले काँच में से देखने पर यह प्रकाश दृष्टिगोचर होता है, किन्तु लाल रग के काँच में से देखने पर नहीं। इससे यह बात समझ में आ जाती है कि क्यों ये बादल

1. R. Suring, Naturwiss, 23, 555, 1935, Die Wolken (Leipzig, 1936) p, 30 C. Storner, Univ. Observ. Oslo. Public. No. 6. 1933 and Astrophysica Norvegica I, 87, 1935

सान्ध्य आलोक की लालिमा का रंग नहीं धारण करते, क्योंकि वे ही किरणें आकाश मे ऊँची चढ़कर रात्रि के इन बादलों द्वारा परिक्षेपित होती हैं जो वायुमण्डल में से गुजरने पर लाल रंग धारण नही करने पाती । कुछ प्रेक्षकों का कहना है कि इन बादलों से आनेवाला प्रकाश ध्रुवित नहीं होता, जबकि अन्य प्रेक्षकों के अनुसार इस प्रकाश में प्रबल ध्रुवण मौजूद रहता है (इस ध्रुवित प्रकाश के कम्पन, सूर्य, बादल तथा पृथ्वी से गुजरने वाले धरातल की लम्ब-दिशा मे होते हैं, अर्थात् उसी दिशा मे जिस दिशा में नीले आकाश के तथा अन्य परिक्षेपण क्रियाओं के ध्रुवित प्रकाश का कम्पन होता है।) क्या यह सम्भव है कि देदीप्यमान् रात्रि-बादल कभी बड़े आकार के, कभी छोटे आकार के कणों से बने होते हैं ?

प्रकाशित भाग की ऊपरी सीमा का प्रेक्षण करके इनकी ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है; बेहतर होगा कि क्षितिज से नीचे सूर्य की विभिन्न स्थितियों के लिए ये प्रेक्षण किये जायँ। एक उदाहरण मे पाया गया कि जब क्षितिज से सूर्य की गहराई $\beta = १२°$, १३° और १४° थी तो ऊपरी सीमा की क्षितिज से ऊँचाई α क्रमशः १०°,५° तथा ३° के बराबर थी। रात्रि के इन बादलों की ऊँचाई h के लिए आसानी से हम यह सूत्र प्राप्त कर सकते हैं कि $h = \frac{R}{4}\beta^2 \left(\frac{2\alpha+\beta}{\alpha+\beta}\right)^2$ जिसमें R पृथ्वी की त्रिज्या है, तथा कोण α और β रेडिएन मे नापे गये है ।

इस प्रकार प्राप्त की गयी ऊँचाई को थोड़ा बढ़ा देना चाहिए क्योंकि वे किरणे, जो पृथ्वी की लगभग स्पर्शी होती हैं, परिक्षेपित नही होती हैं। अधिक सही तरीका यह है कि उसका फोटो दो स्थानों से लिया जाय। आम तौर पर जो फल प्राप्त होता है उसके अनुसार अधिकतर दशाओं मे इनकी ऊँचाइयाँ पचास से लेकर साठ मील तक मिलती हैं। एक बार इनकी ऊँचाई ज्ञात कर लेने पर हम इन बादलों में लकीरों के रूप मे पड़ी धारियों का सही आकार भी मालूम कर सकते हैं। औसत तौर पर एक धारी से अगली धारी तक की दूरी चार से ६ मील तक होती है।

रात्रि के इन बादलों का महत्त्व इस बात के कारण बढ़ जाता है कि हमारे वायु-मण्डल के उच्च स्तरों की वायुधाराओं के बारे में ये सूचना दे सकते हैं। यदि फोटोग्राफ़ नही लिये जा सकें तो बादल-दर्पण[1] की मदद से बादलों का वेग मालूम कर सकते हैं; अधिकतर ये उत्तर-पूर्व दिशा से ४० से लेकर ८० गज प्रति सेकण्ड की रफ्तार से आते

1. Cloud-mirror

है; अक्सर पश्चिम-उत्तर-पश्चिम से ३० गज प्रति सेकण्ड की रफ्तार से और कुछ अवसरों पर अत्यधिक रफ्तार, ३०० गज़ प्रति सेकण्ड की, भी नापी गयी है।

पहले सामान्यतः यह सिद्धान्त मान लिया जाता था कि देदीप्यमान् रात्रि-बादलों की रहस्यमय प्रकाशीय घटना ज्वालामुखी के प्रचण्ड उद्गार द्वारा वायुमण्डल में बहुत ऊँचाई पर फेंकी गयी राख के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु अब यह घटना इतनी अधिक बार देखी जा चुकी है कि बरबस हमें एक और कारण की भी कल्पना इसके लिए करनी पड़ती है—यह है हमारे गिर्द ब्रह्माण्ड में मौजूद अत्यन्त बारीक धूल, जो हमारे वायुमण्डल मे उल्काओं तथा उल्का-प्रस्तरों द्वारा लायी जाती है तथा कदाचित् उन धूमकेतुओं द्वारा भी जो पृथ्वी के निकट से गुजरने पर अपने मार्ग में काफी अधिक मात्रा मे ब्रह्माण्डीय धूल छोड़ जाते हैं। १९०८ मे साइबीरिया मे जो बृहत्काय उल्का-प्रस्तर गिरा था, उसके ठीक बाद ही अत्यन्त विलक्षण रात्रि-बादल दीख पड़े थे। अन्य दशाओं के लिए अधिक सम्भव यही है कि धूल की उत्पत्ति ज्वालामुखी द्वारा होती है।[1]

इन बादलों का फोटो लेने के लिए चौड़े मुँह के लेन्सवाले केमरे का उपयोग करना उपयुक्त होगा। ३ लेन्स वाले केमरे के लिए सूर्य जब क्षितिज से ९°, १२°, १४° तथा १५° नीचे था तो क्रमशः प्रकाशदर्शन १६ सेकण्ड, ३५ सेकण्ड, ७२ सेकण्ड तथा १२२ सेकण्ड का दिया गया था।

२००. रात्रि में सान्ध्य प्रकाश तथा रात्रि की प्रकाशीय घटनाएँ

यदि हम सान्ध्य प्रकाश की घटना के एक दम हलके रूप का अध्ययन करना चाहते हैं तो हमें इसका प्रारम्भ रात मे ही कर देना चाहिए जबकि हमारी आँखों को पूर्ण विश्राम मिल चुका होता है,और तब हमें उषा के प्रथम चरणों का प्रेक्षण करना चाहिए। मई मे, या अगस्त-सितम्बर के महीने मे ऐसी रात चुननी चाहिए कि आसमान में चन्द्रमा न हो तथा आकाश पूर्णतया निरभ्र हो और स्थान ऐसा चुनना चाहिए जो मनुष्य की बस्ती से यथासम्भव अधिकतम दूरी पर हो। यह आसान तो नहीं होगा कि सामान्य दैनिक क्रम मे व्यवधान डाले और अर्द्धरात्रि मे आरम्भ करके बाहर मैदान में कुछ घण्टों तक प्रेक्षण करें। किन्तु एक बार इस कठिनाई पर हावी हो जाने के बाद हमें प्रचुर प्रतिदान इस रूप मे मिलता है कि हमारे सामने एक शानदार दृश्य का प्रादुर्भाव होता है। नक्षत्रों से जगमगाते आकाश की शोभा की तो कल्पना भी नगर का साधारण निवासी नहीं कर सकता। बड़े आश्चर्य की बात है कि हमारी आँखें अँधेरे मे देख सकने

1. R. Suring, Die Wolken (Leipzig, 1936) pp. 30-36

की क्षमता को कितनी अधिक सीमा तक बढ़ा लेती हैं और यह भी उल्लेखनीय बात है कि बाहर निकलते ही जितने तारे हम देख पाते हैं, उससे कितने अधिक तारे एक घण्टे बाद हमें दिखाई देने लगते हैं। ऐसा लगता है मानों समस्त आकाश दीप्तिमान् हो उठा है। यह वह उपयुक्त क्षण है जब कि अत्यन्त मन्द प्रकाशीय घटनाओं का प्रेक्षण किया जा सकता है जिनमे से कुछ तो स्पष्ट देखी जा सकती हैं और कुछ बहुधा अदृश्य ही रहती है।

सर्वप्रथम हम संभवतः नीचे ही क्षितिज पर इक्के-दुक्के, प्रकाश की फीकी चमक देखेंगे। यह दूरस्थ नगरों और गाँवों की रोशनियों का प्रतिबिम्बन है। आकाश की बदली, धुन्ध या स्वच्छता के अनुसार कुछ रातों को, अन्य रातों की अपेक्षा, यह प्रकाश अधिक चटकीला दीखता है। इन कारणों का लेखा-जोखा आसानी से किया जा सकता है बशर्ते सदैव एक ही स्थान से प्रेक्षण करे।

आकाश के ठीक बीचोबीच एक फीते की भाँति आकाशगंगा फैली हुई दीखती है जो प्रकाश के छोट-बड़े धब्बों से बनी होती है जिसके बीच-बीच मे अन्धकार के प्रदेश मौजूद होते हैं। जिन्होंने पहले कभी तारों से जगमगाते आकाश का अवलोकन नहीं किया है वे इसके कतिपय भागों की चमक से आश्चर्यचकित रह जायेंगे।

पृष्ठभाग का आकाश क्षितिज के निकट अधिक स्पष्ट दिखाई देता है; क्षितिज के सहारे चारों ओर हाशिये पर 'धरती-आलोक' से यह मण्डित रहता है जिसकी चमक लगभग १५° की ऊँचाई पर अधिकतम होती है। यह हमारे वायुमण्डल का एक तरह का संतत फीका 'अरोरा'[1] प्रकाश है। हमारी दृष्टि की रेखा जितनी अधिक तिरछी दिशा मे होगी उतनी अधिक दूरी तक दीप्त स्तर में से निगाह गुजरती है, अतः 'धरती-आलोक' उतना ही अधिक चमकीला दीखता है। क्षितिज के निकट इसकी दीप्ति घट जाती है; इसकी वजह है वायु के कारण प्रकाश का मन्द पड़ जाना।

कभी-कभी चौड़ी चमकीली धारियाँ दिखलाई देती हैं।[2] वर्ष मे दो बार अगस्त-सितम्बर और नवम्बर-दिसम्बर मे प्रकाश्यतः इनका विशेष तौर पर बाहुल्य होता है। ये बृहत् उल्का-झाड़ियों की घटनाओं से सम्बन्धित जान पड़ती हैं, १५-१६ नवम्बर के करीब चमकीली धारियों के दृष्टिगोचर होने की अच्छी सम्भावना रहती है। ख्याल किया जाता है कि हमारे वायुमण्डल में ब्रह्माण्डीय धूल के प्रविष्ट कर जान पर ये उत्पन्न

1. Aurora
2. C. Hoffmeister, Die Sterne, 11, 257, 1931 Die Meteore (Leipzig 1937), p. 118

होती हैं। ये धारियाँ अत्यधिक ऊँचाई पर स्थित होती होंगी, क्योंकि ये अत्यन्त धीमी रफ्तार से सरकती दिखाई पड़ती है। ऊर्ध्व बिन्दु के आसपास इनकी गति अधिक-से-अधिक १° प्रति मिनट हो पाती है। वर्ष में एकाध बार हमारे देश (हालैंड) में **'उत्तरीय प्रकाश'** दिखलाई पड़ता है। कम से कम उन वर्षों मे तो अवश्य ही, जब सूर्य के धब्बों की क्रियाशीलता महत्तम होती है, उदाहरणतः सन् १९३८ मे और कदाचित् १९४९ मे। आकाश मे उत्तर की ओर ये वृत्तचाप, किरण-पुंज आदि की शक्ल मे प्रगट होते हैं; प्रायः ये किरणे तेजी के साथ हरकत करती हैं, और उनकी लम्बाई घटती-बढ़ती रहती है। सावधान रहिए कि कहीं फासले पर हिलती-डुलती 'सर्चलाइट' से आप धोखा न खा जायँ!

आकाश में पूरे राशिचक्र[1] पर **राशिचक्रीय प्रकाश** के कारण चमक बढ़ी हुई दीखती है, जो सूर्य के निकट विशेषरूप से अधिक प्रबल होती है और प्रति-सूर्य बिन्दु की दिशा मे यह चमक तेज़ी से घटती जाती है। इसकी शक्ल एक तिर्यक् सूची स्तम्भ के मानिन्द होती है जो वसन्तऋतु मे सूर्यास्त के उपरान्त पश्चिम के क्षितिज से ऊपर उठता है और शरद ऋतु में सूर्योदय से पहले पूर्व दिशा के क्षितिज से (देखिए § २०१)।

इन सब घटनाओं से पृथक्, स्वयं आकाश की एक पृष्ठभूमि के रूप मे निश्चित चमक होती है। आपके फले हुए हाथ, वृक्षों और इमारतों की सिल्युएत इसके सामने काले रंग मे स्पष्ट उभरती हैं। इस चमक का ५० प्रतिशत तो मन्द रोशनी के लाखों-करोड़ों अदृश्य नक्षत्रों के कारण उत्पन्न होता है, ५ प्रतिशत पृथ्वी के वायुमण्डल द्वारा होनेवाले नक्षत्रों के प्रकाश के परिक्षेपण से उत्पन्न होता है और शेष 'वायु-ज्योति' के कारण। रात्रि-आकाश की ज्योति क्षितिज की ओर बढ़ती है और १५° की ऊँचाई पर अधिकतम हो जाती है। ऐसा उच्चतम वायुमण्डलीय स्तरों (आयनस्फियर) के हलके दीप्तिकरण के कारण होता है, जिनका दिन के समय प्रकाशित होने के कारण आयनीकरण हो गया रहता है, और अब रात्रि में अपनी अवशोषित ऊर्जा को वे विकिरित करते हैं। इसके स्पेक्ट्रम मे अत्यन्त रोचक उत्सर्जन रेखाएँ मिलती हैं जिनमे से अधिकांश अरोरा की उत्सर्जन रेखाओं के समान होती हैं। कुछ प्रेक्षकों के अनुसार यह ज्योति एक-सम नहीं होती है, बल्कि जगह-जगह पर इसकी चमक न्यूनाधिक होती है; देदीप्यमान् स्तरों में से अधिक लम्बी दूरी तक हमारी निगाह जाती है तो चमक भी उसी

1. Zodiac

हिसाब से अधिक दिखलाई पड़ती है; तदुपरान्त क्षितिज के और निकट की दिशा में चमक की कमी वायुमण्डल द्वारा होनेवाले दीप्ति-ह्रास के कारण है।

फोटो एलेक्ट्रिक सेल से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस चमक के प्रकाश का रंग स्पष्टतः लाल होना चाहिए। किन्तु हमारे नेत्र के दण्ड स्पेक्ट्रल के इस भाग की किरणों के प्रति सुग्राही नहीं होते और रात्रि-आकाश अभी भी निलछौवे रंग का प्रतीत होता है।

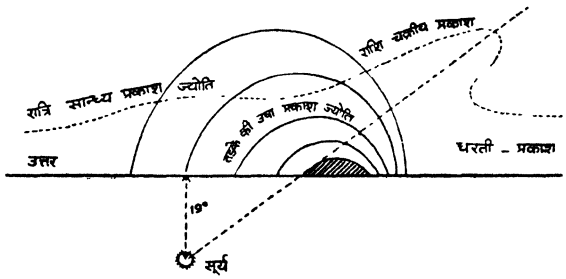
रात्रि-आकाश की दीप्ति मे सामान्यतः अधिक घट-बढ़ नहीं होती। तथापि कुछ राते असाधारण रूप से अधिक दीप्तिमान् होती है जबकि इनकी दीप्ति सामान्य की चौगुनी हो जाती है। चाँदनी की अनुपस्थिति मे भी ऐसी रात्रि को घड़ी के अङ्क पढ़े जा सकते है तथा वड़े आकार की वस्तुएँ पहचानी जा सकती है। ऐसी घटनाओं का समाधान इस प्रकार कर सकते है कि सूर्य से उत्सर्जित आयनीकृत गैसों की धाराएँ हमारे वायुमण्डल मे पहुँचती है जो इस असाधारण चमक के प्रकाश के लिए उत्तरदायी हैं।

अन्त मे हम **'रात्रि के सान्ध्य प्रकाश'** की घटना के प्रेक्षण पर आते है। आकाश के उत्तरीय पार्श्व पर धरती-आलोक के हाशिये का निरीक्षण कीजिए। इस ओर हाशिये की ऊँचाई धीरे-धीरे लगभग १०° बढ़ जाती है, अधिकतम ऊँचाई उस बिन्दु के ऊपर होती है जहाँ सूर्य (अवश्य जो अब विलुप्त हो चुका है) क्षितिज के नीचे अवस्थित होता है। यही **'रात्रि का सान्ध्य प्रकाश'** है। इसे सदैव ही इस बात से पहचाना जा सकता है कि ज्यों-ज्यों रात बीतती है त्यों-त्यों यह अनिवार्य रूप से सूर्य के साथ-साथ पूर्व को खिसकता जाता है। सूर्य से ऊपर इसकी ऊँचाई ४०° की कोटि की होती है; सर्वाधिक उपयुक्त परिस्थितियों मे (ग्रीनलैण्ड मे) यह सूर्य के ऊपर ५५° की ऊँचाई तक प्रेक्षणगम्य रहता है। अतः स्पष्ट है हमारे देश (हालैण्ड) के जलवायु में ग्रीष्म-ऋतु मे रात्रि कभी भी पूर्णतया अन्धकारमय नहीं होती, दरअसल सान्ध्य प्रकाश सारी रात मौजूद रहता है। केवल जाड़े में हमारा रात्रि का आकाश पूर्ण रूप से अन्धकारमय होता है। उससे यह बात भी समझ मे आती है कि क्यों उष्ण कटिबन्ध का तारों भरा आकाश गहन अन्धकार लिए हुए होता है; कारण यह है कि पृथ्वी के इन भागों मे सूर्य इतनी तेज ढाल पर नीचे उतरता है और क्षितिज के बहुत नीचे तक पहुँच जाता है। कुछ ऐसे भी दृष्टान्त मौजूद है जबकि रात्रि का सान्ध्य प्रकाश असामान्य रूप से तेज होता है।

सूर्योदय से ढाई-तीन घण्टे पूर्व सान्ध्य प्रकाश की चमक असंमित हो जाती है, पूर्व की ओर ऊँची उठकर वहाँ से फिर तेज़ ढाल पर नीचे को आ जाती है और इस तरह कुछ देर उपरान्त प्रकाश के शंकु का आकार धारण कर लेती है जो ऊपर की ओर ढालआँ

होती है—यह 'राशिचक्रीय प्रकाश' है—इसके अक्ष का झुकाव वस्तुतः वही होता है जो क्रान्तिवलय[1] का (§२०१)।

सूर्योदय से लगभग ढाई घण्टे पहले जबकि सूर्य क्षितिज से अभी २०° नीचे रहता है, राशिचक्रीय प्रकाश के पेंदे पर सूर्य से थोड़ा दाहिने हटकर, एक अत्यन्त फीका नीले वर्ण का प्रकाश प्रगट होता है; कठिनाई से ही यह प्रेक्षणीय हो पाता है और धीरे-धीरे यह ऊपर को उठता है तथा साथ ही बायी ओर, सूर्य की तरफ़ फैलता भी जाता है (चित्र १५१)। यह **तड़के की उषा-प्रकाशज्योति** है जो आध घण्टे में ऊर्ध्व विन्दु



चित्र १५१—**रात्रिकालीन सांध्य प्रकाश।**

तक पहुँचती है। तड़के की उषा-प्रकाश ज्योति के वृत्तचाप आम तौर पर सूर्य के ठीक ऊपर स्थित होते हैं। यदि तड़के की उषा-प्रकाश-ज्योति दाहिनी ओर हटी हुई प्रतीत होती है तो इसका कारण यह है कि इसकी चमक दाहिनी ओर के राशिचक्रीय प्रकाश की चमक के साथ मिल गयी होती है। किन्तु उषा-प्रकाश की चमक ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है त्यों-त्यों यह प्रमुखता प्राप्त करती जाती है और शीघ्र ही यह पुनः सूर्य के ऊपर अपनी सामान्य स्थिति हासिल कर लेती है। फिर तो यह सूर्य की दैनिक गति में उसके साथ-साथ ही रहती है और धीरे-धीरे यह उत्तरोत्तर दाहिनी ओर सरकती जाती है।

अब मन्द प्रकाश के तारे (पाँचवीं दीप्ति-श्रेणी के) लुप्त हो चुके होते हैं किन्तु अधिक तेज़ प्रकाश वाले तारे अभी तक पहचाने जा सकते हैं; तथा भूमिखण्ड के प्रमुख चिह्न भी अब पहचान में आने लग गये हैं। पश्चिमी आकाश में प्रति-ज्योति[2] काफ़ी

1. Ecliptic 2. Counter-glow

प्रमुखता प्राप्त कर चुकी है। उषा की पीत वर्ण की ज्योति प्रगट होना शुरू करती है जो सिरे पर हलकी पड़कर हरे-नीले रंग मे परिणत हो जाती है। यथार्थ उषा का आरम्भ हो चुका है; सूर्य की ऊँचाई इस समय –१७° से लेकर –१६° होती है (और भी देखिए § १८६)।

वर्ष की अन्य ऋतुओं मे घटना का क्रम इसी प्रकार का होता है, किन्तु सूर्य की ऊँचाई भिन्न होती है। उदाहरण के लिए जून मे सूर्य क्षितिज से १०° या १५° से अधिक नीचे नही जा पाता है, अतः वे सभी घटनाएँ जो उस वक्त घटती है जब कि सूर्य और अधिक नीचे होता है, इस वक्त दिखलाई नही पड़ती।

२०१. राशिचक्रीय प्रकाश[1]

जब सूर्यास्त का सान्ध्य प्रकाश समाप्त हो चुकता है या प्रातःकालीन धुँधलका आरम्भ होने को होता है, तो वर्ष के कुछ महीनों मे हम मृदु विकिरण का राशिचक्रीय प्रकाश एक चिपटे शीर्षवाले सूचीस्तम्भ के रूप मे तिरछी दिशा मे उठते हुए देख सकते है। इसका उठाव जितना अधिक सीधा ऊपर की ओर होता है उतनी ही अच्छी प्रकार हम इसका प्रेक्षण कर पाते है। सर्वाधिक उपयुक्त अवसर होते है जनवरी, फरवरी और मार्च के महीनों मे, सन्ध्याकालीन पश्चिमी आकाश मे; तथा अक्टूबर, नवम्बर और दिसम्बर मे तड़के सुबह को, पूर्व के आकाश मे (उतना उपयुक्त नही, जितना पश्चिम के आकाश मे)।

जून-जुलाई मे हमारे देश (हालैण्ड) के अक्षांशों में इसका कुछ भी भाग नहीं दीख पड़ता है क्योंकि तब सूर्य क्षितिज से काफ़ी नीचे नही उतर पाता है और इसलिए देर तक बनी रहनेवाली सान्ध्य प्रकाश की घटना के कारण राशिचक्रीय प्रकाश को उससे पृथक् पहचाना नहीं जा सकता।

इसकी [illegible]स्थिति निर्धारित करने के लिए हमे प्रेक्षण का प्रारम्भ स्वयं राशिचक्र की खोज से करना चाहिए—अर्थात् उस बृहद् वृत्त को ढूँढ़ना चाहिए जो **मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ** तथा **मीन** तारा-राशियों से गुजरता है।

यह वह मार्ग है जिसे सूर्य वर्ष भर मे तय करता हुआ हमें 'दिखाई' देता है। अवश्य ठीक जिस क्षण सूर्य किसी राशि मे अवस्थित है उस क्षण उस राशि को हम देख

1. Fr. Schmid. Das Zodiakallicht (Hamburg, 1928). W. Brunner, Publication Sternw. Zurich, 1935

नहीं सकते, किन्तु ज्यों ही यह अस्त होता है और अन्धकार का पदार्पण हो जाता है, तब उस तारा-राशि का शेष भाग दृष्टिगोचर हो जाता है। एक प्रकार का ज्योतिर्मय धुन्ध-सा समूचे बृहद्-वृत्त पर फैला रहता है जो सूर्य के निकट सबसे अधिक चमकीला और चौड़ा होता है और वहाँ से दोनों दिशाओं की ओर यह सँकरा होता जाता है। सूर्य के एक ओर तो राशिचक्रीय ज्योति का वह भाग होता है जिसे हम तड़के प्रात काल देखते हैं; और दूसरी ओर वह राशिचक्रीय ज्योति होती है जो सन्ध्या को देखी जाती है। जाड़े की ऋतु मे एक अनुभवी प्रेक्षक **राशिचक्रीय प्रकाश** को लगातार ६ महीने तक सुबह और शाम दोनों वक्त देख सकता है ।

यह ज्योति स्वयं हलकी होती है; लगभग उसी कोटि की जिस कोटि की आकाश-गंगा की ज्योति, किन्तु यह उस कद्र दानेदार, असंतत, नहीं होती है तथा यह अधिक दूधिया रंग की होती है। इसे देख सकने के लिए अभ्यास की जरूरत होती है। अवश्य चन्द्रमा मौजूद नही होना चाहिए और प्रत्येक लैम्प, चाहे वह फासले पर ही क्यों न हो, बाधा डालता है, जबकि शुक्र तथा बृहस्पति सरीखे चमकीले ग्रह भी कष्टदायक साबित हो सकते हैं। बड़े नगरों के सामीप्य से भी बचना चाहिए; प्रेक्षण करने के लिए सबसे बढ़िया जगह एक ऊँचा स्थल होगा जिसके चारों ओर खुला दृश्य प्राप्त हो।

नक्षत्रों के चार्ट पर आसानी से पहचाने जानेवाले तारों के लिहाज़ से राशिचक्रीय प्रकाश की सीमारेखा खीचकर प्रेक्षण का आरम्भ करना चाहिए और बाद में समान दीप्ति की रेखाएँ खीच लेनी चाहिए। बीच का भाग सबसे अधिक चमकीला होता है और चमक सिरे और हाशिये की ओर धीरे-धीरे घटती है, किंतु उत्तर की अपेक्षा दक्षिण की ओर अधिक तेज़ी से घटती है। अतः सबसे अधिक चमकीला भाग, कम प्रदीप्ति वाले भागों के समिति-अक्ष के लिहाज़ से दक्षिण की ओर हटा हुआ प्रतीत होता है। इस किस्म के स्थूल रेखाचित्र द्वारा हम इस प्रकाशीय घटना की चौड़ाई का अन्दाज़ लगा सकते हैं जो अक्ष के समकोण नापी जाने पर सूर्य से ३०°, ९०° तथा १५०° की दूरियों पर क्रम से ४०°, २०° तथा १०° मिलती है।

राशिचक्रीय ज्योति के प्रेक्षण के लिए यदि समूची रात व्यतीत करने का कष्ट उठाएँ, और इस बदलते हुए दृश्य के सुन्दर परिवर्त्तनों का गुणाङ्कन करें तो हमारी मिहनत भलीभाँति सार्थक होगी। सूर्यास्त के लगभग दो घण्टे बाद, जब सूर्य की स्थिति −१७° पर होती है, एक बहुत ही फीकी ज्योति का शंकु, स्फान[1] की शक्ल का, दक्षिण-

1. Wedge, पच्चड़

पश्चिम दिशा में तिरछा उठता हुआ दृष्टिगोचर होता है। सूर्य की स्थिति जब –२०° पर पहुँचती है तो आकाश इतना अधिक अन्धकारमय हो चुकता है कि अब प्रकाश का एक विशालकाय सूची-स्तम्भ देखा जा सकता है। पश्चिम की यह राशिचक्रीय प्रकाश-ज्योति, रात के दौरान मे अधिक सीधी हो जाती है और उत्तरोत्तर अधिक दूर तक फैलती जाती है; तारों के लिहाज से इसकी स्थिति मोटे तौर पर पहले-जैसी ही बनी रहती है। थोड़ा-सा स्थानान्तर पहचाना भर जा सकता है—तारे जो राशिचक्रीय ज्योति के कुछ दक्षिण स्थित थे, बाद में हटकर राशिचक्रीय प्रकाश के उत्तर मे पहुँच जाते हैं। इस अद्‌भुत घटना के प्रेक्षण के लिए अत्युत्तम समय जाड़े की ऋतु का पूर्वार्द्ध होता है।

शनैः-शनैः पश्चिम की राशिचक्रीय ज्योति मन्द पड़ने लगती है और पूर्वीय राशि-चक्रीय ज्योति पूर्व दिशा मे प्रकट होती है। करीब-करीब यह अर्द्धरात्रि का वक्त होता है, जो कि सुविख्यात 'प्रति-ज्योति'[1] (गेगेन्शीन) देखने के लिए उपयुक्त समय होता है—यह उन घटनाओं मे है जिनका प्रेक्षण अत्यधिक कठिन होता है; इसे हम केवल जाड़े की स्वच्छ रात्रि में ही देखने की आशा कर सकते हैं जबकि आकाश अत्यन्त अन्धकार-पूर्ण होता है। प्रति-सूर्य बिन्दु पर (§१२०), अर्थात् वस्तुतः दक्षिण में अत्यन्त मन्द प्रकाश का एक सेतु दिखाई पड़ता है जो पूर्वीय और पश्चिमीय राशिचक्रीय ज्योतियों के सिरों को मिलाता है। तदनन्तर रात के दौरान मे पूर्वीय राशिचक्रीय ज्योति नक्षत्रों के साथ गति करती हुई देखी जा सकती है और साथ ही साथ स्थानान्तरित होते हुए भी; तारे ज्योति के सूचीस्तम्भ के उत्तर से दक्षिण की ओर हरकत करते जान पड़ते हैं। एक बार पुनः ऐसा जान पड़ता है मानो राशिचक्रीय प्रकाश आकाश की दैनिक गति का तो साथ देता है, किन्तु तारों के लिहाज से रंच मात्र पिछड़ जाता है।

दिन निकलने वाला है; सूर्य की स्थिति जब –२०° या –१९° होती है, तो ऐसा प्रतीत होता है मानो पूर्वीय राशिचक्रीय प्रकाश के सूची-स्तम्भ का पेदा चौड़ा होकर अधिक दीप्तिमान् हो गया है। जब सूर्य –१९° से लेकर –१७° तक पहुँचता है तब प्रभात का उषा-आलोक प्रकट होता है।

राशि चक्रीय प्रकाश, सूर्य के गिर्द मौजूद ब्रह्माण्डीय धूल के एक बृहत्काय मंडलक द्वारा सूर्य के प्रकाश के परिक्षेपित होने से उत्पन्न होता है—यह मंडलक क्रान्तिवलय-तल के दोनों ओर बाहर की ओर तक पहुँचता है। धूलि-कणों के दर्मियान अन्तर्ग्रहीय विरल गैस भी मौजूद होती है जो आंशिक रूप से आयनित होती है, अतः इसके मुक्त

1. Gegenschein

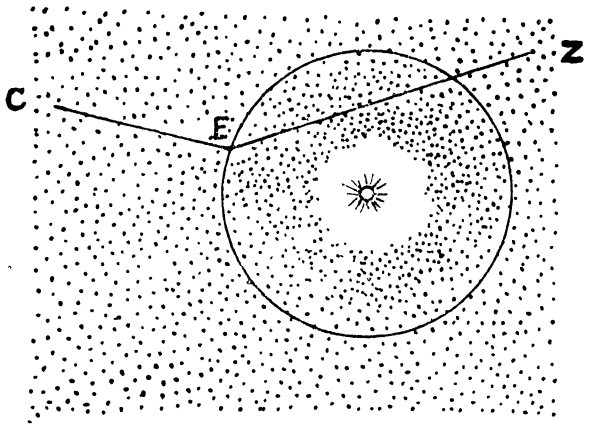
इलेक्ट्रान भी परिक्षेपण में योग देते है। धरती से धूलिकणों के इस बादल को हम सूर्य की रोशनी से प्रकाशित देखते है और हमारी निगाह ज्यों-ज्यों सूर्य के निकट आती है त्यों-त्यों इस बादल की चमक बढ़ती जाती है।

किन्तु प्रातः या सन्ध्याकालीन आकाश में प्रकाशदीप्ति के प्रत्याशित वितरण में कुछ व्यवधान उपस्थित हो जाता है, क्योंकि आकाश के वे ही भाग रात्रि के सान्ध्य प्रकाश से भी आलोकित होते है (§२००); यह सान्ध्य प्रकाश के अन्तिम क्षणों की अत्यन्त क्षीण ज्योति होती है जो वायुमण्डल के उच्चतम स्तरों द्वारा परिक्षेपित होने पर हमारी ओर आती है। इस प्रकाश की चमक भी सूर्य के निकट की ओर बढ़ती है, किन्तु चमक की यह वृद्धि वास्तविक राशिचक्रीय प्रकाश की वृद्धि की तुलना में अधिक तीव्र होती है; इस प्रकाश की समज्योति रेखाएँ वृत्तचाप की शक्ल मे, सूर्य को मिहराब की तरह परिवेष्टित करती हैं, जैसा कि सभी सान्ध्यकालीन घटनाएँ करती हैं; राशिचक्र का इन पर कोई असर नही पड़ता है (चित्र १५१)। राशिचक्रीय प्रकाश तथा सान्ध्य प्रकाश के सम्मिश्रण से उस लाक्षणिक प्रकाश-सूचीस्तम्भ का निर्माण होता है जिसका हम प्रेक्षण करते है। क्षितिज तथा राशिचक्र के स्थिति-परिवर्त्तन से हम समझ सकते है कि क्यों रात के दौरान मे तथा वर्ष के दौरान मे इस प्रकाशीय घटना का कुछ हद तक स्थानान्तर होता है—यह स्थानान्तर प्रेक्षणस्थल की भौगोलिक स्थिति पर भी आश्रित होता है। अतः इसमे वायु-ज्योति को भी जोड़ना चाहिए जो क्षितिज से १५° की ऊँचाई पर महत्तम प्रकाशतीव्रता प्रदर्शित करती है, क्योंकि इससे नीचे वायुमण्डल द्वारा अवशोषण के कारण यह उत्तरोत्तर मन्द होती जाती है।

फोटो इलेक्ट्रिक नाप द्वारा हाल में, राशिचक्रीय प्रकाश के बारे मे हमारी जानकारी मे विशेष वृद्धि हुई है। इससे मालूम किया गया है कि यह प्रकाश ध्रुवित होता है, और किसी-किसी स्थल पर तो ध्रुवण की मात्रा ३० प्रतिशत तक पहुँच जाती है। सूर्य की ओर दिशा EZ में चमक की वृद्धि परिक्षेपण के कोण के कारण तो है ही, साथ में इस कारण भी कि इस ओर धूलि के बादल की घनता बढ़ जाती है। 'प्रति-ज्योति' उस प्रकाश के कारण उत्पन्न होती है जो मंडलक के बाहरी भागों से परिक्षेपित होता है, अर्थात् दिशा CE से; सूर्य के उलटे रुख की ओर दीखनेवाली हलकी ज्योति का सन्तोषजनक रूप से समाधान नही किया जा सका है (चित्र १५२)।

यह प्रतिपादित किया गया है कि क्रान्तिचक्रीय प्रकाश की चमक नियमित तौर पर हर दो या तीन मिनट पर बढ़ती और घटती है तथा ये परिवर्त्तन चुम्बकीय सूई के विक्षोभ के साथ घटते है। यह भी कहा जाता है कि यह प्रकाश चुम्बकीय तूफ़ान के

दौरान विशेष रूप से तीव्र हो जाता है। इन प्रेक्षणों को स्वीकार करने के पूर्व बेहतर होगा कि इनकी वास्तविकता की जाँच इस तरह कर लें कि कम-से-कम दो व्यक्तियों को एक ही समय अलग-अलग स्वतन्त्र रूप से प्रेक्षण करने दे और इस बात का पूरा इतमीनान भी कर ले कि ये परिवर्त्तन बादलों के आवरण या उनकी छाया के कारण तो नहीं उत्पन्न होते हैं।



चित्र १५२—**राशिचक्रीय प्रकाश सूर्य के निकट क्यों अधिक तीव्र होता है।**

सर्वग्रास सूर्यग्रहण के दौरान एक अत्यन्त रोचक प्रेक्षण किया जा सकता है जबकि इस बात की सम्भावना मौजूद रहती है कि चन्द्रमा का छायाशंकु, कान्तिचक्रीय प्रकाश का परिक्षेपण करनेवाली धूल के स्तरों में से गुजरता हुआ देखा जा सके। सूर्य के अस्त होने के उपरान्त ही ये प्रेक्षण किये जाने चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है कि चान्द्र कान्तिचक्रीय प्रकाश का भी अस्तित्व होता है जो चन्द्रमा के उदय होने के ठीक पहले और इसके अस्त होने के बाद प्रकट होता है, किन्तु इस ज्योति का प्रेक्षण कम-से-कम उतना ही कठिन है जितना 'गेगेन्शीन' का।

२०२. चन्द्रग्रहण

पृथ्वी की छाया जब चन्द्रमा पर पड़ती है तो चन्द्रग्रहण लगते हैं। क्या यह उचित न होगा कि यह देखा जाय कि यह छाया दीखती कैसी है? इस दृष्टिकोण से

विचार करें तो चन्द्रग्रहण वास्तव में स्वयं हमारी धरती के बारे में जानकारी हासिल करने का एक साधन साबित होता है।

कोई भी दो चन्द्रग्रहण एक-से नहीं दीखते। बहुत कम ही ऐसा होता है कि चन्द्रमा इस पूरी तरह छिप जाय कि रात्रि के आकाश मे यह बिलकुल ही न दीखे। सामान्यतः छाया के केन्द्र भाग का रंग फीके ताम्रवर्ण सरीखा लाल होता है जो ऐसे रंगों से परिवेष्टित होता है जिनकी चमक बाहर की ओर बढ़ती जाती है। एक कुशल प्रेक्षक निम्नलिखित कटिबंधों का विवरण देता है—

०–३०′, मुर्खी लिए हुए काला; बाहरी हाशिये की ओर अधिक चटकीला बादामी मिश्रित नारङ्गी रंग।

३०′–४१′ भूरे रंग का हाशिया, जिसकी चमक सर्वत्र बहुत कुछ एक समान।

४१′–४२′ सक्रमण हाशिया

इससे और बाहर की ओर हरे, नारङ्गी और गुलाबी रंग के वृत्त मिलते हैं। अवश्य ही विपर्यास प्रभाव इनके निर्माण मे योग देते हैं।

इनके रंग तथा जिस ढंग से ये बदलते रहते हैं, दोनों से हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि हम यहाँ सामान्य किस्म की छाया का अध्ययन नही कर रहे हैं। वस्तुतः बारीकी से अन्वेषण करने पर हम देखते हैं कि धरती के गोले की छाया के लिए यह नितान्त असम्भव है कि यह चन्द्रग्रहण उत्पन्न करे क्योकि हमारे वायुमण्डल के कारण उत्पन्न होनेवाली, किरणों की वक्रता इन्हे थोड़ा-बहुत पृथ्वी के गिर्द मोड़ देती है! इस दशा में 'पृथ्वी की छाया' और कुछ नही होती सिवाय उस किरण-शलाका के, जो हमारे वायुमण्डल की निचली तहो को लगभग पाच मील की ऊँचाई तक पार कर चुकी है और अपनी इस यात्रा के फलस्वरूप गहरे लाल रग की हो गयी है। ऐसा उसी प्रकार होता है जिस प्रकार सान्ध्य बेला मे वायुमण्डल के घने स्तरों मे से होकर हम तक पहुँचने वाली सूर्यरश्मियो का रग बदल जाता है; केवल इस दशा मे किरणों द्वारा तय की गयी दूरी के दो गुनी होने के कारण रग और भी धूमिल हो जाता है। अतः छाया के केन्द्रीय भाग का रंग हमारे वायुमण्डल की पारदर्शिता की मात्रा का सूचक है। यह निरे संयोग की बात नही है कि ऐसे अवसरों पर जबकि हमारे वायुमण्डल मे ज्वालामुखी के उद्गार की धूल की प्रचुर मात्रा मौजूद रहती है, तो ग्रहण के अवसर पर चन्द्रमा अत्यन्त ही अन्धकारमय दीखता है। औसत रूप से चन्द्रमा जब पृथ्वी की छाया के उत्तरी भाग में स्थित होता है तो औसत रूप से चन्द्रग्रहण अधिक अन्धकारमय दीखते हैं बनिस्बत उस वक्त के जबकि चन्द्रमा छाया के दक्षिणी भाग में होता है, अतः प्रत्यक्षतः

हमारे उत्तरी गोलार्द्ध मे दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा, ज्वालामुखी तथा मरुस्थल वाली धूल की मात्रा अधिक है।

चन्द्रग्रहण के प्रकाश को आँकने का एक सरल तरीका इस विलक्षण बात के उपयोग में है कि प्रकाश की तीव्रता जब कम होती है तो हमारी आँख अब चीजों का सूक्ष्म विवरण नहीं देख पाती है; उदाहरण के लिए सान्ध्य प्रकाश में समाचारपत्र के बड़े शीर्षक तो अभी भी पढ़े जा सकते हैं, किन्तु सामान्य छापे के अक्षर अब हम नहीं पढ़ पाते। इसी प्रकार अब हमे इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि चन्द्रमा के धरातल के बड़े मैदान (तथाकथित 'समुद्र') जो साधारणतः भूरे धब्बों के रूप में दिखलाई देते हैं, चन्द्रग्रहण के समय (क) कोरी आँखों से दिखलाई देते हैं या (ख) ३ से १० इंच वाले उपदृश्य लेन्सवाली दूरबीन से दिखलाई देते हैं या (ग) कि और भी बड़ी दूरबीन से।

प्रेक्षण के ये तीन तरीके इस बात मे हमे सहायता देने के लिए काफ़ी होंगे कि चन्द्रग्रहणों का हम हलके, औसत तथा अन्धकारमय श्रेणियों में मोटे तौर पर वर्गीकरण कर सके। इन तरीकों पर कई बरसों के दौरान मे प्राप्त किये गये संक्षिप्त विवरणों की विधिवत् तुलना से अवश्य अनेक महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों के लिए सामग्री प्राप्त हो सकेगी। (ध्यान रखिए कि दूरबीन किसी प्रकाशित धरातल के प्रतिबिम्ब को अधिक चमकीला नहीं बनाती, बल्कि केवल प्रकाशीय आवर्द्धन के कारण ही दृश्यता मे वृद्धि हो जाती है!)

२०३. भस्म सरीखे धूसर[1] रंग का प्रकाश

दूज का चाँद जब प्रगट होता है तो उसके नाखूनी हाशिये की ओर उसके धरातल के शेष भाग को हम हलकी रोशनी से प्रकाशित देख सकते हैं (चित्र ८०)। यह धूसर रंग का प्रकाश पृथ्वी से आता है, जो चन्द्रमा पर से देखने पर, एक तेज रोशनीवाले बृहत्काय प्रकाश-स्रोत की भाँति चमकता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि धूसर रंग का यह प्रकाश सदैव एक-सी ही प्रबलता का नहीं रहता। कुछ मौको पर यह लगभग अदृश्य रहता है, अन्य अवसरो पर यह दूधिया श्वेत रंग का होता है और इतना तेज़ कि चन्द्रमा की सतह पर आम तौर पर दिखाई देनेवाले काले धब्बे स्पष्ट पहचाने जा सकते हैं। इस धूसर रंग के प्रकाश की प्रबलता की तब्दीलियों का कारण यह है कि चन्द्रमा के रुख के पृथ्वी के अर्द्धभाग मे कुछ अवसरों पर बहुत-से महासागर होते हैं,

1. Ashgrey

तो अन्य अवसरों पर बहुत-से महाद्वीप, और कुछ मौकों पर उसके ऊपर बादल छाये होते हैं तो अन्य समय आसमान अधिक साफ़ रहता है। इस प्रकार इस धूसर रंग के प्रकाश पर एक नजर डालकर हम पृथ्वी के अर्द्ध भाग की हालतों की विस्तृत जानकारी का अन्दाज़ लगा सकते हैं! इस दृष्टि से इस धूसर रंग के प्रकाश का अध्ययन सच पूछिए तो, भूमण्डल सम्बन्धी भौतिक विज्ञान के अन्तर्गत आता है।

भस्म-धूसर रंग के प्रकाश की प्रबलता को कई दिनों तक माप अंक १ से १० द्वारा आँकिए (१=अदृश्य, ५=दृश्यता पर्य्याप्त हो, १०=जब प्रकाश अत्यधिक चमकीला हो)। आप शीघ्र ही देखेंगे कि दृश्यता चन्द्रमा की कला पर बहुत अधिक मात्रा में आश्रित है, क्योंकि इसका प्रकाशित नव चन्द्र-भाग अधिक चौड़ा हो जाने पर आँखों पर चकाचौध उत्पन्न कर देता है। अतः विभिन्न दिनों के लिए इस भस्म धूसर-प्रकाश की दृश्यता की तुलना का केवल तभी कुछ अर्थ हो सकता है, जब यह तुलना चन्द्रमा की एक-सी कला के लिए की जाय। इसके प्रतिकूल क्षितिज से ऊपर चन्द्रमा की ऊँचाई इस प्रकाश की दृश्यता को बहुत ही कम मात्रा में प्रभावित करती प्रतीत होती है।

२०३ (क). उड़न तश्तरियाँ[1]

रॉकी पर्वतमाला के ऊपर उड़ान करते समय एक अमेरिकन यात्री ने अजीब किस्म के वायुयानों की कतार देखी जो आश्चर्यजनक वेग से हरकत करते जान पड़ते थे, और इनकी तुलना उसने 'उड़न तश्तरियों' से की[2]। इस विवरण से जन-साधारण अत्यन्त प्रभावित हुए। तब से प्रति वर्ष इसी प्रकार की वस्तुओ के बारे मे सैकड़ों रिपोर्टें प्राप्त होती रही हैं—पहले तो युनाइटेड स्टेट्स से, फिर बाद में यूरोप से भी।

सामान्यतः ये विवरण बतलाते हैं कि प्रकाश के धब्बे दिखलाई पड़ते हैं जो अनियमित कक्षाओ मे हरकत करते हैं—कुछ देर के लिए वे स्थिर हो जाते हैं और तब फिर तेज रफ्तार से गति करते हैं। कुछ प्रेक्षण तो दिन के समय भी प्राप्त किये गये हैं। कुछ लोगों ने तो यह आशंका प्रगट की कि ये उड़न तश्तरियाँ कोई रूसी गुप्त युद्धास्त्र हैं तथा कुछ का ख्याल था कि ये अन्तरिक्ष यान हैं और कुछ लोगों ने बतलाया कि ये मङ्गल-निवासियों के यान हैं और उनका दावा है कि उन्होंने इनसे सम्पर्क भी स्थापित किया था!

१९४७ से पहले भी इस तरह के किस्से सुनने में आये थे; सन् १८८२ तथा १८९७ में ये उड़न तश्तरियाँ अधिकतम संख्या में देखी गयीं, फिर १८६३, १८९४, १८९६

1. Flying saucers 2. D. H. Menzel, *Flying saucers* (Cambridge, 1953)

तथा १९०८ मे भी एक प्रकार की उड़न तश्तरियाँ देखी गयी थी। मध्यकालीन युग मे प्राचीन काल मे तथा बायबिल के युग मे भी इनका जिक्र आया है।

हाल के प्रेक्षणों के सूक्ष्म विवेचन से पता चलता है कि इन विवरणों में से अधिकाश की व्याख्या आसानी से की जा सकती है।

१. शुक्र ग्रह महत्तम दीप्ति की अवस्था मे; प्रतीत होनेवाली हरकत उस दृष्टिभ्रम के कारण उत्पन्न होती है जिसका विवरण "गतिशील तारे" के शीर्षक मे किया गया है (§ १०१)।

२. एक दीप्तिमान् उल्का-प्रस्तर या अग्नि का गोला; उसकी पथरेखा पर्य्याप्त समय तक दिखलाई देती रह सकती है और इसमे अनियमित वक्रता भी दृष्टिगोचर हो सकती है।

३. परीक्षण गुब्बारा, जैसा कि ऋतु-वैज्ञानिक प्रायः रोज़ ही आकाश मे हजारों की संख्या मे उड़ाते है।

४. साधारण वायुयान, जिसे प्रकाश की विशेष परिस्थितियों मे देख रहे हों।

अधिक जटिल व्याख्यावाले प्रेक्षणों के लिए निम्नलिखित सम्भावनाओं पर विचार किया जा सकता है।

५. प्रभामण्डल की घटनाएँ, विशेषतया कृत्रिम सूर्य[1] तथा अनु-सूर्य।[2]

६. वर्त्तन की घटनाएँ।

७. धुन्ध के स्तर तथा प्रकाश की असाधारण परिस्थितियों मे बादलों का निर्माण।

८. विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ, उदाहरण के लिए गुब्बारे, बच्चो द्वारा उड़ायी जानेवाली पतंगे, नेत्र मे बननेवाले उत्तर-प्रतिबिम्ब, बादलों पर रोशनी फेकती हुई सर्चलाइट तथा अरोरा-प्रकाश।

९. जानबूझकर भ्रम उत्पन्न करने के उद्देश्य से आयोजित वञ्चना के प्रयोग या प्रैक्टिकल मजाक।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस तरह के विवरण किसी वेधशाला से विरले ही प्राप्त हुए है। युट्रेख्ट वेधशाला मे गत वर्ष ३५०० पत्र उल्काओं तथा प्रकाश की असाधारण घटनाओं के बारे मे प्राप्त हुए थे, किन्तु इनमें एक भी पत्र ऐसा न था जो 'उड़न तश्तरियों' के अस्तित्व को विश्वसनीय तरीके पर प्रतिपादित करता; प्रेक्षण यंत्र की फोकस की खराबी, दृष्टिक्षेत्र मे कुहरे आदि के आवरण या रिफ्लेक्स प्रक्रिया

1. Mock suns 2. Sub-sun

के कारण अत्यधिक आश्चर्यजनक प्रभाव उत्पन्न हो सकते हैं। यहाँ तक कि रेडार द्वारा प्राप्त किये गये प्रेक्षण भी निर्णयात्मक नही हो पाते।

अतः हमें भय की अन्धभावना, युद्ध-विभीषिका या रहस्यवाद के वशीभूत नहीं होना चाहिए; बल्कि हमे यह स्मरण रखना चाहिए कि इस पुस्तक मे कितनी सारी प्रकाशीय घटनाओं का विवरण दिया जा चुका है जिन सबकी ही व्याख्या सामान्य भौतिकी द्वारा की जा सकती है यद्यपि ये अनेक व्यक्तियो के मन मे अत्यधिक आश्चर्य उत्पन्न करती है।

यदि आप ऐसी घटना देखे जिसे आप 'उड़न तश्तरी' समझते हों तो ऐसी दशा में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना लाभदायक होगा।

किसी व्यक्ति से कहिए कि वह आपके प्रेक्षण की जाँच करे। खिड़की के काँच या पर्दे में से जहाँ तक हो सके प्रेक्षण मत कीजिए। सूर्य या चन्द्रमा से घटनास्थल की दूरी का अन्दाज लगाइए। यदि कोणीय दूरी २२° हो तो समझ लीजिए कि यह प्रभा-मण्डल की घटना है।

प्रेक्षण का ठीक समय अंकित कीजिए, तथा इर्द-गिर्द के तेज रोशनी के तमाम प्रकाशस्रोतों का भी विवरण लिख लीजिए।

अध्याय १२

भू-दृश्य में प्रकाश और रंग

२०४. सूर्य, चन्द्रमा और तारों के रंग

सूर्य की चकाचौध वाली चमक के कारण इसके रंग की पहचान करना कठिन होता है। किन्तु व्यक्तिगत रूप से मैं कहूँगा कि यह निश्चित रूप से पीतवर्ण का है, और नीले आकाश के प्रकाश के साथ मिलकर यह एक मिश्रण बनाता है जिसे हम 'श्वेत' कहते हैं—यही रग कागज के तख्ते का होता है जबकि आसमान साफ हो और धूप निकली हुई हो। इस प्रकार के तखमीने से कठिनाई उत्पन्न होती है क्योंकि 'श्वेत' की धारणा मे अनिश्चितता की किञ्चित् मात्रा मौजूद होती है। सामान्यतः हमारी प्रवृत्ति यह होती है कि आसपास के वातावरण मे प्राधान्य प्राप्त करनेवाले रंग को हम श्वेत या करीब-करीब श्वेत मानते हैं (देखिए § ९५)।

बदली वाले या धुन्ध के दिन, सूर्य और आकाश से आनेवाली किरणे, पानी की बूंदों द्वारा होनेवाले अनगिनत परावर्त्तनों और वर्त्तनों के कारण आपस मे मिल-जुल जाती हैं, और इसलिए आकाश का रग सश्लिष्ट श्वेत होता है। यदि हम इस बात का विचार करे कि आकाश का नीला प्रकाश वस्तुतः परिक्षेपित प्रकाश है जो पहले सूर्य से आनेवाले प्रकाश में मौजूद था, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वायु-मण्डल के बाहर से देखने पर सूर्य भी करीब-करीब श्वेत दीखेगा।

हमे ज्ञात है ही कि अस्त होते हुए सूर्य के **नारङ्गी** या **लाल** वर्ण की उत्पत्ति का कारण यह है कि इसकी किरणे जिस मार्ग को तय करके हमारी आँख तक पहुँचती हैं उसकी लम्बाई तेजी के साथ बढ़ती जाती है; शनैः-शनैः अधिकवर्त्तनीय किरणें लगभग पूर्णतः परिक्षेपित हो जाती हैं, और केवल गहरे लाल रंग की किरणें शेष रह जाती हैं (§ १७२)।

कतिपय असाधारण दशाओं में ऊँचाई पर स्थित सूर्य धुन्ध में से होकर **ताम्रवर्ण** के लाल वर्ण का चमकता है, अर्थात् कुहरे की बूंदें अब अत्यन्त क्षुद्र आकार की होती

है; और इसी कारण लघु तरंग-दैर्घ्यवाले प्रकाश का ये विशेष रूप से परिक्षेपण करती है (§ १८२)।

अन्य दशाओ मे यह **नीलापन** लिये हुए होता है, और कहा जाता है कि ऐसा अधिकतर उस वक्त होता है जब बादलों का हाशिया नारङ्गी वर्ण का दीखता है। संभव है कि रंग-विपर्यास का यह प्रभाव हो या कि नवसिखुए प्रेक्षक सूर्य के एकदम निकट के बादलों के रंग और स्वय सूर्य के गोले के रंग के बीच धोखा खा जाते हों। इससे नितान्त पृथक्, **नीले** सूर्य की घटना है जब कि सूर्य ऐसे घने वादल मे से देखा जाता है जो अत्यन्त सम आकार की बूँदो से बना होता है (§ १६४)।

दिन में चन्द्रमा प्रभावशाली **विशुद्ध श्वेत** रंग का दीखता है क्योंकि आकाश से परिक्षेपित गाढ़ा नीला प्रकाश, चन्द्रमा के स्वयं अपने पीत वर्ण के प्रकाश के साथ जुड़ जाता है। और भी, जब यह दिन के वक्त उदय या अस्त होता है तो यह करीब-करीब रंगविहीन, धूमिल और केवल रञ्चमात्र पीलापन लिये हुए होता है। जैसे-जैसे सूर्य अस्त होता है, और आकाश का नीला प्रकाश विलुप्त होता जाता है, वैसे-वैसे चन्द्रमा धीरे-धीरे अधिक पीला होता जाता है; एक निश्चित क्षण पर इसका रंग मनमोहक **शुद्ध पीत वर्ण** हो जाता है, यद्यपि यह रग सम्भवतः अभी भी मौजूद हलकी नीली पृष्ठ-भूमि के सम्मुख, मानसिक विपर्यास के कारण अधिक चटकीला प्रतीत होता है। सान्ध्य प्रकाश जब खत्म होने को आता है तो चन्द्रमा का रग पुनः पीत-श्वेत वर्ण का हो जाता है, बहुत सम्भव है कि ऐसा इस कारण होता हो कि आसपास का वातावरण अब अधिक अन्धकारमय हो जाता है, अतः चन्द्रमा का प्रकाश हमे अधिक तेज मालूम पड़ता है, फलस्वरूप आँख की एक विचित्र विलक्षणता के कारण अन्य सभी अत्यन्त तेज प्रकाश-स्रोतों की तरह यह श्वेत रंग का जान पड़ता है (§ ७७)।

रात्रि के शेष भाग के लिए चन्द्रमा हलका पीलापन लिये हुए रहता है, ठीक वैसा ही जैसा दिन का सूर्य दीखता है। जाड़े की अत्यन्त स्वच्छ रात्रियों में इसका रंग, जब चन्द्रमा बहुत ऊँचाई पर होता है, करीब-करीब पूर्णरूप से श्वेत हो जाता है; किन्तु क्षितिज के निकट यह उसी प्रकार के **नारङ्गी** तथा **लाल** रंग का प्रदर्शन करता है जिस प्रकार अस्त होता हुआ सूर्य। चन्द्रमा के रंग द्वारा, हमारी आँखो पर पड़नेवाला, प्रभाव तनिक भिन्न इसलिए होता है कि इसके प्रकाश की तीव्रता अपेक्षाकृत बहुत कम होती है।

पृथ्वी की नीली छाया के मध्य में पूर्णिमा का चाँद मनोहर काँस्य-पीत रंग का होता है, निस्संदेह वातावरण के अनुपूरक विपर्यास के कारण ऐसा होता है। तेज

चमक के नीललोहित लाल वर्ण के छोटे-छोटे बादलों से घिरे होने पर इसके रंग का शेड लगभग **हरा-पीला** हो जाता है; यदि ये बादल नारङ्गी-गुलाबी रंग धारण कर लें तो चन्द्रमा का शेड करीब-करीब नीले-हरे में तब्दील हो जाता है। ये विपर्यास-रंग पूर्ण चन्द्र की अपेक्षा नवचन्द्र मे और अधिक स्पष्ट उभरते हैं।

चन्द्रमा के रग से बिलकुल अलग-थलग, चाँदनी रात में भू-दृश्य का रंग होता है जिसे आम तौर पर नीला या हरा-नीला समझा जाता है। इसमे सन्देह नही कि बहुत कुछ हद तक यह हमारे नारङ्गी रंग के कृत्रिम प्रकाश के विपर्यास के कारण उत्पन्न होता है, जो चन्द्रमा से प्रकाशित हमारे नीले आकाश को और भी प्रभावोत्पादक बना देता है।'

तारो द्वारा प्रदर्शित रगों के अन्तर की प्रारम्भिक जानकारी हासिल करने के लिए आइए, मृग-व्याध तारा-समूह की बृहत् वर्गाकृति का ध्यानपूर्वक अवलोकन करे। हम देखते है कि बायी ओर के सिरे पर स्थित चमकीले सितारे, आर्द्रा नक्षत्र, का रग अद्भुत प्रकार का पीला है या अन्य तीनों नक्षत्रों की तुलना मे इसे नारङ्गी वर्ण का भी मान सकते हैं (चित्र ६२)। इस तारा-समूह के निकट ही वृष राशि मे हम नारङ्गी वर्ण का एक ओर तारा 'रोहिणी' नक्षत्र देख सकते है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस प्राथमिक तथा अत्यन्त सरल रंग-विभेद से ही हमे सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि हमें उनके शेड के सूक्ष्म अन्तर को पहचानने का प्रयत्न करना चाहिए। यह हमारी रंग-अनुभूति के लिए एक दुस्तर कार्य है, किन्तु अभ्यास से इस दिशा मे बहुत कुछ किया जा सकता है। चूँकि नक्षत्रों के रग के अन्तर उनके विभिन्न ताप (टेम्परेचर) के कारण उत्पन्न होते हैं, अतः हम समझ सकते है कि वे उसी क्रम से रंगों का प्रदर्शन करते हैं जिस क्रम से एक तापोज्ज्वल पिण्ड करता है जो धीरे-धीरे ठण्डा हो रहा है, अर्थात् श्वेत से पीला और नारङ्गी रग धारण करते हुए लाल रग अख्तियार करता। अभी तक इस बात का निर्णय नहीं हो पाया है कि सबसे अधिक तप्त नक्षत्रों को श्वेत रंग का माना जाय या नीले रंग का, क्योंकि विभिन्न प्रेक्षक इस बात पर एकमत नही है कि वस्तुतः 'श्वेत' रंग क्या है। कतिपय प्रेक्षक, अन्य लोगों की तुलना मे, आकाश के क्षीण प्रकाशवाली पृष्ठभूमि से अधिक प्रभावित होते है जो हमे नीलापन लिये हुए प्रतीत होता है और जिसे हम रंगविहीन समझने के अभ्यस्त हो गये है, क्योकि यह रात्रि के दृश्य का औसत रंग होता है।

1. See the discussion in Met. Mag. **67-69,** 1932-34

निम्नलिखित माप-तालिका नक्षत्रों के विभिन्न रंगों का आभास कराती है जिसमें उन्हे आम तौर पर व्यक्त करनेवाले अंक दिये गये हैं तथा कुछ उदाहरण भी। कुशल प्रेक्षकों द्वारा इन रंगों के बारे मे स्वतन्त्र रूप से प्राप्त किये गये तखमीने अकसर औसत रग से पूरे एक वर्ग ऊपर या नीचे पड़ते हैं। यहाँ दिये गये उदाहरणों के तखमीने ऐसे प्रेक्षकों द्वारा प्राप्त किये गये थे जिन्होंने नीले को नीले वर्ण के रूप में नहीं देखा, अतः इस कारण, ऋणात्मक मान का समावेश करने की आवश्यकता नहीं समझी गयी।

रंगों का मापक्रम

–२ नीला	४ विशुद्ध पीला
–१ नीला लिये हुए श्वेत	५ गहरा पीला
० श्वेत	६ नारङ्गी लिये हुए पीला
१ पीलापन लिये हुए श्वेत	७ नारङ्गी
२ श्वेत-पीला	८ पीलापन लिये हुए लाल
३ हलका पीला	९ लाल

उदाहरण

α बृहत् श्वान मे,	(लुब्धक)	०.८	α लघु सप्तर्षि में,		३.८
α अभिजित् तारा समूह मे, (अभिजित्)		०.८	μ लघु सप्तर्षि मे,		५.८
α सिंह मे,	(मघा)	२.१	α स्वाती मे,	(स्वाती)	४.५
α लघुश्वान मे,	(प्रकाश)	२.४	α वृश्चिक में	(ज्येष्ठा)	७.५
α श्रवण तारासमूह मे,	(श्रवण)	२.६	शुक्र ग्रह		३.५
α सप्तर्षि मे,		४.९	मगल ग्रह		७.६
μ सप्तर्षि मे		२.३	बृहस्पति ग्रह		३.६
			शनि ग्रह		४.८

स्वभावतः तारे भी क्षितिज के ज्यो-ज्यों निकट आते हैं त्यों-त्यों वे रक्तिम वर्ण के होते जाते हैं, किन्तु तब उनकी टिमटिमाहट उनके रंग का सही अन्दाज़ लगाने मे आम तौर पर रुकावट पैदा करती है। यह एक ध्यान देने योग्य बात है कि पृथ्वी पर २५००° सेण्टीग्रेड ताप के दहकते हुए पिण्ड को हम 'तापोज्ज्वल' मानते हैं जबकि इसी ताप का नक्षत्र हमे नारङ्गी-लाल रग का दीख पड़ता है। सम्भवतः इस शारीरिक क्रिया सम्बन्धी घटना का कारण यह है कि नक्षत्र अपेक्षाकृत इतने कम चमकीले होते हैं कि इनके प्रकाश के, आँख पर पड़ने वाले प्रभाव के लाल वर्ण का अवयव तो बोध-

गम्य हो जाता है, जबकि हरे तथा नीले वर्ण के अवयव बोधगम्य होनेवाले देहली-मान[1] से कम ही रह जाते हैं।

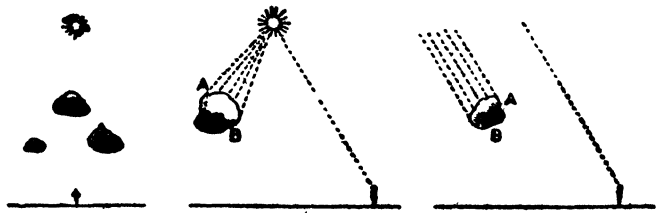
एक और व्याख्या § ७७ में दी गयी है। एक कुशल प्रेक्षक बतलाता है कि तारों के रंग का अनुमान वह चाँदनी रात मे अधिक आसानी से लगा सकता है। क्या ऐसा इस कारण है कि हमारे रेटिना के शंकु उस वक्त अधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं जब पृष्ठभूमि मे सामान्य रूप से व्यापक दीप्ति मौजूद होती है?

२०४. बादलों का रंग

सुन्दर पुञ्ज-बादलों के झुण्ड को आकाश पर धीरे-धीरे सामने से गुजरते हुए देखने मे, तथा इस बात पर विचार करने में कि क्यों कुछ भाग हलके रंग के और कुछ काले रंग के होते हैं, आनन्द-सा आता है। जिन स्थलों पर ये सूर्य से प्रकाशित होते है, वहाँ ये चकाचौध पैदा करनेवाले उज्ज्वल रग के होते हैं, किन्तु हमारे ऊपर से जब ये गुजरते हैं तो इनके निचले भाग भूरे या काले-भूरे रंग के हो जाते हैं। पानी की बूँदें परस्पर इतनी घनी ठंडी रहती हैं कि बादल मे रोशनी मुश्किल से ही प्रवेश कर पाती है, बल्कि अनगिनत बूँदों के अधिकांश से यह वापस परावर्त्तित हो जाती है; यह बादल करीब-करीब एक अपादरदर्शी सफेद पिण्ड के मानिन्द होता है। यदि सूर्य पुञ्ज-बादलों से ढका हो तो ये काले रंग के दीखते हैं किन्तु इनके हाशिये चमकीले होते हैं—'प्रत्येक बादल का किनारा रजतश्वेत होता है!'[2] इस प्रकार प्रकाश और छाया का वितरण हमें बादलों के विभिन्न भागों के बारे में दिलचस्प जानकारी प्रदान करता है—ऊपर के भाग, नीचे के भाग, सामन के, पीछे के, तथा आकाश मे इन वृहत्काय द्रव्यमात्राओं की वास्तविक शक्ल के बारे मे। इन अनुपातों का सही अन्दाज लगाना, या सूर्य के लिहाज़ से बादल की स्थिति निर्धारित करना सदैव ही आसान नही होता। उदाहरण के लिए यदि बादल मेरे सामने है और सूर्य उनसे कुछ फासले पर, ऊपर हैं, तो करीब-करीब केवल छाया ही देख पाकर मैं चकित रह जाता हूँ (चित्र १५३, a)। मैं सूर्य की विशाल दूरी का पर्याप्त रूप से अनुभव नही कर पाता, और अनजाने ही मै कल्पना कर लेता हूँ कि यह काफी नजदीक है और तब इस बात को स्मरण रखने के बजाय कि बादल को प्रकाशित करने वाली किरणें सूर्य से मेरी आँख तक आनेवाली रेखा के समानान्तर चलती हैं (चित्र १५३ c) मैं अपेक्षा करने लग जाता हूँ कि बादल AB पर किरणें चित्र १५३, b की भाँति पड़ रही है।

1. Threshold value 2. 'Every cloud has a silver lining'

इन काले बादलों पर प्रकाश और छाया की क्रीड़ा कितनी ही मायावी क्यों न हो, तथा एक दूसरे पर जो छाया ये डालते हैं, वे कितनी ही जटिल क्यों न हों, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि अकेले इन्ही से पुञ्ज बादलों के रग के सभी प्रभेदों का समाधान करना असम्भव है। तूफान के बाद जब आसमान साफ हो रहा हो तब यदि केवल



चित्र १५३—पुज बादलों पर प्रकाश और छाया।

(a) उत्तर से दक्षिण की तरफ देखने पर भू-दृश्य और प्रेक्षक।

(b) भ्रमपूर्ण आत्मनिष्ठ धारणाएँ तथा प्रत्याशाएँ।

(c) यथार्थ स्थितियाँ।

(b और c में प्रेक्षक पूर्व से पश्चिम की ओर देख रहा है।)

कुछ थोड़े से छोटे-छोटे पुञ्ज-मेघ बच गये हों, जो तेज प्रकाश से आलोकित हों और जिनके लिए इस बात की कोई सम्भावना न हो कि वे एक दूसरे पर अपनी छाया डाल सकें, तो वे उत्तरोत्तर अधिक काले होते जाते हैं और अन्त मे जब वे विलुप्त होने को होते हैं, तो वे नीले-[illegible]। आम तौर पर ऐसा जान पड़ता है कि नीले आकाश के सन्मुख दीखनेवाले पुञ्ज-बादलों के झीने भाग नीला+श्वेत रंग (जैसी कि आशा की जा सकती है) प्रदर्शित नहीं करते बल्कि नीला+काला रंग।[1]

अन्य अवसरों पर जब किसी पुञ्ज-बादल को एक अन्य बड़े बादल की पृष्ठभूमि के सम्मुख देखते हैं जो कि एकदम श्वेत हो, तो यह भूरा दीख पड़ता है—इस दशा मे यह प्रश्न ही नहीं उठ सकता कि केवल तहों की सम्पूर्ण मोटाई के बढ़ने से चमक में वृद्धि हो जाती होगी। यद्यपि इन घटनाओं को हम दिन प्रतिदिन देखते हैं, किन्तु अभीतक इनके प्रकाशीय सिद्धान्त का पर्याप्त रूप से अन्वेषण नहीं किया गया है। अवश्य ही इस धारणा को कि बादल वास्तव में प्रकाश का अवशोषण कर सकते हैं,

1. C. R., 177, 515, 1923

स्वीकार करने के पूर्व हमें बहुत अधिक सावधानी बरतनी चाहिए; सभी घटनाओं का पहले तो यह मानकर समाधान करने का प्रयत्न करना चाहिए कि ये बादल ठोस श्वेत वस्तु हैं, और तब हमें इस बात का विचार करना चाहिए कि ये वस्तुतः परिक्षेपण करनेवाले धुन्ध हैं और अन्त में इस बात की सम्भावना पर विचार करना चाहिए कि उनके अन्दर मटमैले रंग के धूल के जर्रे भी मौजूद हो सकते हैं।

यह दिलचस्पी की बात होगी कि उनकी तुलना रेल के इंजिन की सफ़ेद भाप से (धुएँ से नहीं!) करें! कुछ परिस्थितियों में, आपतित प्रकाश के साथ बड़े कोण बनाने वाली दिशा से देखने पर यह भाप अधिक सफ़ेद दिखलाई देती थी, और सूर्य की दिशा से देखने पर, जबकि आँख में लगभग आपतन की दिशा में परावर्त्तित होने वाला प्रकाश ही पहुँचता था यह कम चमकीला दीखता था। कुछ अन्य अवसरों पर सभी दिशाओं से देखने पर भाप पुञ्ज-बादल के सबसे अधिक चमकीले भाग से भी अधिक दीप्तिवाली दिखलाई पड़ी थी, कदाचित् इसका कारण यह था कि पुञ्ज-मेघ की दूरी अत्यधिक होती है, और उससे आने वाला प्रकाश, वायु मे होने वाले परिक्षेपण की वजह से क्षीण हो जाता है।

लम्बे फासले से देखने पर श्याम वर्ण के पुञ्ज-मेघ प्रायः निलछौवे रंग के प्रतीत होते हैं। यह स्वयं बादल का रंग नही है, बल्कि यह हमारी आँख और बादल के दर्मियान के वायुमण्डल से परिक्षेपित होकर आने वाले प्रकाश का रग है। इस तरह का श्याम वर्ण का बादल हम से जितनी ही अधिक दूरी पर होगा उतना ही अधिक, उसका रंग, पृष्ठभूमि के आकाश के रंग से मिलता-जुलता होगा। इसके प्रतिकूल, क्षितिज के निकट के चमकीले बादल पीत वर्ण लिये हुए दीखते हैं (§ १७३)।

अन्य जाति के बादलों के लिए भी हमे प्रेक्षण प्राप्त करना चाहिए और इन प्रश्नों का समाधान करने का प्रयास करना चाहिए, जैसे कि पानी बरसाने वाले बादल इतने भूरे क्यों होते हैं; विद्युत कौध वाले बादलों में हलके नारङ्गी वर्ण के साथ-साथ एक अजीब-सा सुरमई रंग क्यों दिखलाई पड़ता है। क्या ऐसा धूल के कारण है? किन्तु इन सब चीजों के बारे में हमारा ज्ञान इतना अपूर्ण है कि हम पाठकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना ही अच्छा समझते हैं कि वे स्वयं इस सम्बन्ध में अपने अनुसन्धान आरम्भ करें।

सम्पूर्ण आकाश जब सम रूप से बादलों से ढका होता है, तो उस समय आकाश में प्रकाश का वितरण-क्रम एक अत्यन्त विशिष्ट प्रकार का होता है, जो दीप्तिमान् नीले आकाश के प्रकाश-वितरण का पूरक रूप समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए

एक छोटे दर्पण की सहायता से ऊर्ध्व विन्दु के निकट के और क्षितिज के निकट के आकाश की तुलना कीजिए; इन दोनों में क्षितिज के निकट का आकाश सदैव ही अधिक दीप्तिमान् दीखता है, अनुपात ३ से लेकर ५ तक प्राप्त होता है। (प्लेट XIII)।

२०६ क. सूर्योदय और सूर्यास्त के समय बादलों का रंग

सूर्यास्त के अपने वर्णन मे हमने बादलों का ख्याल नहीं किया था। किन्तु अब थोड़ी देर के लिए हम बादलों के इन चमत्कारपूर्ण दृश्यों की उत्पत्ति पर विचार करेंगे जो अनन्त किस्म के रंगों और शक्लों से विभूषित दीखते हैं, और प्रकाश्य रूप से इनमें किसी प्रकार का क्रम नजर नहीं आता।

प्रारम्भ में मैं बता देना चाहूँगा कि निम्नलिखित विवरण मुख्यतः उस दृश्य से सम्बन्ध रखता है जो सूर्य के अस्त होने के पूर्व हमे दिखाई पड़ता है जबकि स्वयं वास्तविक 'सान्ध्यप्रकाश की घटनाओं' पर विचार-विमर्श § १८९ मे किया जा चुका है। सूर्य ज्योंही क्षितिज के नीचे पहुँचता है, त्योंही बादलों की शोभा भी विलुप्त हो जाती है!

सूर्यास्त के कुछ देर पहले बादल निम्नलिखित से प्रकाश पाते हैं—

१. सीधे, सूर्य का प्रकाश; सूर्य ज्यों-ज्यों नीचे आता है त्यों-त्यों बादल क्रम से पीले, नारङ्गी और लाल रंग मे शनैः-शनैः परिणत होता जाता है।

२. आकाश का प्रकाश, जो सूर्य के रुख नारङ्गी लाल वर्ण का, और अन्यत्र सब ओर नीले वर्ण का होता है। नारङ्गी-लाल वर्ण का यह प्रकाश, धूल के बड़े आकार के जर्रों तथा पानी की बूंदों द्वारा होने वाले प्रबल परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है, ये किरणों में अत्यल्प मात्रा का विचलन पैदा करते हैं (§§, १८८, १९२); नीला प्रकाश, वायु-अणुओं द्वारा पीछे की दिशा मे होने वाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है।

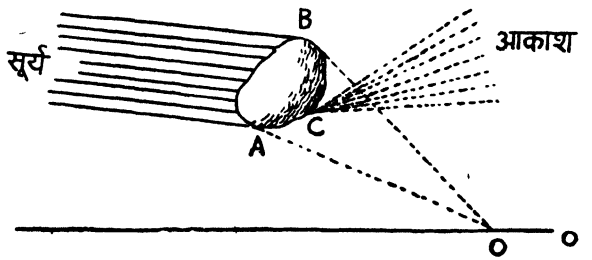
अब कल्पना कीजिए कि सूर्य के आसपास कोई बादल है जो आरम्भ में अत्यन्त झीना था, किन्तु शनैः-शनैः अब घना होता जा रहा है। इसकी बूंदें प्रकाश को अल्प मान के कोण पर परिक्षेपित करती हैं, अतः पतले स्तर के बादल, अवश्य ही पीछे की तिरछी दिशा मे स्थित सूर्य से ढेर-सा प्रकाश हमारी ओर भेजेंगे—परिक्षेपण करने वाले कणों की संख्या जितनी ही अधिक होगी, नारङ्गी-गुलाबी वर्ण का प्रकाश भी उतना ही अधिक प्रबल होगा। किन्तु फिर एक अनुकूलतम[1] अवस्था प्राप्त होती है जिस के आगे बादल

1. Optimum

के स्तर या तो इतने मोटे, या इतने घने हो जाते हैं कि उन्हे रोशनी आसानी से पार नही कर पाती। अत्यन्त घने बादल अपने मे से प्रकाश को करीब-करीब बिलकुल ही नही गुजरने देते, और आकाश के उस भाग की रोशनी को हमारी ओर परावर्त्तित करते हैं जो अभीतक नीला ही बना रहता है और जो हमारे रुख के बादलों को अपनी रोशनी से प्रकाशित करता है (चित्र १५४), अतः हम देखते हैं कि सबसे अधिक मनोरम सूर्यास्त की आशा उस वक्त की जा सकती है जब बादल झीनी परतों के हों या आकाश में बादल यत्र-तत्र बिखरे हों।

सूर्य के अस्त होने वाली दिशा में हम झीने बादल को पीछे से आने वाले प्रकाश से आलोकित होते हुए देखते हैं और घने या अधिक मोटे बादल को सामने से आने वाले प्रकाश से आलोकित होते हुए हम देखते हैं—प्रथम किस्म के बादल चटकीले नार ङ्गी-लाल वर्ण के होते हैं और द्वितीय किस्म के मटमैले भूरे-नीले रग के। रगों की इस विभिन्नता की, जिसके साथ-साथ संरचना और आकृतियों मे भी अन्तर मौजूद पाया जाता है, बादलों द्वारा प्रस्तुत दृश्यों की सर्वाधिक मनोरम विशिष्टताओं मे गणना की जाती है।

नीले-भूरे वर्ण के घने बादलों के हाशिये प्रायः चित्ताकर्षक सुनहले रंग के होते हैं। ध्यान दीजिए कि हाशिया A जो प्रकाश्यतः सूर्य के निकटतम है, हाशिया B की अपेक्षा अधिक प्रबल प्रकाश देता है, क्योंकि (क) उस स्थल पर प्रकाश-किरण का विचलन अपेक्षाकृत कम है; (ख) और यदि कल्पना करें कि बादल पूर्णतया गोले की शक्ल का ठोस पिण्ड है, तो हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि सूर्य के निकटतम पड़ने वाले पार्श्व की ओर एक नन्ही-सी पट्टी भी हम अवश्य देख सकेंगे जिस पर सूर्य से रोशनी सीधे ही आकर गिरती है (चित्र १५४)।



चित्र १५४—सूर्यास्त के पूर्व बादल पर गिरनेवाले प्रकाश की व्यवस्था।

यह अनूठा परिक्षेपण उन बादलों के हाशिये पर नहीं देखा जाता जो सूर्य से बहुत अधिक दूरी पर स्थित होते हैं; एक ओर सूर्य की रोशनी से सीधे ही प्रकाशित होते हैं और दूसरी ओर आकाश के नीले प्रकाश से, अतः इस दशा में भी नारङ्गी तथा नीले वर्ण की छटा देखने को मिलती है। सूर्य क्षितिज के नीचे ज्यों-ज्यों डूबता है त्यों-त्यों रंग और भी अधिक खुशनुमा होते जाते हैं, यहाँ तक कि अब सामने, पूरब दिशा के बादलों मे नील-लोहित रंग की प्रति-चमक दिखाई देने लगती है।

सूर्य जब पूर्णरूप से अस्त हो जाता है तो इसका प्रकाश आकाश के विभिन्न भागों से शनैः-शनैः सिमटता जाता है और ऊँचाई पर स्थित बादल सबसे अधिक देर तक प्रकाशित रहते हैं। इससे एक और मनोरम विपर्यास दृश्य का प्रादुर्भाव होता है; पीछे की ओर के बादल अब भी सूर्य से प्रकाशित होते रहते हैं और उनके सामने के बादल केवल आकाश की रोशनी से आलोकित होते हैं।

२०६ ख. पृथ्वी के प्रकाश-स्रोतों से बादलों का प्रकाशित होना

सन्ध्या को देहाती प्रदेशों मे जब हम टहलते रहते हैं और आकाश पर बादल समानरूप से छाये रहते हैं, तो यत्र-तत्र आकाश मे, नीचे ही फासले पर एक हलकी-सी चमक हम देखते हैं। यह चमक किसी शहर या बड़े क़स्बे से आती है जिसे हम उस की दिशा से पहचान सकते हैं। क्षितिज से इस चमक की कोणीय-ऊँचाई α का तखमीना 'रेडिएन' मे प्राप्त करिए, और मानचित्र की सहायता से उस नगर या क़स्बे की दूरी A ज्ञात करिए; तब उस बादल की ऊँचाई $h = A\alpha$ होगी। उदाहरण के लिए बिल्थोवेन[1] से उत्रेख्त[2] के ऊपर कोण $\alpha =$ ८.५ ऊँचाई पर चमक का मैंने प्रेक्षण किया तो h=७९० मीटर (लगभग ८८० गज़) प्राप्त हुआ, जीस्ट[3] के ऊपर $\alpha = ६^\circ$ था, अतः ऊँचाई $h =$ ७८० मीटर (लगभग ८७० गज)। सन् १८८४ में लन्दन के ऊपर की चमक चालीस मील की दूरी तक दिखलाई पड़ती थी। इन दिनों कितनी दूरी तक यह दृष्टिगोचर होगी ?

एक बड़े नगर के ऊपर की इस चमक का बारीकी से अध्ययन करें तो आप का परिश्रम फलप्रद साबित होगा। जल्दी ही आप को पता चल जायगा कि दिन प्रति दिन यह चमक बदलती रहती है—इसका परिवर्त्तन लगभग उतनी ही प्रचुर मात्रा में होता है जितनी उत्तरीय प्रकाश[4] का। इस प्रकाशीय घटना में आप दो अवयव मौजूद पायेंगे—(i) एक धुन्ध-सा प्रकाश जो पानी की बूँदों तथा धूल-कणों वाली वायु के

1. Bilthoven 2. Utrecht 3. Zeist 4. Northern lights

सामान्य तौर पर प्रकाशित होने से उत्पन्न होता है, और क्षितिज के निकट यह प्रकाश सबसे अधिक तेज होता है; (ii) बादल की तह पर प्रकाश का धब्बा, जिसकी परिधि करीब-करीब उस नगर का बिलकुल ठीक प्रतिरूप होती है (अर्थात् बहुत कुछ वृत्त की शक्ल की); किन्तु दूर से देखने पर यह सामने की ओर से पिचका हुआ एक दीर्घवृत्त सरीखा दीखता है जिसके हाशिये पर्य्याप्त रूप से स्पष्ट उभरते हैं, विशेषतया उस वक्त जबकि बादल की तह हमवार, चिकनी होती है। यदि आकाश स्वच्छ और निरभ्र हो या फिर बहुत ही अधिक कुहरा लिये हुए हो, तब नगर की रोशनी की कोई भी चमक ऊपर दिखलाई नही देती। यदि आकाश मे धुन्ध हो तब धुधली चमक का प्रादुर्भाव होता है, किन्तु इसकी सीमा स्पष्ट नही बन पाती। यदि आकाश पर बादल की तह छायी हो तब प्रकाश का धब्बा स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो जाता है। हर प्रकार की दशाओ का सम्मिश्रण सम्भव है, और कभी-कभी कम ऊँचाई पर स्थित इक्के-दुक्के बादलों की छाया भी पड़ती है या प्रमुख प्रकाश की राशि से अलग-अलग, अनियमित शक्ल के, प्रकाश के धब्बे प्रगट होते हैं। अवश्य रोशनी के धब्बे की नाप-जोख करके बादल की ऊँचाई प्राप्त की जा सकती है, सर्वाधिक यथार्थ मान धब्बे की सीमा-रेखाओं की ऊचाई से प्राप्त होते हैं। निपुण प्रेक्षक के हाथों मे यह विधि इतनी यथार्थ उतरती है कि इसकी सहायता से यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि बादल की तह नीचे की भूमि के चढ़ाव-उतार के अनुरूप अवस्थित होती है या नही।

लाकूर[1] दिन के वक्त भी इस किस्म के प्रेक्षण को पूरा करने मे सफल हुआ था। एक बार हिमपात के बाद उसने देखा कि समद्र के ऊपर बादल की तह मटमैले रंग की थी जबकि बर्फ से ढके भूमि-प्रदेश के ऊपर यह अधिक चमकीली थी; प्रेक्षक जब इतनी दूर चला गया कि वहाँ से देखने पर इसकी ऊँचाई २०° से अधिक न थी, तब दोनों के बीच की विभाजक रेखा आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गयी। बाद में उसने पाया कि वनों के ऊपर भी, बादल पर दिखाई देने वाला मटमैला धब्बा स्पष्ट परिलक्षित हो जाता है; यहाँ तक कि कोपेनहेगन नगर भी, जहाँ छतों की बर्फ इस वक्त तक पिघल चुकी थी, इसी किस्म के 'कम प्रकाशित प्रदेश' सरीखा प्रभाव उत्पन्न कर रहा था। प्रकाश-दीप्ति के इन तमाम चढ़ाव-उतार से बादल-स्तरों की ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है, और इस प्रकार उनके लिए सदैव परस्पर संगत मान प्राप्त होते हैं।

इन सभी घटनाओ मे प्रेक्षण के लिए सबसे अधिक आसान, हिमाच्छादित भूप्रदेश और समुद्र का अन्तर है, अतः इन्हीं से प्रेक्षण का आरम्भ करना सर्वोत्तम होता है।

1. La Cour, Overs. Dansk Vidensk. Selsk. Forh. 75, 1871

यह आर्कटिक-अन्वेषकों के 'बर्फ-निमीलन'[1] तथा 'जल-आकाश'[2] के अतिरिक्त और कुछ नहीं है जिसके द्वारा बर्फ-शिलाओं के आगमन की सूचना पाकर वे सतर्क हो जाते हैं।

'और सन्ध्या को मैंने उत्तर दिशा के आकाश पर एक अद्भुत् चमक देखी जो क्षितिज पर सबसे अधिक तेज थी यद्यपि यह समूचे आकाश मे ठीक ऊर्ध्व बिन्दु तक देखी जा सकती थी—एक आश्चर्यजनक, रहस्यमय मन्दज्योति, दूरस्थित एक विशाल अग्निराशि के प्रतिबिम्ब के मानिन्द, किन्तु पिशाचलोक की ज्योति सरीखी, क्योंकि रोशनी प्रेतच्छाया की तरह सफ़ेद थी।'

—फ्रैन्क, नान्सेन, बोकेन ऑम नोर्ज, क्रिस्टियाना,[3] १९१४.

अधिकांश लोगों को यह मालूम नहीं है कि मिस्र के रेगिस्तानों की रेत भी बादलों पर रगीन ज्योति फेंकती है जो दूर से स्पष्ट पहचानी जा सकती है। हिन्द महासागर के एक छिछले भाग से, जहाँ समुद्र का हरा रंग विशेष रूप से स्पष्ट निखरा था, क़रीब ३५० या ४५० गज की ऊँचाई पर स्थित बादलों पर हलकी हरी रोशनी पड़ रही थी। यहाँ तक कि हीदर[4] झाड़ियों वाले प्रदेश मे भी, जबकि उनपर सुर्ख रग के फूल खिले हों, और उनपर धूप की रोशनी पड़ रही हो, हलके-फुलके उतराते हुए बादलों की निचली सतह मनोरम नील-लोहित रग धारण कर लेती है।

कुछ दशाओं में प्रकाश का एक स्थिर धब्बा बादलो की हमवार सतह पर देखा गया है और यह सिद्ध किया जा सका है कि यह दूर की एक झील का केवल प्रतिबिम्बन था। यह घटना केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब मौसम शान्त हो और पानी की सतह पूर्णतया समतल। झील का विस्तार कम-से-कम १ किलोमीटर होना चाहिए तथा सूर्य को आकाश मे कम ऊँचाई पर ही होना चाहिए, अर्थात् क्षितिज से लगभग ७° की ऊँचाई पर, ताकि परावर्त्तन प्रबल हो सके।

२०७. पानी के रंग को निर्धारित करने वाले उपादान[5]

अनन्त रूप से परिवर्त्तनशील, संगमर्मर सरीखे रंगों के क्षण-क्षण बदलने वाले शेडों से परिपूर्ण, यह आभा हर तरङ्ग के साथ बदलती है तथा इसकी सरचना की बारीकी नेत्रों को शाश्वत आनन्द प्रदान करती है।

1. Ice-blink 2. Water-sky 3. Fr. Nansen, Boken Om Norge, Kristiana, 1914 4. Heather 5. Bancroft, J. Frankl, Inst., **187** 249, and 459, 1919. V. Aufsess, Ann. d. Phys., **13**, 678, 1904; C. V. Raman, Proc. R. Soc. **101**, 64, 1922; Shoulejkin, Phys. Rev., **22**, 85, 1923; Ramanathan, Phil. Mag., 46, 543, 1925.

आइए इसका विश्लेषण करने का प्रयास करें—

(क) पानी से हम तक आने वाले प्रकाश का कुछ अश पानी की सतह से परावर्त्तित होता है जो शान्त अवस्था मे एक दर्पण सरीखा काम करता है। और आकाश यदि स्वच्छ हुआ तो पानी का रग नीला दीखता है; आकाश पर घने बादल छाये हुए हों तो पानी का रग भूरा; और यदि हलकी ढाल वाला किनारा घास से ढका हो तो पानी का रग हरा होगा। किन्तु पानी की सतह पर यदि तरङ्गें उठ रही हो तब आकाश तथा किनारे की भूमि के रग आपस मे मिल-जुल जाते है—एक की चमक दूसरे पर कौधती है। जब पानी अत्यधिक मात्रा मे तरङ्गित होता है तब केवल इन तमाम रगों का मिश्रण प्रतिबिम्बित होता है।

'जिसे आम तौर पर हम एकसम रंग की सतह समझते है, वह वस्तुतः लगभग अनगिनत किस्म के वर्णो से प्रभावित होती है जो दूर से दीखने वाले सूर्य-प्रतिबिम्ब की भाँति लम्बाई की दिशा मे खिची होती है; और इसकी चमक, विशुद्धता तथा स्वयं इसके धरातल का भी बोध प्रचुर मात्रा मे इस बात पर निर्भर करता है कि हम इन अगणित वर्णों की अनुभूति कितनी मात्रा मे कर पाते हैं; धरातल की अनवरत गति इनकी असलियत के समझने-बूझने तथा इनका विश्लेषण करने मे बाधा पहुँचाती है।'

—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

(ख) प्रकाश का कुछ अंश पानी के भीतर प्रवेश कर जाता है और वहाँ धूल के कणों द्वारा तथा उसके सामान्य ढबैलेपन द्वारा परिक्षेपित होता है। ये जर्रे साधारणतः इतने बड़े होते है कि वे सभी किरणो का समान मात्रा में परिक्षेपण करते है, अतः बाहर निकलने वाला प्रकाश उसी रंग का होता है जिस रंग का आपतित प्रकाश; यदि ये जर्रे मिट्टी या रेत के कणों से बने हों तो बाहर निकलने वाला प्रकाश भूरे बादामी रग का हो सकता है। किन्तु अत्यन्त गहरे, स्वच्छ पानी में प्रकाश का पर्य्याप्त भाग स्वयं पानी के अणुओं द्वारा परिक्षेपित होता है और यह वैसा ही मनोरम रंग का होता है जैसा आकाश का या ग्लेशियर की मोटी बर्फ-शिला का होता।

(ग) अन्ततः, छिछले पानी के भीतर प्रकाश का कुछ अंश सदैव ही पेदे तक पहुँचता है और वहाँ उसका विसृत परावर्त्तन हो जाता है और साथ-साथ ही यह पेदे का रंग धारण कर लेता है।

(घ) पानी के भीतर अग्रसर होते समय प्रकाश की किरणों में निरन्तर तब्दीलियाँ आती रहती है। (i) परिक्षेपण के कारण उनकी तीव्रता के कुछ अंशका

ह्रास हो जाता है; शुद्धपानी मे बैंगनी और नीली किरणें विशेष रूप से क्षीण हो जाती हैं। (ii) पानी द्वारा **वास्तविक अवशोषण** के कारण, जोकि दो-चार गज गहरे पानी मे ही पर्य्याप्त रूप से बोधगम्य हो जाता है, ये अपने पीले, नारङ्गी तथा लाल रंग की किरणों से ठीक उसी प्रकार वञ्चित हो जाती हैं जिस प्रकार रगीन काँच मे गुजरने वाला प्रकाश।

पानी मे परिक्षेपण अनिवार्य रूप से मौजूद रहता है, यहाँ तक कि शुद्ध पानी में भी यह क्रिया होती है, क्योकि पानी मे उसके अणुओं का वितरण समरूप नहीं रहता और इस कारण इसकी सरचना मे विषमता आ जाती है तथा कुछ मात्रा में यह कणिका-मय[1]-सा हो जाता है; फिर प्रत्येक अणु गोले की शक्ल से कुछ भिन्न होता है। इस परिक्षेपण की तुलना हर दृष्टि से वायु मे होनेवाले परिक्षेपण से की जा सकती है, अर्थात् यह भी $\frac{1}{\lambda^4}$ के अनुपात मे बढ़ता है, अतः नीली और बैंगनी किरणों के लिए यह अधिक-तम होता है। अपेक्षाकृत कम स्वच्छ पानी मे पदार्थ के जर्रे तैरते रहते हैं; यदि ये अत्यन्त क्षुद्र आकार के हुए तो इनका परिक्षेपण-प्रभाव भी अणुओं के प्रभाव म जुड़ जाता है, फलस्वरूप नीला-बैंगनी परिक्षेपण उत्पन्न होता है। यदि ये बड़े आकार के हुए, उदाहरण के लिए, ०.००१ मिलीमीटर से भी बड़े, तब ये सभी वर्णों के प्रकाश का परिक्षेपण समान मात्रा मे करते हैं, और अधिकांश सामने की दिशा में (§ १८२)।

साधारण साबुन का पानी ऐसे द्रव का एक उत्तम उदाहरण है जिसमें अत्यन्त सूक्ष्म आकार के परिक्षेपण करने वाले कण मौजूद होते हैं। सामने की दिशा से आलो-कित होने पर इसे मटमैली पृष्ठभूमि के समक्ष देखने पर यह निलछौवे रग का प्रतीत होता है; और प्रकाश जब पीछे की दिशा से इस पर पड़ता है तो यह नारङ्गी वर्ण का प्रतीत होता है (देखिए § १७१)।

झील और नदियों के पानी द्वारा होने वाला अवशोषण मुख्यतः लौह (Fe^{+++} आयन) के, तथा ह्यूमिक अम्ल के रासायनिक यौगिकों की उपस्थिति के कारण उत्पन्न होता है। २ करोड़ भाग में १ भाग लौह की अवधारणा (सान्द्रण)[2] तथा १ करोड़ भाग मे १ भाग ह्यूमिक अम्ल की अवधारणा के लिए (जैसा कि आम तौर पर पाया जाता है), पानी का रंग, वास्तव मे जैसा वह दीखता है उससे अधिक गहरा उसे होना चाहिए। स्पष्टतः लौह (Fe^{+++}) यौगिक, प्रकाश की उपस्थिति में ह्यूमिक अम्ल का आक्सीकरण कर देते हैं और इस क्रिया मे उनका स्वयं अवकरण हो जाता है, तो वे

1. Granular 2. Concentration

Fe^{++} यौगिकों मे बदल जाते है। और ये Fe^{++} यौगिक एक बार फिर आक्सीजन से सयोग करके Fe^{+++} यौगिक बन जाते है और यही क्रम आगे चलता रहता है।

अब हम यह प्रदर्शित करने के लिए कुछ उदाहरण प्रस्तुत करेंगे कि ये विभिन्न उपादान आपस मे मिलकर किस प्रकार पानी को रग प्रदान करते है।

२०८. सड़क पर पड़े पानी का रंग

इसके लिए एक सरल दृष्टान्त है वर्षा के कारण सड़क पर इकट्ठा होने वाला पानी। यदि उसकी ओर देखने की दिशा का आपतन कोण बड़ा हो तो इस दिशा मे सतह से लगभग सम्पूर्ण प्रकाश का परावर्त्तन होता है और प्रतिबिम्बित वस्तुओं में विपर्यास प्रचुर मात्रा मे मौजूद रहता है—मिसाल के लिए काली टहनियाँ दरअसल बहुत ही अधिक काली दीखती है। यदि हम पानी के और निकट आयें ताकि हमारी दृष्टि-रेखा उत्तरोत्तर ऊँची चढ़ती जाती है तो प्रतिबिम्बन अधिक क्षीण पड़ जाता है (§५२); और ऐसा जान पड़ता है मानो पूरी सतह एक प्रकार के एकसम धुन्ध से ढकी है—इस दशा मे सभी रंग फीके पड़ जाते है और सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह होती है कि प्रतिबिम्ब के काले भाग अब वास्तव में काले नहीं बल्कि धूसर-भूरे रंग के दीखते है। धुन्ध के उत्पन्न होने का कारण यह है कि गड्ढे के पानी पर चारों ओर से प्रकाश गिरता है। और पानी के अन्दर प्रवेश करने पर हर दिशा में इसका परिक्षेपण हो जाता है। यदि पानी साफ़ न होकर ढबैला दूधिया हुआ, तो परिक्षेपण, इसमे तैरनेवाले धूलकणों की वजह से होता है; उदाहरण के लिए पानी का रंग यदि 'नीला' दीखता है तो इसका अर्थ है कि परिक्षेपित प्रकाश नीला रंग धारण कर चुका है और यह वर्ण परावर्त्तित बिम्ब के साथ मिल जाता है; यदि पानी स्वच्छ हो और पेदा हलके रग का जैसा कि समुद्र-तट पर पड़े समुद्र-जल के गड्ढों के पेदे का रंग होता है, तब सभी परावर्त्तित प्रतिबिम्बों में एक प्रकार के बालू के रंग का पुट आ जाता है और यदि लम्बवत् देखें तो इस दशा मे पेदा तो स्पष्ट दिखलाई पड़ता है, किन्तु बिम्बों में, केवल सबसे अधिक चमकवाले ही कतिपय प्रतिबिम्ब नज़र आते है। किन्तु पानी साफ़ हो और पेंदा काले मटमैले रंग का, तब परावर्त्तित प्रतिबिम्ब, लम्ब दिशा से देखे जाने पर भी विपर्यास में शुद्ध तथा परिपूर्ण बना रहता है; इतना अवश्य है कि पहले-जैसा चमकीला अब यह नहीं रहता। साये में पड़े शान्त गड्ढों के पानी में वृक्षों की पत्तियों के गुच्छों के प्रतिबिम्ब कुछ अवसरों पर रंगों की ऐसी विशुद्धता तथा ऐसी स्पष्टता का प्रदर्शन करते हैं जो कि प्रतिबिम्बित होने वाली स्वयं उस वस्तु में भी परिलक्षित नहीं होती।

यह एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव है जो मुख्यतः इस कारण उत्पन्न होता है कि इस दशा में इर्द-गिर्द का दृश्य कम चकाचौध पैदा करता है (§ ७)।

किसी व्यक्ति को गड्ढे से विभिन्न दूरियों पर खड़े होने के लिए कहिए और तब देखिए उसका प्रतिबिम्ब किस प्रकार बदलता है! यह प्रयोग समुद्रतट पर विशेष रूप से प्रभावोत्पादक सिद्ध होगा।

यहाँ पर हम एक छोटे पैमाने पर इस कारण को प्रदर्शित होते देखते हैं कि क्यों समुद्र की सतह से नीचे की चीजें (जैसे चट्टाने, पनडुब्बियाँ आदि), जहाज़ की अपेक्षा, वायुयान पर से अधिक आसानी के साथ देखी जा सकती है।

'अब तथ्य यह है कि सड़क के बगल का कोई भी गड्ढा या जलाशय ऐसा नहीं है जिसके भीतर उतनी ही मात्रा में भू-दृश्य न सिमटा पड़ा हो जितनी मात्रा में उसके ऊपर मौजूद है। यह, जैसा कि हम समझे बैठे हैं, एक भूरी, गँदली, धूमिल चीज़ नही है; इसके हमारी भी तरह हृदय है जिसके अन्तस्तल में ऊँचे वृक्षों की टहनियाँ, और घास की हिलती-डुलती पत्तियाँ हैं और आकाश के परिवर्त्ती मनोरम रगों की हर किस्म की छटा वहाँ मौजूद है।'—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

२०९. भूप्रदेश के भीतर के जलमार्ग तथा नहरों का रंग

हर नहर तथा खाई के पानी की सतह पर आलोड़ित तरङ्गें, रग और प्रकाश की निरन्तर परिवर्त्ती छटा उत्पन्न करती हैं (§§१४–१८)। यह मालूम करने के लिए कि सतह का कोई विशेष भाग तरङ्गित हो रहा है या नही हमें उसे विभिन्न दिशाओं से देखना चाहिए। हलकी तरङ्गें केवल प्रतिबिम्ब के आलोकित तथा अन्धकार वाले भागों की सीमारेखा पर ही दृष्टिगोचर होती है; समरूप से प्रकाशित नीले आकाश के प्रतिबिम्ब में इन्हें नहीं देखा जा सकता और न ही घने वनों के अन्धकारमय प्रतिबिम्ब में (प्लेट XIV)। किन्तु बड़ी तरङ्गें प्रतिबिम्ब के पर्य्याप्त बड़े और समरूप भागों में भी छाया और प्रकाश के शेड उत्पन्न करती हैं और ऐसा या तो इस कारण होता है वे किरणों को अत्यधिक विचलित कर देती है या फिर इस कारण कि तरंगों के अग्रभाग तथा पृष्ठभाग के परावर्त्तन-गुणाकों मे परस्पर पर्य्याप्त अन्तर पड़ जाता है (§५२ तथा चित्र १५७)।

इस प्रकार के प्रेक्षणों से पता चलता है कि पानी के तरङ्गित तथा शान्त भागों के बीच की सीमा-रेखा करीब-करीब सदैव ही आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट उभरती है। इसका कारण वायु-धाराओं का अव्यवस्थित वितरण नहीं हो सकता, और यह इस बात

द्वारा विशेष स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट होती है कि वर्षा के समय भी जबकि पानी की पूरी सतह समान रूप से कम्पन करती होती है, सीमारेखाएँ पूर्णतया स्पष्ट बनी रहती है। वास्तविक कारण तो इसके अतिरिक्त और कुछ नही है कि सतह पर तेल की एक अत्यन्त बारीक परत मौजूद होती है जो एक मिलीमीटर के दस लाखवे भाग से भी कम मोटी होती है (तेल के केवल दो अणुओं की मोटाई!) फिर भी हवा या वर्षा के कारण बनने वाली तरङ्गों के शमन करने के लिए यह पर्य्याप्त होती है! तेल की यह परत प्राणी या वनस्पति जगत् के पदार्थों के सड़ने-गलने से तैयार होती है या उधर से गुजरने वाले जलयान से टपके तेल से, अथवा नालियो मे आने वाले पानी की गन्दगी से। हवा अपने साथ चिकनाई की इस परत को बहाकर नहर के एक किनारे की ओर कर देती है। सदैव ही आप देखेगे कि पानी उस किनारे की ओर ही तरङ्गित होता है जिधर से हवा आ रही होती है और दूसरे किनारे पर पानी शान्त रहता है। इस शान्त स्थिर भाग में बहुत-सी पत्तियाँ और टहनियाँ आदि तैरती रहती है, किन्तु एक दूसरे के लिहाज़ से उनमें मुश्किल से ही किसी तरह ही हरकत होती है क्योकि तेल की अत्यन्त पतली परत द्वारा वे अपनी स्थिति पर ही बँधी-सी रहती है।

इस प्रकार वन के अन्दर के नाले के पानी की सजीव, चमचमाती हुई सतह और बड़े शहरों के गरीब मुहल्लों के जलमार्ग के गाढ़े, मटमैले, सुरमई रग वाले पानी की सतह के बीच के स्पष्ट अन्तर का सन्तोषजनक रूप से समाधान हो जाता है।

सतह की इन प्रकाशीय घटनाओं का और आगे अनुगमन हम इस बात के अध्ययन द्वारा करेगे कि किस प्रकार यह प्रतिबिम्बन नीचे, अन्दर से आने वाले प्रकाश के साथ निरन्तर स्पर्द्धा करता रहता है। पेड़ के नीचे, पानी के किनारे हम खडे है। यत्र-तत्र वृक्षों की घनी चोटी के प्रतिबिम्ब हम देखते है और इनके दर्मियान नीचे आकाश के चमकते हुए खण्ड दिखलाई देते है। उन स्थलों पर जहाँ निर्मल आकाश प्रतिबिम्बित होता है, हम पानी के नीचे का पेदा नहीं देख पाते, क्योकि नीचे से आने वाला प्रकाश अपेक्षाकृत बहुत ही क्षीण होता है। उन स्थलों पर जहाँ गहरे शेड में वृक्ष प्रतिबिम्बित हो रहे होते हैं, हम एक गहरे रंग का मिश्रण देखते है जो उनकी पत्तियों के रग, पानी के नीचे के पेंदे के रंग, तथा पानी के अन्दर के धूल-कणों द्वारा परिक्षेपित होने वाले विसृत प्रकाश के परस्पर मिलन से बनता है। इस बात पर ध्यान दीजिए कि पानी के नीचे का पेंदा हम केवल किनारे के निकट ही देख सकते है। पानी को कुछ फासले पर देखे तो अब पेदे को देख पाना सम्भव नहीं होता, क्योंकि परावर्त्तित प्रकाश अब आपतनकोण

बढ़ जाने के कारण बहुत अधिक तेज हो जाता है और नीचे से आने वाले प्रकाश पर यह हावी हो जाता है।

जहाज के पेंदे के मटमैले रंग के पृष्ठ-दण्ड[1] का प्रतिबिम्ब हरा-हरा, जलीय रंग का दीखता है जबकि जहाज के गिर्द उस पर बनी सफेद पट्टी के प्रतिविम्ब का रंग केवल सफ़ेद ही रहता है।

'सूर्यके प्रकाश में पानी का स्थानीय रंग सामान्यतः गहरा तथा स्फूर्तिमय होता है और जैसा कि हमने देखा, कम प्रकाश वाले प्रतिबिम्बों को यह बरबस प्रभावित करता है; प्रायः उनके गाढ़ेपन को यह कम कर देता है। साये मे, परावर्त्तन शक्ति बढ़कर उच्च कोटि तक पहुँच जाती है।[2] और बहुत अकसर ऐसा होता है कि पानी की सतह पर छाया का स्वरूप वास्तविक छाया द्वारा नही निरूपित होता बल्कि ऊपर की वस्तुओं के अधिक यथार्थ प्रतिबिम्बन द्वारा यह निरूपित होता है।

'एक अत्यन्त गँदले पानी की नदी (जैसे, उदाहरण के लिए फ्लोरेन्स की आर्नो नदी) धूप में अपने निज के पीले रंग की दीखती है और सभी प्रतिबिम्बनों को हलका तथा रंगविहीन बना देती है। गोधूलि की बेला में यह अपनी परावर्त्तन शक्ति अधिकतम सीमा तक पुनः प्राप्त कर लेती है, और करारा[3] पर्वत इसमे इतने स्पष्ट प्रतिबिम्बित होते हुए दिखाई पड़ते हैं मानो यह एक निर्मल जल की कोई झील हो।'[4]

——रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

सतह के प्रतिबिम्बन के निराकरण के कुछ आसान तरीके इस प्रकार हैं——

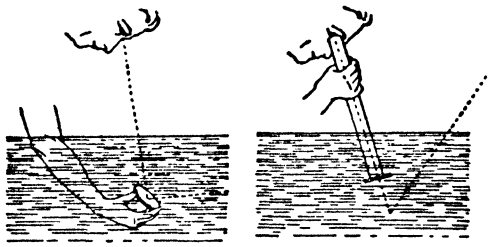
(क) आप सिर के ऊपर एक काली छतरी लगा सकते हैं, या किसी पुल के नीचे जगह तलाश कर लीजिए, खुली धूप के मौसम मे पानी की गहराई से ऊपर को विस्तृत होने वाले पीत-हरे रंग के प्रकाश को अच्छी तरह देख सकेंगे। सतह पर थिरकती हुई तरङ्गिकाएँ अब केवल उस प्रकाश द्वारा देखी जा सकती हैं जो किञ्चित्

1. Keel 2, भौतिक व्याख्या यह है कि परावर्त्तन-शक्ति साये में बिलकुल ठीक उतनी ही रहती है जितनी धूप में, किन्तु अनुपात $\frac{\text{परावर्त्तित प्रकाश}}{\text{गहराई से परिक्षेपित होकर आनेवाला प्रकाश}}$ धूप में कम होता है और साये में अधिक। 3. Carrara

4. हमारी व्याख्या—सन्ध्या की गोधूलि बेला में रोशनी एक खास दिशा से आती है और सामान्य प्रदीप्ति विलुप्त हो चुकी होती है, जो दिन का नीचे गहराई से आनेवाला परिक्षेपित प्रकाश उत्पन्न करती है और यही तमाम परावर्त्तित प्रतिबिम्बों पर अध्यारोपित हो जाता है।

वर्त्तन द्वारा वे उत्पन्न करती है। पानी के अन्दर की चीजे इधर से उधर धीमी गति से कम्पन करती हुई दिखलाई पड़ती है—ऐसा प्रतीत होता है मानो पानी एक प्रकार की जिलैटिन हो।

(ख) एक छोटा दर्पण लेकर उसे पानी के अन्दर भिन्न कोणों पर झुकाइए (चित्र १५५) और इस प्रकार उस प्रकाश के रग की जाँच कीजिए जो कुछ दूर तक



चित्र १५५—पानी के रंग का प्रेक्षण, इसकी सतह पर होनेवाले परावर्तन का परिहार करते हुए।

पानी मे प्रवेश कर चुका है। यदि किसी साधारण खाई के पानी मे यह प्रयोग करे तो प्रकाश मे आप वास्तविक अवशोषण के कारण, पीला रंग देखेगे। पानी यदि बहुत ही उथला हो, तो खाई के पेदे पर गिरे चीनी मिट्टी के टूटे हुए टकड़े या पानी के अन्दर रखे गये सफेद कागज से भी काम चल जायगा। समुद्र मे सफ़ेद वृत्ताकार प्लेट इस्तेमाल करते है जिसे एक खास गहराई पर पानी के अन्दर डालते है; किन्तु इसे एकदम **सरल** प्रयोग नही माना जा सकता।

(ग) एक **जल-दूरबीन** का इस्तेमाल कीजिए जो केवल एक टिन की नली होती है,और यदि सम्भव हो तो इसके एक सिरे पर कॉच लगा रखते है (चित्र १५५)। इसकी सहायता से आप पानी के पेदे से या तैरते हुए धूल-कणों से परिक्षेपित होकर नीचे से आने वाले प्रकाश के रंग की जाँच कर सकेगे। नहाते समय अपनी जल-दूरबीन को काम में लाइए। पुरानी चाल के जहाज में धुर नीचे तक जाने वाला सूराख आप को मिल सकता है जो नीचे पानी मे खुलता है; यह दरअसल एक बड़े पैमाने की जल-दूरबीन ही है!

(घ) एक 'निकल' को इस तरह पकड़ कर उसमे से देखिए कि उसमे से गुजरने पर, पानी की सतह से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश का शमन हो जाय (§ २१४)।

२१०. समुद्र का रंग

समुद्र के रंग को निर्धारित करने में आम तौर पर परावर्त्तन का ही प्रमुख हाथ होता है। किन्तु यह परावर्त्तन असंख्य, विभिन्न तरीकों पर होता है, क्योंकि समुद्र का धरातल गतिशील और प्राणवान् होता है जो वायु की प्रकृति तथा तट की बनावट के अनुसार तरङ्गित तथा उद्वेलित होता रहता है। प्रमुख नियम यह है कि दूर के सभी प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं क्योंकि हमारी निगाह दूर की तरंगों की ढाल वाली सतह पर पड़ती है (§ १६)। इसलिए समुद्र के दूरस्थ भागों का रंग करीब-करीब वैसा ही होता है जैसा २०° से ३०° की ऊँचाई पर आकाश का रंग; अर्थात् ठीक क्षितिज के ऊपर के आकाश की अपेक्षा यह अधिक निष्प्रभ होता है (§ १७६), और इस कारण यह रंग और भी अधिक निष्प्रभ होता है कि प्रकाश का एक अंशमात्र ही परावर्त्तित हो पाता है।

इसके अतिरिक्त समुद्र का अपना 'निज का रंग' भी होता है—नीचे से परिक्षेपित होकर आनेवाले प्रकाश का वर्ण। प्रकाशीय दृष्टि से समुद्र की एक महत्त्वपूर्ण लाक्षणिक विशिष्टता है उसकी **गहराई**, यह गहराई इतनी अधिक होती है कि पेंदे से करीब-करीब कुछ भी प्रकाश ऊपर वापस आ नहीं पाता है। यह 'निज का रंग' पानी की राशि में होने वाले **परिक्षेपण** तथा **अवशोषण** के मिले-जुले प्रभाव के कारण उत्पन्न होता है। समुद्र में प्रकाश का केवल परिक्षेपण हो (परावर्त्तित प्रकाश का विचार न करें) तब इसका रंग दूधिया सफ़ेद होगा, क्योंकि इसमें प्रवेश करने वाली सभी किरणें अन्त में अनिवार्यतः बाहर निकल आयेंगी। समुद्र, यदि केवल अवशोषण करना हो तब वह स्याही के मानिन्द काले रंग का दीखेगा, क्योंकि तब किरणें पेंदे तक पहुँचने के उपरान्त ही वापस आ पायेंगी और अवशोषण यदि अत्यल्प भी हुआ, तो पानी के अन्दर की लम्बे मार्ग की यात्रा उनके प्रकाश को विलुप्त कर देने के लिए पर्य्याप्त होगी। फिर भी, जैसा कि अभी बताया जा चुका है, रंग का प्रादुर्भाव परिक्षेपण तथा अवशोषण के सम्मिलित प्रभाव के कारण होता है; ऐसा प्रकाश जिसका परिक्षेपण थोड़ी ही मात्रा में होता है, पुनः पीछे की ओर परिक्षेपित होने के पूर्व पानी के अन्दर अधिकतम दूरी तक प्रविष्ट कर जाता है, और इस लम्बी यात्रा के दौरान में अवशोषण द्वारा इसका ह्रास भी अधिकतम होता है।

मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि नीचे से वापस आने वाले प्रकाश की मात्रा, अनुपात $\frac{\text{परिक्षेपण गुणाक}}{\text{अवशोषण गुणाक}}$ के बढ़ने पर अधिक होगी। किन्तु इसकी सर्वांगपूर्ण व्याख्या किसी भी प्रकार से आसान नहीं है।

समुद्र की विस्तृत जलराशि के रंग पर उसके पेदे का प्रत्यक्ष प्रभाव अपने देश (हालैण्ड) के निकट नही देखा जा सकता, कम-से-कम उस दशा में जबकि पानी की गहराई एक गज़ से अधिक हो। रस्किन का दावा है कि १०० गज़ की गहराई पर भी पेदे का प्रभाव समुद्रजल के रग पर प्रचुर मात्रा मे पड़ता है और समुद्र के अनेक यात्रियों द्वारा भी इसी तरह के और भी दावे किये गये है। तथ्य यह है कि समुद्र के पेदे की स्थानीय उठान, लहरों के उत्थान और ऊपर के पानी के उद्वेलन में परिवर्त्तन का समावेश करती है और स्वभावतः इस स्थान पर अधिक गहरे स्थान के मुकाबले में, अधिक सख्या मे ठोस कण मथ उठते है जिससे परिक्षेपण मे वृद्धि हो जाती है। अतः समुद्र के पेदे का प्रभाव दरअसल पड़ता तो है, किन्तु यह प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं है।

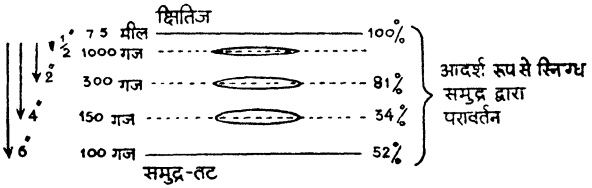
२११. उत्तर सागर का प्रकाश तथा उसका रंग

छुट्टी के एक दिन, हालैण्ड के रेतीले समुद्र तट पर जो ठीक उत्तर-दक्षिण दिशा में पड़ता है, और जहाँ से समुद्र पर शानदार सूर्यास्त देखा जा सकता है, निम्नलिखित प्रेक्षण प्राप्त किये गये। ये घटनाएँ, स्वभावतः, दिन के विभिन्न समय के लिए तथा समुद्रतट की विभिन्न स्थितियो के लिए विभिन्न होती हैं—सारभूत बात है समुद्र की सतह के लिहाज से सूर्य की स्थिति।

१. **शान्त वायु, नीला आकाश**—तड़के प्रभात की शान्त बेला, समुद्र की सतह दर्पण की भाँति स्निग्ध। आकाश सर्वत्र नीला, किन्तु धुन्ध लिये हुए। एक नन्हीं-सी लहर हमारे पैरों के पास तट पर आकर बल खा जाती है और फेन की बारीक-सी धारी छोड़ जाती है जो मानों फुसफुसाकर दम तोड़ देती है—एक खामोशी छा जाती है.....

आइए अब एक टीले पर खड़े हो जायँ। सामने समुद्र की सतह मानचित्र की तरह फैली हुई है। इसका एक भाग तो इतना स्निग्ध है कि ऊपर का नीला आकाश इसमे आदर्श रूप से बिना किसी प्रकार की विकृति के, प्रतिबिम्बित हो रहा है, मानो किसी झील से प्रतिबिम्बन हो रहा हो। अन्य भाग भी नीले-भूरे रंग के हैं, किन्तु थोड़े मटमैले शेड के। इनकी विभाजक रेखाएँ स्पष्ट देखी जा सकती है, तथा इनका विभाजन भी पृथक्-पृथक् इतना स्पष्ट है कि इच्छा यही होती है कि इनका चित्रांकन करें। कुछ ही समय उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है मानों उन्होंने अपनी स्थितियाँ एकदम बदल डाली है। इस कारण खुलते हुए रंग वाले भागों का निर्माण रेत के टीलों (समुद्र के तट पर जाने वाले लोग इसी नाम से उन्हें पुकारते हैं) की वजह से नहीं हो सकता; इनकी

उत्पत्ति का कारण है चिकनाई की एक अतिसूक्ष्म, अत्यन्त पतली परत जो समुद्र की सतह पर फैली हुई होती है—ठीक नहर और खाइयों पर फैली परत की भाँति ये पानी के उद्वेलन को रोकने के लिए पर्य्याप्त होती हैं। सीधे नाप करके यह सिद्ध किया गया है कि इन क्षेत्रों पर अन्य स्थानो की अपेक्षा पृष्ठ-तनाव बहुत कम होता है। तेल की ये परतें कदाचित् जहाजो से फेके गये कूड़ा-करकट या उनके इजिन मे इस्तेमाल किये गये तेल से बनती हैं। जिस स्थल पर परत नहीं होती, वहाँ पानी की सतह थोड़ी-बहुत विक्षुब्ध होती है जैसा कि कुछ देर बाद जब सूर्य समुद्र पर चमकता है, देखा जा सकता है—तब तरङ्गित भाग प्रकाश के सागर की भाँति जगमगाता है। इन भागों से प्रदर्शित होने वाले रंग अब और अधिक मटमैले हो जाते हैं, (१) क्योंकि प्रत्येक तरङ्ग का अग्रभाग अब अधिक ऊँचे और इसलिए आकाश के कम प्रकाशित नीले भाग को प्रतिबिम्बित करता है; (२) फिर इसलिए भी कि परावर्त्तन अब उतनी तिरछी दिशा मे नही होता, अतः इसमे प्रकाश की मात्रा कम ही होती है। 'निकल' को इस तरह रखकर उसमे से देखे कि केवल ऊर्ध्व दिशा के ही कम्पन उसमें से गुजर पाये तब मटमैले भाग अधिक अंधकारमय दीखते हैं, और प्रकाशित भाग और इनके बीच का अन्तर अधिक प्रखर हो उठता है। विभिन्न क्षेत्रों की विभाजक रेखाएं करीब-करीब सर्वत्र, तह के समानान्तर ही अवस्थित जान पड़ती हैं; ऐसा इसलिए प्रतीत होता है कि अनुदर्शन के कारण सामने की दिशा की रेखाएँ छोटी पड़ जाती हैं, क्योंकि तथ्य यह है कि तेल की परत से



चित्र १५६—३० फुट ऊँचे टीले से समुद्र का अवलोकन। वीर्घवृत्त प्रदर्शित करते हैं कि समुद्र के धरातल की विभिन्न दूरियों पर वृत्त का अनुदर्शन-संकुचन किस प्रकार का होता है।

ढके हुए क्षेत्र तो हर तरह की शक्ल के हो सकते हैं (चित्र १५६)। सचमुच के एकाध 'रेत के टीले' पानी के रंग में पीलेपन के आधिक्य के कारण प्रमुख रूप से पहचाने जा

सकते हैं, किन्तु ऐसा केवल अत्यन्त ही उथले समुद्र में होता है जैसे ४ से ८ इंच तक की गहराई के पानी में।

तीसरे पहर समुद्र मे स्नान करते समय, यदि समुद्र शान्त हुआ तो पानी की असाधारण स्वच्छता से हम अवश्य प्रभावित होते हैं। लगभग १ गज की गहराई तक, पेंदे का हम सारा ब्योरा देख सकते हैं, यहाँ तक कि तैरते हुए नन्हे-नन्हे जीवों को भी। पानी में रेत मौजूद नही होती या होती भी है, तो नगण्य मात्रा में; सो भी केवल वहाँ, जहाँ पर तरङ्गिका टूटने को होती है और इसके पीछे रेत के नन्हें बादल ऊपर की ओर भँवर के रूप में मथ उठते हैं। यदि हम नीचे की ओर, एक दम अपने निकट के पानी को देखें, तो आकाश का प्रतिबिम्ब बहुत कम ही बाधा डालता है, और लगभग ८ इंज की गहराई तक पेंदे की रेत का पीला रंग ही प्रमुखता प्राप्त किये रहता है। १ से लेकर १।। गज तक की गहराई पर रंग एक मनोरम हरे वर्ण मे तब्दील हो जाता है और इस दशा में हमे एक प्रकार की जल-दूरबीन बनानी पड़ती है ताकि आकाश के प्रतिबिम्बन को रोक सके। यह हरा वर्ण उस प्रकाश का रंग है जो पानी मे प्रविष्ट होकर पुनः पीछे की ओर परिक्षेपित हुआ है। किन्तु ज्यों ही समुद्र की सतह को कुछ फासले से हम देखते हैं, त्यों ही प्रतिबिम्बन प्रमुखता प्राप्त कर लेता है और हर तरफ़ नीले आकाश को हम प्रतिबिम्बित होते हुए देखते हैं। समुद्री हरे रंग तथा आकाशीय नीले वर्ण का एक आश्चर्यजनक विनिमय!

सन्ध्या को सूर्य, कुछ ही अंशों की कोणीय ऊचाई पर स्थित बादलों की पेटी के पीछे छिप जाता है—तो इसके ऊपर सान्ध्य प्रकाश की सुनहले और नारङ्गी वर्ण की ज्योति जगमगाती रहती है जो और ऊँचे आकाश पर सन्ध्या के मटमैले नीले रग मे क्रमशः समा जाती है। समुद्र अब भी पहले की भाँति ही शान्त है, और समूचे दृश्य को वह अविकृत रूप मे प्रतिबिम्बित करता रहता है। किन्तु पश्चिम की ओर हम नजर डालते हैं, तो हमे अत्यन्त नन्ही तरंगे दिखलाई पड़ती हैं (§१७), और समुद्र के दूरस्थ भागों में जहाँ बादलों की नीली-भूरी पेटी प्रतिबिम्बित होती है, प्रत्येक तरंग एक नन्ही, नारङ्गी-पीत वर्ण की रेखा का निर्माण करती है (तरग की झुकी हुई सतह आकाश के अधिक ऊँचाई वाले भाग का प्रतिबिम्बन करती है)। और निकटवर्त्ती भाग में जहाँ समुद्र नारङ्गी-पीत वर्ण का है, तरङ्गिकाएँ और भी अधिक ऊँचाई पर स्थित, अधिक नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करके अधिक गहरे वर्ण का रेखाच्छादन-सा उपस्थित करती हैं। दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम की ओर देखने पर जहाँ सान्ध्य प्रकाश के रंग विलुप्त हो रहे होते हैं, हमारी दृष्टि अब तरङ्गों की ढालू सतह पर लम्बवत् नहीं

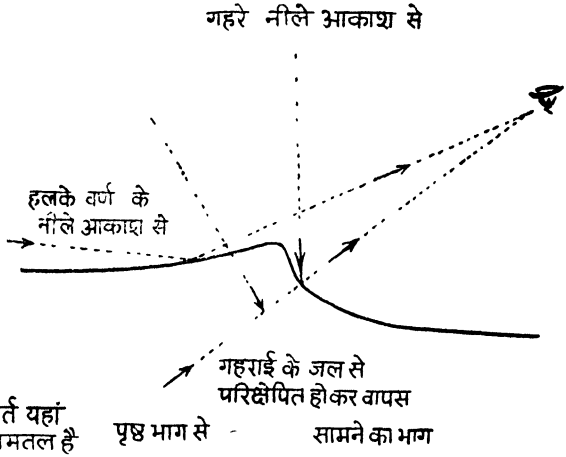
पड़ती और समुद्र में बादलों की एकसम पेटी का विशुद्ध प्रतिबिम्बन होता है जिसके न तो रंग में कोई अन्तर पड़ता है न प्रकाशदीप्ति में; अतः क्षितिज रेखा मिट-सी जाती है और समुद्र तथा आकाश एक दूसरे मे मिल जाते हैं जबकि दूर के जहाज़ नीले-भूरे अनन्तता मे उतराते हुए जान पड़ते हैं।

कुछ दिन बाद, मौसम लगभग पहले जैसा ही था, किन्तु हवा कदाचित् पहले की अपेक्षा और भी हलकी थी और तेल की पतली परत से ढका समुद्र का भाग सन्ध्या को बादलों की पेटी को प्रतिबिम्बित करता हुआ दिखाई दे रहा था जबकि सतह के विक्षुब्ध भाग, प्रतिबिम्ब के स्थानान्तरण के कारण नारङ्गी-पीत वर्ण के आकाश का प्रतिबिम्बन कर रहे थे।

२. हलके वेग की हवा, इक्के-दुक्के बादलों वाला स्वच्छ नीला आकाश—टीले के सिरे पर मैं अभी पहुँच भी नहीं पाता हूँ कि नीले-श्याम वर्ण के समुद्र और क्षितिज के निकट के खुलते रग वाले आकाश, के विपर्यास को देख कर चकित रह जाता हूँ। दृश्यता असाधारण रूप से बढ़िया है—दूर की वस्तुओं की आकृतियाँ सुस्पष्ट उभरती हैं, और यह दशा सारे दिन बनी रहती है। हलकी पछुआ हवा चल रही है। लहरें समुद्रतट के सहारे दो या तीन फेनिल पंक्तियों मे उठती हैं, यद्यपि खुले समुद्र मे फेन नही दिखलाई पड़ता। टीले पर हम अब प्रेक्षण के लिए खड़े हो जाते हैं।

तट के पार्श्व मे लहरों का अवलोकन कीजिए (चित्र १५७)। ये अग्रभाग में मट-मैले पीत-हरे-भूरे रग की दीखती हैं क्योंकि हमारी दृष्टिरेखा प्रत्येक लहर के सामने वाले ढाल के पार्श्व पर लगभग समकोण दिशा मे पड़ती है, और इस कारण परावर्त्तित प्रकाश का अल्प भाग ही हमारे पास पहुँचता है और फिर यह भी आकाश के केवल क्षीण प्रकाश वाले भाग से। किन्तु हम पीला-हरा प्रकाश भी अवश्य देखते हैं जो या तो समुद्र की गहराई से वापस परिक्षेपित हुआ है या लहर के पृष्ठभाग से प्रवेश करके सामने की ओर इस पार निकल आया है; किन्तु चूँकि यह प्रकाश अत्यन्त क्षीण ही रहता है अतः लहरों का अग्रभाग मटमैला ही रहता है। इसके प्रतिकूल लहरों के पृष्ठभाग क्षितिज से लगे अधिक प्रकाश वाले नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक लहर अपने मटमैले पीत-हरे अग्रभाग और हलके नीले पृष्ठभाग के बीच एक सुन्दर विपर्यास प्रदर्शित करती है। ये हलके नीले पृष्ठतल लहरों के दर्मियान चौड़े चिपटे गर्त्त का स्वरूप धारण कर लेते हैं जिसकी सतह थोड़ी ही विक्षुब्ध होती है, अतः ये अच्छे परावर्त्तक होते है और इसीलिए रंग उनका नीला होता है। तट के समानान्तर रेत के

टीलों की कतिपय पंक्तियों को उन पर टकराकर टूटनेवाली लहरों से आसानी से पहचाना जा सकता है जबकि उनके दर्मियान की जगहें अधिक स्निग्ध तथा शान्त रहती हैं। तट से और अधिक फासले पर लहरों की शैडिंग उत्तरोत्तर अधिक बारीक होती जाती है। वहाँ टूटने वाली लहरें नहीं होती, किन्तु अग्र-ढाल और पृष्ठतल के ढाल के बीच का विपर्यास बना रहता है।



चित्र १५७—**समुद्र की तरंग में विभिन्न रंगों का निर्माण कैसे होता है।**

पानी पर उत्तरोत्तर अधिक तिरछी दिशा से देखते हैं तो अब लहरों के बीच के गर्त्त को हम देख नही पाते और अन्त में उनके पृष्ठतल दृष्टि से पूर्णतया ओझल हो जाते हैं। अब अग्रभाग की सतह बहुत कम झुकी हुई होती है, अतः यह मुख्यतः करीब २५° कोणीय ऊँचाई के आकाश का प्रतिबिम्बन करती है। 'परावर्त्तित प्रतिबिम्ब का यह स्थानान्तरण' (§१६), समुद्र के गहरे नीले रंग का, तथा समुद्र और क्षितिज से लगे आकाश के परस्पर के विपर्यास का, समाधान करता है। सम्प्रति यह विपर्यास इतना प्रबल इस कारण होता है कि क्षितिज पर आकाश वास्तव में इतने खुलते रंग का होता है, फिर भी इसके ऊपर, थोड़ी ही दूर पर इसका रंग इतना गहरा नीला हो जाता है। इस बात की जाँच इस प्रकार कीजिए; आकाश के ऊँचाई वाले भागों का प्रतिबिम्ब एक छोटे दर्पण द्वारा क्षितिज के आसपास के भागों पर प्रक्षिप्त कीजिए; नतीजा आश्चर्य-जनक मिलेगा! साथ ही साथ इस बात पर ध्यान दीजिए कि फासले पर समुद्र आकाश

के सबसे अधिक गहरे रंग वाले भाग की तुलना में भी अधिक गहरे रंग का दीखता है—स्मरण रहे कि समुद्र की परावर्त्तनशक्ति १०० प्रतिशत से कहीं कम होती है। समुद्र और आकाश के दर्मियान का विपर्यास पश्चिम में अधिकतम होता है और दक्षिण तथा उत्तर की ओर यह कम हो जाता है क्योंकि अधिकांश लहरें पश्चिम की ओर से आती हैं, और जब हम उत्तर या दक्षिण की ओर देखते हैं तो हमारी दृष्टि लहरों के शीर्ष के बहुत कुछ समानान्तर रहती है, अतः उनका प्रभाव घट जाता है (§१७)।

कदाचित् हमारे मन में शका हो सकती है कि इस समय दीखने वाले प्रबल विपर्यास के लिए सिवाय इसके कि क्षितिज के निकट नीले आकाश की प्रदीप्ति तेज़ी से बढ़ती है, क्या अन्य कोई कारण नही है। प्रकृति स्वयं हमे विश्वास दिलायेगी। एक क्षण के लिए पश्चिमी आकाश का एक भाग अलका मेघों के आवरण से ढक जाता है, अतः क्षितिज से लगभग ३०° की कोणीय ऊँचाई तक आकाश करीब-करीब समरूप से श्वेत दीखता है; तुरन्त ही इस दिशा में समुद्र और आकाश का प्रबल विपर्यास विलुप्त हो हो जाता है, और समुद्र पहले की अपेक्षा बहुत अधिक हरा और प्रकाशवान् हो जाता है। अलका बादलों के हटते ही विपर्यास पुनः प्रगट हो जाता है।

जिस हद तक प्रतिबिम्बन समुद्र के रंग को प्रभावित करते हैं, उससे हमे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि अन्य कारणों की हम एक दम उपेक्षा कर सकते है। यत्र-तत्र आपको इक्के-दुक्के बादलों की साया दिखाई दे सकती है—इन स्थानों पर समुद्र अधिक गहरे रंग का दीखता है; जबकि सूर्य के प्रकाश में पड़ने वाले भागों का रंग रेत के रंग से अधिक मात्रा मे मेल खाता है। किन्तु यह अशतः विपर्यास की एक घटना है, क्योंकि जब आप अपनी अधखुली मुट्ठी मे भीतर से देखते है या नाइग्रोमीटर (§ १७४) मे से, तब आप पाते है कि दरअसल वहाँ भी रग नीला ही है, भले ही यह साये वाले भाग की तुलना मे कम नीला ठहरे।[1] जो कुछ भी हो, ये छायाएँ स्पष्ट रूप से सिद्ध करती हैं कि समुद्र का रंग पूर्णतया परावर्त्तन द्वारा ही निर्धारित नहीं होता बल्कि प्रकाश का कुछ अश पानी के नीचे से भी परिक्षेपित होकर वापस लौटता है। छाया इसलिए दृष्टिगोचर होती है कि परिक्षेपित होकर वापस आने वाला प्रकाश उस स्थान पर अन्य जगहों के मुकाबले में अधिक क्षीण होता है जबकि परावर्त्तित प्रकाश कमजोर नही पड़ने पाता है (§ २०९)।

१ समुद्र उस वक्त अत्यन्त मनोरम नीले रंग का दीखता है जब यह बिलकुल स्निग्ध शान्त हो, आकाश चमकीले नीले वर्ण का हो और सूर्य्य बादलों की ओट में हो ताकि समुद्र साये में पड़े।

क्या पेंदे की रेत पानी में से होकर सीधे ही चमकती है और क्या पानी के अन्दर के रेत के टीले दूर से अपने तई पहचाने जा सकते हैं? मेरे निज के अनुभव के अनुसार ऐसा नहीं हो सकता, और न ही ऐसे व्यक्ति के लिए जो किसी ऊँचे टीले का समुद्र तट से प्रेक्षण कर रहा हो। रेत केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब पानी बहुत ही उथला हो, शायद ४ से लेकर ८ इंच तक गहरा। रेत के टीलों की स्थिति ठीक वहीं पर निर्मित होने वाली लहरों के कारण मालूम पड़ जाती है, और इस कारण भी कि टीलों की पंक्तियों के बीच पानी की सतह अधिक स्निग्ध होती है (§ २१०)।

एक अद्भुत बात यह है कि क्षितिज के निकट समुद्र पर एक भूरे रंग का हाशिया मौजूद होता है जो करीब-करीब नीले रंग के मानिन्द हो सकता है (या नीले रंग का होता है जो अधिक गहरे नीले रंग की भाँति दीख सकता है), इसकी चौड़ाई आधी डिग्री से अधिक नहीं होती। टीले को छोड़कर उसे देखने के लिए ज्यों ही हम समुद्रतट पर जाने को उद्यत होते हैं त्यों ही यह हाशिया विलुप्त होना शुरू हो जाता है और तट पर पहुँचने पर यदि हम तनिक झुकते हैं तो यह पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। इससे प्रगट होता है कि यह विपर्यास-जनित हाशिया नहीं है (§ ९१)। सम्भवतः यह इस कारण उत्पन्न होता है कि समुद्र अपेक्षाकृत कम दीप्तिमान् होता है, वायु द्वारा होने वाले परिक्षेपण की वजह से दूरी पर यह नीलापन लिये दीखता है[1] (§ १७३)। समुद्र-तट से इतने फासले पर समुद्र का जल कम गँदला होना चाहिए; इसलिए, यदि इतनी ऊँचाई पर खड़े हों कि उतनी दूर का पानी देख सकें तो वहाँ का अधिक स्वच्छ पानी अनायास ही तुरन्त पहचाना जा सकता है।

थोड़ा और दिन चढ़ने पर सूर्य आगे बढ़ चुका होता है, तब तीसरे पहर, उस दिशा में जिधर से सूर्य चमकता है, हम जगमग करती सहस्रों चिनगारियाँ-सी देख सकते हैं। स्वयं सूर्य का परावर्त्तित प्रतिबिम्ब हम नहीं देख सकते क्योंकि हम पानी पर सतह के अत्यन्त ही निकट की दिशा से देखते होते हैं; अव्यवस्थित रूप से तरङ्गित सतह से प्रतिबिम्बित विशाल प्रकाश-स्तम्भ के एक अंश को ही हम देख पाते हैं। उस दिशा में समुद्र हलके भूरे, करीब-करीब सफेद, रंग का दीखता है।

सूर्यास्त के उपरान्त, पश्चिम दिशा में समुद्र तेज चमक तथा सुनहले रंग के अलका बादलों के आवरण को प्रतिबिम्बित करता है; इसकी ऊर्मिल सतह तथा इसके चञ्चल

१ यह हाशिया उन दिनों भी स्पष्ट दिखलाई पड़ता है जब आकाश नीरस, भूरे रंग का होता है, हवा औसत वेग की और समुद्र गहरे मटमैले रंग का होता है।

प्रतिबिम्बन आकाश के पश्चिमी भाग के औसत रग प्रदर्शित करते है। उत्तर और दक्षिण की ओर आकाश का रग हलका होता है और समुद्र की रग-आभा कम चमकीली होती है। हमारी निगाह बार-बार पश्चिम की रग-गरिमा द्वारा आकृष्ट होती है। सुनहले-पीत वर्ण के बादलो के दर्मियान यत्र-तत्र नीले आकाश का टुकड़ा दीख जाता है—इसका नीला रग विपर्यास के कारण आश्चर्यजनक रूप से संपृक्त दीखता है। शनैः-शनैः आकाश के रग रक्तिम वर्ण मे परिणत होते जाते है और समुद्र उनका अनुगमन करता है, जबकि ऊँची लहरों का फेन विपर्यास के कारण बैंगनी दीखता है। ठीक अग्रभूमि मे गीली रेत का एक सकरा-सा भाग है जिसमे आकाश के कुछ भाग के प्रतिबिम्ब स्निग्ध और पूर्ण (बिना स्थानान्तरित हुए) दीखते है—पहले एक मनोहर स्वच्छ नीले रग के, फिर बाद मे मृदु हरे वर्ण के। अन्त मे, पश्चिम के अलका बादलों पर अब रोशनी नही पड़ने पाती, उनके रग की आभा गहरे बैंगनी वर्ण की हो जाती है, और इसी प्रकार समुद्र के भी रग दब-से जाते है, किन्तु इन शान्तिप्रद सान्ध्यकालीन रागरगों मे, समुद्र तट की गीली रेत उत्फुल्ल नारङ्गी रग की धारी-सी अङ्कित करती है।

३. **तेज हवा उठ रही है, आकाश भूरे रंग का है**—समूचे समुद्र पर उभड़ती हुई लहरो के शृग फेनिल हो रहे है, तट के सहारे झाग की चार-पाँच पक्तियाँ बन गयी है, दक्षिण-पश्चिम से हवा सामने की लहरो का पीछा करती हुई आती है। बादलो की तरह ही समुद्र भूरे रग का है, तनिक हरा मिश्रित भूरा। तट के निकट, लहरों को हम पृथक्-पृथक् देख पाते है और तब हमे पता चलता है कि उनके रग का हरा अश उनके अग्रभाग के ढाल से उत्पन्न होता है जो बहुत थोडा प्रकाश परावर्त्तित करता है, किन्तु भीतर के परिक्षेपण के कारण यह भूरा-हरा प्रकाश उत्सर्जित करता है। पानी अत्यन्त गँदला मालूम पडता है; क्योकि मथ उठने के कारण इसमे ढेर-सी रेत तैरती रहती है। समुद्र दक्षिण-पश्चिम की ओर, जिधर से हवा आ रही है, सबसे अधिक अदीप्तिमान् दीखता है; दक्षिण की ओर, और विशेषतया उत्तर की ओर, इसका रग हलका हो जाता है, करीब-करीब भूरे आकाश की भांति; यद्यपि उसके मुकाबले मे समुद्र का रग थोड़ा गहरा ही पड़ता है (इस दशा मे हम लहरो को समानान्तर दिशा मे देखते होते है)। क्षितिज के निकट समुद्र अधिक नीलापन लिये हुए रहता है, जो कि नीचे स्थित गहरे वर्ण के बादलों का रग होता है, और लम्बे फासले के परिक्षेपण के कारण ही यह रग उत्पन्न होता है; जबकि सिर के ऊपर ये बादल सामान्यतः चमकीले श्वेत या गहरे भूरे रग के होते है; और फिर क्षितिज पर नीले हाशिये की घटना

विपर्यास को और भी अधिक प्रखर बना देती है (पृष्ठ ३८८)। भूरे आकाश में यदि कोई इक्का-दुक्का गहरे रग का बादल प्रगट होता है तो समुद्र की सतह पर गहरे नीले-भूरे रंग का एक अस्पष्ट स्थानान्तरित प्रतिबिम्ब पहचान मे आ जाता है। क्षितिज की सीमारेखा कहीं पर [illegible] विशेषतया दक्षिण और उत्तर मे लहरों के झाग द्वारा उत्पन्न पानी की नन्ही-नन्ही बूँदों की फुआर हवा मे उतराती है जो हमारी दृष्टि-सीमा को घटा कर चन्द मीलों तक ही सीमित कर देती है और फासले पर समुद्र और हवा को एक दूसरे के साथ संमिश्रित कर देती है।

मौसम के साफ़ होने, और उत्तरी-पश्चिमी वायु के बहने पर दशा-स्थिति बहुत कुछ वैसी ही होती है जैसी अभी बतलायी गयी है, किन्तु आकाश मे अनेक नीले खित्ते तथा श्वेत बादल दीखते है जो सूर्य से प्रकाशित होने के कारण चकाचौध उत्पन्न करते है (वायु-जनित अनुदर्शन के कारण इनका हाशिया हलका पीतरजित दिखलाई पड़ता है, (§ १७३), और इनके अतिरिक्त निलछौवे रग की राशियाँ भी दीखती है। दिक्-सूचक की सभी दिशाओ मे, समुद्र मे २०° से लेकर ३०° तक की कोणीय ऊचाई के आकाश के औसत रग प्रतिबिम्बित होते हुए दीखते है। इस प्रतिबिम्बन मे केवल बडे आकार की राशियाँ ही पहचानी जा सकती है, जबकि सूर्य से प्रकाशित बादल सर्वाधिक प्रमुख दीखते है, और अदीप्तिमान्, विक्षुब्ध समुद्र पर ये चमकीली रोशनी फेंकते है।

४. **तूफान**—मै टीलो और मकानों के पीछे ही हूँ, किन्तु अभी से उफनते हुए समुद्र की गर्जना मुझे सुनाई दे रही है। ऊँचे टीले से लहरो के फेन का विहगम दृश्य मुझे दिखाई देता है—समुद्र का दो तिहाई से अधिक भाग उबलती हुई झाग से ढका है, लहरों के शृग श्वेत दीखते है, जबकि लहरो के दर्मियान की जगह मे धूसर रग की धारियों के जाल से बिछे है। सदा की तरह तरङ्गों के अग्रपार्श्व पश्चिम की ओर, उत्तर तथा दक्षिण की तुलना मे, अधिक अदीप्तिमान् है और इस कारण पश्चिम दिशा का दृश्य अधिक चटकीला और विपर्यास से अधिक परिपूर्ण दीखता है। अशान्त समुद्र मे मन्द प्रकाश के पानी मे से हर तरफ फेनिल लहरे पृथक्-पृथक् उठती हुई दिखलाई पड़ती है। बहुत दूर, दक्षिण दिशा मे, सूर्य से प्रकाशित एक लकीर स्पष्ट दिखलाई देती है—झागवाली सतह पर चकाचौध उत्पन्न करनेवाले श्वेत प्रकाश की रेखा, जो शुरू में अत्यन्त सँकरी तथा लम्बी दीखती है और ज्यों-ज्यों यह निकट आती है त्यों-त्यों यह एक विस्तृत क्षेत्र मे फैलती जाती है। बालू का रंग उन स्थलों पर अत्यन्त स्पष्ट उभरता है जहाँ झाग मौजूद नहीं होता, और सूर्य से प्रकाशित समुद्र गहरे शेड के बादलों का

प्रतिबिम्बन करता है। प्रकाश की इस प्रकार की व्यवस्था में, नीचे से परिक्षेपित हो कर वापस आने वाला प्रकाश यथासम्भव प्रबलतम होता है—इसलिए भी यह और अधिक प्रबल होता है कि उफनती हुई लहरें रेत की ढेर-सी राशि को मथ देती हैं जो पानी में उतराती रहती है। कुछ भागों मे आकाश अत्यन्त गहरे शेड का होता है, और कुछ भागों मे अपेक्षाकृत अधिक प्रकाशमान् और कुछ खिल्ते नीले रग के भी होते हैं। समुद्र के स्थानान्तरित प्रतिबिम्बन अभी भी पहचाने जा सकते हैं यद्यपि केवल बहुत ही अस्पष्ट तौर पर। प्रमुख दृष्टि-अनुभूति तो पानी के झाग की होती है।

वायु और बादलों की हर सम्भव दशा में समुद्र पर प्रकाश और वर्ण का अध्ययन करिए।

पथरीले तथा रेतीले समुद्रतट की रंग-आभा की तुलना कीजिए। स्नान करते समय भी समुद्र के रग की जाँच कीजिए। लहरों को समुद्र की ही दिशा मे नही बल्कि तट की दिशा मे देखिए। स्नान करनेवाले अन्य व्यक्तियों की छाया देखिए और स्वय अपनी भी। जल-दूरबीन का उपयोग कीजिए।

यदि बन्दरगाह के किसी प्लैटफार्म पर टहलने का अवसर मिले, तो वहाँ जाकर दो प्लैटफार्म के बीच के समुद्र की तुलना बाहर के खुले समुद्र के साथ कीजिए। आकाश की दशा तो समान ही रहती है; अन्तर, समुद्र की सतह के उद्वेलन तथा उसके ढबैलेपन के कारण उत्पन्न होता है।

समुद्र की सतह की सामान्य दीप्ति की तुलना सन्ध्या को देर में, तथा रात्रि में कीजिए, यह समय इसके लिए बढ़िया रहता है क्योकि रगों की विभिन्नता के कारण व्यवधान उपस्थित नही होने पाता तथा अपेक्षाकृत नन्हे ब्योरे हमारा ध्यान बँटा नही पाते।

विपर्यास घटना के प्रति सावधान रहिए। आकाश तथा समुद्र के विभिन्न भागों की तुलना करने के लिए एक नन्हे से दर्पण का इस्तेमाल करना लाभप्रद होगा (§१७६)। तुलना किये जाने वाले दोनों क्षेत्रों A तथा B के दर्मियान अपना हाथ या अन्य कोई अदीप्तिमान् वस्तु रखिए; इस प्रकार A तथा B दोनों एक क्षेत्र के हाशिये पर देखे जा सकेगे। नाइग्रोमीटर का उपयोग करिए!

कभी भी बादलों की छाया और उनके प्रतिबिम्ब के बीच धोखा न खाइए; ये पूर्णतया भिन्न स्थानों पर पड़ते हैं। आकाश मे जब अलग-अलग बादल मौजूद होते हैं, तब समुद्र पर प्रकाशदीप्ति का वितरण प्रतिबिम्बन और छाया के सम्मिश्रण पर आश्रित होता है।

२१२. जहाज पर से देखे जाने पर समुद्र का रंग

समुद्र तट से दीखने वाले दृश्य की तुलना मे, इस दशा मे एक बड़ा अन्तर है, ऊँची लहरो का अनुपस्थित होना। इस कारण प्रेक्षक के गिर्द समूचा दृश्य बहुत अधिक संमित[1] बन जाता है। किन्तु यह सममिति हवा की वजह से बिगड़ जाती है जो लहरों को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है; जहाज के धुएँ की वजह से, जो एक गहरे रंग के बादल जैसा प्रभाव डालता है; तथा जहाज के पृष्ठदण्ड[2] से उत्पन्न होने वाले झाग की वजह से, तथा सूर्य की वजह से भी।

गहराई से वापस लौटने वाले प्रकाश के रंग का प्रेक्षण सर्वोत्तम तरीके पर जहाज के पीछे तथा उसके निकट किया जा सकता है, क्योंकि वहाँ पर हवा के बादल निरन्तर नीचे की ओर भागते रहते हैं और तब ये धीरे-धीरे ऊपर उठते हैं। इन स्थानों पर एक सुन्दर हरा-नीला रंग स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, वैसा ही रग जैसा जहाज के गिर्द मँडराने वाले सूँसों के सफेद रगवाले उदर से परावर्त्तित होता दिखलाई पडता है, या पानी मे गिरने वाले श्वेत रग के पत्थरो से परावर्त्तित होने वाले रग जैसा। रग का यह शेड प्रत्येक महासागर मे दिखलाई देता है, समुद्र का रग समष्टि रूप से चाहे नीला-आसमानी हो या हरा। यह पानी के यथार्थ अवशोषण द्वारा पीले, नारङ्गी तथा लाल रग के प्रकाश अवयवो के अपहरण के कारण उत्पन्न होता है; बैंगनी किरणे प्रेक्षक से दूर परिक्षेपित हो जाती हैं, अत. केवल हरा अवयव बचा रह जाता है जो यह विशिष्ट रग प्रदान करता है। वे भाग जहाँ उफनती हुई हरी राशि मे फेन की मात्रा कम होती है, अधिकाश एक प्रकार के नील-लोहित वर्ण के होते हैं जो हरे रग का अनुपूरक होता है और जिसे हम मानसिक विपर्यास का रग मान सकते हैं (§ ९५)।

बन्दरगाहों के निकट या बड़ी नदियो के मुहानो के उथले समुद्र का पानी अत्यन्त गँदला होता है। इस कारण प्रकाश की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा नीचे से परिक्षेपित होकर वापस लौटती है, अत यहाँ परिस्थितियाँ, कुछ हद तक वैसी ही होती हैं जैसी जहाज के पीछे उठने वाले हवा के बबूलों की राशि मे से देखने के समय। हरे रग की प्रधानता होती है, कदाचित् इसका कारण यह है कि नदी का पानी समुद्र मे ह्यूमिक अम्ल तथा फेरिक यौगिक ले आता है (§ २०७); उनका पीत वर्ण वाला अवशोषण पानी के नीले-हरे रग पर अध्यारोपित हो जाता है। इस किस्म के उथले हरे समुद्र

1. Symmetrical 2. Keel

पर शान्त दिनों मे बादलों की छाया शानदार नील-लोहित-बैंगनी रंग की उभरती है (§ २१६)।

थोड़ी गहराई पर स्थित सफेद वस्तुओं द्वारा प्रदर्शित 'जल-वर्ण' आम तौर पर गहरे समुद्र के 'यथार्थ रग' से भिन्न होता है। इसकी छानबीन करने के लिए परावर्त्तित प्रकाश का परिहार करना आवश्यक है, या तो उदाहरण स्वरूप, लहर के अग्र भाग की ओर देखे या फिर § २०९ मे बतलायी गयी किसी एक विधि का अनुसरण करे। गहरे समुद्र के इस 'यथार्थ रग' या 'निज के रग' मे स्पष्ट अन्तर होते हैं जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि किस समुद्र पर हम यात्रा कर रहे हैं; इसका प्रेक्षण, बहुत अच्छी तरह, इग्लैण्ड से आस्ट्रेलिया की समुद्रयात्रा मे किया जा सकता है। सामान्यतः रगो का वितरण-क्रम निम्नलिखित मिलता है—

जैतूनी हरा	उत्तरी अक्षाश ४०° से उत्तर।
नील रग	उत्तरी अक्षांश ४०° और ३०° के दर्मियान।
पार समुद्रिक रग (अल्ट्रामैरीन)	उत्तरी अक्षाश ३०° से दक्षिण।

कभी-कभी ऐसा होता है कि जैतूनी हरे रग के छिट-फुट प्रदेश निम्न अक्षाशों तक पहुँच जाते हैं। इस बात का पता लगाना उचित होगा कि किसी विशेष स्थान पर यह हरा रग ऋतुओ के अनुसार बदलता है या नही; क्योंकि इसके पक्ष मे कतिपय सकेत मिल भी चुके हैं। कुछेक गहरे समुद्रो के हरे रग की सन्तोपजनक व्याख्या अभी तक नही की जा सकी है। प्रेक्षणो से पता चला है कि इन समुद्रो के पानी मे तैरते हुए जर्रे भारी मात्रा मे पाये जाते हैं; किन्तु जैसा कि गणना से पता चलता है, पानी द्वारा सामान्य अवशोपण तथा बड़े आकार के जर्रो द्वारा होनेवाला परिक्षेपण, परस्पर मिलकर गहरे नीले से लेकर हलके नीले तक, हर तरह के शेड उत्पन्न कर सकते हैं, किन्तु हरे रग का समाधान कभी भी इससे नही हो सकता। इस कारण कुछ लोग इसे द्विकोपीय 'अल्जीआ', तथा ऐसे पक्षियों के बीट के कारण उत्पन्न हुआ मानते हैं जो 'अल्जीआ' खाते हैं; अन्य लोग इसे परिक्षेपण करने वाले कणों के पीले रंग के कारण उत्पन्न हुआ मानते हैं, जो, मिसाल के तौर पर, पीली रेत के कण हो सकते हैं। सच्चाई जो कुछ भी हो, वर्ष की ऋतुओं के प्रभाव के सम्बन्ध में किये गये प्रेक्षण निश्चित रूप से इस बात की ओर इङ्गित करते हैं कि इस रंग की उत्पत्ति कार्बनिक पदार्थों से होती है।

कुछ दुर्लभ अवस्थाएँ मिलती हैं जब समुद्र-जल दूधिया धवल दीखता है। स्पष्ट है कि सतह के निकट तैरते हुए जर्रों की बहुत बड़ी संख्या मौजूद होगी जो सबसे ऊपर

की तहों मे परिक्षेपण करते है और यह परिक्षेपण अवशोषण पर पूर्णतः हावी हो जाता है।

२१३. झीलों का रंग

पर्वतीय दृश्यों में झील के रंग विपुल सौन्दर्य के स्रोत होते हैं। उनकी गहराई प्रायः इतनी काफी होती है कि पेदे की जमीन के प्रभाव का शमन हो जाता है। अतः इस दृष्टि से ये समुद्र के सदृश होती है। फिर भी समुद्र से ये इस माने में भिन्न होती हैं कि ये अपेक्षाकृत बहुत अधिक शान्त होती हैं और इसका कारण है उनकी सतह का बहुत छोटा होना तथा किनारे के पहाड़ो की वजह से हवा के वेग से उनका सुरक्षित रहना। अतः झील की सतह से होने वाला नियमित परावर्त्तन, समुद्र के मुकाबले में, अधिक महत्त्वपूर्ण योग देता है; सूर्यास्त के रंगों का प्रतिबिम्बन उतना बढ़िया अन्यत्र कही नहीं होता जितना झील में, और निश्चय ही पर्वतीय झीलों के पानी की विविध रग-आभा अशतः तटभूमि के प्रतिबिम्बन के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु तटभूमि यदि ऊँची तथा अन्धकारपूर्ण हुई तो सतह के प्रतिबिम्बन का लोप हो जाता है और इसके बजाय झील के विस्तृत क्षेत्र उस प्रकाश का रंग प्रदर्शित करते है जो लगभग लम्बवत् दिशा मे पानी मे प्रविष्ट होने के उपरान्त पुनः परिक्षेपित होकर वापस आता है। § २०९ मे बतलायी गयी विधियों का उपयोग करके इन 'व्यक्तिगत रंगो' के बारे मे कुछ जानकारी हासिल की जा सकती है। हर झील के लिए ये रग भिन्न होते हैं। और उनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—(१) विशुद्ध नीला, (२) हरा, (३) पीत-हरा, (४) पीत-बादामी।

प्रयोगशालाओं के सूक्ष्म परीक्षण से पता चलता है कि 'नीले' रग की झील का पानी लगभग पूर्णतः शुद्ध होता है तथा इसका यह रंग पानी मे स्पेक्ट्रम के नारङ्गी तथा लाल अवयवो के अवशोषण के कारण उत्पन्न होता है। द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ वर्ग के रगों की उत्पत्ति का समाधान पानी मे मौजूद लौह-यौगिकों तथा ह्यूमिक अम्ल की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा तथा बादामी रंग के कणों द्वारा होने वाले परिक्षेपण से हो जाता है (§ २०७)।

अक्सर छोटी झीलों का हरा रंग उनके अन्दर भारी मात्रा मे उगने वाले सूक्ष्म आकार के हरे अल्जीआ के कारण उत्पन्न होता है; प्रायः जाड़े मे भी, जबकि वृक्षों की पत्तियाँ झड़ चुकी होती हैं और सभी कुछ बर्फ से ढका होता है, ये झीले स्पष्ट रूप से हरे रग की दीखती है।

लाल रंग सूक्ष्म आकार के अन्य जीवों द्वारा उत्पन्न होते है, जैसे बेगिआटोआ,

आसिलैरिया रुबेस्सेन्स, स्टेण्टर इग्नेयस, डाफ्निया प्यूलेक्स, यूग्लेना सैन्ग्यूनिआ या पेरिडिनिया।

ध्रुवण के लिए देखिए § २१४।

२१४. पानी के रंग का 'निकल' द्वारा प्रेक्षण[1]

'निकल', जैसा कि हमें पता है, केवल उन्हीं किरणों को अपने में से गुजरने देता है जिनकी कम्पन-दिशा 'निकल' के लघु कर्ण के समानान्तर होती है। चूंकि पानी से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश में कम्पन मुख्यतः क्षैतिज दिशा में होते हैं, अतः निकल को इस तरह रखें कि इसका लघुकर्ण ऊर्ध्व दिशा में हो, तो हम इस परावर्त्तित प्रकाश की चमक कम कर सकते हैं, और यदि ऊर्ध्व दिशा के साथ ६५° का कोण बनानेवाली दिशा में प्रेक्षण करें, तो चमक और भी कम हो जाती है (पानी के लिए ध्रुवक कोण का मान ६५′ है)।' हलकी वर्षा के बाद सड़क पर पड़े पानी के छोटे-से गड्ढे के लिए यह प्रयोग कीजिए। इससे लगभग ५ गज की दूरी पर खड़े होइए, और 'निकल' को इस तरह पकड़िए कि इसका लघु कर्ण ऊर्ध्व दिशा में हो। आप आश्चर्यजनक प्रभाव पायेंगे, क्योंकि अब आप गड्ढे की तली लगभग इतनी अच्छी तरह देख सकते हैं मानों वहां पानी कत्तई हो ही नहीं। निकल को बारी-बारी से क्षैतिज तथा ऊर्ध्व तल में घुमाइए, आप देखेंगे कि पानी का गड्ढा क्रमशः छोटा और बड़ा होता प्रतीत होता है। 'निकल' सामान्यतः गीले समुद्रतट, सेवार, आग्नेय चट्टानों, भीगी सड़क तथा रंगीन सतह, और सारांश यह कि हर ऐसी वस्तु के रंग-सौष्ठव में, जो दृश्यक्षेत्र में चमकती है, अभिवृद्धि कर देता है। कारण यह है कि सतह से परावर्त्तित प्रकाश के उस अंश का यह अपहरण कर लेता है जिसके कारण वस्तु के निज के रंग में श्वेत का सम्मिश्रण हुआ करता है।

शान्त समुद्र के धूप वाले भाग, तथा बादलों के छाया वाले भाग, के बीच का विपर्यास, ऊर्ध्व कम्पन की स्थिति में रखे 'निकल' द्वारा तीव्रतर हो जाता है। इस दशा में सतह से परावर्त्तित होने वाली किरणों का शमन हो जाता है, अतः परिक्षेपित प्रकाश के अन्तर अधिक स्पष्टता के साथ प्रगट होते हैं।

'निकल' समुद्र के तेल से ढके भाग तथा शेष भाग के बीच भी विपर्यास की अभिवृद्धि करता है (§ २११); कदाचित् इसका कारण यह है कि तरंगों पर, स्निग्ध सतहों

1. E. O. Hulburt, J. O. S. A., 24, 35, 1934. इस तरह के प्रेक्षण पोलरायड की मदद से भी किये जा सकते हैं; किन्तु इस उपकरण में स्वयं अपना रंग भी मौजूद होता है जो सही रंगों के प्रेक्षण में व्यवधान डालता है।

के मुकाबले में, विभिन्न कोण पर परावर्त्तन होता है या फिर इस कारण कि परावर्त्तन द्वारा होने वाले ध्रुवण में तेल की परत द्वारा व्यवधान उपस्थित हो जाता है।

अब हवा चलती है तो 'निकल' का प्रभाव विशेष स्पष्ट होता है। निकल के लघु कर्ण को ऊर्ध्व दिशा मे रखकर उसमे से, उमड़ती हुई लहरों को, देखिए, लघुकर्ण को क्षैतिज दिशा मे रखने के मुकाबले मे अब समुद्र अधिक अशान्त प्रतीत होता है। क्योकि ऊर्ध्व स्थिति मे 'निकल' परावर्त्तित प्रकाश को रोक देता है, अतः समुद्र की सतह अधिक अदीप्तिमान् हो जाती है जबकि लहरों के फेन की धवल चमक पूर्ववत् बनी रहती है, अतः अब यह अधिक स्पष्ट प्रतीत होती है।

'निकल' को सही स्थिति मे व्यवस्थित करें तो अक्सर क्षितिज अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। सूर्य की दिशा के समकोण देखे तो 'निकल' को ऊर्ध्व स्थिति मे रखने पर समुद्र निश्चित रूप से अधिक अदीप्तिमान् हो जाता है और आकाश अपेक्षाकृत अधिक प्रकाशवान् (§ २११)। इसी कारण इन दिनों सेक्सटैण्ट मे कभी-कभी 'निकल' फिट किये जाते है।

निम्नलिखित प्रयोग उष्ण कटिबंध के गहरे समुद्रों से परिक्षेपित प्रकाश के ध्रुवण से सम्बन्ध रखता है—इन समुद्रो का पानी स्वच्छ होता है।[1] कल्पना कीजिए कि प्रयोग ऐसे वक्त किया जा रहा है जब सूर्य आकाश मे ऊँचाई पर स्थित है और पानी की सतह शान्त है। सूर्य की ओर पीठ करके खड़े हो जाइए और पानी की ओर लगभग ध्रुवक-कोण की दिशा मे निकल में से देखिए जिसका लघुकर्ण ऊर्ध्व दिशा मे स्थित हो। परावर्त्तित प्रकाश रुक जाता है और आप प्रकाश की मनोरम नीली चमक को देख सकते है जो परिक्षेपण के उपरान्त नीचे से आती है। 'निकल' को इस तरह घुमाइए कि लघुकर्ण क्षैतिज हो जाय; अब समुद्र कम नीला दीखेगा, बनिस्बत उस दशा के, जबकि उसे बिना 'निकल' के देखते।

यह प्रयोग उस वक्त भी कीजिए जब सूर्य थोड़ी ही ऊँचाई पर हो, इस बार भी 'निकल' को इस तरह पकड़िए कि लघुकर्ण ऊर्ध्व स्थिति मे हो; तथा क्षैतिज तल का अपना दिगंश बदलिए। सूर्य के रुख तथा उसकी विपरीत दिशा के रंग की तुलना विशेष रोचक सिद्ध होती है। सूर्य के रुख गहरा नील वर्ण आप को दिखलाई पड़ता है क्योंकि इस वक्त सूर्य किरणों की समकोण रेखा मे आप देखते है, अतः न केवल परावर्त्तित प्रकाश रुक जाता है बल्कि पानी की गहराई से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश भी आँख तक नही पहुँच पाता। सूर्य की उलटी ओर, रंग चमकीला नीला होता है क्योंकि अब

1. C—V. Raman; Proc. R. Soc. 101A, 64,1922

बहुत कुछ सूर्य-किरणों की दिशा मे आप देखते होते है और परिक्षेपित प्रकाश जो आप की ओर वापस आता है ध्रुवित नही होता। ये दोनों प्रयोग सिद्ध करते है कि समुद्र से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश बहुत कुछ मात्रा मे ध्रुवित होता है, जैसा कि वायु में परिक्षेपित होने वाला प्रकाश (§१८०), अत: परिक्षेपण अत्यन्त क्षुद्र कणों द्वारा होता है, कदाचित् स्वय पानी के अणुओं द्वारा।

'निकल' का उपयोग करके नीले जल की झील से तथा गहरे बादामी रंग की झील से वापस, परिक्षेपित होने वाले विकिरण के लाक्षणिक अन्तर का पता लगाया गया है। इस अन्तर का प्रेक्षण करने के लिए, जल-दूरबीन की सहायता से परावर्त्तित प्रकाश का परिहार करते हुए सूर्य की दिशा मे अवलोकन करते है (§ २०९)। 'निकल' से अब पता चलता है कि नीले रग वाली झील मे परिक्षेपण से वापस आने वाले प्रकाश का कम्पन क्षैतिज दिशा मे होता है और ऐसी ही आशा भी की जाती है; जबकि बादामी रग वाली झील के बड़े आकार के जर्रे करीब-करीब अध्रुवित प्रकाश ही परिक्षेपित करते है, जिसमे पानी से बाहर आने पर, ऊर्ध्व दिशा वाले कम्पनों का अल्पमात्रा में बाहुल्य रहता है (बशर्ते जल-दूरबीन के सिरे पर काँच न लगा हो)।

२१५. पानी के रंग की जाँच के लिए मापश्रेणी

इसके लिए सामान्यत: फोरेल की मापश्रेणी उपयोग में लायी जाती है। पहले क्यूप्रिक सल्फेट के मणिभों का एक नीला घोल, और पोटैसियम क्रोमेट का एक पीला घोल तैयार कीजिए—

०.५ ग्राम क्यूप्रिक सल्फेट, तथा ५ घ० सेण्टीमीटर अमोनिया पानी में मिलाकर पानी डालकर १०० घ० सेण्टीमीटर घोल तैयार कर लीजिए।

०.५ ग्राम पोटैसियम क्रोमेट को १०० घ० सेण्टीमीटर पानी मे घोल लीजिए। अब निम्नलिखित सम्मिश्रण तैयार कीजिए—

(i)	१००	नीला +	०	पीला
(ii)	९८	,, +	२	,,
(iii)	९५	,, +	५	,,
(iv)	९१	,, +	९	,,
(v)	८६	,, +	१४	,,
(vi)	८०	,, +	२०	,,
(vii)	७३	,, +	२७	,,
(viii)	६५	नीला +	३५	पीला
(ix)	५६	नीला +	४४	पीला
(x)	४ङ	नीला +	५४	,,
(xi)	३५	,, +	६५	,,
(xii)	२३	,, +	७७	,,
(xiii)	१०	,, +	९०	,,

प्रायः इनसे भी अधिक गहरे बादामी रगों की आवश्यकता पड़ती है, विशेषतया झीलों के रंग की जाँच के लिए। इस आवश्यकता की पूर्त्ति के लिए, निम्नलिखित विधि से बादामी रंग का घोल बनाया जा सकता है।

०.५ ग्राम कोवाल्ट सल्फेट+५ घन सेण्टीमीटर अमोनिया+पानी, ताकि घोल का आयतन १००. घ० सेण्टीमीटर हो जाय।

इस घोल को फोरेल के हरे घोल (अवधारण क्रम x1) के साथ निम्नलिखित अनुपातों मे मिलाइए—

(११)	१००	हरा	+	०	बादामी	(११–७)	७३	हरा	+ २७ बादामी
(११–२)	९८	हरा	+	२	बादामी	(११–८)	६५	,,	+ ३५ ,,
(११–३)	९५	,,	+	५	,,	(११–९)	५६	,,	+ ४४ ,,
(११–४)	९१	,,	+	९	,,	(११–१०)	४६	,,	+ ५६ ,,
(११–५)	८६	,,	+	१४	,,	(११–११)	३५	,,	+ ६५ ,,
(११–६)	८०	,,	+	२०	,,				

लगभग $\frac{1}{2}$ इंच व्यास की परखनली में ये मिश्रण रखे जा सकते हैं। इस माप-श्रेणी के इस्तेमाल मे प्रमुख कठिनाई यह मालूम करने की है कि पानी की सतह का कौन-सा स्थल तुलना का आदर्श प्रमाप माना जाय। आम तौर पर पानी के स्वयं 'यथार्थ रंग' को ही आदर्श प्रमाप मान लेते हैं (§§ २०९, २१२)।

दोनों मे से कोई भी मापश्रेणी पूर्णतः सन्तोषप्रद नहीं है। एक अन्य तरीका यह है कि ऐसे रंजक तैयार करें जो इन रंगों से मेल खाएँ और फिर भविष्य में तुलना करने के लिए इन्हें रख छोड़े।

२१६. पानी पर छाया

'...कि जब कभी स्वच्छ जल पर या कुछ हद तक गॅदले पानी पर भी, हम छाया का प्रेक्षण करते हैं तो यह भूमि पर पड़ने वाली छाया की भाँति धूप मे सामान्य रूप से चमकने वाली सतह की प्रदीप्ति आभा को थोड़ा घटा भर नही देती, बल्कि यह पूर्णतः भिन्न रंग का स्थल उपस्थित करती है जो अपनी परावर्त्तन क्षमता के कारण अगणित रग-शेड धारण कर सकता है और कुछ परिस्थितियों मे यह एकदम विलुप्त भी हो सकता है।'—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

पानी के धरातल से आने वाला प्रकाश अंशतः उस धरातल से प्राप्त होता है

और अशत: उसके नीचे से, अत: आपतित किरणों को रोक देने पर ये दोनों ही अवयव बदल जाते है।

१. **परावर्त्तित प्रकाश पर छाया का प्रभाव**—'धरातल जब तरङ्गित होता है, तो दर्शक के दोनों ओर एक परिवर्त्ती दूरी तक, और सूर्य और उसके दर्मियान के एक खास कोणीय मान के लिए जो तरङ्गों के आकार और शक्ल पर निर्भर करता है, प्रत्येक तरङ्ग सूर्य का एक छोटा बिम्ब उसके लिए प्रतिबिम्बित करती है (देखिए § १४)। इसी कारण अक्सर चकाचौध उत्पन्न करने वाले प्रकाश के विस्तृत क्षेत्र समुद्र पर देखे जाते हैं। यदि कोई वस्तु सूर्य और इन तरङ्गों के बीच मे आती है तो यह सूर्य को प्रतिबिम्बित करने की उनकी शक्ति का अपहरण कर लेती है, अत: उनकी समस्त दीप्ति का अपहरण हो जाता है। इसीलिए बीच मे आनेवाली वस्तु, ऐसी जगह पर अत्यन्त गाढ़ी छाया डालती है जो ठीक वस्तु की शक्ल की होती है और ठीक वास्तविक छाया वाले स्थल पर ही पड़ती है'।—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

रस्किन के शब्दों की सत्यता की परख सबसे अच्छी तरह उस वक्त की जा सकती है जबकि तेज हवा वाली रात्रि मे, नहर का पानी (मिसाल के तौर पर) बहुत अधिक उद्वेलित हो रहा हो। नहर के किनारे चलते हुए हम सड़क के लैम्प का प्रतिबिम्ब देखते हैं जो अनियमित तरीके से लुपझुप करते हुए प्रकाशस्तम्भ सरीखा दीखता है और इसके ऊपर लगातार छायाएँ फिलसती-सी रहती हैं—उदाहरण के लिए, लैम्प और नहर के दर्मियान के वृक्षो की छाया। सर्वाधिक अनुकूल दृष्टिबिन्दु की स्थिति पर ही पहुँचने पर हम पानी पर पड़ने वाली छाया की उपस्थिति की अनुभूति कर पाते है, जो केवल एक अल्पमान के सान्द्र-कोण[1] के अन्दर से ही दृष्टिगोचर हो पाती है। आलोचकों तथा अन्य व्यक्तियों से जो इस विषय मे रुचि रखते थे, रस्किन ने इस प्रश्न पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श किया था कि इस लिहाज से क्या इन्हे हम 'छाया' की सज्ञा भी दे सकते है या नही। निस्सन्देह यह केवल शब्दो का प्रश्न है!

इससे कुछ भिन्न प्रभाव उस वक्त उत्पन्न होता है जब पानी पर चन्द्रमा एक लम्बे प्रकाश-स्तम्भ के रूप मे प्रतिबिम्बित होता है और हम अचानक पानी पर जाती हुई किश्ती की छाया-आकृति को दीप्ति की इस चमकदार पट्टी पर फिसलते हुए देखते हैं। स्वय किश्ती, प्रकाश की पृष्ठभूमि पर एक काले रंग की वस्तु-सी प्रतीत होती है,

1. Solid-angle

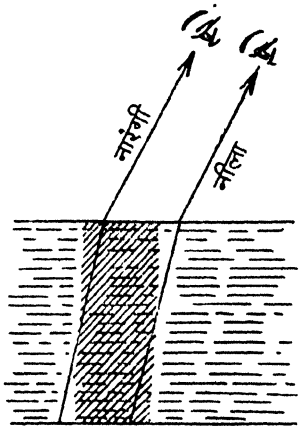
किन्तु यह अपनी छाया भी हमारी दिशा मे तरङ्गित पानी पर डालती है तथा यहाँ भी उपर्युक्त विवेचन लागू होता है।

२. परिक्षेपित होकर वापस आनेवाले प्रकाश पर छाया का प्रभाव—गँदले पानी पर छाया स्पष्ट अङ्कित होती है; छाया की स्पष्टता की मात्रा पानी के गँदलेपन या उसकी स्वच्छता की प्रत्यक्ष सूचक होती है। हमारे जलमार्गों पर पड़ने वाली पुलो तथा वृक्षों की छाया पर ध्यान दीजिए। समुद्र-यात्रा मे पानी पर अपनी छाया देखने का प्रयत्न कीजिए। आप इसे केवल उस तरफ़ देख पायेंगे जिधर जहाज ने पानी को उद्वेलित करके उसमे हवा के बबूले मिला दिये है, किन्तु उस ओर नही जिधर समुद्र स्वच्छ और गहरे नीले रग का है। समुद्र की सतह पर बादलों की छाया का प्रेक्षण कीजिए।

छाया इस कारण दृष्टिगोचर होती है कि पानी मे प्रविष्ट करने पर परिक्षेपित होकर जो प्रकाश वापस आता है, उसकी मात्रा सतह के छाया वाले भागों मे अन्य भागों की अपेक्षा कम होती है। इसके प्रतिकूल, सतह से परावर्त्तित होने वाला प्रकाश क्षीण नही होने पाता, अतः यह अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता प्राप्त कर लेता है। इससे यह बात समझ में आती है कि जब आकाश नीले रग का होता है तो क्यों समुद्र पर बादल की छाया अक्सर निलछौवे रग की बनती है, यद्यपि आसपास के हरे रग के विपर्यास के कारण यह रंग थोड़ा नील-लोहित वर्ण के शेड का प्रतीत होने लगता है (§ २०९, २११, २१२)। पानी की निर्मलता के अतिरिक्त प्रेक्षण की दिशा भी महत्त्व रखती है। अत्यन्त स्वच्छ पानी मे स्नान करते समय आप को छाया नहीं दिखाई देगी; तनिक गँदले पानी में स्नान करते समय आपको केवल अपनी छाया दिखाई पड़ेगी, अन्य लोगो की नही; किन्तु अत्यन्त गँदले पानी मे आप को सभी स्नान करने वालो की छाया दिखाई पड़ेगी। ध्यान दीजिए कि नहर के थोड़े-बहुत गँदले पानी पर पड़ने वाली खम्भे की छाया ठीक तरीके पर केवल तभी दिखलाई देती है जब जाकर आप उस धरातल मे खड़े हों जो सूर्य और खम्भे से गुजरता है, अर्थात् जब आप आकाश के उस भाग की ओर देखते है जिधर सूर्य है। तब आपको प्रतीत होगा कि मानो एकाएक पानी पर छाया प्रगट हो गयी है। यह उसी तरह की घटना है जैसी धुन्ध के सम्बन्ध मे बतलायी गयी थी।

किञ्चित् गँदले पानी पर पड़ने वाली छायाएँ एक और विशिष्टता प्रदर्शित करती है; **इनके हाशिये रंगीन होते हैं**। हमारी ओर पड़ने वाला हाशिया निलछौवे रंग का होता है और दूर वाला नारङ्गी वर्ण का होता है। इस घटना का प्रेक्षण प्रत्येक खम्भे, पुल या जहाज की छाया मे किया जा सकता है। पानी मे तैरते हुए धूल के अगणित कणो से

होने वाले परिक्षेपण के कारण ये रंग उत्पन्न होते हैं—इनमें से अनेक कण इतने छोटे होते हैं कि ये नीली किरणों का परिक्षेपण अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में करते हैं। अब हम चित्र १५८ मे देखते हैं कि हमारी ओर के जर्रे एक अँधेरी पृष्ठभूमि के सम्मुख प्रभासित होते दीख पड़ते हैं, अतः ये हमारी आँख मे निलछौवे रग का प्रकाश भेजते हैं; जबकि छाया की दूसरी ओर (वह हाशिया जो हमसे दूर पड़ता है) हम पेदे से आनेवाला (या इर्द-गिर्द के पानी से परिक्षेपित हुआ) प्रकाश देख पाते हैं—यह प्रकाश नीली किरणो से वञ्चित हुआ रहता है तथा छाया-प्रदेश के अप्रकाशित जर्रों के कारण यह नारङ्गी वर्ण-रञ्जित हो जाता है। इससे प्रगट होता है कि यह घटना उसी किस्म की है जैसी नीले आकाश तथा अस्त होते हुए पीत वर्ण के सूर्य की घटना (§१७२)। क्षितिज के निकटवाले दोनों रगो के कारण हमारे नेत्र इसके लिए विशेष सुग्राही हो जाते हैं।



चित्र १५८—**गँदले जल पर पड़नेवाली छाया के हाशियों पर रंग कैसे प्रगट होते हैं।**

छाया के हाशिये के रगो का प्रेक्षण, हर दृष्टि-बिन्दु से, तथा आपतित प्रकाश और छाया की विभिन्न दिशाओं के लिए कीजिए। इस बात पर भी ध्यान दीजिए कि वनो के झुरमुट मे प्रवेश करने वाली प्रकाश-किरण-शलाका जब स्वच्छ धारा के पानी पर गिरती है तो यह स्पष्ट रूप से निलछौवे रग की होती है; और पेदे पर यह नारङ्गी वर्ण के प्रकाश का धब्बा बनाती है।

२१७. पानी पर बनने वाली हमारी छाया के गिर्द आभामण्डल (आरिएल) (प्लेट XV)

अपने सिर के आकार के चतुर्दिक् रवि-दीप्त जल मे विकेन्द्रित होती हुई रेखाओं की ओर मैंने निहारा.....

मेरे अथवा अन्य किसी के सिर के आकार से रविदीप्त जल पर विकेन्द्रित होती हुई सुस्पष्ट प्रकाश-रेखाएँ।

वाल्ट ह्विटमैन, 'क्रासिंग ब्रुकलिन फेरी' (लीव्ज ऑव ग्रास)

इस मनमोहक घटना का सर्वोत्तम रूप में अवलोकन उस वक्त किया जा सकता है जब एक पुल से या जहाज के डेक से पानी की अशान्त उत्ताल लहरों पर पड़ने वाली अपनी छाया को हम देखे। हमारे सिर की छाया से सहस्रों चमकीली तथा काली रेखाएँ चारों ओर अपसृत होती हैं। यह आभामण्डल (आरिएल) केवल अपने सिर के गिर्द देखा जा सकता है (देखिए § १६८)। किरणें सब की सब बिलकुल ठीक एक ही बिन्दु पर केन्द्रित नहीं होती हैं, बल्कि लगभग उसके गिर्द मे एकत्र होती हैं। एक और विलक्षण बात यह है कि छाया के गिर्द प्रकाशित भाग की सामान्य दीप्ति बढ़ जाती है।

इस तरह की कोई भी घटना शान्त पानी पर या सम तरङ्गों वाली सतह पर नहीं दिखलाई देती है; यह भली-भाँति केवल तभी देखी जा सकती है जब सतह पर पानी की छोटी-छोटी अव्यवस्थित ढेरियाँ-सी उठ रही हों। पानी को थोड़ा-बहुत गँदला अवश्य होना चाहिए; तट से जितनी ही अधिक दूरी पर होंगे या खुले समुद्र मे, आभा-मण्डल उतना ही अधिक निस्तेज दीखेगा।[1]

व्याख्या इस प्रकार है—पानी की सतह की प्रत्येक उठान अपने पीछे प्रकाश या अन्धकार की एक लकीर फेकती है; ये सभी लकीरे सूर्य और आँख को मिलाने वाली रेखा के समानान्तर जाती हैं, अतः अनुदर्शन के कारण हम उन्हे प्रति-सूर्य बिन्दु पर मिलते हुए देखते हैं—अर्थात् अपने सिर के छाया-बिम्ब पर (§ १९१)।

कुछ अवसरों पर ये लकीरें इतनी स्पष्ट होती हैं कि प्रतिसूर्य बिन्दु से काफ़ी बड़ी कोणीय दूरी तक इन्हे देखा जा सकता है। किन्तु आम तौर पर प्रति-सूर्यबिन्दु पर ये सबसे अधिक स्पष्ट होती हैं, क्योंकि इस दिशा मे हमारी दृष्टि या तो भलीभाँति पानी मे से या छाया मे पड़ने वाले पानी मे से, होकर एक लम्बी दूरी तय करती है। प्रकाशित प्रति-सूर्यबिन्दु के इर्द-गिर्द की सामान्य प्रकाश-तीव्रता की वृद्धि का कारण कदाचित् यह है कि कणों द्वारा होने वाला परिक्षेपण, किरणों के पीछे की दिशा मे, आड़ी दिशा की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है (§ १९१)।

इस किस्म का एक और आभामण्डल उस वक्त देखा जा सकता है जब हम किसी ऐसे एकाकी वृक्ष के साये मे खड़े होते हैं जिसकी फैली हुई शाखाएँ नीचे पानी पर रोशनी और साया के धब्बे डालती हैं। इस दशा मे पानी मे प्रविष्ट होने वाली किरणे उसी प्रकार का प्रकाशीय प्रभाव उत्पन्न करती हैं जैसा सतह की विषमता से उत्पन्न होता है।

इस बात का अनुभव करना रोचक होगा कि वास्तव मे प्रकाश-किरणें सूर्य्य और

1. C. V. Raman, loc. cit.

नेत्र को मिलाने वाली रेखा के समानान्तर बिलकुल ही नही जाती क्योंकि वर्त्तन के फल-स्वरूप ये अल्प कोण मान पर विचलित हो जाती हैं। किन्तु इसके प्रतिकूल हमारी आँख पानी के अन्दर इनके गमन-पथ का अवलोकन करती है जो वर्त्तन के कारण विचलित हो चुका होता है, अतः इन सबके बावजूद, पानी मे गमन करने वाली किरण-शलाका का भाग हवा मे गमन करने वाली शलाका की सीध की दिशा मे ही दिखलाई पड़ता है।

२१८. जहाज के पार्श्व पर जल-रेखा की स्थिति

'...काष्ठ पर जलरेखा के रूप को बदलने मे तीन परिस्थितियाँ योग देती हैं—जब लहर पतली होती है, तब पानी मे से होकर लकड़ी का रंग थोड़ा दिखाई देता है; जब लहर स्निग्ध होती है तो लकड़ी का रग इसमे से कुछ-कुछ प्रतिबिम्बित होता है, और जब लहर विच्छिन्न होती है तो इसका झाग, लकड़ी पर जल की स्पर्श रेखा को बहुत कुछ अस्पष्ट तथा विकृत बना देता है'—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

तथापि यह कहना भी उतना ही तर्कसंगत हो सकता है कि ठीक उन्हीं कारणों से जल-रेखा दृष्टिगोचर हो पाती है! स्थिर दशा मे, या समुद्र पर जाते हुए जहाज के लिए देखिए कि वे कौन-सी प्रकाशीय घटनाएँ हैं जिनकी सहायता से हम पता लगाते हैं कि पार्श्व पर पानी कहाँ से शुरू होता है—अर्थात् जलरेखा की स्थिति कहाँ पर है।

२१९. जल-प्रपात का रंग

प्रकाश यदि अनुकूल हुआ तो चट्टान पर गिरते हुए पानी का हरा रग भली-भाँति देखा जा सकता है। यह एक अद्भुत बात है कि यत्र-तत्र पानी से बाहर निकली हुई चट्टानें, जो दरअसल काली या भूरी होती हैं, अब लाल रग का पुट लिये हुए दिखलाई पड़ती हैं; प्रगटतः इसे विपर्यास-रग मान कर ही इस घटना का समाधान किया जाना चाहिए (§ ९५)।

इस घटना का अत्यन्त स्पष्ट रूप मे प्रेक्षण उन स्थानों पर किया जा सकता है जहाँ पानी मे झाग बनता है और छीटे उठते हैं। अब यह विदित है कि प्रयोगशाला मे विपर्यास-रग अधिक चटकीले उस दशा मे उभरते हैं जब क्षेत्रो के बीच की सीमारेखा को अस्पष्ट बना दिया जाय। विचाराधीन घटना को प्रदर्शित करने के लिए हम हरी पृष्ठभूमि पर भूरे रग के कागज की एक पट्टी रखते हैं जिसके ऊपर टिशू (लगभग पारदर्शी) कागज का आवरण लगा हो; तब आप पायेंगे कि इस आवरण मे से भूरे वर्ण का ललछौवा विपर्यास-रंग कितना बढ़िया दिखलाई पड़ता है (फ्लोरकन्ट्रास्ट)।

यह रञ्चमात्र भी असम्भाव्य नही जान पड़ता कि प्रकृति मे पानी का पारभासक घुन्ध भी इसी प्रकार का कार्य करता है।

२१९ (क). ठोस वस्तुओं के रंग

झील, नदियों तथा समुद्र के रगों का अध्ययन करने में हमने देखा कि किस प्रकार प्रकाश अशतः सतह से परावर्त्तित होता है जबकि इसका एक भाग गहराई मे प्रविष्ट करके पानी मे तैरते हुए जर्रो से परिक्षेपित हो जाता है। यही बात ठोस वस्तुओं के लिए भी लागू होती है जिससे ये प्रकाशित होकर दृष्टिगोचर होती है। चट्टानों, पत्थरो, वृक्ष के तनो तथा मिट्टी आदि वस्तुओ मे, जो 'अपारदर्शी' कहे जाते है, हम उनकी सतह की एक मिलीमीटर से भी कम मोटाई की तह मे प्रकाश की उन तमाम घटनाओं को मौजूद पाते है जो पानी की कई मीटर मोटी तह मे पायी जाती है; इस दशा मे परिक्षेपण तथा अवशोपण अपेक्षाकृत बहुत अधिक प्रबल होते है किन्तु सिद्धान्तः क्रियाविधि वैसी ही होती है जैसी पानी मे। ठोस वस्तु की विशिष्ट प्रकृति उसकी सतह द्वारा निर्धारित होती है जो खुरदरेपन या चिकनेपन की हर किस्म की ग्रेड धारण कर सकती है; अतः हमे दशा के अनुसार नियमित परावर्त्तन, अनियमित परावर्त्तन या परिक्षेपण पर विचार करना होता है।

भू-दृश्य मे नियमित रूप से परावर्त्तन करने वाली वस्तुएँ कम ही मिलती है। चिकनी सतहे बर्फ पर, काँच के घेरे वाले वाटिकागृह मे, धातु की चीजों पर तथा प्रकाश से जगमगाती वृक्ष-टहनियों पर मिलती है। ऐसे देशो में जहाँ स्लेट या चमकीले खपरैल काम में लाये जाते हैं, हम दूरस्थ नगर की छतों से सूर्य के प्रकाश का चकाचौंध उत्पन्न करने वाला प्रतिबिम्बिन देख सकते है--दूर के घरों की खिड़कियों के कॉच अस्त होते हुए सूर्य की चमकीली ज्योति परावर्त्तित करते है। ताजे गिरे हुए तुषार के नन्हे क्रिस्टल उस वक्त तेज प्रकाश से अप्रत्याशित तरीके से जगमगाते है जबकि हम अपना सिर हिलाते-डुलाते है--यह इस बात पर निर्भर करता है कि सूर्य की आपाती किरणों के लिहाज से उनकी आकस्मिक स्थिति कैसी बैठती है।

अनियमित परावर्त्तन का एक बढ़िया उदाहरण उस वक्त हमें मिलता है जब वर्षा से भीगी हुई सड़क की पटरी पर हम दृष्टि डालते है। सड़क के लैम्प का प्रतिबिम्ब हमे लम्बे खिचे हुए प्रकाशस्तम्भ के रूप मे मिलता है जैसा कि तरङ्गित पानी की सतह से बन सकता है--यह प्रभाव उस वक्त विशेष रूप से स्पष्ट होता है जब सड़क पर हम तिरछी दिशा से निगाह डालते है। सतह से परावर्त्तन तथा भीतर से परिक्षेपण,

दोनों गुण प्रदर्शित करने वाली वस्तुओं का एक विचित्र गुण यह है कि इर्द-गिर्द की चीजों का परावर्त्तित प्रतिबिम्ब, तथा उनकी छाया, दोनों को पृथक्-पृथक् किन्तु एक साथ ही वे प्रदर्शित करती हैं। समुद्र पर बादलों का अवलोकन करते समय यह बात हम देख भी चुके हैं—यही चीज एक छोटे पैमाने पर उस वक्त देखी जा सकती है जब समुद्रतट की नम भूमि पर धूप में पक्षिगण किलोल करते होते हैं।

किन्तु अधिकाश प्राकृतिक वस्तुओं की सतह खुरदरी होती है, इनकी सतहें नन्हीं-नन्हीं खुरदराहट से भरी होती है, अतः ये अब परावर्त्तन नही कर पाती बल्कि ये प्रकाश का परिक्षेपण करती हैं। खेत, रेत के मैदान या तुषार के ढेर पर पड़ने वाली सूर्य-किरणों की शलाका इनकी सतहों को इस प्रकार आलोकित करती है कि ये वस्तुएँ हर दिशा से दृष्टिगोचर होती हैं। किन्तु और अधिक ध्यानपूर्वक देखने पर हम पाते हैं कि ठोस वस्तु से होने वाला परिक्षेपण दिशा के अनुसार पर्याप्त मात्रा मे बदलता है। उदाहरण के लिए, सन्ध्या के उपरान्त देखिए कि सड़क के प्रत्येक लैम्प के सामने की भूमि कितनी अच्छी तरह प्रकाशित दिखलाई पडती है, किन्तु लैम्प के पीछे सब कुछ अँधेरा ही दीखता है; दूर से जहाँ तक सम्भव हो, सही अनुमान लगाइए कि जमीन पर गिरने वाला लैम्प का प्रकाश किस बिन्दु पर सबसे अधिक तेज है; नजदीक आने पर आप पायेंगे कि अधिकतम प्रकाश का बिन्दु जो आपने चुना था वह लैम्प के ठीक नीचे न स्थित होकर काफी मात्रा मे आप की ओर हटा हुआ है। इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि सडक की सतह से सामने की ओर प्रकाश का परिक्षेपण पीछे की ओर की अपेक्षा अधिक होता है; यह अनियमित परावर्त्तन तथा समदिशा के परिक्षेपण के बीच के संक्रमण का एक उदाहरण है।

परिक्षेपण की असमिति के अध्ययन करन का एक और तरीका यह है कि सूर्य के सामने की ओर के भू-दृश्य तथा उसके पीछे की ओर के भू-दृश्य की तुलना करें (§ २२३)।

चूँकि भूदृश्य मे ऐसी सतहों की बहुतायत होती है जो विसृत परिक्षेपण करती हैं, अतः हमारी प्रमुख धारणा दीप्त तथा अदीप्त भागों के बीच के सक्रमण के मृदु होने की बनती है, एक रग से दूसरे रंग के दर्मियान का संक्रमण भी मृदु ही दिखलाई पड़ता है। पानी अथवा अन्य चमकीली सतहों से होने वाले स्थानीय परावर्त्तन के कारण यत्र-तत्र तेज प्रकाश की झलक मिलती है जो दृश्य के चटकीलेपन मे अभिवृद्धि कर देती है।

२१९(ख). ऐसी सतह से प्रकाश का परावर्तन जो नन्हें क्रिस्टलों से ढकी हो

जब एक लम्बे काल तक बर्फ पड़ने के बाद अचानक उसका पिघलना शुरू होता है तो वृक्षों तथा मकानों पर नन्हें-नन्हे अनगिनत बर्फ-मणिभों की तह बन जाती है।

मणिभों की यह तह प्रकाश का अत्यन्त असाधारण तथा अद्‌भुत तरीके से परिक्षेपण करती है; सीधे ऊर्ध्वदिशा से देखने पर ये मणिभ (क्रिस्टल) मुश्किल से नजर आते हैं, किन्तु जितनी ही अधिक तिरछी दिशा से आप देखें, उतनी ही अधिक दीप्तिमान् वह सतह दिखलाई पड़ती है, यहाँ तक कि स्पर्शी रेखा की दिशा से अवलोकन करने पर सतह चाँदी की तरह चमकने लगती है।

प्रकाश्यतः प्रत्येक मणिभ प्रकाश का परिक्षेपण करके उसे करीब-करीब हर दिशा में फेंकता है जिस तरह एक नन्हाँ-सा लैम्प हर दिशा में प्रकाश बिखेरता है। हमारी दृष्टि-रेखा जितनी ही अधिक तिरछी दिशा में अवस्थित होती है, उतनी ही अधिक सख्या, इन प्रकाश-स्रोतों की एक दिये हुए सान्द्रकोण के भीतर पड़ती है। अतः अभिलम्ब[1] से कोण I बनाने वाली दिशा से अवलोकन करने पर प्रकाशदीप्ति Sec I के अनुपात में उस वक्त तक बढ़ती जायगी जबतक कि ये मणिभ एक दूसरे को ढकने न लग जायँ। इस दशा में परिक्षेपण की विशिष्टता ठीक इस कारण उत्पन्न होती है कि ये मणिभ एक दूसरे से दूर-दूर स्थित होते हैं, अतः सीमान्तक दीप्ति केवल अत्यन्त तिर्यक् दिशा में प्राप्त होती है। इसी प्रकार का प्रेक्षण कभी-कभी उस वक्त प्राप्त होता है जब कोई चमकीली सतह पानी की नन्ही-नन्ही बूँदों से ढकी हो।

२२०. हरी पत्तियों का रंग

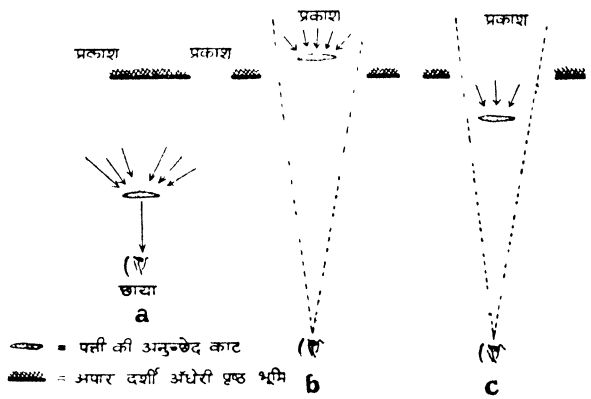
वृक्ष, घास के मैदान, खेत और अलग-अलग पत्तियाँ भी असंख्य किस्मों के हरे रंग की विपुलता प्रदर्शित करती हैं। घटना की प्रचुरता में किसी तरह के व्यवस्थाक्रम का पता लगाने के लिए हम किसी साधारण वृक्ष (बलूत, देवदार, बीच आदि) की एक पत्ती से जाँच का आरम्भ करते हैं ताकि भूदृश्य के रंग-समूह के निर्माण का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त कर सकें।

वृक्ष पर लगी पत्ती सामान्यतः एक पार्श्व पर दूसरे की अपेक्षा बहुत अधिक मात्रा में प्रकाशित होती है, और उसका रंग मुख्यतः इस बात से निर्धारित होता है कि हम पत्ती की उस सतह को देख रहे हैं जिस पर प्रकाश सीधे ही पड़ता है या कि दूसरी सतह को। प्रथम दशा में हम तक पहुँचने वाला प्रकाश अशतः पत्ती की सतह से परावर्त्तित होता है, अतः रंग हलका हो जाता है, किन्तु इसमें भूरेपन का पुट आ जाता है। और फिर पत्ती पर जब सामने की ओर से (दर्शक के लिहाज़ से) प्रकाश पड़ता है, तब हरे रंग के साथ निलछौवे वर्ण का पुट मिल जाता है और रोशनी जब पीछे की ओर से

1. Normal

पड़ती है तब उसमें पीत वर्ण का पुट मिल जाता है। यह हमें परिक्षेपित प्रकाश सम्बन्धी प्रेक्षण का स्मरण दिलाता है (§ १७३ क)। और वस्तुतः पत्ती मे, यद्यपि यह मोटाई मे १ मिलीमीटर से भी बहुत कम होती है, परावर्त्तन, अवशोषण तथा परिक्षेपण की क्रियाएँ उसी प्रकार होती है जिस प्रकार सैकड़ों फुट गहरे महासागर मे। अवशोषण यहाँ क्लोरोफिल की कणिकाओ द्वारा होता है; परिक्षेपण कदाचित् उन अनगिनत कणिकाओं द्वारा होता है जो कोषों मे प्रचुरता से पायी जाती है, या सभवत. पत्ती के धरातल की विषमता के कारण यह परिक्षेपण सम्पन्न होता है।

साया वाले स्थल से मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख देखने पर सूर्य की तेज रोशनी मे घास का मरकत मणि सरीखा हरा रग विशेष मनमोहक लगता है (चित्र १५९, a)



चित्र १५९—**विभिन्न प्रकाश व्यवस्थाओं में हरी पत्तियाँ।**

ऐसा प्रतीत होता है मानो घास की एक-एक पत्ती अक्षरशः हरे वर्ण की अन्तर्ज्योति से प्रज्वलित हो रही है। बगल से इस पर गिरनेवाले आपतित प्रकाश की राशि लाखों सूक्ष्म कणिकाओं द्वारा परिक्षेपित होती है, अतः हर पत्ती तिरछी दिशा मे हमारी आँखों की ओर प्रकाश की बौछार फेंकती है।

घास के सामने से, तथा पीछे से प्रकाशित होने पर, रग का अन्तर तुरन्त देखा जा सकता है यदि हम घास के मैदान मे खड़े होकर बारी-बारी से सूर्य की दिशा में तथा उलटी दिशा मे देखें। यह अन्तर उस फ़र्क के अनुरूप होता है (चित्रकारों को इसका

पता है) जो विलेम मैरिस[1] द्वारा प्रकाश-पृष्ठभूमि को सम्मुख रख कर चित्रित किये गये भू-दृश्य के हरे रंग, तथा मावे[2] की कृतियों के हरे रग मे (जो प्रकाश की ओर पीठ करके चित्रण करना पसन्द करता था) मौजूद पाया जाता है।

सूर्य द्वारा प्रकाशित होने मे तथा नीले आकाश द्वारा प्रकाशित होने मे अन्तर यह है कि सूर्य का प्रकाश अधिक तेज़ होता है, किन्तु इसका स्थानीय परावर्त्तन अधिक मात्रा मे होता है, इस कारण पत्ती पर रोशनी के धब्बे-से प्रतीत होते हैं। यदि पत्ती पर सूर्य की किरणो का परावर्त्तन बहुत कुछ नियमानुकूल परावर्त्तन-कोण पर होता है, तो पत्ती का रग हलका भूरा या श्वेत के निकट पहुँचता है। सूर्य जब क्षितिज के निकट होता है ताकि भू-दृश्य पर गहरे लाल रग का रोशनी छा जाय, तब वृक्षों के झुरमुट अपने हरे रग की ताज़गी खो देते हैं, और ये मुरझाये-से दीखते हैं; क्योकि अब उनपर पड़ने वाले प्रकाश मे मुश्किल से ही हरी रोशनी का अंश मौजूद रह पाता है जिसे पत्तियाँ परिक्षेपित करके वापस फेकती।

दोनों ओर एक ही किस्म की रोशनी पड़ने पर भी पत्तियो की ऊपरी तथा नीचे की सतह के रग मे फर्क मौजूद होता है। ऊपरी सतह चिकनी होती है अतः इससे परावर्त्तन अच्छा होता है और इसलिए यह अधिक धब्बेदार दीखती है। नीचे वाली सतह फीके रग की और कम चमकदार होती है और इसमे रोमछिद्र अधिक होते हैं; कोष दूर-दूर स्थित होते हैं तथा बीच की जगहों मे हवा बन्द होती है जो प्रकाश को पत्ती के अन्दर प्रविष्ट होने के पहले ही परावर्त्तित कर देती है (§ २२४)। आम तौर पर ऊपर की सतह के रुख ही प्रकाश पत्ती पर गिरता है। इस बात का प्रेक्षण कीजिए कि पत्ती को १८०° पर उलट देने पर इसका रग किस प्रकार बदल जाता है यद्यपि प्रकाश की व्यवस्था-आदि वैसी ही बनी रहती है! जब कभी हवा का वेग कुछ तेज होता है तो प्रकाश के रुख सभी वृक्ष धब्बेदार-से दीखते हैं और समष्टि रूप से उनका रग हलका पड़ जाता है; पत्तियों का रुख हर दिशा मे बदलता रहता है, अतः जितनी बार उनकी ऊपरी सतह दिखलाई देती है करीब-करीब उतनी ही बार नीचे वाली सतह भी।

नयी पत्तियाँ पुरानी पत्तियों की तुलना मे अधिक ताज़ी तथा अपेक्षाकृत अधिक खुलते रग की दीखती हैं; गर्मी के दिनों मे यह अन्तर हलका पड़ जाता है।

वृक्ष की चोटी पर बाहर की ओर की पत्तियाँ अन्दर की पत्तियों से भिन्न होती हैं, ये न केवल आकार, मोटाई तथा रोमाच्छादितता में भिन्न होती हैं, बल्कि रंग में भी।

1. Willem Maris 2. Mauve

वृक्ष की जड़ के निकट की कोपलों तथा तने पर फूटने वाली कोंपलों में सामान्यतः बहुत ही हलका अन्तर होता है।

अनेक पौदों की पत्तियाँ धूप या हवा के प्रभाव से चमकती हैं मानों उनपर वार्निश की गयी हो (जैसे पाश्चात्यविषा[1] का पौदा)। इसका कारण है बाह्य त्वचा के कोषों का फूल जाना, अतः पत्ती की सतह मे इतना तनाव आ जाता है कि यह पूर्णतः स्निग्ध हो जाती है।

अन्त मे, **पृष्ठभूमि** महत्त्वपूर्ण योग देती है! वृक्ष के नीचे खड़े होकर इसकी चोटी का निरीक्षण कीजिए। ये ही पत्तियाँ जो अन्य वृक्षो से निर्मित पृष्ठ भूमि पर चटकीले हरे रग की दीखती थीं, आकाश की पृष्ठभूमि के सम्मुख देखे जाने पर तुरन्त काली 'सिल्युएत' मे बदल जाती हैं। यह प्रभाव पत्ती की दीप्ति, तथा पृष्ठभूमि के आकाश की दीप्ति के पारस्परिक अनुपात पर निर्भर करता है। अतः पत्ती पर यदि सब ओर से रोशनी पड़ रही हो तो यह प्रभाव हलका होता है, [illegible] जब कि पत्ती पर धूप पड़ रही हो (चित्र १५९, b) और प्रभाव अधिकतम उस वक्त होता है जब पत्ती पर आकाश के एक परिमित भाग से रोशनी पहुँचती है, जैसा कि अक्सर अन्य वृक्षों से घिरे होने पर होता है (चित्र १५९, c) या सान्ध्य बेला मे, जबकि केवल एक पार्श्व से ही पत्ती पर प्रकाश गिरता है। इस दशा मे सामान्य हरे तथा सिल्युएत (छाया आकृति) के काले रग मे अन्तर इतना अधिक होता है कि जल्दी विश्वास नहीं होता कि यह केवल प्रकाशीय भ्रम का कौतुक है! तथापि यह विपर्यास घटना के अतिरिक्त और कुछ नहीं है; चमकीले आकाश की द्युति पृथ्वी की चीजों के मुकाबले में अत्यन्त अधिक होती है।

२२० (क). हरी पत्तियों के रंग पर प्रकाश का प्रत्यक्ष प्रभाव

अब तक जिन प्रभावों का वर्णन किया गया है वे पूर्णतया प्रकाशीय हैं। किन्तु प्रकाश हरे पौदों पर अपना सीधा प्रभाव भी डालता है जिसके कारण इनके रंग चन्द मिनटों मे बदल जाते हैं।

साये मे पत्तियो के क्लोरीफिल[2] की कणिकाएँ अपनी स्थिति बदल लेती हैं और कोपो के ऊपर के और नीचे के पार्श्व पर वे पहुँच जाती हैं, अतः पत्तियों का हरा रग एक नवीन आभा धारण कर लेता है। किन्तु धूप मे साइटोप्लाज्म[3] द्वारा ये कणिकाएँ कोष की बगल वाली दीवारों पर पहुँच जाती हैं; अब पत्तियों का रंग कुछ-कुछ पीला-

1. Monkshood 2. Chlorophyll 3. Cytoplasm

पन धारण कर लेता है। उदाहरण के लिए, रग का यह परिवत्तन कारण्ड घास के लिए बहुत ही स्पष्ट होता है।

यह भी देखा जा सकता है कि धूप और हवा के प्रभाव से अनेक पौदे स्निग्ध बन जाते हैं तथा वे इस प्रकार चमकने लग जाते हैं मानों उन पर वार्निश की गयी हो (जैसे एकोनाइट[1])। ऐसा बाह्य त्वचा के कोषो के कारण होता है जो फूल जाती है; और तब पत्तों की सतह मे तनाव आ जाता है, अतः वह चिकनी दीखती है, तथा यह अब परिक्षेपण कम करती है और परावर्त्तन अधिक अच्छी तरह।

२२१. भू-दृश्य के पेड़-पौदे[2]

१. **पृथक्-पृथक् वृक्ष**—भू-दृश्य के अवयवों में व्यवहारतः केवल वृक्ष ही ऐसे होते हैं जिनपर बगल से प्रकाश पड़ता है, और इस कारण वे सूर्य से आलोकित पार्श्व तथा अप्रकाशित पार्श्व के विपर्यास का अलौकिक सौन्दर्य प्रदर्शित करते है। इसी कारण ये अपने ठोसपन की अनुभूति कराते हैं और 'बारम्बार यह प्रदर्शित करते है कि त्रिविमितीय देश[3] एक दृश्यिष्टगोचर हो सकने वाली वास्तविकता है'। वृक्ष की चोटी के वर्त्तुलाकार[4] होने से यह विपर्यास कुछ हलका पड़ जाता है। किन्तु रग-विभिन्नता के कारण यह पुनः तीव्र हो जाता है।

प्रकाश के रुख देखने पर दूरस्थ पृष्ठभूमि पर वृक्ष काले रग के उभरते हैं, और पृष्ठभूमि के फासले, उसकी सुदूरता की तीव्र अनुभूति कराते हैं; इस अनुभूति के उत्पन्न करने मे जितना योग पिण्डदर्शन-प्रभाव[5] का है उतना ही रग के शेड-अन्तर का भी है। यही कारण है कि पिण्डदर्शन की तस्वीरो, तथा भू-दृश्य अकित किये गये चित्रों की अग्रभूमि मे, बहुधा वृक्ष प्रदर्शित किया जाता है। इस प्रभाव की कुछ अशो मे उस भू-दृश्य से तुलना कर सकते हैं जिसे एक खुली खिड़की मे से या मेहराब की छत के नीचे से हम देखते हैं। वृक्षों के दर्मियान से गुजरने वाली सड़क से देखने पर नगर की इमारतें अधिक बड़ी और वैभवपूर्ण प्रतीत होती हैं।

पृष्ठभूमि के साथ सर्वाधिक प्रभावकारी विपर्यास उस वक्त प्रदर्शित होता है जब वृक्ष सन्ध्याकालीन आकाश के नारङ्गी वर्ण की द्युति वाली पृष्ठभूमि पर रेखाङ्कित होता है। अकेले स्थित रेतीले टीले पर खड़े हपुषा[6] के अजीब तरह से विकृत वृक्ष की

1. Aconite 2. See Vaughan Cornish, Geogr. Journ. 67. 506, 1926 for the first part of this section 3. Space 4. Round
5. Stereoscopic effect 6. Jumper

सिल्युएत (छाया-आकृति) या घनी नुकीली पत्तियों से भरपूर शानदार सरो की छाया-आकृति काली होती है तथा इसकी रूपरेखा अत्यन्त स्पष्ट उभरती है। अन्य वृक्ष अधिक खुले होते ह; भोजपत्र का वृक्ष सबसे अधिक खुला होता है। अपनी सुन्दर त्वचा की बदौलत यह, विशेषतया प्रकाश के रुख देखे जाने पर, तरह-तरह के रग प्रदर्शित करता है जो आकाश के रंग के साथ मनमोहक विपर्यास उत्पन्न करते ह।

'फरवरी के अन्त में किसी धूप वाली सुबह को मैं तुम्हें हलके नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर भोजपत्र की टहनियों का रग दिखलाऊँगा। इनकी तमाम बारीक प्रशाखाएँ नील-लोहित ज्योति से दमकती जान पड़ती हैं, जबकि इस हलकी चमक के उस पार से आकाश अलौकिक मृदुतापूर्वक आप की ओर झाँकता है। तनिक रुकिए, ध्यानपूर्वक प्रेक्षण कीजिए और इस घटना को समझने के पूर्व यहाँ से जाइए नहीं। इस दृश्य से इतना अधिक आनन्द प्राप्त होता है कि इस अलौकिक प्रकाश के पुनः उत्पन्न होने की घटना के अवलोकन के लिए सब्र के साथ आप अगले जाड़े तक प्रतीक्षा कर सकते हैं'— डुहामेल, ला **पोज़ेशियाँ-दू-मान्दे**[1] (पृष्ठ १२६)।

२. **वन**—निकट के जगल की सिल्युएत (छाया आकृति), प्रकाश के रुख़ देखने पर अवश्य अत्यन्त अव्यवस्थित जान पड़ती है; किन्तु वन स्वय इतना अधिक पारदर्शी होता है और इसके प्रकाशीय प्रभाव इतने विभिन्न होते हैं कि यह घनता और ठोसपने की अनुभूति नहीं दे पाता। इसके एकाकार होने का प्रभाव ज्यादा फासले पर अधिक स्पष्ट होता है, जबकि वृक्षों की चोटियाँ, पीछे के गहरे नीले रंग की पर्वतीय पृष्ठभूमि पर सुनहले और हरे रंग की चमकती हैं या जब सूर्य के प्रकाश से आलोकित पत्तेदार वृक्षों के समूह के झुरमुट, ऊँचे, अदीप्तिमान् सरो के वृक्षों के सम्मुख स्पष्ट उभरते हैं। मैदानी क्षेत्र में स्थित दूरस्थ वन की तुलना वास्तव मे पहाड़ियों की श्रेणी से की जा सकती है—इसका शेड कम-से-कम उतना ही गहरा होता है, इसका रंग वायुमण्डल में होने वाले परिक्षेपण के कारण, लगभग ठीक उतना ही मनोहर धुन्धमय नीला होता है; तथा यह क्रमागत पंक्तियों में अवस्थित दिखलाई पड़ता है और आकाशीय अनुदर्शन[2] के कारण इनमे से प्रत्येक पंक्ति अलग-अलग स्पष्ट देखी जा सकती है (§९१)।

वन के भीतर का दृश्य अपने ढंग का अद्वितीय होता है—न तो कोई क्षितिज दीखता है, और न सीमारेखाएँ। वसन्त ऋतु मे, सिर के ऊपर, हर तरफ़ हरी-हरी नयी पत्तियाँ दिखलाई पड़ती हैं जो उनमें से गुजरने वाले पीत-हरे प्रकाश से चमकती

1. Duhamel, La Possession du Monde 2. Aerial perspective

रहती है। ग्रीष्म ऋतु में, श्वेत आकाश की थका देने वाली चकाचौध से (जिसकी ओर देखना इतना कष्टदायक होता है) बचने के लिए हमारी आँखों को यहाँ आराम मिल सकता है—यहाँ एक बार फिर आजादी से हर दिशा मे हम दृष्टि फिरा सकते है।

वन मे सबसे अधिक प्रकाश दोपहर के समय पहुँचता है जब सूर्य ऐसी ऊँचाई पर चमकता है कि इसकी किरणे वृक्षों की चोटियों से होकर भीतर आ सके। प्रकाश और छाया की मात्राएँ हर धरातल मे भिन्न होती है; किसी निश्चित दूरी पर आँख को केन्द्रित करते ही इस रमणीयता का लोप हो जाता है, किन्तु जब इसकी तलाश की बरबस हम कोशिश नहीं करते तो पुनः यह प्रगट हो जाती है, किन्तु स्वभावतः अपने आप यह हमारे परिपार्श्व के प्रभाव के वशीभूत हो जाती है। शरद ऋतु की सुबह को सूर्य रश्मियाँ यत्र-तत्र वृक्ष के तनों पर गिरती है और हलकी धुन्ध वाली हवा मे इन किरणो के पथ का अनुगमन, विशेषतया सूर्य के निकट की दिशा मे देखने पर, किया जा सकता है (§१८३); इस प्रकार आकाशीय अनुदर्शन की माया का हम अत्यन्त निकट का परिचय प्राप्त कर सकते है।

३. **फूल**—हीदर[1] ही लगभग एकमात्र फूल का पौदा है जो भूमि की विस्तृत सतह ढके रहता है। अगस्त मे जब इसके फूलो पर बहार रहती है, तो भूक्षेत्र के नील-लोहित रंग तथा आकाश के गहरे नीले रग का एक अद्भुत् सामञ्जस्य स्थापित हो जाता है, जिसकी कुछ लोग तो प्रशंसा नही करते है, किन्तु अन्य लोगों के लिए प्रकृति के स्वतंत्र प्राङ्गण तथा उसके प्रचुर प्रकाश मे यह असामान्य रूप से अधिक प्रभावोत्पादक सिद्ध होता है। आकाश मे छाये भूरे रग के बादल रगों के सामञ्जस्य को मृदु बनाते है, किन्तु साथ ही साथ प्रकाश और छाया के बीच के विपर्यास को भी कम कर देते है।

फूल आने पर फल वाले वृक्षो की जो इतनी चमक-दमक होती है वह बहुत हद तक इस कारण होती है कि वर्ष के उन दिनो मे पत्तियो के गुच्छों की बाढ़ स्वल्प ही रहती है। श्वेत और हलके शेड के गुलाबी रंग, नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर सर्वाधिक चित्ताकर्षक केवल उस वक्त लगते है जब सूर्य उनपर चमकता है या जब किसी टीले या पहाड़ी पर से उन्हे देखा जाता है ताकि उनके पीछे की पृष्ठभूमि मे घास के मैदान पड़े।

४. **घास के मैदान**—मात्र एक ही रंग का चौरस विस्तृत क्षेत्र, स्निग्धता का तथा खुली, फैली हुई जगह का आभास देता है, तथापि अपने अनेक ब्योरों की कृपा से इसमें

1. Heather

विविधता का पर्याप्त रूप से समावेश हो जाता है जिससे उत्फुल्लता तथा मृदुता का बोध होता है। वरना अन्य कौन-से कारण हो सकते थे जिनकी वजह से रेत के मैदान से ये इतने भिन्न दीखते ? दूर से देखने पर इनका हरा रग नीला-हरा पुट धारण कर लेता है, तथा और भी दूर जाने पर उत्तरोत्तर यह वायुमण्डल के पार दीखने वाले आकाशीय नीले रग के संनिकट पहुँचता जाता है।

२२२. छायाएँ तथा अन्धकारमय धब्बे

अपने इर्द-गिर्द नजर फिराइए और दृश्य क्षेत्र मे, जहाँ-जहाँ अदीप्तिमान् धब्बे मौजूद हैं, वहाँ देखिए।

(क) वनों तथा झाड़ियों मे, वृक्षों के तनों के दर्मियान।

(ख) नगरों मे, दूर से दिखाई पड़ने वाली खुली हुई खिड़की।

ये दोनों ही स्थितियां 'कृष्ण वस्तु'[1] के उत्तम उदाहरण है। भौतिक विज्ञान में 'कृष्ण वस्तु' से अभिप्राय ऐसी 'जगह' से होता है जिसके अन्दर हम केवल एक पतले प्रवेशद्वार मे से देख सकते हैं; प्रकाश-किरणे जो इसके अन्दर प्रविष्ट होती हैं, केवल अनेक बार परावर्त्तन प्राप्त करने के बाद ही बाहर निकल पाती हैं, अतः हर बार के परावर्त्तन के फलस्वरूप ये क्षीण होती जाती हैं। इस प्रकार की कृष्ण वस्तु लगभग हर प्रकार के विकिरण का अवशोषण करती है—घने जगल आपतित प्रकाश का केवल ४ प्रतिशत पुनः उत्सर्जित करते हैं। इसके प्रतिकूल यह स्मरण रखना चाहिए कि जगल का अन्धकार केवल आपेक्षिक होता है; यदि हम उसके निकट जायँ तो हमारी आंख वहाँ की दीप्ति के अनुसार समानुयोजित हो जाती है और तब हम देखते हैं कि इसके अन्दर की हर चीज़ दीप्ति और अन्धकार का प्रदर्शन करती है। इसी प्रकार कमरे के अन्दर का हर ब्योरा भीतर से देखने पर पृथक्-पृथक् पहचाना जा सकता है, जबकि बाहर से खिड़की के रास्ते देखने पर वही कमरा घुप अन्धकारमय दीखता है।

चमकीले आसमान की पृष्ठभूमि के सम्मुख पड़नेवाली क्षीणकाय वस्तुएँ आम तौर पर काली दीखती हैं, किन्तु यह केवल विपर्यास का परिणाम है (§ २२०)।

छाया के रगों की विधिपूर्वक जाँच कीजिए !

'सभी साधारण छायाएँ अवश्य किसी-न-किसी रूप में रंगीन होती हैं, वे काले रग की या सन्निकटतः काले रंग की कभी नहीं होती। स्पष्टतः ये दीप्तिमान् किस्म की

1. Black body

होती है.....यह एक तथ्य है कि छाया के भागों मे भी रंग उसी प्रकार मौजूद होते है जिस प्रकार प्रकाशवाले भागों में ..... ---रस्किन।

जहाँ सूर्य का प्रकाश पड़ता है,वहाँ इसकी पीले वर्ण की पुट वाली तेज़ किरणे आकाश से विकिरित होनेवाले प्रकाश पर हावी हो जाती है, किन्तु साये के अन्दर प्रकाश केवल नीले या भूरे आकाश से ही पहुँच पाता है। अत: छाया, आम तौर पर, अपने इर्द-गिर्द के वातावरण की अपेक्षा अधिक नीलापन लिये रहती है, और यह अन्तर विपर्यास के कारण और भी तीव्र हो उठता है।

'अपनी खिड़की से मै लोगों को समुद्र तट पर टहलते हुए देखता हूँ; रेत स्वयं तो बैंगनी रग की है किन्तु धूप के कारण यह सुनहले रग की दीखती है; उन व्यक्तियों की छायाएँ इतनी अधिक बैंगनी हैं कि जमीन पीली मालूम पड़ती है---देलाक्रवॉ।

२२३. भू-दृश्य की प्रकाशदीप्ति, सूर्य के रुख तथा उसकी उलटी ओर

लगभग सभी भूदृश्यों के रग और सरचना मे महत्त्वपूर्ण अन्तर देखे जा सकते हैं जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि हम इन्हे सूर्य के रुख देख रहे है या सूर्य की उलटी दिशा में। दृश्य का समूचा अनुदर्शन ही बदल जाता है! दृश्य को दोनों दिशाओं मे एक साथ ही देखने के लिए दर्पण को काम मे लाइए (प्लेट XVI)

१. जौ, गेहूँ के नये पौदों के खेत, घास के मैदान, तथा शमीधान्य[1] के खेत, सूर्य की दिशा मे पीत-हरे वर्ण के दीखते हैं, किन्तु उलटी दिशा मे ये निलछौवें रंग के प्रतीत होते हैं; कारण क्या है? किसी एक पत्ती को 'सूक्ष्मदर्शी' दृष्टि से विशेष तौर पर देखिए। इसे तोड लीजिए, फिर इसे सूर्य के रुख पकड़िए, फिर इसे सूर्य की दूसरी ओर रखिए। पहली दशा मे इस पर गिरने वाले प्र[illegible] वह अंश आप देखेगे जो पत्ती मे से गुजर कर इस पार आता है, दूसरी दशा मे इसकी सतह से परावर्त्तित होने वाला प्रकाश आप देखेगे (§ २२०)। कभी-कभी रंग तथा दीप्ति वायु की दिशा द्वारा भी प्रभावित होती है।

२. राई के पके खेत मे तरंगे मुख्यत: राई की बालों के बदलते हुए रूपदर्शन[2] के कारण उत्पन्न होती है। मान लीजिए हवा सूर्य की ओर बह रही है, सूर्य की ओर मुँह करने पर हमे एक तरह से केवल देदीप्यमान् तरगे दिखलाई पड़ती हैं; ये उस वक्त उत्पन्न होती है जब बाले सूर्य की ओर इतनी झुक जाती है कि सूर्य के प्रकाश को ये हमारी आँख की दिशा मे परावर्त्तित कर सके; सूर्य से दूर हटती हुई दिशा मे हम कुछ थोड़ी ही

1. Lupine 2. Aspect

देदीप्यमान् तरंगें, किन्तु बहुत-सी अदीप्तिमान् तरंगें देख पाते हैं। ये अदीप्तिमान् तरंगें उस वक्त उत्पन्न होती हैं जब बालें इस प्रकार झुकती हैं कि वे निकट की बालों पर अपनी छाया डाल सकें।

ये घटनाएँ हवा और दृष्टिरेखा की हर दिशा के साथ तथा सूर्य की ऊँचाई के साथ बदलती रहती हैं।

३. मशीन से घास कट जाने के उपरान्त लॉन को जब ऐसी स्थिति से देखते हैं कि मशीन चलाने की दिशा हमारे सामने की ओर जाती है, तब लान उस दशा के मुकाबले में अधिक हलके रग का प्रतीत होता है, जबकि मशीन चलाने की दिशा हमारी ओर को होती है; पहली दिशा में परावर्त्तित प्रकाश की अधिक मात्रा हम देख पाते हैं (प्लेट XVI देखिए)। कटी हुई ठूँठियों के खेत मे यह विपर्यास अत्यन्त प्रबल होता है; इस दशा मे क्रमागत पक्तियाँ एक के बाद दूसरी बारी-बारी देदीप्यमान तथा अदीप्तिमान् होती हैं क्योंकि फसल काटने वाली मशीन एक पंक्ति पर एक दिशा में चलायी गयी होती है तो दूसरी पंक्ति पर उलटी दिशा मे। यदि आप घूम कर उलटी दिशा में मुँह कर ले तो पंक्तियों का शेड का क्रम भी उलट जायगा। हाल का जुता हुआ खेत चमकता हुआ दिखलाई पड़ता है बशर्त्ते अभी तक गीली बनी हुई उन हलकी लीकों की समकोण दिशा से हम देखे।

४. गड्ढे के पानी पर मौजूद कारण्ड घास[1] के पौदे घास के ठीक विपरीत आचरण करते हैं। सूर्य से दूर जाने वाली दिशा मे ये पीत-हरे रग के दीखते हैं, और सूर्य के रुख फीके भूरे-हरे रग के। 'सूक्ष्मदर्शी' प्रेक्षण से पता चलता है कि द्वितीय दशा मे सतह से होने वाला अनियमित परावर्त्तन विशेष प्रबल होता है। इस पौदे की पत्तियों के आर पार हम नहीं देख सकते।

५. हीदर वाले क्षेत्र, जब हीदर का मौसम समाप्त हो चुका होता है तो, सूर्य की दिशा मे अदीप्तिमान् दीखते हैं। और सूर्य से दूर जाने वाली दिशा मे अधिक देदीप्यमान्, रेशमी झलक युक्त तथा हलके बादामी-भूरे रंग के ये दीखते हैं; प्रगटतः परावर्त्तन के कारण ही ऐसा होता है (प्लेट XVI)।

६. फल वाले वृक्ष जब फूलों से पूरी तरह लदे होते हैं तो वे केवल सूर्य की उलटी दिशा मे ही देखे जाने पर श्वेत दिखलाई पड़ते हैं। सूर्य की रुख देखने पर ये फूल आकाश की पृष्ठभूमि पर काले रंग के उभरते हैं (§ २२०, २२१)।

1. Duckweed

७. इसी प्रकार वृक्षों की शाखाएँ तथा टहनियाँ सूर्य से दूर की दिशा में देखे जाने पर भूरी तथा बादामी रंग की दीखती हैं और सूर्य के रुख ये काले रग की दीखती हैं जिनमे ब्यौरा स्पष्ट नही हो पाता।

८. ईंट जडी हुई सडक सूर्य के रुख बादामी-सुर्ख रंग की दीखती है और सूर्य से दूर की दिशा मे श्वेत-भूरे रंग की।

९. ककड़ वाली सड़क सूर्य के रुख श्वेत-भूरी होती है, सूर्य से दूर की दिशा में बादामी-भूरे रंग की।

१०. समुद्र मे उठने वाला फेन सूर्य से दूर जाने वाली दिशा में विशुद्ध श्वेत दीखता है; किन्तु सूर्य के रुख, किल्लोल करते हुए जल के लाखों प्रतिबिम्बों तथा झिलमिला-हटों के बीच यह अपने आप पास के मुकाबले मे कुछ गहरे ही शेड का दीखता है।

११. ऊँची-नीची सतह वाली सड़क, बर्फ से ढकी हालत मे, सूर्य के रुख, समष्टि रूप से, बगल मे पड़ी स्निग्ध बर्फ के मुकाबले में गहरे शेड की दीखती है; सूर्य से दूर की दिशा मे इसके विपरीत देखने मे आता है।

१२. झील पर उठने वाली तरगे, जब हवा सूर्य की ओर बह रही हो; यदि सूर्य से दूर की दिशा मे देखे तो पानी धूसर नीले रग का प्रतीत होता है जिसमे यत्र-तत्र नीले-काले वर्ण की धारियाँ प्रेक्षण-बिन्दु से विकिरित होती हुई दिखाई पड़ती हैं—ये आकाश के नीले भाग की अनुरूपी होती हैं; इन अनेक तरगों मे से हर एक तरंग पृथक्-पृथक् उभरती है। सूर्य के रुख देखने पर सभी कुछ उल्लासप्रद, चटकीले नीले रग का दीखता है, तरगे केवल फासले पर ही देखी जा सकती हैं और ये अनगिनत संख्या में होती हैं (§ २११)।

१३. इस बात पर ध्यान दीजिए कि जब आप सूर्य की दिशा में देखते हैं तो तमाम वस्तुएँ जिनके साये वाले पार्श्व आप की ओर पडते हैं, गहरे शेड की प्रतीत होती हैं, किन्तु उनके हाशिये मनोरम प्रकाश से चमकते दीखते हैं। रोशनी के रुख पर फोटो लेने का लाभ यह है कि यह खूबसूरती पकड़ मे आ जाती है।

ये तथा अन्य बहुत-से दृष्टान्त प्रेक्षण के लिए विपुल अवसर प्रदान करते हैं। सदैव ही व्याख्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करने मे पहले चीजों का समष्टि रूप में प्रेक्षण कीजिए, फिर उनके पृथक्-पृथक् रूप मे।

२२४. रंग, आर्द्रता से किस प्रकार प्रभावित होते हैं ?

'यह सच है कि सान्ध्यकालीन वायुमण्डल "सभी चीजों पर अन्धकार का आवरण सा डाल देता" है, किन्तु यह भी सच है कि प्रकृति ने, जिसका कभी भी यह इरादा नहीं

था कि मानवनेत्र आह्लाद-अनुभूति से वञ्चित रहें, **अन्धकार** द्वारा होनेवाले कान्ति के ह्रास के लिए प्रचुर मात्रा मे क्षतिपूर्त्ति का आयोजन **आर्द्रता** द्वारा उनकी चमक में वृद्धि करके, किया है। प्रत्येक रंग भीगी दशा में सूखी हालत के मुक़ाबले में दो गुनी चमक प्रदर्शित करता है और जब दूर की चीज़े धुन्ध के कारण अस्पष्ट दीखती हैं, तथा आकाश से चटकीले रंग विलुप्त हो जाते है और पृथ्वी पर से धूप की चमक गायब हो जाती है तब अग्रभूमि तरह-तरह के चित्ताकर्षक रंग धारण कर लेती है, घास और पत्तियों के झुरमुट पुनः अपने पूर्ण हरे रग को प्रदर्शित करते हैं तथा धूप मे झलसी हुई प्रत्येक चट्टान अक़ीक पत्थर की तरह चमकने लगती है।'—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

रंगों की इस सजीवता का समाधान अकेले आर्द्रता से नहीं किया जा सकता। हमें इस बात पर भी विचार करना होगा कि वस्तुओं पर ज्यों ही पानी की पतली परत बनती है, त्यों ही उनकी सतह अधिक स्निग्ध हो जाती है; अब श्वेत प्रकाश का हर दिशा में परिक्षेपण वे नहीं करतीं, और इसलिए उनके निज के ही रंग प्रमुखता प्राप्त कर लेते हैं तथा वे अधिक सपृक्त (संतृप्त) हो जाते हैं।

वर्षा भूमि के रंग को पूर्णतया बदल देती है। सड़क की पत्थर की रोड़ियाँ हमसे जितनी ही अधिक दूरी पर होती है तथा हमारी निगाह जितनी ही अधिक तिरछी पड़ती है, उतना ही अधिक प्रबल परावर्त्तन उनसे होता है। यह आश्चर्य की बात है कि बड़े मान के आपतन कोण के लिए न केवल ऐसफाल्ट की सड़कों पर, बल्कि नाहमवार पत्थर-जड़ी सड़कों पर भी इतना बढ़िया परावर्त्तन होता है! भीगने पर रेत, मिट्टी तथा रोड़ियों की सड़कों का रंग मटमैला तथा गहरा हो जाता है; वर्षा की प्रथम बूंदे कृष्ण वर्ण के धब्बों की शक्ल मे उभरती हैं। ऐसा क्यों है? बालू के कणों के बीच की हर सन्धि मे पानी प्रविष्ट हो जाता है। प्रकाश की किरण, जो अन्यथा सबसे ऊपर वाली परतों से परिक्षेपित हो जाती, अब अधिक दूरी तक भीतर प्रवेश करने के उपरान्त ही पुनः आँख तक वापस पहुँच पाती है; और इस अपेक्षाकृत अधिक लम्बे मार्ग में करीब-करीब यह पूर्णतः अवशोषित हो जाती है। सूखी मिट्टी आपाती प्रकाश का १४% परावर्त्तित करती है, गीली मिट्टी केवल ८ या ९%; सूखी रेत ३७% परावर्त्तित करती है तथा गीली रेत केवल २४% परावर्त्तित करती है।

एसफाल्ट की सड़क पर एकत्र हुआ पानी रंग के मनोहर शेड प्रदर्शित करता है;

(क) इस पानी की सतह नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करती है।

(ख) हाशिया जहाँ पर जमीन अभी गीली ही होती है, काले वर्ण का होता है।

(ग) इर्द-गिर्द का भूरे रंग का वातावरण।

गड्ढों के पानी में 'अल्जीआ' गहरे हरे रंग के रेशेदार पुञ्ज की शक्ल का होता है। पानी से बाहर निकला हुआ भाग रेशों के दर्मियान फँसी हवा के कारण अपेक्षाकृत काफ़ी पीलापन लिये हरे रंग का दीखता है। किन्तु इन्हीं पाण्डुर वर्ण वाले भागो को पानी के अन्दर डुबा कर हिलाइए और उन्हे दबोच दीजिए तो हवा के बबूले उनके अन्दर से निकल पड़ेंगे और साथ ही साथ उनका रंग गहरा हो जायगा।

२२४ (क). वर्षा के उपरान्त भू-दृश्य में चटकीलापन

वर्षा के उपरान्त भू-दृश्य पूर्णतया बदल जाता है, हर जगह पानी की बौछार के प्रभाव परिलक्षित होते हैं। दृश्य की अद्भुत् विलक्षणता न केवल इस कारण उत्पन्न होती है कि छँटते हुए घने बादलों और स्वच्छ चमकीले आकाश के बीच गहरा विपर्यास होता है बल्कि इसलिए भी कि समस्त भू-दृश्य मे चटकीले प्रतिबिम्बन दिखलाई देते हैं।

खास तौर पर भीगी पत्तियाँ प्रकाश की चमक मे विशेष अभिवृद्धि करती हैं; जैसे शलजम की पत्तियाँ, बलूत वृक्ष की चोटी तथा खाई के सहारे लगी झण्डियाँ। किन्तु यह चमक केवल सूर्य की दिशा मे ही देखी जा सकती है सो भी जब प्रेक्षण दिशा आपाती किरणों के साथ अल्पमान का कोण बनाये। सूर्य की दिशा से हटने पर तो केवल यत्र-तत्र ओस की एकाध चमकती हुई बूँद दीख जाती है।

घास पर गिरी पेड़ की पत्तियों द्वारा (जो वर्षा के जल से भीग चुकी होती हैं) प्रकाश-व्यवस्था की इन परिस्थितियों में होने वाले चकाचौंध के प्रतिबिम्बन से हम चकित रह जाते हैं। इस प्रभाव से हम सहज ही समझ सकते हैं कि रेतीले प्रदेशों में हमारे पुरातत्त्ववेत्ता प्रागैतिहासिक युग के साइलेक्स प्रस्तर अस्त्रों की खोज कैसे करते हैं। क्षितिज के निकट स्थित सूर्य की ओर वे चलते हैं और भूमि पर पड़े उन टुकड़ों की तलाश करते हैं जो दूर से अपने चमकीले प्रतिबिम्बन के कारण दीख जाते हैं। इस प्रकार दानेदार रेत से उत्पन्न परिक्षेपण, तथा साइलेक्स प्रस्तर की चिकनी सतह से होने वाले परावर्त्तन, के पारस्परिक अन्तर से वे लाभ उठाते हैं।

२२५. भू-दृश्य में मानव-आकृति

'अपनी खिड़की से मैं एक आदमी को, जिसका शरीर कमर-से ऊपर नंगा है, गैलरी के फर्श पर काम करते हुए देखता हूँ। जब मैं उसकी त्वचा के रंग की तुलना बाहर की दीवार के रंग से करता हूँ तब मैं यह अनुभव करता हूँ कि इस बेजान चीज़ के मुकाबले में मांसल शरीर के झलकते हुए वर्ण विविध रंगों से कितने परिपूर्ण हैं!

यही बात कल प्लास-सेंट-सुल्पीस[1] में भी मैंने देखी, जहाँ एक छोटा लड़का फौआरे की प्रस्तर मूर्त्ति पर चढ़ गया था जिस पर धूप पड़ रही थी। उसका मांसल शरीर निष्प्रभ नारङ्गी वर्ण का था, छाया के हाशिये चमकीले बैंगनी रंग के थे तथा भूमि के रुख के साये के भागों में सुनहले वर्ण के प्रतिबिम्बन दीख रहे थे। बारी-बारी से नारङ्गी तथा बैंगनी रंग प्रबल होते थे या फिर ये एक दूसरे मे मिल जाते। सुनहले रंग मे किञ्चित् हरे वर्ण का पुट मौजूद था। शरीर का यथार्थ वर्ण केवल धूप और खुली हवा में ही देखा जा सकता है। जब कोई व्यक्ति खिड़की से बाहर अपना सिर निकालता है तो हम देखते हैं कि उसके चेहरे का वर्ण-विन्यास, कमरे के अन्दर की तुलना में नितान्त भिन्न होता है। इससे स्पष्ट है कि स्टूडियो के अन्दर कला-साधना कितनी निरर्थक सिद्ध हो सकती है--जहाँ हर कलाकार मिथ्या रंगों के चित्रण का यथाशक्ति प्रयत्न करता है।'

--डेलाक्राअ, **जर्नल**।

सन्ध्या के झुटपुटे में बदली वाले दिन सड़कों पर पुरुषों और स्त्रियों के चेहरों पर छाये सौन्दर्य और मृदुता के भावों का प्रेक्षण कीजिए। --लिनार्दो-दा-विन्ची।

इस उक्ति की बदौलत ही मैंने अनेक बार निष्प्रभ, म्लान तथा भूरे-धूसर दिन के प्रति अपने आक्रोश का शमन किया है।

२२५ (क). सिल्युएत[2] (छाया-आकृति)

इस शब्द का उपयोग उस समय करते हैं जब चमकीली पृष्ठभूमि के सम्मुख अधिक गहरे शेड की अदीप्त वस्तुएँ देखी जाती हैं जो चिपटी आकृति की दिखलाई पड़ती हैं। इस तरह का प्रभाव विभिन्न तरीकों से उत्पन्न हो सकता है --

१. जब वृक्षों और मकानों का अवलोकन सान्ध्य-आलोक के सुनहले प्रकाश की उलटी दिशा की ओर से करते हैं; इस दशा में इन वस्तुओं का जो पार्श्व हमारी ओर रुख करता है वह आकाश में अन्धकार छा जाने के कारण केवल अत्यन्त हलके रूप से ही प्रकाशित हो पाता है। दिन की इस बेला में यह एकांगी प्रकाश-व्यवस्था ही सिल्युएत के निर्माण के लिए निर्णायक तत्त्व है। दिन के अन्य समय भी यह प्रभाव देखा जा सकता है जबकि आकाश मे घने बादल छाये हुए हों और क्षितिज के निकट केवल एक सँकरा-सा प्रदेश खुला हो जो खुशनुमा नारङ्गी वर्ण के प्रकाश से चमक रहा हो (§१७८)।

1. Place St. Sulpice 2. Silhouettes

२. रात के समय जब सड़क पर लगे लैम्पों का प्रकाश सड़क पर पड़ता है तो रोशनी के इस चमकीले टुकड़े और हमारी आँख के दर्मियान यदि कोई व्यक्ति सड़क पर चल रहा हो तब उसका सिल्युएत दिखलाई पड़ता है। या जब सूर्य या चन्द्रमा समुद्र की सतह पर तेज चकाचौध उत्पन्न करने वाली रोशनी फेकता है और इसके सामने से कोई किश्ती गुजरती है तो यह एक प्रबल विपर्यास उत्पन्न करती है।

३. कुहरा या वर्षा जब एक झीना आवरण-सा उपस्थित करती है जिसके कारण प्रकाश-दीप्तियों के तमाम क्षुद्र अन्तर मिट से जाते हैं; इस दशा मे गहरे शेड की बड़े आकार की वस्तुएँ अभी भी पहचानी जा सकती है और उनकी आकृति-रेखाएँ पर्य्याप्त रूप से सुस्पष्ट उभरती हैं। मीनार, मकान तथा वृक्षों के समूह, प्रदीप्त भूरी पृष्ठभूमि के सामने अधिक गहरे भूरे रंग के दीखते हैं।

४. रात में जबकि बड़े आकार की गहरे शेड की वस्तुएँ हल्के प्रकाश की आकृतियां रात्रि-आकाश की पृष्ठभूमि पर विपर्यास की बदौलत देखी जाती हैं।

२२५ (ख). एकांगी तथा सर्वाङ्गी प्रकाश-व्यवस्था

भू-दृश्य की दृष्टि-अनुभूति बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करती है किस प्रकार की प्रकाश-व्यवस्था मे उसका अवलोकन किया जा रहा है। समस्या पर विचार-विमर्श का प्रारम्भ हम पहले उस परमावस्था को लेकर करेगे जब भू-दृश्य पर प्रकाश एक बगल से पड़ रहा हो और तब क्रम से अधिक सामान्य प्रकाश-व्यवस्थाओं पर हम विचार करेगे, और अन्त में उस दशा को लेगे जब कि भू-दृश्य पर पड़ने वाला प्रकाश पूर्णतः विस्तृत हो। हर दशा के लिए हम देखेगे कि भू-दृश्य पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है।

रात्रि में आर्क लैम्प (प्रकाश के करीब-करीब एक आदर्श बिन्दु-स्रोत) की चकाचौंध उत्पन्न करने वाली रोशनी मे जो आसपास के अन्य सभी प्रकाश-स्रोतों पर हावी हो जाती है, छायाएँ अत्यन्त काली तथा तीक्ष्ण बनती है; अतः चेहरे की झुर्रियों को अति संवर्द्धित करके लोगों को ये वृद्ध-सा बना देती हैं।

खुले आकाश के समय धूप मे अब भी छाया तीक्ष्ण तथा काली बनती है, यद्यपि इस दशा में भी नीले आकाश के विसृत प्रकाश के कारण छाया में प्रकाश की कुछ मात्रा पहुँच जाती है। हम देखते हैं कि सूर्य का कुछ भाग जब बादल के पीछे छिप जाता है तो छाया किस प्रकार धुंधली पड़ जाती है, और सूर्य जब पूर्णतया छिप जाता है तब उससे प्रक्षेपित होने वाली कोई छाया तो नहीं बनती, केवल ऐसे क्षेत्र मिलते हैं जिनमें

कुछ अधिक दीप्तिमान् होते हैं, कुछ कम। यह अवस्थान्तर एक अन्य तरीके पर भी उत्पन्न हो सकता है; बन के अन्दर की खुली जगह आकाश के केवल एक परिमित भाग द्वारा प्रकाशित होती है—अतः इससे उत्पन्न होनेवाला प्रभाव इस भाग के बड़े या छोटे होने के अनुसार ही बदलता रहता है।

सूर्य जब ऊँचाई पर स्थित होता है तब भू-दृश्य के निर्माण में छायाएँ कोई विशेष महत्त्वपूर्ण भाग नही लेती, सारा दृश्य सर्वत्र चमकीला होता है जो आँखों को थका देने वाला होता है। केवल सूर्य जब आकाश मे नीचे उतरता है तभी प्रकाश और छाया की सम्पन्न विविधता प्रगट होती है।

देहात के सपाट या स्वल्प मात्रा के चढ़ाव-उतार वाले क्षेत्र में, आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित सूर्य द्वारा प्रक्षेपित छायाएँ जमीन के उभार को तीव्र रूप में संवर्द्धित करके प्रदर्शित करती हैं। तब इसकी किरणे भूमि की सतह को करीब-करीब स्पर्श करती हुई जाती हैं, और आलोक तथा छाया के अत्यन्त विलक्षण प्रभेद उपस्थित करती हैं। इसे एक छोटे पैमाने पर, यद्यपि अतिशयोक्ति के साथ, रेतीले मैदान पर सूर्यास्त के करीब देखा जा सकता है—उस वक्त मैदान का प्रत्येक कंकड़ या हरएक उभार एक लम्बी छाया डालता है; भूमि चन्द्रमा के भू-दृश्य के फोटो सदृश दीख पड़ती है और ऐसा मालूम पड़ता है कि यह कोई मायावी प्रदेश है। दिन के अन्य समयों पर भी इसी तरह का प्रभाव देखा जा सकता है—जैसे उस वक्त जब कि किसी फार्म की सफ़ेदी की गयी दीवार पर उसकी सतह के लगभग समानान्तर किरणे गिरती हैं; हम अतिरंजित रूप में देख सकते हैं कि दीवार की सतह कितनी अधिक खुरदरी है।

अन्त मे हम इस बात का आभास देने का प्रयत्न करेंगे कि कई दिनों की लगातार धूप और नीले आकाश के उपरान्त जब आकाश पर बादलों का एक समरूप आवरण प्रगट होता है तो भूदृश्य पर कितनी सामञ्जस्य और राहत छा जाती है। अब सर्वत्र चमक मन्द पड़ जाती है, दीप्ति के अन्तर अब अपेक्षाकृत कम होते हैं; छायाएँ गायब हो जाती हैं और स्थानीय प्रतिबिम्बन अब नहीं दिखाई पड़ते। आँखे आजादी के साथ हर दिशा में देख सकती हैं—चकाचौध से आँखों के चौधिया जाने का खतरा नहीं रहता।

सभी दिशाओं से आने वाली प्रकाश-व्यवस्था की एक चरम अवस्था निम्नलिखित विवरण में व्यक्त की गयी है—

"हिमाच्छादित भूमिखण्ड सान्ध्य प्रकाश मे पूर्णरूप से इतना अधिक समरूप दीखता है कि यह देख पाना नितान्त असम्भव होता है कि सामने की हलके ढाल वाली

पहाड़ी का आरम्भ कहाँ से होता है या कहाँ पर वह खत्म होती है। केवल हमारी संतुलन-अनुभूति ही हमे इस बात का आभास कराती है, सो भी इतने अचानक तरीके से, कि आश्चर्यचकित होकर हम उस वक्त एक दूसरे का मुँह ताकने लग जाते है जब कि हमें एक अजीब-सी अनुभूति यह होती है कि पूर्णतः चिपटी भूमि पर हम नीचे ढाल की ओर चल रहे हैं।"

इस तरह के उभार-रहित एकसम हिमाच्छादित भू-दृश्य की तुलना, धूप मे दीखने वाले स्काइ की लीकों[1] की निलछौवे रंग की तीक्ष्ण छाया से कीजिए ! यूनानी इमारतों के स्तम्भों की तुलना, एकांगी प्रकाश-व्यवस्था मे, तथा सभी दिशाओं से आने वाली प्रकाश-व्यवस्था मे कीजिए; ध्यान दीजिए किस प्रकार तरङ्गित जल की सतह की जगमगाहट उस वक्त गायब हो जाती है जब आकाश पर बादल छा जाते है ! हर बार पुनः आप भली प्रकार महसूस करेंगे कि भू-दृश्य के प्रदीप्ति-वितरण को निर्धारित करने मे धूप और छाया का महत्त्व कितना अधिक है।

1. Ski traces

अध्याय १३

स्वतः प्रकाशित पौदे, जीव तथा पत्थर

२२६. जुगनू

'बी. से कहना कि मैंने आल्प्स तथा अपिनाइन्स पर्वत-श्रेणी को पार कर लिया है, और बफ़्फ़ॉन द्वारा आयोजित संग्रहालय "ज़ार्दें-दे-प्लान्ते" का मैंने अवलोकन किया, चित्रकला और मूर्त्तिकला की सर्वश्रेष्ठ कृतियों के नगर लूव्र को मैंने देखा, लक्सेमबर्ग में रुबेन्स की कृतियाँ देखीं तथा मैंने जुगनू देखा !!!' फ़ैरेडे द्वारा अपनी माता को लिखा गया पत्र—**लाइफ़ एण्ड लेटर्स**।

वास्तव में जुगनू 'कीट' जाति का क़त्तई नहीं होता बल्कि यह 'गुबरौड़ा' की जाति का जीव होता है। मादा जुगनू के पंख नहीं होते, ये रेंगती फिरती हैं, नर जुगनू उड़ते हैं। साधारण जुगनू (लाम्पिरिस नाक्टिलूसा[1]) इङ्गलैण्ड के कतिपय दक्षिणी प्रान्तों मे प्रचुरता से पाया जाता है तथा स्काटलैण्ड में टे नदी के दक्षिण में, किन्तु आयर्लैण्ड में नहीं। पीछे वाले उदर के अन्तिम दो खण्डों मे प्रकाशोत्पादक अंग स्थित होता है और इसमें एक विशेष पदार्थ होता है जिसका आक्सीकरण होने पर रासायनिक-दीप्ति से वह स्वतः प्रकाशित हो जाता है। उत्सर्जित होने वाली किरणों का रंग ठीक वही होता है जिसके लिए हमारे नेत्र सर्वाधिक मात्रा में सुग्राही होते हैं और इस प्रकाश में अवरक्त किरणे नहीं होतीं; अतः हम कह सकते हैं कि यह जीव, वास्तव में प्रकाश का एक आदर्श स्रोत है—काश इसकी चमक थोड़ी और तेज़ होती !

नन्हे आकार के इस सुनहले प्रकाश के धब्बे की रमणीयता विलक्षण होती है, और यह करीब-करीब एक तारे की याद दिलाता है। क्यों नहीं, उदाहरण स्वरूप, इसकी तुलना अभिजित्[2] नक्षत्र से करें जो कि आकाश में अभी चमक रहा है? तुलना करना आसान नहीं होगा, किन्तु कुछ निकट आकर फिर पीछे हट कर खड़े होने पर मैं पाता हूँ कि करीब १३ मीटर की दूरी पर जुगनू उतना ही चमकीला प्रतीत होता है जितना

1. Lampyris noctiluca 2. Vega

अभिजित् तारा। यह हम जानते है कि इस तारे से हमे करीब-करीब उतना ही प्रकाश मिलता है जितना १.४ केन्डल शक्ति के प्रकाशस्रोत से जो १००० मीटर के फासले पर रखा गया हो। अतः जुगनू की प्रदीप्ति तीव्रता i ज्ञात कर सकते है।

$$\frac{i}{१३^२} = \frac{१.४}{१०००.\ १०००}, \text{ अतः } i = ०.०००२ \text{ केन्डल शक्ति।}$$

२२७. समुद्र की स्फुरदीप्ति[1]

समुद्र की स्फुरदीप्ति, हमारे देश (हालैण्ड), के निकट के भागों में मुख्यतः लाखों सूक्ष्म आकार के समुद्री जीवो (नाक्टिलूसा मिलियरिस[2] की जाति के) द्वारा उत्पन्न होती है। ये फ्लैगेलाते[3] वर्ग के प्रोटोजोआ होते है जिनका आकार ०.२ मिलीमीटर के लगभग होता है, अर्थात् बस इतने बड़े होते है [illegible] पृथक् बिन्दुओं की शक्ल के देखे जा सकते है। ये केवल तभी प्रकाश उत्पन्न करते है जब पानी मे आक्सीजन घुली हो जैसे पानी के मथे जाने पर या लहरो के उद्वेलन के कारण। इसकी वजह से इनके शरीर मे मौजूद एक विशेष पदार्थ का आक्सीकरण हो जाता है किन्तु इसका ताप कुछ खास बढ़ने नहीं पाता; न ही इस प्रकाश की संरचना उस प्रकाश के मानिन्द होती है जो ताप के कारण चमकने वाली वस्तु से प्राप्त होता है। यह तापजनित विकिरण की क्रिया नहीं है, बल्कि यह रासायनिक दीप्ति की क्रिया है।[4] इस प्रकाश में न तो अति-बैंगनी किरणे होती है और न अवरक्त किरणे, केवल वे ही वर्ण इसमे मौजूद होते है जो हमारी आँख मे प्रकाश की प्रबल अनुभूति उत्पन्न करते है, जैसे खास तौर पर पीले तथा हरे वर्ण।

यदि समुद्र के पानी मे, जहां स्फुरदीप्ति उत्पन्न करने वाले जीव अधिक संख्या में मौजूद हों, आप अपनी उँगली डुबाएँ तो आप को एक हलकी चुनचुनाहट-सी लगेगी। इस प्रकार दिन मे ही आप पूर्वानुमान लगा सकते है कि रात मे वहां के समुद्र मे सुदर स्फुरदीप्ति दिखाई पड़ेगी या नही।

समुद्र की स्फुरदीप्ति, गर्मी के मौसम मे, अक्सर तपिश वाले दिन की गरज-तड़प-वाली सन्ध्या को, विशेष स्पष्ट देखी जा सकती है। बग़ल की सड़क पर लगे लैम्प या होटलों की बत्तियों के कारण सदैव ही इस बात का सदेह उत्पन्न होने लगता है कि समुद्र

1. Phosphorescence 2. Noctiluca miliaris 3. Flagellates

४. सच पूछा जाय तो 'स्फुरदीप्ति' का अर्थ नितान्त भिन्न होता है और समुद्र की दीप्ति के सम्बन्ध में इसका कभी भी उपयोग नही किया जाना चाहिए।

में दीखने वाला प्रकाश वास्तव में स्फुरदीप्ति ही है या कि लहरों के शृंग पर बननेवाले झाग से प्रतिबिम्बित होने वाला प्रकाश। इस कारण इस घटना का सौन्दर्य पूर्णतया निर्दोष उस वक्त होता है जब रात्रि नितान्त अन्धकारपूर्ण हो। तथापि प्रेक्षण की परिस्थितियाँ यदि इस आदर्श को नहीं पहुँच पाती हों, तो ऐसी हालत में बेहतर यह होगा कि आप अपने जूते-मोजे उतार डालें और पानी मे प्रवेश करके सतह से नीचे अपने हाथ से जल-राशि को हिला-डुला दें।

यदि स्फुरदीप्ति स्पष्ट दिखलाई नहीं पड़ती तो भी पानी को हिलाते समय आपको इक्की-दुक्की चिनगारी यत्र-तत्र दीख जायगी जो बस एक लमहे के लिए रोशनी देती है और फिर गुल हो जाती है। एक बाल्टी को समुद्र के पानी से भर दीजिए और उसे पूर्ण अन्धकारवाली जगह में रखिए। कम अनुकूल परिस्थितियों वाले दिन भी, आपको स्फुरदीप्ति का आभास मिल सकेगा, यदि इस पानी को आप किसी छिछले बरतन में उँडेले या जब अल्कोहल, फार्मोल, या कोई अम्ल पानी मे उँडेलकर आप इन सूक्ष्मकाय जीवों को उत्तेजित कर दें। इस स्फुरदीप्ति वाले पानी को गिलास में उँडेलिए, ये नन्हें जीव सतह पर इकट्ठे हो जाते हैं। गिलास को हलके ठकठकाएँ; यान्त्रिक कम्पन के कारण ये जीव प्रकाश उत्सर्जित करने लगेंगे और यदि इस क्रिया को आप बार-बार दुहराएँ तो प्रकाश का उत्सर्जन शनैः-शनैः क्षीण पड़ता जायगा।

कुछ अवसरों पर, समुद्र-जल मे जब स्फुरदीप्ति उत्पन्न होती है तो उसमें पृथक्-पृथक् चिनगारियाँ नहीं देखी जा सकती हैं। इस घटना का कारण बैक्टीरिया (Micrococcus Phosphoreus) की उपस्थिति है।

समुद्र की स्फुरदीप्ति के लिए एक मापक्रम तैयार कीजिए!

सर्दी के दिनों की शाम को प्रयोग कीजिए जबकि एक तरह से निश्चित होता है कि स्फुरदीप्ति मौजूद न होगी; और झाग फेकती हुई तरङ्गों का निरीक्षण कीजिए; अनुकूल परिस्थितियों की शाम को आप अन्तर देख पायेंगे।

यदि आप समुद्र-यात्रा मे हों (विशेषतया उष्णकटिबधीय प्रदेशों में) तो अँधेरी रात को आप बाहर निकल कर जहाज के अग्रभाग में या पृष्ठभाग मे खड़े हो जायँ ताकि जहाज की रोशनी आड़ मे पड़े। आप प्रकाश-चिनगारियों का अनवरत क्रम देखेंगे जो तेज़ी से पीछे को भागती नजर आयेंगी; ये स्वतः प्रकाश उत्पन्न करनेवाले तरह-तरह के समुद्री जीवों की वजह से पैदा होती हैं।

हिन्द महासागर में तथा अन्य दक्षिणी समुद्रों में कभी-कभी समूचा समुद्र प्रकाश से जगमगाता हुआ दीखता है, और इसकी सतह पर बृहत्काय आलोक-धारियों का एक

ढाँचा, पहिये की तीलियों की तरह घूमता हुआ जान पड़ता है—ये वायुजनित तरङ्गें तथा जहाज़ के अग्रभाग से उत्पन्न हुई तरङ्गें हैं जो पानी पर गुजरने पर उसे विक्षुब्ध बना देती हैं और इस कारण इसमें स्फुरदीप्ति पैदा हो जाती है।

२२८. दीप्तिमान् लकड़ी; दीप्ति-युक्त पत्तियाँ

कभी-कभी ग्रीष्म की उमस वाली रात्रि में, नम जङ्गल के अन्दर हम देख सकते हैं कि सड़न खाती हुई लकड़ी किस प्रकार हलकी रोशनी पैदा करती है। यह रोशनी लकड़ी में हर तरफ़ प्रविष्ट हुए मधु-फफूँद[1] के रेशे से उत्पन्न होती है।

वसन्त या जाड़े में पेड़ का ऐसा तना ढूँढ़िए जिसकी छाल पर बिखरे हुए मटमैले रेशे दीख रहे हों और जो तने पर से आसानी से अलग किये जा सकें। ऐसे ही तने के कुछ टुकड़े गीली सेवार में लपेटकर घर ले आइए और अँधेरे कमरे में उन्हे रख कर काँच के जार से ढक दीजिए। कुछ ही दिनों मे लकड़ी पर लगी फफूँद के रेशे रोशनी देने लग जायँगे। किञ्चित् अवसरों पर सड़न खानेवाली शाखें भी प्रकाश उत्सर्जित करती हैं; ऐसा बैक्टीरिया के कारण होता है।

'बीच' तथा बलूत की सूखी पत्तियों के बड़े ढेर जिनमें पत्तियाँ करीब-करीब आधी सड़ी हालत मे होती हैं, सड़न की एक खास अवस्था में स्पष्ट रूप से प्रकाश उत्पन्न करते हैं। करीब ४ इंच से लेकर १२ इंच तक मोटाई का ढेर ढूँढ़िए; बिलकुल ऊपर पड़ी हुई इक्की-दुक्की पत्तियाँ मत लीजिए, बल्कि अन्दर एक दूसरी से सटी हालत में पड़ी हुई पत्तियों को उठाइए जिन पर पीत-श्वेत वर्ण के धब्बे पड़े होते हैं, और ऐसी ही करीब एक मुट्ठी पत्तियों को अन्धेरे कमरे में ले जाइए। इनकी दीप्ति की उत्पत्ति ऐसी जाति की फफूँद से होती है जिसका अभी तक ठीक-ठीक पता नहीं लगाया जा सका है।

२२९ (क). रात्रि में बिल्ली की आँखें[2]

हम सभी जानते हैं कि कितनी खौफनाक रोशनी बिल्ली की आँखों से निकलती जान पड़ती है। फिर भी यह वास्तव में केवल परावर्त्तित प्रकाश होता है, किन्तु साय-किल के परावर्त्तक से या ओस से ढकी घास के हेलिगेन्शीन से आनेवाले प्रकाश (§१६८) के मानिन्द यह प्रकाश भी केन्द्रित परावर्त्तन से प्राप्त होता है। बिल्ली की आँख के कोर्निया में प्रवेश करनेवाली किरणें आँख के पृष्ठतल पर अत्यन्त स्पष्ट बिम्ब का निर्माण करती हैं और यह बिम्ब अपनी किरणों को उसी कोर्निया के रास्ते परावर्त्तित

1. Honey fungus 2. Nat. 88,377,1912

करता है जो लगभग उसी मार्ग पर वापस आती है जिस मार्ग पर वे प्रविष्ट होते समय गयी थीं। इस घटना का सर्वाधिक स्पष्ट रूप से अवलोकन करने के लिए बिल्ली की आँख, लैम्प तथा प्रेक्षक की आँख एक ही सीधी रेखा मे स्थित होनी चाहिए। ऐसा करने के लिए टार्च को अपनी आँख [illegible], बिल्ली की आँखों की द्युति इस दशा में ९० गज़ के फासले तक भी दिखाई देगी।

कुत्तों की आँखों से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश रक्तिम वर्ण का होता है। भेंड़, खरगोश तथा घोड़ों की आँखें भी दीप्तिमान् होती है, किन्तु मानवनेत्र नहीं।

२२९ (ख). सेवार पर प्रकाश का परावर्तन

खुला आकाश प्रभात की सुहावनी बेला है, जबकि घास सर्वत्र ओस से ढकी हुई है। गहरे साये की ओर की खाई मे नियम[1] जाति की सेवार के पौदे खूब उगे हुए है, इनके छोटे नाज़ुक तने पर नन्हीं पत्तियों की दो कतारे लगी है जो इस बात का आभास देती है मानों उन पर जगमगाते हुए नन्हे तारे बिखरे पड़े है। प्रत्येक तारा सुनहली हरी रोशनी विकिरित करता है जो जगमगाती हुई ओस की बूँदों की रोशनी की तुलना में कहीं अधिक स्थिर है। अधिक बारीकी से प्रेक्षण करने पर हम देखते है कि इन नन्हीं पत्तियों के नीचे सर्वत्र छोटी-छोटी बूंदें लटकी हुई होती है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि सूर्य का प्रकाश पत्तियों के हाशिये में प्रवेश करता है और यहाँ बूँदों मे इसका पूर्ण परावर्त्तन हो जाता है तो एक बार फिर पत्तियों मे से गुजरकर यह बाहर आ जाता है—सुनहले हरे रंग की उत्पत्ति इसी क्रिया के दौरान में होती है।

बवेरिया में फिश्तेल्गबर्ग की खोह कन्दराओं और दरारों में पायी जानेवाली सुविख्यात दीप्तिमान् शैवाल सिटोस्टेगा ओस्मनडासिया[2] और भी अधिक मनोरम प्रकाश-प्रतिबिम्बन का प्रदर्शन करती है। इस शैवाल मे इसके गोलाकार कोष स्वयं ही परावर्त्तक बूँदों का कार्य करते है।

२३०. पौदों के रस की प्रतिदीप्ति

वसन्त में अखरोट के वृक्ष की छाल को काट कर उसके टुकड़े कर लीजिए और उन्हें गिलास के पानी में डाल दीजिए। पौदे का रस पानी के साथ मिल जाता है और तब यह एक अदभुत नीला प्रकाश देने लगता है जिसका अवलोकन अच्छी तरह उस

1. Mnium 2. Schistostega osmundacea

वक्त किया जा सकता है जब एक उत्तल लेन्स की मदद से सूर्य-किरणों का एक शंकु द्रव के भीतर डाल दें। (इसके लिए घड़ीसाज का आतशी शीशा या परिवर्द्धक काँच ले सकते हैं)। इस घटना का कारण यह है कि सूर्य-प्रकाश के पार-बैंगनी किरणों का (हमारे लिए जो अदृश्य होती हैं) तथा बैंगनी रंग की किरणों का यह द्रव अवशोषण कर लेता है और उनके बजाय नीली किरणों को यह उत्सर्जित करता है। इस तरह के रूपान्तरण को 'प्रतिदीप्ति' कहते हैं।

कहा जाता है कि बड़े पैमाने पर उगाये जाने वाले क्षीरी[1] वृक्ष की छाल भी इस घटना को प्रदर्शित करती है।

२३१. स्फुरदीप्ति प्रदर्शित करने वाली बर्फ और तुषार

एक प्राचीन आख्यान के अनुसार बर्फ से ढके मैदान सूर्य द्वारा काफी अरसे तक प्रकाशित होने के बाद, रात को हलका प्रकाश देते हैं। शून्य से कई डिग्री नीचे के तापक्रम के तुषार के लिए भी कहा जाता है कि यदि सूर्य की किरणें इस पर देर तक गिरती रही हैं तो इसे अँधेरे कमरे में ले जाने पर इसमें से प्रकाश निकलता है। कहा जाता है कि ओले, विशेषतया जो तूफान के आरम्भ में गिरते हैं, एक तरह की विद्युद् दीप्ति का प्रदर्शन करते हैं। इस घटना की जाँच कौन करेगा?

२३२. पत्थरों से चिनगारियों का फूटना

कभी-कभी हम देखते हैं कि किस प्रकार सड़क के कंकड़ों पर घोड़े अपने खुर इस जोर से मारते हैं कि चिनगारियाँ फूट निकलती हैं।

सड़क के किनारे पड़े चकमक पत्थर या साधारण पत्थर के रोड़े उठा लीजिए। ये रोड़े बादामी रंग का पुट लिए होते हैं और कोरों पर थोड़े पारदर्शी होते हैं, तथा आम तौर पर कोने उनके हलके घिस गये रहते हैं—इनकी संरचना मणिभ-जैसी नहीं होती। ऐसे दो टुकड़ों को लेकर यथासम्भव अँधेरी जगह में उन्हें आपस में एक दूसरे से टक्कर लगाइए—चिनगारियाँ फूटेंगी और एक अजीब-सी महक भी पैदा होती है। अन्य पत्थरों के साथ भी यही देखा जा सकता है। टक्कर के फलस्वरूप टूटकर अलग होने वाले जर्रों से ये चिनगारियाँ उत्पन्न होती हैं क्योंकि चोट लगने से ये तप्त हो उठते हैं। इस क्रिया में कुछ गैसें भी मुक्त होती हैं जिनसे यह अद्भुत गन्ध निकलती है।

1. Fraxinus Ornus

२३३. दल-दल का मिथ्या प्रकाश (विल-ओ-द-विस्प[1])

जनश्रुति के अनुसार गिर्जाघर के अहाते में विल-ओ-द-विस्प की ज्योतियाँ नन्ही लौ की भाँति नाचती हैं या ये यात्रियों को भ्रम में डाल कर उन्हे दलदल में ले जाकर फँसा देती हैं। किन्तु इनका अस्तित्व, किसी भी अर्थ मे केवल परीलोक का किस्सा नहीं समझा जा सकता। ये सुविख्यात ज्योतिषज्ञ बेसेल तथा अन्य कुशल प्रेक्षकों द्वारा देखी गयी हैं तथा उन्होंने उनका वर्णन किया है; कठिनाई यह है कि यह घटना बहुत ही विभिन्न शक्लें धारण कर सकती है।

विल-ओ-द-विस्प प्रकाश दलदलों मे पाये जाते हैं, या उन स्थानों पर जहाँ से पीट[2] खोद कर जमीन से बाहर निकाली जाती है तथा टीलों के किनारे; यदा-कदा बगीचे की नर्सरी की नम भूमि पर जिसमे हाल में खाद डाली गयी हो, ये देखे जा सकते हैं बशर्ते मिट्टी पर हम अपने पैर पटकें; या कीचड़ वाले गड्ढो और नालियों मे ये दिखलाई पड़ते हैं, जबकि उनके अन्दर के पानी को हम हिलाते हैं। ग्रीष्म ऋतु की रातों को, या शरद की उमसवाली वर्षा की रातों मे, ये जाड़े की अपेक्षा अधिक प्रचुरता से दिखलाई पड़ते हैं। ये नन्ही लौ सरीखे होते हैं जो लगभग $\frac{1}{2}$ इंच से लेकर ५ इंच तक ऊँची होती है और इनकी चौड़ाई २ इंच से अधिक नही होती। कभी-कभी ये एकदम जमीन पर स्थित होते हैं और अन्य अवसरों पर भूमि से करीब ४ इच की ऊचाई पर ये उतराते रहते हैं। यह कहना कि 'वे नाचते रहते हैं' प्रकाश्यतः सच नही है। वस्तुतः होता यह है कि वे अचानक विलुप्त हो जाते हैं तो उसी के निकट एक दूसरी ज्योति प्रगट होती है और कदाचित् इसीसे ऐसा आभास होता है मानो ज्योति मे तीव्र हरकत हो रही है। कभी-कभी बुझने के पहले वे ज्योतियाँ हवा के साथ कई फुट तक बहा ले जायी जाती हैं। कई अन्य ऐसे दृष्टान्त देखे गये हैं जबकि विल-ओ-द-विस्प लगातार घण्टों तक प्रज्वलित रहा है, कभी-कभी सारी रात और दिन तक लौ जलती रही है। जब नयी ज्योति प्रज्वलित होती है तो कभी-कभी एक नन्हें विस्फोट की 'पॉप' सी आवाज़ सुनाई पड़ती है। कहा जाता है कि ज्योति का रंग कभी पीला होता है, कभी लाल या नीला। कई दशाओं मे, जब हम अपना सिर इसकी ज्योति मे रखते हैं तो गर्मी की अनुभूति नहीं होती; हाथ की एक छड़ी जिसमे ताँबे की टेक लगी थी, लौ में १५ मिनट तक रखी गयी तो इसका तापक्रम करीब-करीब पहले-जैसा ही बना रहा; सूखे तिनके तक इस लौ मे आग पकड़ नहीं सके थे। अन्य दशाओं मे इस लौ से कागज तथा रूई की लच्छी

1. Will-O-the-Wisp कच्छ-प्रकाश 2. Peat

को प्रज्वलित किया जा सका था। सामान्यतः इसमें कोई गन्ध नहीं होती, पर यदा-कदा गन्धक की हलकी महक मिलती है।

ये रहस्यमयी ज्वालाएँ किस चीज़ की बनी होती हैं? कोई भी अभी तक उस गैस को एकत्र नहीं कर पाया है जिसके प्रज्वलित होने से यह लौ बनती है। अनुमान लगाया गया है कि यह गैस हाइड्रोजन-फास्फाइड हो सकती है जो हवा मे स्वतः दहन की क्षमता रखती है; प्रगटतः फास्फीन (PH_3) तथा हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) का मिश्रण धुएँ और गंध के बिना ही प्रज्वलित होता है और इस तरह यथार्थ घटना को सन्निकटतः उत्पन्न कर सकता है। ये गैसे सड़ने-गलने वाले पदार्थों के विच्छेदन से उत्पन्न हो सकती हैं। इनकी लौ रासायनिक दीप्ति का नमूना है, और इसका निम्न ताप एक विशिष्ट गुण है जो इस किस्म की प्रक्रिया मे अक्सर मौजूद पाया जाता है।

परिशिष्ट

२३४. प्राकृतिक घटनाओं का फोटो उतारने के लिए कुछ सुझाव

इस पुस्तक में वर्णित प्रत्येक प्रकाशीय घटना के बारे में यह प्रश्न उठता है कि क्या उसका फ़ोटो उतारना सम्भव नहीं हो सकता। आश्चर्य की बात है, कि यद्यपि इस दिशा में बहुत कुछ किया जा सकता है, किन्तु अभी तक इतना थोड़ा ही काम किया गया है! सामान्यतः मामूली किस्म के कैमरे से काम चल सकता है। कैमरे के साथ यदि स्टैण्ड काम में लाना हो तो इस स्टैण्ड में गोली पर घूमनेवाला क़ब्जा[1] फिट करा लेना चाहिए (एकाध रूपये में यह कब्जा मिल सकता है); इस कब्जे की वजह से कैमरे को किसी भी दिशा मे इच्छानुसार झुका सकते हैं। इन्द्रधनुष तथा प्रभामण्डल आदि घटनाओं का फोटो उतारने के लिए चौड़े मुँह के लेन्स वाले कैमरे की आवश्यकता होगी। अस्त होते हुए सूर्य के कोरोना तथा उसकी विकृतियों का फोटो लेने के लिए कैमरे के लेन्स की फोकस-दूरी कम-से-कम १२ इंच अवश्य होनी चाहिए।

इनके लिए सदैव ऐसी प्लेट या फिल्म काम में लाइए जिसकी पीठ पर धुन्ध के निराकरण के निमित्त मसाला[2] पुता हो, और अच्छा होगा कि ये आर्थो या पैन्क्रोमैटिक किस्म की हों। भू-दृश्य के लिए जिसमें तुषार, ओले, फूलों से ढके वृक्ष, बादल या दूरस्थ क्षितिज मौजूद हों, आप आर्थो या पैन्क्रोमैटिक प्लेट और फिल्मों के साथ पीला फिल्टर[3] इस्तेमाल कीजिए। कैमरे के अभिदृश्य लेन्स पर सूर्य की रोशनी न पड़े, इसके लिए लेन्स के सामने एक खोखला बेलनाकार ओट काम में लाइए। अच्छा होगा कि भूदृश्य का फोटो उस वक्त लें जब सूर्य आकाश में अधिक ऊँचाई पर न हो। दृश्य पर सामने, पीछे या ऊपर से प्रकाश गिरने की अवस्थाओं के अन्तर का अध्ययन करने के लिए भी फोटो लीजिए (§२२३)।

कैमरे के लिए प्रकाश-दर्शन की समय-अवधि, वायुयान से फोटो उतारने के लिए $\frac{1}{500}$ सेकण्ड से लेकर चांदनी रात में उतारे जाने वाले फोटो के लिए १ घण्टे तक रखी जा सकती है।

फिल्म को मेटोल–हाइड्रोक्वीनोन[4] डेवेलपर में धोइए।

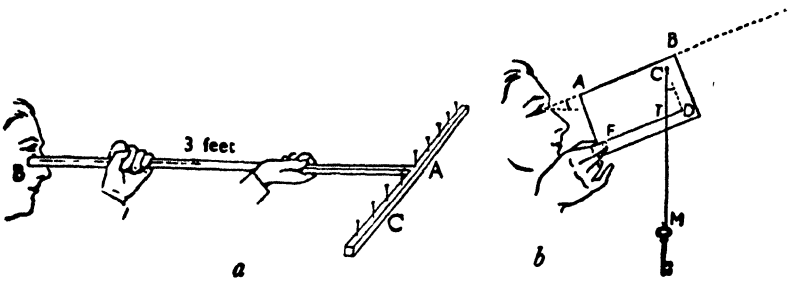
1. Ball-joint 2. Anti-halation backing 3. Filter
4. Metol-hydroquinone

२३५. मैदान में कोणों की नाप कैसे की जाती है

(क) अन्य किसी भी साधन की सहायता के बिना ही तारों की कोणीय ऊँचाई का अन्दाज लगाने का प्रयत्न कीजिए। इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए, पहले ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति निश्चित करने की कोशिश कीजिए और तब घूम जाइए और फिर देखिए कि आप ऊर्ध्वबिन्दु को उसी स्थल पर निश्चित कर पाते हैं या नहीं। इसके उपरान्त ४५° की कोणीय ऊँचाई ज्ञात करने की कोशिश कीजिए, फिर २२.५° की और तब ६७.५° की। आप पायेंगे कि सहज प्रवृत्ति यह होती है कि आप अपना सिर पर्य्याप्त मात्रा में पीछे की ओर नही झुका पाते (§१०९)। एक **कुशल** प्रेक्षक की त्रुटि कभी भी ३° से अधिक नहीं होती।

(ख) लकड़ी की तख्ती पर या कागज की दफ्ती पर पिन A, B तथा C इस ढंग से लगाइए कि जिस कोण की नाप की जा रही है, वह BA तथा BC दृष्टि रेखाओं के दर्मियान बिलकुल ठीक-ठीक पड़े। लकड़ी को सही तरीके पर व्यवस्थित करना होगा; या तो मेज़ पर इसे चौरस स्थिति मे रखें या वृक्ष पर कील से इसे जड़ दें। तब BA और BC रेखाएँ खीच कर अंशाङ्कित चाप पर उस कोण का मान पढ़ लीजिए (चित्र १६०)।

(ग) पतली लकड़ी की डण्डी लीजिए जिसपर बराबर दूरियों पर पिनें या कीलें लगी हों और इसके मध्यबिन्दु पर एक दूसरी डण्डी (लम्बाई ३ फुट) का सिरा जोड़ दीजिए (चित्र १६०, a)। इस तरह प्राप्त ढाँचे को अब ऐसे पकड़िए



चित्र १६०—**कोण आँकने का सरल उपकरण।**

कि सिरा B आप के गाल के स्पर्श में हो तथा कीलें A और C विचाराधीन बिन्दुओं की सीध में पड़कर उन्हें ढक लें। तब निष्पत्ति $\frac{AC}{BA}$ उन दोनों बिन्दुओं

के दर्मियान के कोण का मान रेडियन में प्रगट करेगी (१ रेडियन=५७°)। यदि, उदाहरण के लिए, AC = ३ इंच हो तब $\frac{AC}{BA}$ = ०.०८ रेडियन = ४.७° होगा। कोण का मान यदि २०° से अधिक हो तब गणना की पद्धति थोड़ी क्लिष्ट हो जाती है।

(घ) सामने अपनी भुजा तान दीजिए और अपनी उँगलियाँ, अधिक-से-अधिक जितना हो सके, फैलाइए। तो अँगूठे और कनिष्ठा उँगली के पोरों के दर्मियान का कोण लगभग २०° होगा। या सामने भुजा को तानकर, हाथ मे भुजा के समकोण पतली लकड़ी की डण्डी पकड़िए। चिनाग्राधीन दोनों बिन्दुओं की इस लकड़ी पर आभासी दूरी यदि a से० मी० प्राप्त हो, तब प्रेक्षणाधीन उन बिन्दुओं के दर्मियान का कोण सन्निकटतः a डिग्री होगा। इस विधि को और अधिक यथार्थ बनाने के लिए आँख से डण्डी तक की बिलकुल सही दूरी नापनी चाहिए।

(ङ) क्षितिज के ऊपर कोण नापने का एक सरल उपकरण भी लभ्य है जिससे प्राप्त कोण के मान ०.५° तक यथार्थ बैठते हैं। एक आयताकार दफ्ती का टुकड़ा लीजिए जिस पर बिन्दु C पर एक सूराख़ बना हो। इस बिन्दु से धागा CM लटकाइए जिसके निचले सिरे पर धातु का एक टुकड़ा बँधा हो। यह धागा साहुल रेखा का काम देगा (चित्र १६०, b)। प्रेक्षक, मान लीजिए, किसी वृक्ष की ऊँचाई नापना चाहता है, तो वह दफ्ती को इस तरह पकड़ेगा कि उसकी आँख से वृक्ष की चोटी तक जाने वाली दृष्टिरेखा ठीक दफ्ती के हाशिये AB की सीध मे पड़े; प्रेक्षक दफ्ती को ऊर्ध्व धरातल से तनिक एक ओर झुकायेगा ताकि धागा दफ्ती की सतह से अलग होकर स्वतंत्रतापूर्वक लटके, फिर उसे यह वापस ऊर्ध्व धरातल मे ले जायगा ताकि धागा उसकी सतह को हलके स्पर्श कर ले। दफ्ती पर AB के समकोण पर रेखा CD खीचते हैं और AB के समानान्तर DT खींच लेते हैं। CD की लम्बाई, अच्छा होगा, यदि लगभग ४ इंच रखे। अब कोण DCM बराबर होगा AB तथा क्षैतिज तल के दर्मियान के कोण के, और इसका मान अशाङ्कित चाप की मदद से नापा जा सकता है, या इसकी गणना $\tan \frac{TD}{CD}$ से कर सकते हैं। छोटे मान के कोण के लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{कोण का मान} = \frac{TD \text{ (इंचों मे)}}{४} \text{ रेडियन।}$$ (देखिए §§ १, १२०)

पारिभाषिक शब्दसूची

हिन्दी-अंग्रेजी

अ

अक़ीक–Agate, गोमेद
अखरोट (वृक्ष)–Horse chestnut
अग्रभूमि–Fore-ground
अणु–Molecule
अतिक्रम–Deviation, विचलन
अति-परवलय–Hyperbola
अतिबैंगनी–Ultra violet, पराबैंगनी
अतिरिक्त धनुष–Supernumerary bows
अति संवर्धन–Exaggeration
अत्यधिक शीतलीकृत–Supercooled
अदीप्तियाँ–Dark minima
अधोऽनुमान, न्यूनानुमान–Under estimation
अधोवर्ती सूर्य–Sub-sun
अध्यारोपित–Superimposed
अध्रुवित–Unpolarised
अनन्तदूरी–Infinity
अनियमित–Random
अनीमोमीटर–Anemometer
अनुकल–Integral
अनुकूलतम–Optimum
अनुकूल स्रोत–Coherent sources
अनुपूरक–Complementary
अनुप्रयुक्त–Applied
अनुप्रस्थ काट–Transverse section
अनुरूपी–Corresponding
अनुसूर्य–Sub-sun
अनुस्थापित–Oriented
अन्तरिक्ष-यान–Space-ships
अन्तर्ग्रही–Interplanetary
अन्धकार-रेखा–Line of darkness
अन्धविश्वास–Superstitions
अन्वालोपित–Enveloped
अन्वेषण–Investigation
अपसृत–Diverged
अप्रत्यक्ष–Indirect
अभिजित्–Vega
अभिदृश्य लेन्स–Objective
अभिलम्ब–Normal
अभिलोपित–Obliterated
अमोनिया–Ammonia
अम्ल–Acid
अरुन्धती–Alcor
अरोरा–Aurora

अर्ध गोला–Hemisphere
अलका–Cirrus
अलका-पुञ्ज–Cirro-cumulus
अलका-स्तार–Cirro-stratus
अल्जीआ–Algae
अवकरण–Reduction
अवचेतन–Subconscious
अवतल–Concave
अवधारणा–Concentration
अवमन्दित–Damped
अवयव–Component
अवरक्त–Infra-red
अवशोषण–Absorption
अविच्छिन्न–Cantinuos
अविरत–Continuous
असममित–Assymmetrical
असामान्य रूप से–Abnormally

आ

आंकिक पद्धति से–Statistically
आंशिक ग्रहण–Partial eclipse
आइसोफोटो–Iso-photo
आकाशगगा–Milky way
आक्सीकरण–Oxidation
आक्सीकृत–Oxidised
आख्यान–Legend
आग्नेय चट्टाने–Granite
आणविक–Molecular
आत्मनिष्ठ–Subjective
आदर्श प्रमाप-Norm for comparison
आपतन तल–Plane of incidence
आपतित–Incident
आभामण्डल–Aureole
आभासी–Apparent
आयनीकरण–Ionization
आयनो-स्फियर–Ionosphere
आयाम–Amplitude
आर्कलैम्प–Arc-lamp
आर्थो–Ortho
आर्थोक्रोमैटिक–Orthochromatic
आर्द्रा नक्षत्र–Betelgeuse
आवर्धित–Magnified
आवृत्ति–Frequency
आश्वेत– Whitish
आस्मिक अम्ल–Osmic Acid

इ

इन्द्रधनुष–Rainbow
इलेक्ट्रान–Electron

उ

उच्च पुंज–Alto-cumulus
उच्च स्तर–Alto-status
उत्क्रमण–Inversion
उत्क्रमण बिन्दु–Point of inversion
उत्तर बिम्ब–After-image
उत्तर प्रकाश-ज्योति–After gloki
उत्तरीय प्रकाश–Northern lights
उत्तल–Convex
उत्तेजित–Stimulated
उत्सर्जन–Emission
उद्दीपन–Iridescence
उद्दीप्त–Iridescent

उपकरण–Apparatus
उपसूर्य–Parhelia
उपादान–Factor
उल्काएँ–Meteors
उष्ण कटिबन्ध–Tropics
ऊर्ध्वपातन–Sublimation
ऊर्ध्व बिन्दु–Zenith
ऊर्ध्वाधर–Vertical
ऊर्म्मिल–Undulating

ऋ

ऋतु-अनुसन्धान विज्ञान–Meteorology
ऋतुविज्ञान–Meteorology

ओ

ओज़ोन–Ozone
ओस-धनुष–dew-bow

क

कक्षा–Orbit
कणिकाएँ–Grains
कणिकामय–Granular
कनिष्ठा उँगली–Little finger
कन्या–Virgin
कम्पन–Vibration
कम्पार्टमेण्ट–Compartment
कर्क–Crab
कला-अन्तर–Phase-difference
कलिलीय–Colloidal
कांस्यपीत–Bronze yellow
कान्तिचक्र–Corona, किरीट
कार्बनिक– Organic
कारण्ड घास–Duck weed
काले-भूरे–Ashgrey
किरीट–Corona
कीट–Insect
कुम्भ–Waterman
कुहरा धनुष–Fog-bow
कुहासा–Mist
कृत्रिम सूर्य–Mock sun
कृष्ण वस्तु–Black body
केन्द्रित परावर्तित प्रकाश–Directed, reflected light
कैण्डल शक्ति–Candle power
कोपले–Shoots
कोटर–Socket (of the eye)
कोटि–Order
कोबाल्ट सल्फेट–Cobalt Sulphate
कोर्निया–Cornea
कोशा–Cell
क्यूप्रिक सल्फेट–Cupric Sulphate
क्रमागत–Successive
क्रमिक–Gradual
क्रॉस–Cross
क्रान्तिवलय–Ecliptic
क्रिस्टल–Crystal
क्लोरोफिल–Chlorophyll, पर्णहरित
क्वार्ट्ज–Quartz
क्षतिपूरक–Compensating
क्षीरी–Fraxinus Ornus
क्षैतिज–Horizontal
क्षैतिज दण्ड–Horizontal bar

ग

गर्त–Trough
गाउन–Gown
गुणात्मक–Qualitative
गुबरैला–Beetle
गुरुत्वाकर्षण–Gravitational attraction
गोलीय खण्ड–Spherical segment
गौण इन्द्रधनुष–Secondary rainbow
ग्लेशियर–Glacier, हिमनद
ग्लोब–Globe

च

चकमक पत्थर–Flint
चरण–Stage, क्रम
चाप– Arc
चिकनाई–Grease

छ

छल्ला–Ring, वलय

ज

जल-आकाश–Water-sky
जल-दूरबीन–Water-telescope
जल-प्रपात–Water-falls
जलरेखा–Water-line
जलवर्ण–Water-colour
जार–Jar
जिंक ह्वाइट–Zink white
जिलैटिन–Gelatine
जीरैनियम–Geranium
जीवाणु–Bacteria
जुगनू–Glow-worm
जैतूनी हरा–Olive green
ज्येष्ठा–Antares

झ

झिरी–Slit
झिलमिलाहट–Flickering

ट

टायर–Tyre
टिमटिमाहट–Scintillations

ठ

ठोसपन–Solidity

ड

डायफ्राम–Diaphregm
डेक–Deck
डैन्डीलियन–Dandellions

ढ

ढबैलापन–Turbidity

त

तंतु–Filament
तटस्थ–Neutral
तटस्थता–Objectivity
तड़ित्–Lightning
तड़ित्-अलका–Thunder-cirrus
तरंग-शृंग–Crests of waves
तरंगदैर्घ्य–Wavelength
तरंगाग्र–Wavefront
तरंगिकाएँ–Wavelets
तलीय खिचाव–Surface tension
तापोज्ज्वल–Whitehot
तारा राशि–Constellation

ताल्बो–Talbo
तिनपतिया–Clover
तिर्यक्–Oblique
तीव्रता–Intensity
तुलनायंत्र–Frame of reference
तुला–Scales
तुषार–Snow
तेज-शृग–Prominences (of sun)
तैलीय–Oily

थ

थियरी–Theory

द

दक्षिणावर्त–Clockwise
दानेदार–Granular
दायरा–Oval
दिक्सूचक–Compass
दिगंश–Azimuth
दीप्तिमान्–Luminous
दीप्तिमाप श्रेणी–Order of magnitude of illumination
दीप्तिमापी–Photometer
दीर्घवृत्त–Ellipse
दुहरा सूर्य–Double sun
दूरबीन–Telescope
देश–Space
देहली–Threshold
दृश्यता–Visibility
दृश्यस्थल–Scenery
दृष्टि-दिशा–Visual direction
दृष्टि-निर्बन्धता–Persistence of vision
दृष्टि-बिन्दु–Point of view
दृष्टिभ्रम–Illusion
द्विकोषीय अल्जीआ–Diatoms
द्विनेत्री दूरबीन–Opera Glass
द्विवर्णिक–Dichroism

ध

धनु–Archer
धरती-आलोक–Earth-light
धुन्ध–Mist, haze
धूमकेतु–Comet
ध्रुवक कोण–Polarising angle
ध्रुवण–Polarisation
ध्रुवणदर्शी–Polariscope
ध्रुवित–Polarised
ध्रुवीय–Polar

न

नभोमण्डल–Celestial vault
नर्सरी–Nursery
नाइग्रोमीटर–Nigrometer
नाभिक–Nuclei
निअन–Neon
निकट-दृष्टि–Short sight
निकल–Nicol
निम्नदाब–depression
नियामक अक्ष-Axis of co-ordinates
नियामक धरातलपृष्ठ–Surface of reference
निरपेक्ष–Unprejudiced
निर्देशन-बिन्दु–Reference point

निलछवें–Bluish, नीलाभ
निशिताग्र–Cusp
नील–Indigo
नीललोहित–Purple
नेत्रगोलक–Eyeball
न्यूनानुमान–Underestimate

प

पट्टियाँ–Bands
पथरेखा–Locus, बिन्दुपथ
पथान्तर–Path-difference
परखनली–Test-tube
परमाणु–Atom
परमावस्था–Extreme case
परा-अलका–Ultra cirri
परागाशय–Anthers
परामिति–Parameter
परावर्तन–Reflection
परावर्तन-गुणांक–Coefficient of reflection
परिकल्पना–Assumption
परिक्षेपण–Scattering
परिक्षेपण-क्षमता–Scattering power
परिक्षेपित–Scattered
परिपार्श्व–Surroundings
परिभ्रमणगति–Rotatory motion
परिमितीय–Peripheral
परिवर्ती–Changing
परिवर्धक काँच–Magnifying glass
परिवर्धक लेन्स–Magnifying lens
परिवृत–Circumscribed
परिवृत ऊर्ध्व-बिन्दु चाप–Circum-zenithal arc
परिहार–Avoid
पर्किन्ज प्रभाव–Purkinje Effect
पाजिटिव–Positive
पाण्डुर–Pale
पारदर्शी–Transparent
पार-सामुद्रिक–Ultra-marine
पार्थिव–Terrestrial
पावर-हाउस–Power-house
पाश्चात्य विषा–Monkestood
पिण्ड-दर्शन–Steoroscopic vision
पिण्डदर्शन की घटना–Steoroscopic phenomenon
पीट–Peat
पुञ्ज-जलद–Cumulo-nimbus
पुञ्जमेघ–Cumulus
पुञ्ज-स्तारीय–Cumulo-stratus
पूरक–Complementary
पृष्ठदण्ड–Keel
पृष्ठभूमि–Back-ground
पेशियाँ–Muscles
पैन्क्रोमैटिक–Panchromatic
पोटैसियम क्रोमेट–Potassium chromate
पोर–Tip
पोलकी रत्न–Opal
पोलरायड–Polariod
प्रकाश-गृह–Light-house
प्रकाश-छल्ले–Light-rings

प्रकाश-तीव्रता–Intensity of light
प्रकाशदर्शन–Exposure
प्रकाश-मण्डल–Glory
प्रकाश-स्रोत–Source of light
प्रकाशीय–Optical
प्रक्षेपण–Projection
प्रज्वलन–Combustion
प्रति-चमक–Counter glow
प्रति-ज्योति–Counter glow
प्रति-प्रकाश स्रोतबिन्दु–Anti-light source point
प्रतिदीप्ति–Fluorescence
प्रतिफलित–Resultant
प्रतिरूप–Counter part
प्रति-सान्ध्य प्रकाश-Counter twi-light
प्रति-सूर्य बिन्दु–Anti-solar point
प्रति-सूर्य–Antehelion
प्रत्यक्ष–Direct
प्रत्यावर्तन–Cycle
प्रत्यावर्ती–Alternating
प्रदीप्त चमक–Bright glow
प्रदीप्ति-तीव्रता–Intensity of light
प्रभा-मण्डल–Halo
प्रमाश–Procyon
प्रमुख इन्द्रधनुष–Primary rain-bow
प्रशन नील–Prussian blue
प्राधान्य–Predominance
प्रावण्य, प्रवणता–Gradient
प्रारूप–Pattern
प्रेक्षक–Observer
प्रेक्षणगम्य–Observable
प्रेतछाया–Spectre
प्रिज्म, समपार्श्व–Prism

फ

फलन–Function
फाता मोर्गाना–Fata morgana
फार्बेन लेहर–Farben lehre
फार्मोल–Formol
फास्फीन–Phosphene
फिलामेण्ट, (शिरा), तन्तु–Filament
फिल्टर–Filter
फुहार-उत्पादक–Vaporiser
फोकस दूरी–Focal length
फोटो इलेक्ट्रिक सेल–Photo-electric cell
फ्रेम–Frame
फ्लोर कन्ट्रास्ट–Flor-contrast

ब

बर्फ-निमीलन–Ice-blink
बर्फ-सूची–Ice-needle
बलूत––Oak
बहिर्द्वार–Exhaust port
बाडिस–Bodice
बादल-दर्पण–Cloud-mirror
बादामी–Brown
बाह्य त्वचा का–Epidermal
बिन्दुचित्रण–Pointillism
बिन्दुपथ–Locus
बीच–Beech

बृहत् वृत्त–Great circle
बृहत् श्वान–Great Dog
बृहस्पति–Jupiter
बैक्टीरिया, जीवाणु–Bacteria
बैंगनी–Violet
बोधगम्य–Perceptible
ब्रह्महृदय–Capella
ब्रह्माण्डीय–Cosmic
ब्रेक–Brake

भ

भस्म-सरीखे धूसर–Ash grey
भास स्थायी–Meta-stable
भू-दृश्य–Landscape
भोजपत्र–Birch

म

मंडलक–Disc
मकर–Capricorn
मघा–Regulus
मधु फफूंद–Honey fungus
मनोवैज्ञानिक–Psychological
मरकत मणि–Emerald
मरीचिका–Mirage
मात्रात्मक–Quantitative
मानचित्र–Map
मापश्रेणी–Scales
मायावी–Capricious
मिथुन–Twins
मिथ्याप्रकाश–Will'o-the-wisp
मीन–Fishes
मृगव्याध–Orion
मेष–Ram
मैंगनीज–Manganese
मोती के सीप–Mother of pearl
मोबिल आयल–Mobil oil

य

यथार्थता–Accuracy
α ययाति–Persei α
δ ययाति–Persei δ
युग्म तारे–Double stars

र

रंजक–Paint
रजत-श्वेत–Silver-white
रश्मिस्पर्शी वक्र–Caustic
β रथी–Aurigo β
राई–Rye
राशिचक्र–Zodiac
राशिचक्रीय प्रकाश–Zodiacal light
रासायनिक प्रदीप्ति–Chemi luminiscence
रिम–Rim
रीफ्लेक्स–Reflex
रूपदर्शन–Aspect
रूपान्तरण–Transformation
रेखाछादन–Hatching
रेटिना–Retina
रेडियन–Redian
रेलिंग–Railing
रैखिक गति–Translatory motion
रोमछिद्र–Pores
रोहिणी–Aldebaran

ल

लघु शीर्ष–Lesser minima
लघु श्वान–Little Dog
लचीला–Elastic
ललछवें–Redish
लाइकोपोडियम–Lycopodium
लाक्षणिक–Characteristic
लान–Lawn
लिनार्दो-दा-विन्ची–Leonardo-da-Vinci
लुब्धक–Sirius
लेन्स–Lens
लोकोक्ति–Proverb

व

वक्रसमूह–Family of curves
वरीयता की स्थितियाँ–Poistions of preference
वर्ण–Colour
वर्तन–Refraction
वर्तन कोर–Refracting edge
वर्तुलाकार–Round
वसिष्ठ–Mizare
वस्तुनिष्ठ–Objective
वाटिका ग्लोब–Garden globe
वामावर्त–Anti-clockwise
वायव्य–Ethereal
वायुजनित अनुदर्शन–Aerial Perspective
वायुज्योति–Air-glow
वायुवाष्प-मानलेखी–Psychrometer
विकल्पतः–Alternately
विकिरण–Radiation
विक्षेप–Deflection
विचलन–deviation
विच्छेदन–Decomposition
विनिमय–Exchange
विपर्यास–Contrast
विरल–Rare
विराम–Rest
विलयन–Solution
विलोम–Reverse
विवर्तन–Diffraction
विवर्तन ग्रेटिंग-Diffraction grating
विवर्तन धारियाँ–Diffraction fringes
विषम–Anomalous
विषम-तलीय–Skew
विषमता–Irregularity
विसरणयुक्त–Diffused
विसर्ग नली–Discharge tube
विसृत–Diffuse
विस्थापनाभास–Parallax
विस्फोट–Explosion
वीणा–Lyre
वेल्ड–Weld
वृश्चिक–Scorpion
वृष–Bull
व्यतिकरण–Interference
व्यवधान–Disturbance

श

शंकु–Cone

शंकु और दण्ड–Cone and rod
शनि–Saturn
शमन–Dampeut
शमीधान्य–Lupine
शलाका–Beam
शारीरिक प्रक्रिया सम्बन्धी–Physiological
शिराएँ–Filaments
शीर्ष–Maxima
शुक्र–Venus
शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर–Wet and dry bulb thermometer
शृंग–Crest
शेड–Shade
शैवाल–Mosses
श्रवण–Altair
श्रान्ति–Fatigue
श्रेणी–Series
श्वेत–White

स

संक्रमण–Transition
सगत–Consistent
संघनन–Condensation
संतत–Continuous
संदर्भवस्तु–Object of reference
संधान–Weld
संपुष्टि–Confirmation
सतृप्त, संपृक्त–Saturated
संभ्रम–Confusion
संरचना–Structure
संविलीन–Merge
संवेदनशील, संवेदी–Sensitive
सश्लिष्ट–Compound
ससृत–Converging
सदिश त्रिज्या–Radius vector
सप्तर्षिमण्डल–Great Bear
सप्लाई–Supply
समकालिक–Simultaneous
समकेन्द्रीय–Concentric
समक्षित–Subtended
समतुल्य–Equivalent
सम दिशा का–Isotropic
सममित–Symmetrical
सममिति–Symmetry
सममिति-अक्ष–Axis of symmetry
समष्टि रूप से–As a whole
समभिकथन–Assertion
समानुयोजित–Adapted
समुद्री हरा–Seagreen
सर्चलाइट–Search light
सर्वग्रास–Totality (of eclipse)
सर्वांगी–All-sided
सर्वेक्षण–Survey
सल्फर-ट्राइ-आक्साइड–Sulphur tri oxide
सल्फाइड–Sulphide
सांनिध्य–Juxtaposition
साइटोप्लाज्म–Cytoplasm
साइलेक्स–Silex
सान्द्र कोण–Solid angle

सान्ध्य किरणें–Crepuscular rays
सान्ध्य प्रकाश–Twilight
साम्य–Harmony
सायनोमीटर–Cyanometer
साहुल–Plumb line
सिंह–Lion
सिल्युएत–Sillhouette
सीमान्तक–Limiting
सुग्राहिता–Sensitivity
सुरमई–Leaden
सूँस–Propoise
सूचीस्तम्भ–Pyramid
सूत्र–Formula
सेक्सटैण्ट–Sextant
सेफ्टी वाल्व–Safety valve
सेवार–Mosses
सैद्धान्तिक–Theoretical
सोडियम–Sodium
सौर परिवृत्त–Parhelic circle
स्काइ–Ski
स्केल–Scale
स्क्रू प्रोपेलर–Screwpropeller
स्ट्रैटोस्फियर–Stratosphere
स्तार-पुञ्ज–Strato-cumulus
स्थानान्तर–Displacement
स्थिराङ्क–Constant
स्पन्दन–Vibration
स्पर्शकीय चाप–Tangential arc
स्फान–Wedge, पच्चड़
स्फुरदीप्ति–Phosphorescence
स्वाति–Arcturus
स्वाति तारासमूह–Bootes

ह

हपुषा–Juniper
हाइड्रोजन सल्फाइड–Hydrogen sulphide
हीदर–Heather
हीलियम–Helium
हेड लाइट–Head light
हेडिजर ब्रुश–Haidinger Brush
हेलिगेन्शीन–Heiligenshein
हेल्मेट–Helmet

अंग्रेज़ी-हिन्दी

A

Abnormal–असामान्य

Abnormally–असामान्य रूप से

Absorption–अवशोषण

Accuracy–यथार्थता

Acid–अम्ल

Adapted–समानुयोजित

Aerial perspective–वायुजनित अनुदर्शन

After-glow–उत्तर [illegible]

Agate–अक़ीक, गोमेद

Air-glow–वायु-ज्योति

Alcohol–अल्कोहल

Alcor–अरुन्धती (तारा)

Aldebaran–रोहिणी (नक्षत्र)

Algae–अल्जीआ

Algol –β तिमि

All-sided–सर्वांगी

Altair–श्रवण (नक्षत्र)

Alternately–विकल्पत:

Alternating–प्रत्यावर्ती

Alto-cumulus–उच्च पुञ्ज (मेघ)

Ammonia–अमोनिया

Ammonium sulphate–अमोनियम सल्फेट

Amplitude–आयाम

Anemometer–अनीमोमीटर

Anomalous–विषम

Antares–ज्येष्ठा (नक्षत्र)

Antchelion–प्रति-सूर्य्य

Anthers–परागाशय

Anti-solar point–प्रति-सूर्य्य विन्दु

Apparatus–उपकरण

Apparent–आभासी

Applied–अनुप्रयुक्त

Arc–चाप

Archer–धनु (राशि)

Arcturus–स्वाती (नक्षत्र)

As a whole–समष्टि रूप से

Ash grey–भस्म सरीखा धूसर

Aspect–रूपदर्शन

Assertions–समभिकथन

Assumption–परिकल्पना

Astronomer–खगोल-शास्त्री

Asymmetrical–असममित

Atom–परमाणु

Aureole–आभामण्डल, आरिएल

Aurigo–β रथी

Aurora–अरोरा

Avoid–परिहार

Axes of co-ordinates–नियामक अक्ष
Axis of symmetry–सममिति अक्ष
Azimuth–दिगश

B

Bacteria–बैक्टीरिया, जीवाणु
Background–पृष्ठ-भूमि
Bands–पट्टियाँ
Beam–शलाका
Beat–क्रमिक प्रकाश-दर्शन
Beech–बीच वृक्ष
Beetle–गुबरौड़ा
Betelegeuse–आर्द्रा (नक्षत्र)
Birch–भोजपत्र
Black body–कृष्ण वस्तु
Blade–ब्लेड, फलक
Bluish–निलछौवाँ
Bodice–बाडिस
Bootes–स्वाती तारासमूह
Brake–ब्रेक
Bright glow–प्रदीप्त चमक
Brown–बादामी
Bronze yellow–कांस्य पीत
Bull–वृष (राशि)

C

Candle-power–कैन्डल शक्ति
Capella α–α रथी (ब्रह्म हृदय)
Capricorn–मकर
Carro-stratus–अलका-स्तार (मेघ)
Caustic–रश्मिस्पर्शी वक्र
Celestial vault–नभोमण्डल
Cells–कोष
Changing–परिवर्त्ती
Characteristic–लाक्षणिक
Chemiluminiscence– रासायनिक दीप्ति
Chlorophyll–क्लोरोफिल, पर्णहरित
Circumscribed–परिवृत
Circumzenithal arc–परिवृत ऊर्ध्व बिन्दु चाप
Cirro-cumulus–अलका पुञ्ज (मेघ)
Cirrus–अलका (मेघ)
Clockwise–दक्षिणावर्त्त
Cloud-mirror–बादल-दर्पण
Clover–तिनपतिया (पौदा)
Cobalt blue–कोबाल्ट नीली
Cobalt sulphate–कोबाल्ट सल्फेट
Coefficient of reflection–परावर्त्तन गुणांक
Coherent sources–अनुकूल स्रोत
Colloidal–कलिलीय
Colour–वर्ण
Combustion–प्रज्वलन
Comet–धूमकेतु
Compartment–कम्पार्टमेण्ट
Compass–दिक्सूचक
Compensating–क्षतिपूरक
Complementary–पूरक, अनुपूरक
Compound–सश्लिष्ट
Concave–अवतल

Concentration–अवधारणा, संकेद्रण
Concentric–संकेन्द्रीय
Condensation–सघनन
Condensed–घनीभूत, संघनित
Cone–शंकु
Cones and rods–शंकु और दण्ड
Confirmation–सम्पुष्टि
Confusion–संभ्रम
Consistent–संगत
Constant–स्थिराक
Constellation–तारा-राशि
Continued–सतत
Continuous–अविरत, अविच्छिन्न
Contrast–विपर्यास
Converging–संसृत
Convex–उत्तल
Cornea–कोर्निया
Corona–कोरोना, कान्तिचक्र, किरीट
Corresponding–अनुरूपी
Cosmic–ब्रह्माण्डीय
Counter clockwise–वामावर्त्त
Counter-glow–प्रति-चमक, प्रति-ज्योति
Counterpart–प्रतिरूप
Counter twilight–प्रतिसान्ध्य-प्रकाश
Crab–कर्क (राशि)
Crepuscular rays–सान्ध्य किरणें
Crest–शृंग
Crest of waves–तरंग-शृंग
Cross–क्रास
Crystal–क्रिस्टल, मणिभ
Cumulo-nimbus–पुञ्ज-जलद (मेघ)
Cumulo-stratus–पुञ्ज-स्तार (मेघ)
Cumulus–पुञ्ज (मेघ)
Cupric sulphate–क्यूप्रिक सल्फेट
Cusp–निशिताग्र
Cyanometer–सायनोमीटर
Cycle–प्रत्यावर्तन
Cytoplasm–साइटोप्लाज्म

D

Damp out–शमन
Damped–अवमन्दित
Dandelions–डैन्डीलियन
Dark-grey–काला भूरा
Deck–डेक
Decomposition–विच्छेदन
Deflection–विक्षेप
Depression–निम्न दाब
Deviation–विचलन, अतिक्रम
Dew-bow–ओस-धनुष
Diagonal–कर्ण
Diaphregm–डायफ्राम
Diatoms–द्विकोषीय (अल्जीआ)
Dichroism–द्विवर्णिक
Diffraction–विवर्त्तन
Diffraction fringes–विवर्त्तन-धारियाँ
Diffraction gratings–विवर्त्तन ग्रेटिंग

Diffuse–विसृत
Diffused light–विसृत प्रकाश
Direct–प्रत्यक्ष
Directed reflected light-केन्द्रित परावर्त्तित प्रकाश
Disc–मंडलक
Discharge tube–विसर्ग लैम्प
Displacement–विस्थापन, स्थानान्तरण
Disturbance–व्यवधान
Divergent–अपसृत
Double sun–दुहरा सूर्य्य
Double stars–युग्म तारे
Duck weed–कारण्ड घास
Dull–धूमिल

E

Eagle–गरुड़ (तारा-राशि)
Earth light–धरती आलोक
Ecliptic–क्रान्ति-वलय (क्रान्तिवृत्त)
Eclipse–ग्रहण
Elastic–लचीला
Electron–एलेक्ट्रान, इलेक्ट्रान
Ellipse–दीर्घवृत्त
Elizabeth linnaeus–एलीजाबेथ लिनो
Emerald–मरकत (मणि)
Emission–उत्सर्जन
Energy–ऊर्जा
Enveloped–अन्वालोपित
Epidermal–बाह्य त्वचा का
Equivalent–समतुल्य
Erruption–उद्गार
Ethereal–वायव्य
Exaggeration–अति संवर्द्धन
Exhaust post–बहिर्द्वार
Explosion–विस्फोट
Exposure–प्रकाश-दर्शन
Extreme case–परमावस्था
Eyeball–नेत्रगोलक

F

Factor–उपादान
Family of curves–वक्र-समूह
Farbin lehre–फार्बेन लेहर
Fata morgana–फाता मोर्गाना (मिथ्या प्रकाश)
Fatigue–श्रांति
Filament–तंतु
Filter–फिल्टर
Fishes–मीन (राशि)
Flickering–झिलमिलाहट
Flint–चकमक पत्थर
Flor-Contrast–फ्लोर कन्ट्रास्ट
Fluorescence–प्रतिदीप्ति
Focal length–फोकस दूरी
Fog-bow–कुहरा-धनुष
Fore-ground–अग्रभूमि
Formol–फार्मोल
Formula–सूत्र
Fraxinus Ornus–क्षीरी (वृक्ष)
Frame–फ्रेम

Frame of reference–तुलना-तंत्र
Function–फलन

G

Garden globe–वाटिका-ग्लोब
Gelatine–जिलैटिन
Geranium–जीरैनियन
Glacier–ग्लेशियर, हिमनद, हिमानी
Globe–ग्लोब
Glory–प्रकाशमण्डल
Glow-worm–जुगनू
Gown–गाउन
Gradient–प्रावण्य, प्रवणता
Gradual–क्रमिक
Grains–कणिकाएँ
Granite rocks–आग्नेय चट्टानें
Granular–दानेदार, कणीय, कणिकामय
Gravitational attraction–गुरुत्वाकर्षण बल
Grease–चिकनाई
Great Bear–सप्तर्षि-मण्डल
Great circle–बृहत् वृत्त
Great Dog–बृहत् श्वान
Ground glass–घर्षित काँच

H

Haidinger's brush–हेडिन्जर ब्रुश
Halo–प्रभामण्डल
Harmony–साम्य
Hatching–रेखा-छादन
Haze–धुन्ध
Head light–हेड लाइट
Heather–हीदर (घास)
Heiligenshein–हेलिगेन्शीन
Helium–हीलियम
Helmet–हेल्मेट
Hemisphere–अर्द्ध गोला
Hexagonal–षट्पहल
Honey fungus–मधु फूँफद
Horizontal–क्षैतिज
Horizontal bar–क्षैतिज दण्ड
Horse-chestnut–अखरोट (वृक्ष)
Hydrogen phosphide–हाइड्रोजन फास्फाइड
Hydrogen sulphide–हाइड्रोजन सल्फाइड
Hyperbola–अतिपरवलय

I

Ice-blink–बर्फ-निमीलन
Ice-needle–बर्फ-सूची
Incident–आपतित, आपाती
Incident rays–आपतित किरणें
Indigo–नील
Indirect–अप्रत्यक्ष
Infinity–अनन्त दूरी
Insect–कीट
Intensity of light–प्रकाश-तीव्रता
Intensity–तीव्रता
Interference–व्यतिकरण
Inversion–उत्क्रमण
Ionization–आयनीकरण

Ionosphere–आयनस्फियर
Iridescence–उद्दीपन
Iridescent–उद्दीप्त
Irregularity–विषमता
Iso-photo–आइसोफोटो
Isotropic–समदिशा का

J

Jar–जार
Juniper–हपुषा (पौदा)
Jupiter–वृहस्पति (ग्रह)
Juxtaposition–सान्निध्य

K

Keel–पृष्ठ-दण्ड (जहाज़ का)

L

Landmark–भूमिचिह्न
Landscape–भू-दृश्य
Lawn–लॉन
Leaden–सुरमई
Legend–आख्यान
Lens–लेंस
Leonardo-da-Vinci–लिनार्दोदा-विन्ची
Lesser maxima–लघु शीर्ष
Light-house–प्रकाश-गृह
Lightning–तड़ित्
Light rings–प्रकाश छल्ले
Limiting–सीमान्तक
Little Dog–लघुश्वान (तारा-समूह)
Little finger–कनिष्ठा उँगली
Line of darkness–अन्धकार-रेखा
Lion–सिंह (राशि)
Locus–बिन्दुपथ, पथरेखा
Luminous–दीप्तिमान्
Lupine–शमीधान्य (पौदा)
Lycopodium–लाइकोपोडियम
Lyre–वीणा (राशि)

M

Magnified–आवर्द्धित
Magnifying glass–परिवर्द्धक काँच
Magnifying lens–परिवर्द्धक लेन्स
Manganese–मैंनगैनीज़
Map–मानचित्र
Mars–मङ्गल (ग्रह)
Maxima–शीर्ष
Merge–संविलीन
Metastable–भास-स्थायी
Meteors–उल्काएँ
Meteorology–ऋतु - अनुसन्धान, ऋतुविज्ञान
Metol-hydroquinine–मेटाल हाइड्रोक्वीनीन
MilkyWay–आकाश-गंगा
Minimum deviation–अल्पतम विचलन
Mirage–मरीचिका
Mist–धुन्ध, कुहासा
Mizare–वशिष्ठ (तारा)
Mobil oil–मोबिल तेल
Mock sun–कृत्रिम सूर्य
Molecular–आणविक

Molecule–अणु
Monkestood–पाश्चात्य विषा (पौदा)
Monotonous–एकरस
Mosses–सेवार, शैवाल
Mother-of-pearl–सीप का मोती
Muscles–पेशियाँ

N

Negative–निगेटिव
Neon–निअन
Neutral–तटस्थ
Nicol–'निकल'
Nigrometer–नाइग्रोमीटर
Norm for comparison–आदर्श प्रमाप
Normal–अभिलम्ब
Northern lights–उत्तरीय प्रकाश
Nuclei–नाभिक
Nursery–नर्सरी

O

Oak–बलूत
Object of reference–सदर्भ वस्तु
Objective–वस्तुनिष्ठ
Objective–अभिदृश्य लेन्स, वस्तुनिष्ठ
Objectivity–तटस्थता
Obliterated–अभिरोपित
Oblique–तिर्यक्
Observable–प्रेक्षणीय
Observer–प्रेक्षक
Olive green–जैतूनी हरा
Oily–तैलीय
Opal–पोलकी रत्न
Opera glass–द्विनेत्री दूरबीन
Optical–प्रकाशीय
Optimum–अनुकूलतम
Orbit–कक्षा
Order–कोटि
Order of magnitude–दीप्तिमाप श्रेणी
Organic–कार्बनिक
Orientation–अनुस्थापन
Oriented–अनुस्थापित
Orion–मृगव्याध (तारा समूह)
Ortho–आर्थो
Orthochromatic–आर्थोक्रोमैटिक
Oscillations–दोलन
Osmic acid–आस्मिक अम्ल
Oxidation–आक्सीकरण
Oxidised–आक्सीकृत
Ozone–ओज़ोन

P

Paint–रजक
Pale–पाण्डुर
Panchromatic–पैन्क्रोमैटिक
Parallax–विस्थापनाभास
Parameter–परामिति
Parhelic circle–सौर परिवृत्त
Parhelia–उपसूर्य
Partial eclipse–आंशिक ग्रहण
Path difference–पथान्तर

Pattern–प्रारूप
Peat–पीट
Perceptible–बोधगम्य
Peripheral–परिमितीय
Persei δ–δ ययाति
Persei α–α ययाति
Persistence of vision–दृष्टि-निर्बन्धता
Perspective–अनुदर्शन
Phase-difference–कला-अन्तर
Phosphene–फास्फीन
Phosphorescence–स्फुरदीप्ति
Photo-electric cell–फोटो इलेक्ट्रिक सेल
Photometer–दीप्तिमापी
Physiological–शारीरिक प्रक्रिया सबधी
Pitch dark–घुप अन्धकार
Plumbline–साहुल
Pointillism–बिन्दु-चित्रण
Point of reversal–उत्क्रमण-बिन्दु
Point of view–दृष्टि-बिन्दु
Polar–ध्रुवीय
Polariod–पोलरायड
Polorising angle–ध्रुवक कोण
Polarisation–ध्रुवण
Polariscope–ध्रुवणदर्शी
Polarised–ध्रुवित
Pores–रोमछिद्र
Porpoise–सूँस
Positions of preference–वरीयता की स्थितियाँ
Positive–पाज़िटिव
Potassium chromate–पोटैसियम क्रोमेट
Power house–पावर हाउस
Predominence–प्राधान्य
Primary rain-bow–प्रमुख इन्द्रधनुष
Prism–प्रिज्म, समपार्श्व
Procyon–प्रभाश (तारा)
Projection–प्रक्षेपण
Prominences– तेज शृग (सूर्य के), परिज्वाल
Proverb–लोकोक्ति
Prussian blue–प्रशन नीला
Psychological–मनोवैज्ञानिक, मानसिक
Psychological contrast–मानसिक विपर्यास
Psychrometer–वायुवाष्प मान लेखी
Purkinje Effect–पर्किन्ज प्रभाव
Purple–नील-लोहित
Pyramid–सूची-स्तम्भ

Q

Qualitative–गुणात्मक
Quantitative–मात्रात्मक
Quartz–क्वार्ट्ज़, स्फटिक

R

Radial–त्रिज्यीय
Radian–रेडिएन
Radiation–विकिरण
Radius vector–सदिश त्रिज्या
Railing–रेलिंग
Rainbow–इन्द्र-धनुष
Ram–मेष (राशि)
Random–अनियमित
Reddish–ललछौवे
Reduction–अवकरण
Reference point–निर्देशन-बिन्दु
Reflection–परावर्त्तन
Refracting edge–वर्त्तन कोर
Refraction–वर्त्तन
Refrangible–वर्त्तनीय
Regulus–मघा
Resultant–प्रतिफलित
Reverse–विलोम
Rest–विराम
Retina–रेटिना
Rim–रिम, प्रधि, नेमि
Ring–छल्ला
Round–वर्त्तुलाकार
Rotating motion–परिभ्रमणगति
Rye–राई

S

Safety valve–सेफ्टी वाल्व
Saturated–संपृक्त, संतृप्त
Saturn–शनि (ग्रह)
Scales–तुला (राशि)
Scales–माप-श्रेणी, स्केल
Scattered–परिक्षेपित
Scattering–परिक्षेपण
Scattering power–परिक्षेपण-क्षमता
Scenery–दृश्य-स्थल
Scintillations–टिमटिमाहट
Scorpion–वृश्चिक (राशि)
Screw propeller–स्क्रू-प्रोपेलर
Sea-green–समुद्री हरा
Searchlight–सर्चलाइट
Secondary rainbow–गौण इन्द्र-धनुष
Sensitive–संवेदी, सुग्राही
Sensitivity–सुग्राहिता
Series–श्रेणी
Sextant–सेक्सटैन्ट
Shade–शेड
Shoots–कोंपलें
Short-sighted–निकट दृष्टि
Silex–साइलेक्स
Silhouette–सिल्युएत (छायाचित्र)
Silver white–रजत-श्वेत
Simultaneous–समकालिक
Sirius–लुब्धक (तारा)
Skew–विषम तलीय
Ski–स्काइ
Snap shot–स्नैप शाट
Snow–तुषार, हिम
Socket–कोटर (आँख की)

Sodium–सोडियम
Solid angle–सान्द्र कोण
Solidity–ठोसपन
Solution–विलयन
Sombre blue–घूसर नीला
Source of light–प्रकाश-स्रोत
Space–देश
Space-ships–अन्तरिक्ष यान
Spectre–प्रेत-छाया
Spectrum–स्पेक्ट्रम
Spherical segments–गोलीय खण्ड
Stage–चरण, क्रम
Statistically–आंकिक पद्धति से
Steoroscopic vision–पिण्ड-दर्शन
Steoroscopic phenomenon–पिण्ड-दर्शन घटना
Stimulated–उत्तेजित
Strato-cumulus–स्तार-पुञ्ज (मेघ)
Stratosphere–स्ट्रैटोस्फियर
Structure–संरचना
Subconscious–अवचेतन मन
Subjective–आत्मनिष्ठ
Sublimation–ऊर्ध्वपातन
Sub-sun–अधोवर्त्ती सूर्य्य
Subtended–समक्षित
Successive–क्रमागत
Sulphide–सल्फाइड
Sulphur tri oxide–सल्फर ट्राइ आक्साइड
Super-cooled–अति-शीतलीकृत
Supercooling–अति-शीतलन
Supernumerary bows–अतिरिक्त धनुष
Superposed–अध्यारोपित
Superstition–अन्ध विश्वास
Supply–सप्लाई
Surface of reference–नियामक धरातल पृष्ठ
Surface tension–तलीय खिंचाव
Surroundings–परिपार्श्व
Survey–सर्वेक्षण
Symmetrical–सममित
Symmetry–सममिति

T

Talbot–ताल्बो
Tangential arc–स्पर्शकीय चाप
Tauri β–β वृष
Tauri ξ–ξ वृष
Tauri γ–γ वृष
Telegraph–टेलीग्राफ
Tenvous–विरल
Terrestrial–पार्थिव
Test-tube–परखनली
Theoretical–सैद्धान्तिक
Theory–थियरी, सिद्धान्त
Three dimensional–त्रिविमितीय
Threshold–देहली
Thunder-cirrus–तड़ित् अलका (मेघ)
Tip–पोर
Totality–सर्वग्रास (ग्रहण के लिए)

Total reflection–पूर्ण परावर्त्तन
Transition–संक्रमण
Transformation–रूपान्तरण
Translatory motion–रैखिक गति
Transparent–पारदर्शक
Transverse section–अनुप्रस्थ काट
Tropics–उष्ण कटिबन्ध
Trough–गर्त्त
Turbidity–डबैलापन
Twilight–सान्ध्य प्रकाश
Twins–मिथुन (राशि)
Tyre–टायर

U

Ultra-cirrus–परा-अलका
Ultra marine–पारसामुद्रिक
Ultra violet–अति बैंगनी
Under-estimation–न्यूनानुमान
Undulating–ऊर्मिल
Uniform–एकसम, एकसमान
Unpolarised–अध्रुवित
Unprejudicial–निरपेक्ष

V

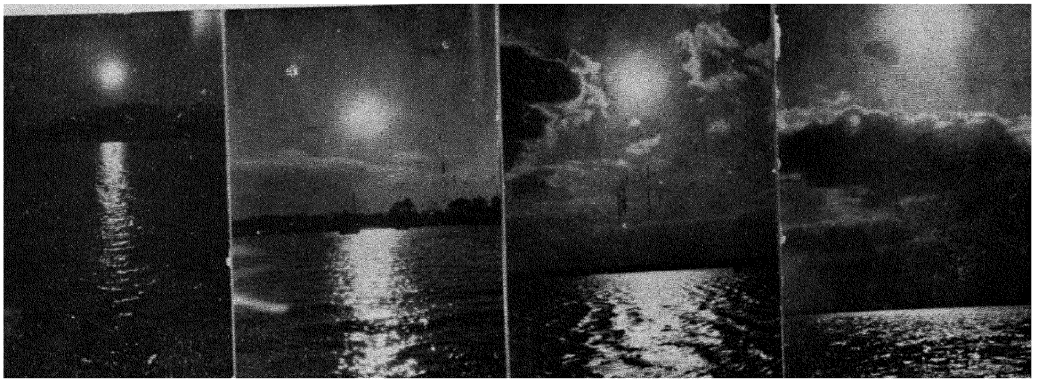
Vaporiser–फुआर उत्पादक
Vega–अभिजित् (तारा)
Venus–शुक्र (ग्रह)
Vertical–ऊर्ध्वाधर
Vibration–कम्पन, स्पन्दन
Violet–बैंगनी
Virgin–कन्या (राशि)
Visibility–दृश्यता
Visual direction–दृष्टि-रेखा

W

Water-falls–जल-प्रपात
Water-line–जल-रेखा
Waterman–कुम्भ (राशि)
Water-sky–जल-आकाश
Water-telescope–जल-दूरबीन
Wave-front–तरंगाग्र
Wavelets–तरंगिकाएँ
Wave-length–तरंग-दैर्ध्य
Wedge–स्फान, पच्चड़
Weld–सधान, वेल्ड
Wet & Dry bulb thermometer
–शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर
White–श्वेत
White-hot–तापोज्ज्वल
Whitisth–आश्वेत
Will-O-the-Wisp–मिथ्या प्रकाश

Z

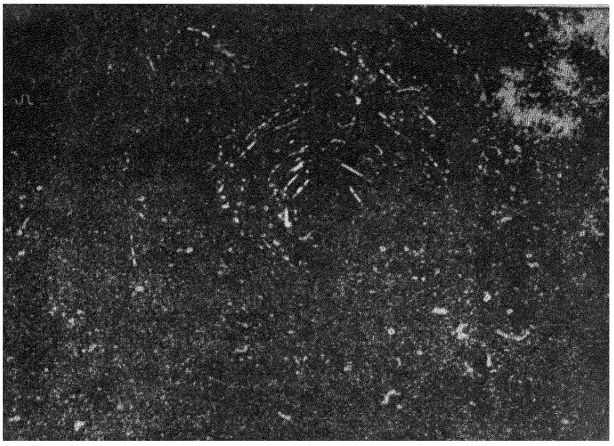
Zenith–ऊर्ध्व बिन्दु
Zinc-white–जिंक ह्वाइट
Zodiac–राशिचक्र
Zodiacal light–राशिचक्रीय प्रकाश



b c d

प्लेट II —समुद्र मे प्रतिबिम्बित सूर्य एक प्रकाश-स्तम्भ का निर्माण करता है जो सूर्य की ऊँचाई तथा समुद्र के विक्षोभ के अनुसार ही सँकरा या चौड़ा होता है। ध्यान दीजिए कि दूर के समुद्रतट का प्रतिबिम्ब दिखाई नही देता। प्रकाश-स्तम्भ सदैव ही क्षितिज के निकट सबसे अधिक चमकीला दीखता है (परावर्तित बिम्ब का स्थानान्तरण देखिए § १६) पृ० ३४।

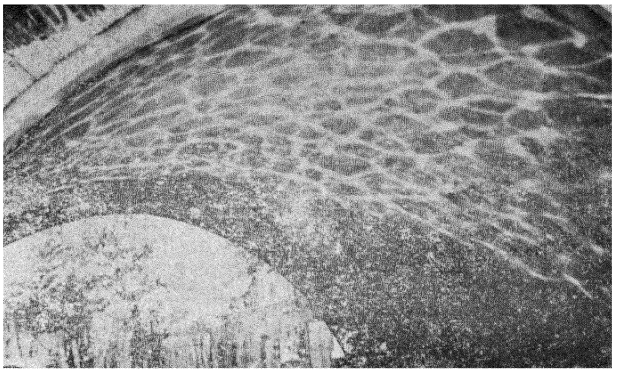
(From E. O. Hulburt, I. O. S A, 24, 35, 1934)



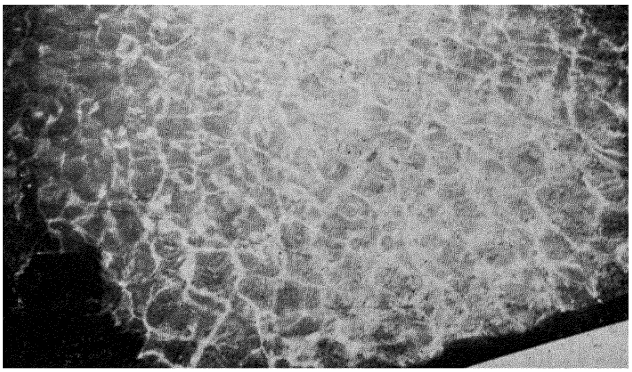
प्लेट III, a—रात के समय वृक्ष के ऊपरी भाग मे से जब सडक के लैम्प को देखते है तो चमकती हुई शाखाएँ प्रकाश-स्रोत के गिर्द चमकीले वृत्तों का निर्माण करती है (पृ० ३८)।



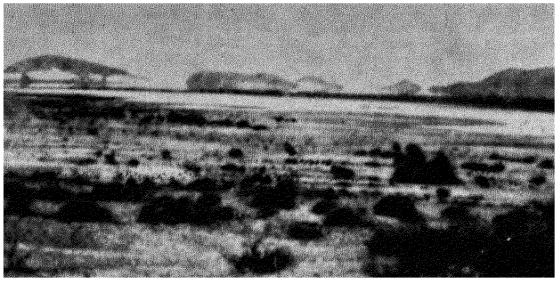
प्लेट III, b—वही वृक्ष दिन के समय। प्रत्येक चमकदार वृत्त किसी विशेष शाखा या टहनी द्वारा निर्मित होता है। (From photographs by Dr. In. A. J. Staring) (पृ० ३८)।



प्लेट IV, a—नहर के पानी की विक्षुब्ध सतह सूर्य की रोशनी का प्रतिविम्ब पुल की भीतरी छत पर विचित्र नमूने की शक्ल मे फेकती है (पृ० ४१)।



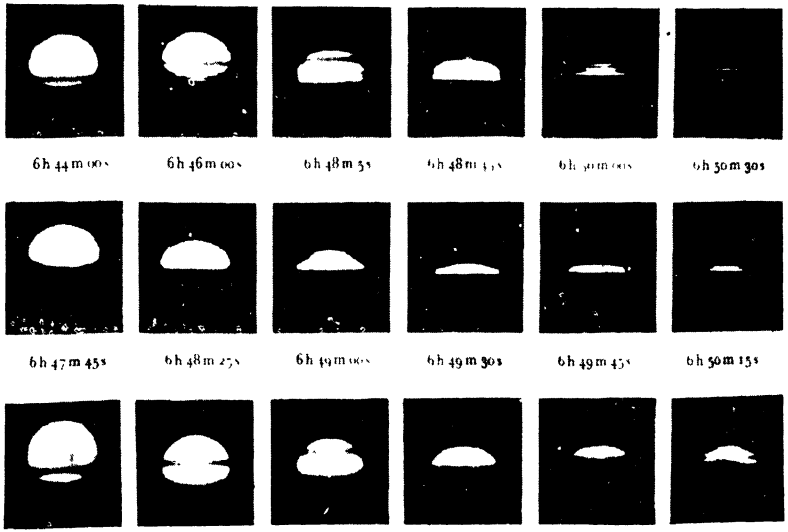
प्लेट IV, b—हलके तरङ्गित होनेवाले उथले जल से वर्तित होनेवाली सूर्य की रोशनी पेदे पर प्रकाश की लकीरों के रूप मे केन्द्रित हो जाती है (पृ० ४१)।



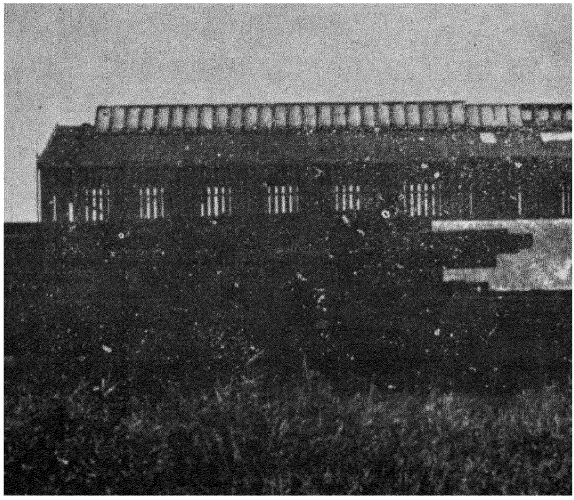
प्लेट V, a—गौण मरीचिका, डेथवैली, कैलीफोर्निया (By Courtesy of the U. S. Weather Bureau) (पृ० ५५)।



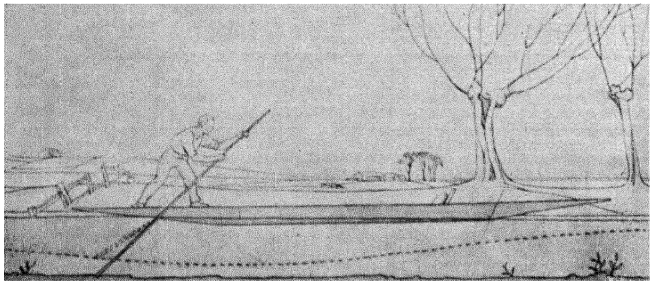
प्लेट V, b—धूप से प्रकाशित एक लम्बी दीवार पर मरीचिका। प्रेक्षक से १८० गज की दूरी पर स्थित बालक की मरीचिका दिखाई दे रही है तथा द्वितीय असामान्य परावर्तन के निर्माण का आरम्भ हो रहा है। दीवार का तापक्रम ४.५° सेंटीग्रेड था, जो वायु के तापक्रम से ऊँचा था। (From W. Hillers, Physikalische Zeitschrift, 14, 718,1913) (पृ० ५६)।



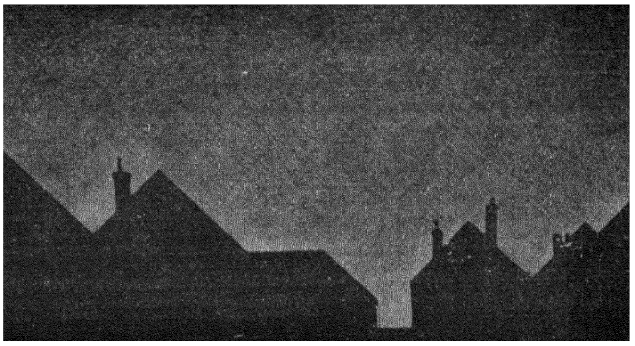
प्लेट VI—पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण-वक्रता के कारण अस्त होते हुए सूर्य की शक्ल की विकृति। (फोटो पैन्क्रोमैटिक फिल्म पर ली गयी थी, केमरे के लेन्स की फोकस-दूरी ४ फुट ७ इंच थी तथा इसका मुँह २ इंच चौड़ा था एवं प्रकाश-दर्शन का समय $\frac{1}{125}$ सेकण्ड से लेकर $\frac{1}{4}$ सेकण्ड तक रखा गया था।) (From J. F. Chapell, P. A. S. P. 45, 281, 1933) (पृ० ६७)।



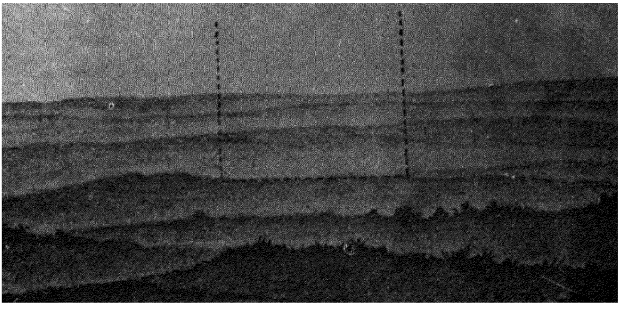
प्लेट VII, a—एक शेड के आमने-सामने के कठघरों के बीच क्रमदर्शन (Beats) (पृ० १०३)।



प्लेट VII, b—किश्ती की लग्गी 'मुड़ी' हुई दीखती है तथा नदी का पेदा 'उठा' हुआ जान पड़ता है। (From 'The Universe of Light' (G. Bell and Sons Ltd. by permission of Sir William Bragg, O. M.) (पृ० ४१, १०३)।



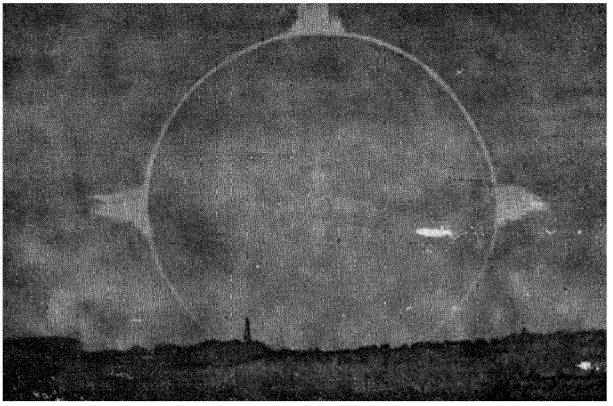
प्लेट VIII, a—शाम के वक्त मकानों की छत के सहारे विपर्यास-हाशिया (पृ० १५८) ।



प्लेट VIII, b—ऊर्मिल भूमि पर विपर्यास-घटना । बिन्दु-रेखाओं द्वारा प्रदर्शित स्थल पर ओट रखकर दृश्य-स्थल के एक अंश का परिहार करने पर यह दृष्टि-भ्रम दूर किया जा सकता है (पृ० १५८) ।



प्लेट IX, a——चटकीले रग का मुख्य इन्द्रधनुष; फीके रग कागौण इन्द्र-धनुष। इन्द्रधनुष के निचले छोर पर उसके भीतर तथा बाहर के हाशियों पर प्रकाश का विपर्यास स्पष्ट देखा जा सकता है तथा मुख्य इन्द्रधनुष के नीचे अतिरिक्त धनुष भी स्पष्ट दिखलाई दे रहे हैं। (Copyright, A. Clask, King's College, Aberdeen) (पृ० २०४)।



प्लेट IX, b——चन्द्रमा के गिर्द प्रकाशवृत्त या प्रभामण्डल, कृत्रिम चन्द्र, ऊपरी स्पर्शकीय चाप तथा प्रकाश का क्रॉस। (After a watercolour by L. W R. Wenckebach, by kind permission of the Royal Dutch Met.Inst.) (पृ० २३, २४४)।



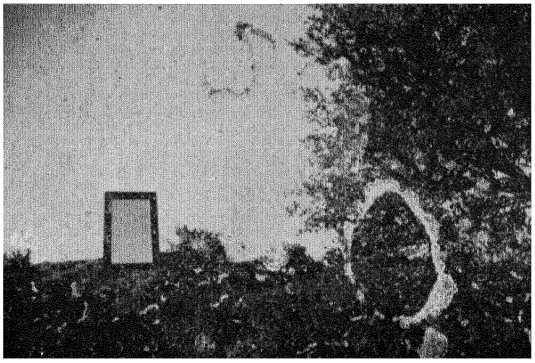
प्लेट x—उद्दीप्त बादल। Altocumulus lenticularis, photographed by Cave (International Cloud Atlas, Paris 1932 plate 33) (पृ० २७५)।



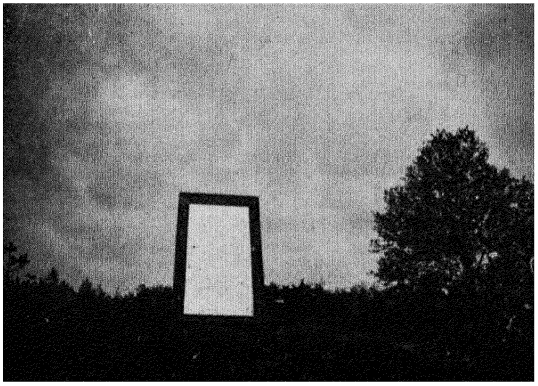
प्लेट xi—ओस से ढकी घास वाले मैदान पर **हेलिगेन्शीन** (पृ० २८०)।



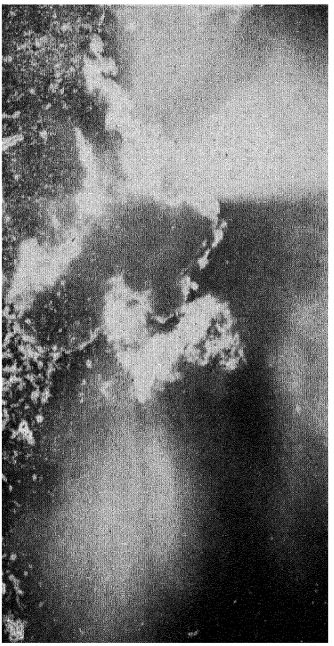
प्लेट XII—रात्रि के ज्योतिर्मय बादल (After C. Stormer, *Vidensk. Akad.* Oslo Avh. I, 1933 No. 2, Plate IX) (पृ० ३४५)।



प्लेट XIII, a--एक बड़े आकार के झुके दर्पण मे आकाश का ऊर्ध्वबिन्दु प्रतिबिम्बित हो रहा है। आकाश जब नीले वर्ण का होता है तो ऊर्ध्वबिन्दु पर आकाश क्षितिज के निकट के भागो की अपेक्षा कम प्रकाशमान् होता है (पृ० ३६९)।



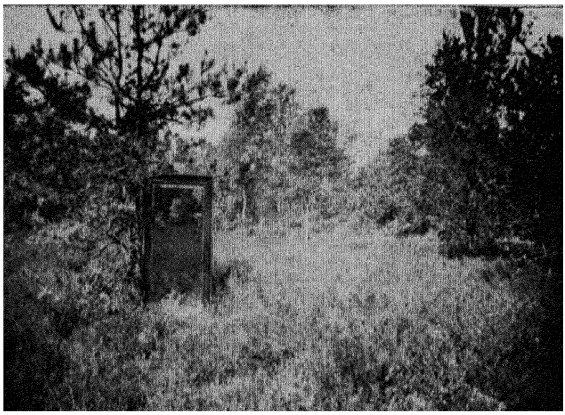
प्लेट XIII, b--वही प्रयोग, जब आकाश पर समरूप से बादल छाये थे। इस दशा मे आकाश का ऊर्ध्वबिन्दु क्षितिज के मुकाबले मे अधिक चमकीला है (पृ० ३६८)।



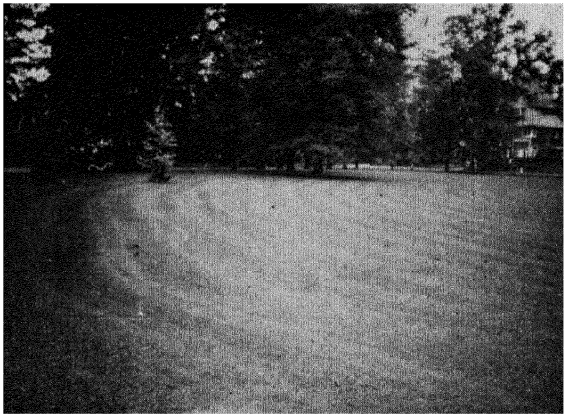
प्लेट XV, a—सूर्य घने पुञ्ज-बादल की छाया नीचे की धुन्ध वाली हवा पर डालता है। सभी प्रकाशकिरण-शलाकाएँ एक ही स्थल से आती हुई जान पड़ती हैं, यद्यपि वास्तविकता यह है कि वे सभी परस्पर समानान्तर हैं (पृ० ४०१)।



प्लेट XV, b—गड्ढे के पानी के विक्षुब्ध धरातल पर छाया पड़ती है; प्रकाश तथा अन्धकार की असख्य किरणे सिर से अपसृत होती दिखाई पड़ती है। केमरा आँख के ठीक सामने रखा गया था (पृ० ४०१)।



प्लेट XVI, a—हीदर पौदों वाले मैदान का दृश्य, जब कि सूर्य दर्शक के पीछे है; दर्पण मे मैदान का प्रतिबिम्ब जिसमे सूर्य सामने पड़ता है (पृ० ४१५)।



प्लेट XVI, b—लॉन पर घास काटनेवाली मशीन के चलाये जाने पर बने निशान। निशान की ये प्रकाशित तथा अँधेरी धारियाँ उस वक्त विलुप्त हो जाती है जब इनकी समकोण दिशा से इनका अवलोकन करते है (पृ० ४१५)।